श्री

जैनकथारत्नकोष

भाग पांचमो.

प्रस्तावना.

॥ शुद्धरुचि सम्यक्दृष्टि सज्जनोना उपकारथी जैनकथारत्नकोष ना
...क संबधी पंदर भाग मांहेलो आ पांचमो भाग छपाइ तैयार थयो.
सिंदूरप्रकर, कर्पूरप्रकर, केसरप्रकर, कुंकुमप्रकर, अने हिंगुलप्रकर, ए
... ग्रंथ सुभाषित छतां एकज आचार्यना रचेला छे, ते प्रत्येक प्राणीने
...मां दृढावनारा होवाथी ए मांहेलो सिंदूरप्रकर तो एज पुस्तकना
...ला भागमां छपाइ गयो. अने बीजो कर्पूरप्रकर आ पांचमा भागमां
...मां अर्थ तथा संक्षेप एकसो सत्तावन कथाउ सहित छाप्यो छे...
...२१ काव्यपर्यंतनी अवचूरी महारी पासे हती तेना उपरथी अर्थ ए
उपरांत काव्यमां पर्वणीना दिवसोमां सत्कर्म करवाना वीश द्वार छे,
...नी टीका प्रमुख नथी माटे ते मूलपाठेज छाप्या छे. तेमज ए ग्रंथमां
...द बे काव्य आगल पाछल छपाइ गयेला छे, तथा प्रत्यंतरे बे काव्य
...रें दीगमां आव्या, ते सर्व अनुक्रमणिकामां सुधारी लीधा छे. तथा
...ने छापवानी उतावलथी अशुद्धता दीगमां आवशे, ते पंमितजनो सुधा
...ांचवा कृपा करशे. यद्यपि पंमितो उपर भार मूकीने अशुद्धता राख
... योग्य कहेवाय नहीं; तथापि अगाउथी रूपैया भरनारा साहेबोनी त...
...श्री ताकीद थवानी मने आशंका रहेवाने लीधे, जेम बने तेम तरत छा...
...ंथ तैयार करवाना हेतुथी, अथवा प्रमादादि दोषथी, तेमज जूदी जू...
...तोमां जूदा जूदा पाठांतर होवाथी, तथा महारीपासें अवचूरीनी एक

प्रत होवाथी, ए उणो थयेलो जाणवो. परंतु हवेथी जे कांइ एवा ग्रंथो
पुस्तकमां दाखल करीश, तेनी उपर वधारे लक्ष आपीने जेम बनशे तेम
वधारे शोधन करवामां तत्पर रहीश. ए ग्रंथ अत्यंत रसिक तेमज एन
बोध सर्वोपयोगी होवाथी सहुथी प्रथम दाखल करेलो छे.

बीजो ग्रंथ, श्रीभुवनभानु केवलीनो रास पंमित श्रीउदयरत्नजी महाराज
नो रचेलो छे. ए ग्रंथ उपमितिभवप्रपंच ग्रंथने अनुसरतो होवाथी मिथ्या
त्व, अविरत्यादिक हेतुयें करी बंधाता, अने जीवने संसारमां भमाडनारा
एवा ज्ञानावरणादिक आठेकर्मोमां मुख्य एवुं जे मोहनीय नामा कर्म छे,
तेने सर्वोपरि ठेरावीने तेने मोहनृपति एवे नामें ओलखावीने पछी बीजा
सात कर्मोने तेना बांधव रूपें स्थापन कर्यां छे. वली ते आठे कर्मोनी जे
उत्तर प्रकृतियो जूदे जूदे नामें छे, ते सर्वेने ते आठ कर्मरूप आठे भाइ
परिवार रूपें निर्धार करी ते प्रत्येक प्रकृतियोना उदयथी थता जीवना
ना प्रकारना अध्यवसायनुं यथार्थ वर्णन ए ग्रंथमां आवेलुं छे. जेम ए
मोहनीय नामें राजा ठेराव्यो तो तेमना कुटुंबी क्रोधादिकोनो हावेहूब स्वरू
पाणे साक्षात् नाटक भजवी बताव्युं होय, ते श्रीभुवनभानु केवलीयें पोते
प्रमाणें अनुभव्युं छे. ते प्रमाणें ए ग्रंथमां स्पष्ट देखाडी आप्युं छे.

त्रीजो ग्रंथ, जे स्थानके समकेत ठेरी शके, तेवा छ स्थानक छे, ते छ स्थान
माननारा जे मिथ्यावादीयो छे, तेमना निराकरणपूर्वक षट्स्थानकस्व
चोपाइ श्रीमद्यशोविजयजी उपाध्यायकृत अर्थसहित दाखल करी
थ नैयायिक पक्षनो होवाथी वांचनारने उत्कृष्ट आनंदकर्त्ता थशे.
चोथो ग्रंथ, दृष्टांतशतक एवे नामें छे. तेमां जूदा जूदा विषयोनो बोध कर
वा सो दृष्टांतो लघु कथाउ सहित आवेला छे. ते पण घणा रसिक
छे. ते ग्रंथना संस्कृत काव्य कर्त्तानी उपर नजर न राखतां प्राकृत
भाषाथी मात्र बाल जीवोने रूडो बोध थशे, एवा भावथी छाप्यो छे.
एणें वधा मली पूर्वोक्त चार ग्रंथोनो समावेश करीने ए पांचमो
कर्यो छे. तेमां अशुद्धता वगेरे दोष जे महाराथी रहेला होय,
मिथ्यादुष्कृतादिक ते सर्व पूर्वे भागोमां लखवा प्रमाणें आहीं
लेवुं. सुज्ञेषु किं बहु विलेखनेन ॥

॥ अस्य पुस्तकस्यानुक्रमणिका प्रारभ्यते ॥
॥ तत्र प्रथमं कर्पूरप्रकरग्रंथस्यानुक्रमणिका ॥

१ प्रथ...

॥ बालावबोधसहित कर्पूरप्रकर प्रारंभः ॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥

कर्पूरप्रकरः शमामृतरसे वक्त्रेंडुचंद्रातपः,शुक्लध्यानतरुप्रसूननि
चयः पुण्याब्धिफेनोदयः॥मुक्तिश्रीकरपीडनेऽब्लसिचयोवाक्कामधे
नोः पयो,व्याख्यालक्ष्यजिनेशपेशलरदज्योतिश्चयः पातु वः॥

अर्थः— (व्याख्यालक्ष्य के०) व्याख्याननी वेलानेविषे देखातो एवो (जिनेशपेशलरदज्योतिश्चयः के०) श्रीजिनप्रभुना मनोहर एवा जे दांत तेनी ज्योति जे कांति अर्थात् जिनदशनद्युति तेनो चय जे समूह ते (वः के०) तमोने (पातु के०) रक्षण करो. ते केवो छे जिनदशन द्युतिसमूह? तो के (शमामृतरसे के०) शांतिरूप जे अमृतजल तेनेविषे (कर्पूरप्रकरः के०) कर्पूरसमूहयुक्त एवो तथा वली (वक्त्रेंडुचंद्रातपः के०) मुखरूप जे चंद्रमा तेनी ज्योत्स्नारूप एवो, तथा वली (शुक्लध्यानतरुप्रसूननिचयः के०) शुक्लध्यानरूप जे वृक्ष तेना पुष्पनो छे समूह जेमां एवो अने (पुण्याब्धिफेनोदयः के०) पुण्य समुद्रना फीणनो छे उदय जेनेविषे एवो तथा (मुक्तिश्रीकरपीडनेऽब्लसिचयः के०) मुक्तिरूप जे श्री तेनीसाथें विवाहनेविषे स्वछ वस्त्ररूप एवो अने (वाक्कामधेनोः के०) वाणीरूप काम धेनुना (पयः के०) दुग्ध जेवो एवो जिनेशदंतज्योतिःसमूह छे, ते तमारी रक्षा करो. ए आशीर्वादकाव्य कह्युं. आ शार्दूलविक्रीडित काव्य छे तेम सर्वे हवे पछीनां काव्य ते शार्दूलविक्रीडित वगेरे छंदोमां जाणवां ॥ १ ॥

हवे आ ग्रंथनेविषे कहेवानां द्वारनां नामो एक काव्यथी कहे छे.

भव्यालब्ध्वार्यदेशं कथमपि नृभवं सत्कुलं साधुसंगं, बोधं
देवादिशक्तीः कुरुत शमयतिश्रावकत्वव्रतानि ॥ मस्तक्षे
त्री जिनार्चा नयविनय सुवैराग्य दानादिपुष्टिं, शब्दद्यूतक्रु
धादेर्जयमपि सुकृतादेपु सत्कर्म मुक्त्यै ॥ २ ॥

अर्थः– (न्नव्याः के०) हे न्नव्यजीवो (कथमपि के०) कोइएक पुण्यना उदयें करी (आर्यदेशं के०) आर्यदेशने तथा (सत्कुलं के०) सारा कुलनें तथा (नृन्नवं के०) मनुष्य जन्मने तथा (साधुसंगं के०) साधुपुरुषना संगने (लब्ध्वा के०) पामीने (मुक्त्यै के०) मुक्तिने माटे हवे कहेशुं एवां कार्य करो. तें कार्य केवां ? त्यां कहे ठे. के (वोधं के०) सम्यक्त्वने (देवादि के०) देव, गुरु, धर्म, तेने विषे (शक्तीः के०) शक्तिने (कुरुत के०) करो. आहिं कुरुत ए क्रियापदनुं सर्वत्र योजन करवुं. तथा वली (शमयतिश्रावकत्वव्रतानि के०) शम, यति, श्रावकपणुं अने श्रावकना व्रतोनुं आराधन करो. तथा (सप्तक्षेत्री के०) सातक्षेत्र, सप्तक्षेत्री पदनुं ग्रहण ठे माटे सात क्षेत्रनुं एक द्वार तथा एक श्रीसंघनुं अने सात क्षेत्रनां जुदां नाम लेइने सात द्वार. एवं नव द्वार ग्रहण करवां (जिनार्चानयविनयसुवैराग्यदानादिपुष्टिं के०) जिनअर्चन, नय, विनय, सुवैराग्य, एवं चार द्वार तथा वली दान, शील, तपोन्नावनानी पुष्टिने करो, एम समजवुं. ए पांच द्वार जाणवां. तथा (शब्द के०) शब्दादिक पंचविषयनां पांच द्वार जाणवां तथा (द्यूत के०) जुगार विगेरे सात व्यसनरूप सात द्वार अने आठमुं साते व्यसननुं एक, एम आठ द्वार जाणवां तथा (क्रुधादेः के०) क्रोधादिक चार कषायनां चार द्वार अने पांचमुं समुच्चय कषायनुं एक द्वार. एवं पांच द्वार जाणवां. ए सर्वेनो (जयमपि के०) जय जे तेने पण करो. तथा (सुकृताहेषु के०) सुकृत दिवसोने विषे (सत्कर्म के०) सारां कार्यने करो. एटले सुकृताहेषु एवुं पद कह्युं ठे तेनां वीश द्वार ग्रहण करवां. आ श्लोकमां कहेलां कार्य, हे न्नव्यजीवो ! तमे करो ॥

आ काव्यमां लखेलां सर्व मली केटलां द्वार थयां ते कहे ठे. १ आर्यदेश, २ मनुष्यन्नव, ३ सत्कुल, ४ साधुजननो संग, ५ सम्यक्त्व, ६ देव, ७ गुरु, ८ धर्म, ९ कथमपि, १० वोध, ११ शक्ति, १२ शम, १३ यति, १४ श्रावकत्व, २६ वारव्रत, २७ सातक्षेत्र, २८ जिनविंव, २९ जिनन्नुवन, ३० आगमपुस्तक, ३१ संघ, ३२ तपोधन, ३३ तपोधना, ३४ श्रावक, ३५ श्राविका, ३६ जिनार्चा, ३७ नय, ३८ विनय, ३९ सुवैराग्य, ४० दान, ४१ शील, ४२ तप, ४३ न्नावना, ४४ ए चार धर्मनी पुष्टि, ४५ शब्द, ४६ रूप, ४७ रस, ४८ गंध, ४९ स्पर्श, ५० सात दुर्व्यसन, ५१ द्यूत,

५१ मांस, ५२ सुरापान, ५४ वेश्या, ५५ पापर्द्धि, ५६ चोरी, ५७ परस्त्रीग मन, ५८ कषाय, ५९ क्रोध, ६० मान, ६१ माया, ६२ लोभ तथा सुकृत दिवसने विषे सत्कर्मनां वीश द्वार. एम सर्व मली व्यासी द्वार थयां ॥२॥

हवे उपर लखेलां द्वारमां प्रथम सत्कुल द्वार कहे छे.

कोऽपि स्याल्लघुकर्मकः सुकृतधीर्देशेऽप्यनार्ये स्वत, स्तस्या
प्यार्द्रकुमारवद्गुणचयः किंत्वार्यदेशाश्रयात् ॥ क्षाराब्धौ
शशिनोऽथ कौस्तुभमणेः सा श्रीः कुतोयाऽभवत्, गं
गाशालिनि शंभुमूर्ध्नि कमलागारे हरेश्चोरसि ॥ ३ ॥

अर्थः—(कोपि के०) कोइ पण (लघुकर्मकः के०) लघु कर्मवालो जीव, (अनार्ये के०) अनार्य एवा (देशेपि के०) देशनेविषेपण उत्पन्न थयो छतो (स्वतः के०) पोतानी मेले (सुकृतधीः के०) धर्मबुद्धि वालो जीव, (स्यात् के०) होय, (किंतु के०) तो पण (तस्यापि के०) ते पुरुष ने पण (आर्यदेशाश्रयात् के०) आर्यदेशना आश्रयथकी (आर्द्रकुमारवत् के०) आर्द्रकुमारनी पेठें (गुणचयः के०) गुणनो संचय थाय छे. आहीं दृष्टांत कहे छे. ते केनी पेठें ? तो के (शशिनः के०) चंद्रमानी (गंगाशालिनि के०) गंगाथी शोभता एवा (शंभुमूर्ध्नि के०) शंभु एटले महादेव तेना मस्तकने विषे (अथ के०) वली (कौस्तुभमणेः के०) कौस्तुभमणिनी (हरेः के०)वासुदेवना (कमलागारे के०) लक्ष्मीने रहेवाना स्थानकरूप एवा (उरसि के०) हृदयनेविषे (या के०) जे (श्रीः के०) शोभा (अभवत् के०) होती हवी, (सा के०) ते शोभा (च के०) वली (क्षाराब्धौ के०) क्षारसमुद्रनेविषे (कुतः के०) क्यांथीज होय ? अर्थात् होयज नही. एटले ते बेहु वस्तुनुं उत्पत्तिस्थानक तो क्षार समुद्रज छे परंतु शिव अने विष्णुना आश्रयथी ते बेहु उत्तम गुणसंचयने पाम्यां ॥

हवे अहीं आर्द्रकुमारनी कथा कहे छे. पूर्वभवने विषे आर्द्रकुमारें दीक्षा ग्रहण कर्या पछी कुलनो मद कर्यो. जे हुं ब्राह्मण छुं. ते शूद्रना घरनेविषे भिक्षा ग्रहण केम करुं ! ते वखत अभयकुमारने जीवें वार्यो तो पण मनें त्याग न कर्यो. तेथी आगामि भवनेविषे नीच कुलमां अवतार थयो. नराजाना घरनेविषे ते आर्द्रकुमार उत्पन्न थइ महोटो थयो, त्यारें ह

आवेला वणिकना पुत्रोयें अन्नयकुमारनुं वर्णन ते आर्द्रकुमार पासें कर्युं. पूर्वन्नवना स्नेहें करी आर्द्रकुमारने ते अन्नयकुमारनुं वृत्तांत सांन्नलतांज स्नेह वृद्धिंगत थयो. पढी ते वणिक पुत्रोनी साथें अन्नयकुमारने न्नेट मोकली अने अन्नयकुमारें वीरन्नगवानना कहेवाथकी पूर्वन्नव व्यतिकर आर्द्रकुमारनो जाण्यो. तेवारें अन्नयकुमारें पट्टकुलें करी आछादित करी श्रीजिन प्रतिमानुं प्रेषण कराव्युं. ते प्रतिमाना दर्शने करीनेज पूर्वन्नवनुं स्मरण आव्युं अने वैराग उत्पन्न थयो. तेवारें महोटा कष्टे करीने अनार्यदेश थकी आर्यदेशमां आवीने दीक्षा ग्रहण करी. वली न्नोग्यकर्म बाकी रहेलां होवाथी गृहस्थाश्रम स्वीकार कर्यो. तिहां चोवीश वर्ष रही पढी दीक्षा ग्रहण करी मोक्ष पाम्या ॥ गाहा ॥ अप्पा विमोइउ न्ना,ववंधणा दव्व बंधणा उय ॥ जह्व जउ परतिछिसु, सो अद्दरिसी सिवं पत्तो ॥ ३ ॥

हवे बीजुं आर्यदेशोत्पन्न द्वार कहे ढे.

आर्यं देशमवाप्य धर्मरहितोऽप्यन्यस्य धर्मक्रियां, धर्मस्थानमहांश्च वीक्ष्य सुगुरोः श्रुत्वा च धर्मं क्वचित् ॥
बोधं याति कुलोद्भनास्तिकमतो न्नूपः प्रदेशी यथा, सत्यं चंदनसंगिनः क्षितिरुहो नान्येऽपि किं चंदनाः ॥४॥

अर्थः—(धर्मरहितोपि के०) धर्मरहित एवो पण जीव, (आर्यदेशं के०) उत्तम एवा आर्यदेशने (अवाप्य के०) पामीने (अन्यस्य के०) बीजा श्रद्धालु धर्मिजनोनी (धर्मक्रियां के०) धर्मक्रियाने तथा ते जनोना (धर्मस्थान के०) धर्मस्थानोने विषे (महान् के०) महोटाउत्सवोने (वीक्ष्य के०) जोइने (च के०) वली (सुगुरोः के०) सुगुरुना मुखथकी (क्वचित् के०) कोइक वखत (धर्मं के०) धर्मने (श्रुत्वा के०) सांन्नलीने (बोधं के०) बोधने (याति के०) पामे ढे. (यथा के०) जेम (प्रदेशीन्नूपः के०) परदेशी राजा बोधने पाम्यो, ते केवो ढे? तोके (कुलोद्भनास्तिकमतः के०) कुलागत ढे नास्तिकमत जेनुं एवो ढे. (सत्यं के०) ते साचुं ढे. केम के (चंदनसंगिनः के०) चंदन वृक्षना संगवाला एवा (अन्येपि के०) बीजा पण (क्षितिरुहः के०) वृक्षो (किं न चंदनाः के०) शुं चंदन नथी थातां? अर्थात् थायज ढे. एम्ने सारा जनना संगथकी मोक्ष प्राप्ति थाय ढे ॥ ४ ॥

आंही परदेशी राजानी कथा कहे छे. श्वेतांबिका नगरीनेविषे नास्तिक मतस्थापक प्रदेशीराजा राज्य करतो हतो. एक दिवस ते नगरीना उद्यानमां श्रीपार्श्वनाथना शिष्य केशीगणधर आव्या, त्यां प्रदेशीराजायें आवी प्रश्न पूछयो के महाराज ! एकदिवस चोरें चोरी करी, तेने में निश्छिद्रमंजूपामां पूर्यो. पछी ते मरण पाम्यो त्यारें तेनो जीव क्यांथी निसरी गयो ? एटले आत्मा तो छेज नही, एम ते दिवसथी हुं मानुं छुं. ते वात सांभली गुरुयें जवाप आप्यो के छिद्र विनानी पेटीमां वेशीने कोइक पुरुष शंखवगाडे छे तो ते शंखनाद वाहेर रहेला जनो सांभले छे के केम ? राजा वोल्यो के सांभले छे. त्यारें गुरु कहे के मंजूषामां छिद्र तो पड्यां नही ने शब्द क्यांथी संभलायो ? तेनो उत्तर कांइपण राजायें दीधो नहीं. त्यारें गुरु कहे छे के हे राजन ! एम चोरनो जीव पण मंजूषामांथी नीकली गयो माटे आत्मा छे एम निश्चें जाणवुं. आ दृष्टांतें करी प्रदेशी राजा निःसंशय थयो अने नास्तिकमतनो त्याग करी अर्हतमतने स्वीकारी स्वर्गमां गयो ॥४॥

उत्सर्पिण्यवसर्पिणीः क्षितिमरुत्तेजोऽप्स्वसंख्या वने,ऽनंता
स्ता विकले गणेयशरदो जात्या विपत्त्या नयेत् ॥ स
प्ताष्टौ तु भवांस्तिरश्चि मनुजे जीवोंऽतरेत्राऽस्य चे,
द्धर्मस्तद्धरणेंऽवत्स सुगतिं प्राप्नोति तिर्यङ्गपि ॥ ५ ॥

अर्थः– (जीवः के०) जीव, संसारनेविषे भमतो छतो (क्षितिमरुत्तेजोप्सु के०) पृथ्वी, तेज, तथा वायु अने जलने विषे (असंख्याः के०) असंख्याति (उत्सर्पिण्यवसर्पिणीः के०) उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी कालपर्यंत जन्ममरणने (नयेत् के०) पामे पछी (वने के०) प्रत्येक वनस्पतिअनंतकायनेविषे (ताः के०) ते (अनंताः के०) अनंतो कालपर्यंत रहे. ते पछी (विकले के०) वेंद्री तेंद्री अने चउरिंद्रीरूप विकलेंद्रियनेविषे (गणेयशरदः के०) संख्यातावर्ष (जात्या के०) जन्में करीने अने (विपत्त्या के०) मरणेकरीने रहे अने (तिरश्चि मनुजे के०) तिर्यंच अने मनुष्यनेविषे (सप्ताष्टौ के०) सात आठ (भवान् के०) भवने काढे. अर्थात सात आठ भवपर्यंत रहे (तु के०) वली (अत्रांतरे के०) आ ए पूर्वोक्त अंतेवांतनेरोविषे(अस्य के०) आ जीवने जो (धर्मश्चेत् के०) धर्मप्राप्त थाय, (क

त् के०) तो(तिर्यङ्गपि के०) तिर्यंच पण(धरणेंद्रवत् के०)धरणेंद्रनी पेरें (सुगतिंके०) रूडीगतिने (स के०) ते (प्राप्नोति के०) पामे छे. जेम सर्प नो जीव हतो ते धर्मनी प्राप्तियें करीने धरणेंद्र थयो हतो ॥ ५ ॥

ते धरणेंद्रनी कथा कहे छे. 'वाराणसी नगरीनेविषे कमठनामनो तप स्वी पंचाग्निरूप तपने तपे छे. एक दिवसनेविषे गवाक्षमां बेठेला श्री पार्श्व नाथ भगवाने ते तापसनी पूजा करवा माटे पुरना जनोने गाम बहार जतां दीठां, तेमणें अवधिज्ञाने करीने ते तपस्वीनी धूणीना काष्ठमां बळ तो एवो भुजंग जोयो. पछी त्यां जइने बळता काष्ठथी सर्पने बहार खेंची लीधो के तुरत ते सर्पें पार्श्वनाथस्वामीने नमस्कार कर्यो ते सर्प नवकार ना प्रभावथी धरणेंद्र थयो. पछी पार्श्वनाथ भगवान् तपस्वीने कहेवा लाग्या जे हे मूर्ख ! तुं आ अज्ञान तप करे छे ? दयाधर्मने जाणतो नथी ? इत्यादि वाक्योयें करीने ते तपस्वीने जनना समूहनी समक्षमां फिटकार आप्यो. पछी एकदा पार्श्वनाथ स्वामी, दीक्षा लीधा नंतर कायोत्सर्गें रह्या हता, त्यारे तेमनीउपर ते तापसनो जीव मरीने मेघमाली देवता थयो छे, तेणे मुशळ धारायें करी वरसादनो उपसर्ग कर्यो तेने सहन करता एवा अने धरणें द्रना फणामंमळनी नीचें रह्या एवा भगवान् श्रीपार्श्वनाथने केवलज्ञान उ त्पन्न थयुं. त्यारें धरणेंद्रना भयथी बीतो थको मेघमाली देवता भगवानने पगे लागीने मिथ्या दुष्कृत देतो हवो. पछी ते धरणेंद्र स्वस्थानकें गयो ॥५॥

कालप्राणिभवाअनादिनिधनास्तत्सर्वजातौ सदा, जी
वेन भ्रमता मुहूर्त्तमपि हि प्राप्तं न किंचिध्दितम् ॥
मुक्ताशुक्तिकयेव वारि मणिकृन्नार्थौ क्वचिद्दैवत,स्तत्प्रा
प्याथ सकंबलेन शबलेनोद्गणेव धार्यं श्रिये ॥ ६ ॥

अर्थः– (कालप्राणिभवाः के०) कालधर्म युक्त प्राणीने जन्मो जे छे, ते (अनादिनिधनाः के०) अनादि अनंत वर्त्ते छे तेमां (सर्वजातौ के०) सर्वजातिनेविषे (सदा के०) निरंतर (भ्रमता के०) भमता एवा (जी वेन के०) जीव जे तेणे (मुहूर्त्तमपि के०) मुहूर्त्तमात्र पण (किंचित् के०) कांइ पण (तत् के०)ते (हितं के०) पुण्यरूप हित (न प्राप्तं के०) नहिं प्राप्त कर्युं (अथ क्वचिद्दैवतः के०) ते क्यारेंक दैवयोगें करी (तत्प्राप्य

के०) ते हितकारी पुण्यने पामीनें (श्रिये के०) मोक्षलक्ष्मीमाटे ते (धार्यं के०) धारण करवुं परंतु ते पुण्यने मूकवुं नही. ते जेम के (वार्द्धौ के०) समुद्रने विषे (मणिकृत् वारि इव के०) मोतीनुं करनार पाणी जेम (मुक्ताशुक्तिकया के०) मोतीनी छीपें धारण कराय छे. तिहां दृष्टांत कहे छे के जेम (सकंबलेन के०) कंबलनामा वृषभें युक्त एवा (शंबलेनउक्षणा इव के०) शंबलनामा वृषभें जेम पुण्यने मोक्ष लक्ष्मी माटे धारण कर्युं ॥६॥

हवे ते कंबल अने शंबल वृषभनी कथा कहे छे ॥ यथा ॥ महुराए जिणदासो, आभीर विवाहगो ण उववासो ॥ भंमीरमित्तवच्चे, भत्तेनागोहि आगमणं ॥ १ ॥ वीरवरस्स भगवउ, नावारूढस्स कासि उवसग्गं ॥ मिछ्छदिठि पभुं, कंबल संबल समुत्तारे ॥ २ ॥ मथुरानगरीनेविषे कोइ जिनदास नामे शेठ वसे छे तेने अत्यंत स्नेहथकी आभीरलोकें पोताना विवाहानंतर कंबल अने शंबलनामा अत्यंत सुशोभित बे वृषभ भेट कीधा. ते बेहु वृषभो प्राशुक आहार तथा जलें करी व्रत पालता एवा शेठनी धर्मासक्ति जोइने जातिस्मरण ज्ञान पाम्या तेथी पोताना पूर्वजन्मनी स्मृति उत्पन्न थइ. तेवारें श्रावकनी पेठें अष्टम्यादिक पुण्य तिथियोना दिवसनेविषे उपवास करवा लाग्या. एक दिवसें ते शेठना कोइक मित्रें भंमीरमित्रनामना यक्षनी यात्रा करवामां ते बेहु बेलने खेड्या तेथी रुधिरयुक्त थया थका मरण पामी नागकुमार देवो थया. एकदा नावमां बेसीने गंगा उतरता एवा श्रीवीरस्वामीने उपसर्ग करता एवा मिथ्यादृष्टि देवने ते बेहु देवोयें उपसर्ग करतो निवार्यो ॥ ६ ॥

क्षेत्रे नामलवालुके च लवणाकीर्णे च रोहेद्यथा,
बीजं किंचिदिहाखिले च फलति क्षात्रे च नानाफ
लैः ॥ देवे नैरयिके तिरश्चि मनुजे श्रेयःप्रसूतिस्तथा,
तस्मान्मेघकुमारवन्नरभवेऽनंतश्रिये त्वर्यताम् ॥ ७ ॥

अर्थः—(इह के०) आलोकने विषे (यथा के०) जेम (बीजं के०) बीज, (अमलवालुके के०) निर्मल जेमां रेती छे एवा (क्षेत्रे के०) क्षेत्रते मां फले नही (च के०) तथा (लवणाकीर्णे के०) लवणाकीर्ण क्षेत्र कनेविषे पण (न रोहेत् के०) उगे नहीं कदाच उगे तो फले नहीं (च के०

वली (अखिले के०) सर्वजातिना क्षेत्रनेविषे जो उगे ठे तो (किंचित्फलति के०) कांइक फले ठे. (च के०) वली (क्षात्रे के०) खातरवाला एवा खे त्रने विषे (नानाफलैः के०) विविधप्रकारनां फलोयें करी फले ठे. (तथा के०) तेवी रीतें (श्रेयःप्रसूतिः के०) बोधबीज जे समकेत तेनी उत्पत्ति (देवे नैरयिके तिरश्चि मनुजे के०) देव,निरय,तिर्यंच अने मनुष्योनेविषे पूर्वना क्षेत्रना दृष्टांतोथी अनुक्रमें जाणवी. आहिं श्रेयःप्रसूतिरूप बोध बीज जाणवुं. अमल वालुका क्षेत्रसमान देवजव जाणवो. अने लवणाकीर्णसमान नरकज व जाणवो. अखिल क्षेत्रसमान तिर्यंचनो जव जाणवो अने खात्रना क्षेत्र समान नरजव जाणवो. (तस्मात् के०) ते माटे हे लोको ! (नरजवे के०) मनुष्यजव प्राप्त थये ठते (मेघकुमारवत् के०) मेघकुमारनी पेठें (अनंत श्रिये के०) मोक्ष लक्ष्मीनेमाटे (त्वर्यतां के०) उतावलथी उत्सुक थाउ अर्थात् मनुष्य जव जे ठे ते सर्व देवादिकना जवथी उत्तम ठे माटे तेमां मोक्ष पामवानो प्रयास करो. ए उपदेश कह्यो ठे ॥ ७ ॥

आंही मेघकुमारनी कथा कहे ठे. राजगृही नगरीनेविषे श्रेणिकराजा पिता अने धारणी माताथी मेघकुमारनामा पुत्र उत्पन्न थयो हतो, ते मे घकुमारें आठ कन्यानुं पाणिग्रहण कर्युं तेनी ऋद्धि श्रीज्ञातांगजीमां स विस्तर कहेली ठे त्यांथी जाणवी. ते मेघकुमारें वीरजगवाननी वाणी सां जलीने आठे स्त्रीयोनो त्याग करी दीक्षा ग्रहण करी. पठी रात्रिनेविषे सु तां थकां साधुना पादप्रहारें करी डुःख पामवाथी दीक्षा उपर मनोजंग थयो. प्रजातें श्रीवीरजगवानें ते मेघकुमार साधुने देशना देवा मांमी. ते जे म के ॥ गाहा ॥ जलजवतरलं जीयं, अथिरा लच्छी विजंगुरो देहो ॥ तुछा य काम जोगा, निबंधणं डुरक लरकाणं ॥ १ ॥ को चक्कवट्टि रुद्धिं, चइउं दासत्तणं समहिलसइ ॥ को वररयणाइं मुत्तुं, परिगएहइ उवलखंमाइं ॥२॥ नेरइआण वि डुरकं,जिज्जइ कालेण किं पुण नराणं ॥ ताण चिरं तुह होही, डुरकमिणं मासमुच्चियस्सु ॥३॥ ए त्रण गाथा कह्या पठी मेघकुमारना पूर्वज व कह्या. ते जेम के तुं वैताढ्यनेविषे सुमेरुनामा हाथी थयो ते सातसो हाथणीनो नायक थयो. त्यां वनाग्नि लागवाथी तरस्यो थयो थको तलावमां पेठो. तेवारें सामा हाथीयें कादवमां नाखी मारी नाख्यो,त्यार पठी विंध्या चलने विषे पांचशो हाथणीनो नायक मेरुप्रजनामा तुं हस्ती थयो. ते जव

मां दवाग्नि थयेलो जोइने तुने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. त्रण स्थंमिल कर्यां. त्यां शरीर खजवालवामाटे पग उंचो कर्यो, एवामां कोइक शशलो ताहरा पग नीचें आवी उनो रह्यो. पछी तें त्रणदिवस पर्यंत शशलानी कृपा यें करी पग नीचें मूक्यो नही. चोथे दिवसें पग उपाडीने स्थापन करतां ते हस्ती मरीने तुं मेघकुमार श्रेणिकराजाने त्यां अवतर्यो. आ प्रकारनां वीरज्ञगवाननां वचन सांजली करीने फरी वैराग्य उपन्यो, तेवारें अखंम संयम पालीने विजय विमाने देव थयो. माटे मनुष्य ज्ञव सर्वथी उत्तम छे, एम जाणवुं ॥७॥

वेलाकूले महति नृजवे प्राक्प्रसन्नेंडवत्त, जी
वा मूढश्लथदृढधियः क्रीणते कर्म वस्तु ॥ क्रू
रा गुप्तिः कुगतियुगलीवर्णकः स्वर्डरंतो, येनां
ते स्याच्छिवपुरमुरुस्फूर्त्ति तेपां क्रमेण ॥ ७ ॥

अर्थः—(मूढ के०) मूढ,तथा (श्लथ के०) शिथिल तथा (दृढधियः के०) दृढबुद्धि वाला एवा त्रण प्रकारना (जीवाः के०) जीवो, (तत् के०) ते (कर्मवस्तु के०) कर्मरूप वस्तुने (क्रीणते के०) उपार्जन करे छे. क्यां उपार्जन करे छे? तो के (नृजवे के०) मनुष्यजन्मनेविषे. ते केवो नृजव छे? तो के (वेलाकूले के०) समुद्र समान (महति के०) विस्तीर्ण एवो. केनीपेठें? कर्मवस्तुने ग्रहण करे छे,तो के (प्राक्प्रसन्नेंडवत् के०) पूर्वे थयेला प्रसन्नचंद्रराजर्षिनी पेठें (येन के०) जे कर्मवस्तुयें करी (तेपां के०) ते पूर्वोक्त त्रण प्रकारना जीवोने (क्रमेण के०) अनुक्रमें त्रण गति प्राप्त थाय छे. तेमां (कुगतियुगलीवर्णकः के०) नरकतिर्यक्रूप जे गतिनुं युगल तेनो छे वर्णक जेमां एवी (क्रूरागुप्तिः के०) दुःखरूप छे गुप्ति एटले गृह जेनुं एवी गति,मूढबुद्धि वाला प्राणीने थाय छे. तथा शिथिल बुद्धिवालाने (अंते के०) अंतमां (स्वर्डरंतः के०) स्वर्ग पण दुःप्राप्य थाय छे अने दृढबुद्धिवालाने (उरुस्फूर्त्ति के०) अत्यंत छे प्रकाश जेनो एवुं (शिवपुरं स्यात् के०) मोक्षपद प्राप्त थाय ॥७॥

आहिं प्रसन्नचंद्रराजर्षिनी कथा कहे छे. पोतनपुर नगरना स्वामी प्रसन्नचंद्रराजायें पोताना राज्यें छमासना पोताना पुत्रने थापी दीक्षा ग्रहण करी. एकदा श्रीवीरस्वामी राजगृही नगरीनेविषे आवी समोसर्या. ते मनाथी केटलेक दूर उनो रहीने सूर्य सामी दृष्टि करी तथा उंचा हाथ क

री एक पगे नन्नो रही तप करवा मांम्युं. तेवामां एक डुर्मुखनामा श्रेणि कना पालायें आवीने ते राजर्षिने कह्युं जे हे मूढ! तुं शुं तप करे ले? वैरी ताहरा नगरने विंटी राज्य ग्रहण करी बमासना तारा बालकने मारी नाख शे. ते वात सांन्नलतांज ध्यानन्नंग थइ गयो. पोताना मनमां संग्राम करवा नो विचार थवा लाग्यो तेवामां श्रेणिक राजायें मनें करी वंदन कर्युं तो पण तेने धर्मलान्न न दीधो. तदनंतर श्रेणिकराजायें श्रीवीर पासें आवी ने प्रसन्नचंद्रराजर्षि आश्रयी पूब्युं, तेवारें वीरन्नगवानें सप्तमनरक, मनुष्य जन्म अने सर्वार्थ सिद्धिगमन, आ त्रणे प्रश्ननो प्रत्युत्तर प्रसन्नचंद्रराज र्षिना मनना परिणाम उपर दीधो अने चोथा प्रश्नमां प्रसन्न चंद्रराजर्षिने केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं, एम कह्युं ॥ ८ ॥

तत्तादृशाऽन्नव्यपितुः सुतोपि, धर्मालसोयः
सुलसोऽन्नवन्न ॥ स किं विषाद्वेर्विपहृन्मणि
स्त, त्पंकान्न वा श्रीसदनं सरोजम् ॥ ए ॥

अर्थः-(यः के०) जे (सुलसः के०) सुलसनामा पुरुष (तादृशाऽन्नव्यपि तुः के०) तेवा अन्नव्य पितानो (सुतोऽपि के०) पुत्र ले (तत् के०) तो पण (धर्मालसः के०) धर्मनेविषे आलस्ययुक्त (नान्नवत् के०) न थतो हवो. अ र्थात् धर्मोद्यमी थतो हवो. आहिं कांही आश्चर्य जाणवुं नहिं कारण के (सः के०) सर्वजनोमां प्रसिद्ध एवो (विषहृत् के०) विषने हरण कर नारो (मणिः के०) मणि ते (विपाहेः के०) विपवाला सर्पथी उत्पन्न थयो एवो तो पण विपने हरण करनारो (किं के०) शुं (न के०) नथी थातो? अर्थात् थायज ले. (वा के०) अथवा (श्रीसदनं के०) लक्ष्मीने रहेवा नुं घर, (पंकात् के०) कचराथी उत्पन्न थयेलुं अने (तत् के०) ते सर्वत्र प्रसिद्ध एवुं (सरोजं के०) कमल (न के०) नथी शुं? अर्थात् लेज. तेम दुष्ट पिताथी उत्पन्न थयेलो एवो सत्पुरुष ते धर्मकृत्य करे ले ॥ ए ॥

आंहि सुलसनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ले ॥ राजगृहीनगरीने विषे कालकसौकरिकनामा कसाइनो पुत्र सुलस नामें हतो, ते अन्नयकुमा र नामा मंत्रीनी संगतिथी दयाधर्मपालक श्रावक थयो. पत्नी कालक सौक रिकने श्रेणिकराजायें वार्यो, तोपण नित्य पांचशें महिष मारवाना पापथी

निवृत्ति न पाम्यो. कालकसौकरिक दुर्लेश्यायें मरीने सातमे नरकें गयो. अने तेना पुत्र सुलसने स्वजनोयें आवी कह्युं के आपणें तारा पितानुं पाप सर्वे वेंची लेवुं त्यारें सुलसें पोताना पगपर कुवाडो मारीने सर्वने कह्युं के जेम तमे म्हारा बापना करेला पापने वेंचो छो तेवीरीतें आ मारी वेदनाने त मो सर्वे वेंची लीयो. ते सांजली सर्व मौनव्रत धारण करी बेठा तेणे जीव वध न कर्यो ॥ गाहा .. अवश्हतिय मरणं, नय परपीडं करंति मणसा वि ॥ जे सुवियसुग्गइ पहा, सोयरिय सुउ जहा सुलसो ॥ ए ॥

बोधाय सद्धर्मकुलोद्भवाः स्त्रियोऽप्युदायनस्येव पुरा प्रभावती॥ सत्तीर्थता किं जलधेर्न गंगया, सद्वृत्तता वा शशिनोन राकया॥१०॥ इतिसत्कुलद्वारम्॥१॥

अर्थः–(सद्धर्मकुलोद्भवाः के०) प्रधानधर्मसहित जे कुल तेनेविषे छे उ त्पत्ति जेनी एवी (स्त्रियोपि के०) स्त्रीयो पण (बोधाय के०) बोधने माटे होय छे. केनी पेठे? तोके (पुरा के०) पूर्वे (उदायनस्य के०) उदायन राजा नी (प्रभावतीव के०) प्रभावती नामनी स्त्री जेम बोध पामी,तेम स्त्रीयो बोध ने पामे छे. तेमां कांइ आश्चर्य नथी. केम के (जलधेः के०) समुद्रनी (स त्तीर्थता के०) सत्तीर्थता ते (किं के०) शुं (गंगया के०) गंगायें करी (न के०) न थाय. अर्थात् थायज छे. जुवो प्रत्यक्षप्रमाण के ज्यां गंगा समुद्रने मले छे त्यां प्रियमेलकनामा तीर्थ प्रसिद्ध छे. (वा के०) अथवा (शशिनः के०) चंद्रमानी (सद्वृत्तता के०) गोलाकारपणुं (राकया के०) पूर्णिमायें करी शुं (न के०) न थाय अर्थात् थायज छे ॥ १० ॥

आहिं प्रभावती नामनी राणीनो दृष्टांत छे. माटे तेनी कथा कहे छे. वी तभय पत्तनमां मिथ्यादृष्टि उदायननामा राजा राज्य करे छे. ते एकदिवस न दीना जलमां क्रीडा करतो हतो तेवामां एक पेटी जलमां तरती नजरें पडी. ते लइ पोताने घेर आणी. तेने तालां घणांज मजबूत दीधां हतां ते कोइ थी पण उघाडी शकाणां नही. तेवामां चेटक महाराजनी दीकरी महासती प्रभावतीयें पोताना धर्मनुं श्रवण कराववा सामर्थ्य ने कह्युं जे मारा मनमां सुदेव सुगुरु अने सुधर्म जो होय तो आ पेटीनां तालां उघडजो. एवुं कहे वाथी तुरत तालां उघडी गयां. तेमांथी अतिशयें लहवर्त्तमान विद्युन्माली

देवतानी बनावेली देवाधिदेवनी प्रतिमा नीकली, ते प्रतिमाने राजायें जोइ ने तेज समयें ते राजा सम्यक्दृष्टि थयो. एकदिवस जिनमूर्त्ति सन्मुख नृत्यकरतुं अने गानकरतुं एवुं राणीनुं कबंध जोयुं एटले माथाविनानुं राणीनुं धड जोयुं. ते वात राजायें राणीने कही. राणीयें खराब चिन्हथी पोतानुं आयुष्य थोडुं जाणीने दीक्षा ग्रहण करी अनशन लइने सौधर्म देवलोकें देवता थइ तिहांथी पूर्वे स्नेहने लीधे राजापासें आवी राजाने प्रतिबोध कर्यो. तेथी राजायें कुगुरुवासनादि छोड्यां अने सद्गति पाम्यो माटे सद्धर्म पालनारी स्त्रीथी पण बोध थाय छे ॥ १० ॥ इति सत्कुल द्वारं ॥

अथ सुगुरुद्वारं ॥ जीवादितत्त्वविकलैर्विपुलैस्तपोभि, र्मुक्तो न तामलिरजातसुसाधुसंगः ॥ कः स्वर्णसिद्धिमधिगच्छति कूटकल्पैः, कोवांबुधिं तरति जर्जरयानपात्रैः ॥ ११ ॥

अर्थः—हवे सत्संग, एटले सद्गुरु संग तेनुं द्वार कहे छे. (अजातसुसाधुसंगः के०) नथी उत्पन्न थयो सारा साधुनो संग जेने एवो (तामलिः के०) तामलि तापस (जीवादितत्त्वविकलैः के०) जीवादि तत्वोयें रहित हतो तेथी (विपुलैः के०) विस्तीर्ण एवां (तपोभिः के०) तपोयें करी पण (न मुक्तः के०) मुक्त थयो नहिं अर्थात् संसारथकी अथवा कर्मथकी न मुकाणो. ते सत्य छे. जुवो के (कूटकल्पैः के०) खोटीवस्तुथी (कः के०) कोणपुरुष, (स्वर्णसिद्धिं के०) सुवर्णसिद्धिने (अधिगच्छति के०) प्राप्त थाय छे? अर्थात् कोइ पण प्राप्त थातो नथी. (वा के०) अथवा (जर्जरयानपात्रैः के०) जीर्णवाणेंकरी (अंबुधिं के०) समुद्रने (कः के०) कोण (तरति के०) तरे छे अर्थात् कोइ तरी शकतुं नथी. बीजुं तो सर्व सुगम छे ॥ ११ ॥

हवे आंही तामली तापसनी कथा कहे छे. ताम्रलिप्ति पुरीनेविषे तामलीनामा शेठ हतो तेणे तापसी दीक्षा ग्रहण करी. पछी ते मध्यान्हें गाममां जइ वोहरी लावे ते वहोरेला आहारना चार भाग करे,तेमां एक जलचर जीवोनो, बीजो स्थलचर जीवोनो, त्रीजो खेचर जीवोनो अने चोथो पोतानो, एम कल्पना करी त्रण भाग काढी नाखे अने चोथा भागनां अन्नने एकवीश वखत जलें करी धोइने भोजन करे. ए प्रकारनुं तप साठ हजार वर्ष कर्युं,पछी ईशान देवलोकमां इंद्र थयो तेणे अवधिज्ञानेंकरी ए

वुं जाएयुं जे में पूर्वजन्मे जे तप कर्युं तेटला तपें तो सात जन मोक्षें जाय पण म्हारा तपमां सुसाधुसंगनो अभाव हतो. कहेलुं ढे के ॥ यतः ॥ गाहा ॥ तामलित्तणे तवेण, जिणमय सिज्जइ सत्त जणाए ॥ सो अन्नाण वसेणा, तामलि ईसाणइंद गउ ॥ ११ ॥

गिरिपुप्पशुकाविवामलोंगी, गुणनाशोदयभा
ग् जडज्ञसंगात् ॥ जलदांबु विषं सुधा च न
स्यात्, कनकाद्रौ च किमिक्षुकानने च ॥ १२ ॥

अर्थः-(अमलोंगी के०) निर्मल प्राणी, (जडज्ञसंगात् के०) जडना अने ज्ञानीना संगथी (गुणनाशोदयभाक् के०) गुणनाश अने गुणोदय तेने भजनारो थाय ढे. केनी पेठें (गिरिपुप्पशुकाविव के०) गिरि अने पुष्प नामा बे पोपट जेम. जुवो (च के०) वली (जलदांबु के०) मेघनुं जल, ते (कनकाद्रौ के०) धंतुराना झाडनेविषे (विषं के०) विष (च के०) अने (इक्षुकानने के०) शेरडीना वनमां (सुधा के०) अमृत (च के० वली)किं के०) शुं (नस्यात् के०) न थाय ? ना थायज ॥ १२ ॥

हवे गिरि अने पुष्पनामा बे शुकनी कथा कहे ढे. चंपानगरीने विषे जितशत्रु राजा राज्य करे ढे. ते कोइ दिवस विपरीत शिक्षित अश्वें बेठेलो तेथी अश्वें कुवाटें पमाड्यो पढी उग्रवनमां ते अश्व राजाने लइ गयो एटलामां एक झाडनी उपर पांजरामां रहेलो कोइक चोरोनो पोपट चोरोने त्यां कहेवा लाग्यो के अरे चोरो, तमारे लुंटवा होय तो लक्षपति माणस जाय ढे माटे लुंटो लुंटो. ते सांभलतांज राजा त्यांथी नाशीने एकदम तापसना आश्रममां पेसी गयो. त्यां तापसनो शुक पांजरामां रहेलो हतो ते राजाने आवतो जोइ तापसो प्रत्यें कहेवा लाग्यो के हे मुनिवरो ! राजा आवे ढे अभ्युत्थान करो. आसन मांमी आपो, आचमन आपो. आतिथ्य करो, आ वां वचन ते पोपटनां सांभली राजा हर्षित थयो. एवुं कौतुक जोइ शुकपा सें आवी राजायें शुकनें पूछ्युं जे एक पोपटें चोरोनें कयुं के आ जाल जाय ढे माटे लुंटो अने तुं कहे ढे जे आ राजाने सन्मान आपो माटे ते केवी जातनो पोपट अने तुं केवी जातनो पोपट ढो ? त्यां तापसनो शुक बेश्लोक बोल्यो के हे राजा ! सांभल ॥ श्लोक ॥ मातापयेका पिताप्येको.

मम तस्य च पक्षिणः ॥ अहं मुनिभिरानीतः,सच नीतो गवाशनैः ॥१॥ गवाश नानां स गिरः शृणोति,अहं च राजन् मुनिपुंगवानाम् ॥ प्रत्यक्षमेतद् भवता च दृष्टं, संसर्गजादोषगुणा भवंति ॥ २ ॥ आ वेहु श्लोकनो भावार्थः– हे राजन् ! अमारी वेहुनी माता पण एकज छे पिता पण एकज छे परंतु मने मुनि लोको पकडी लाव्या छे अने तेने चोरो पकडी गया छे माटे ते डुष्टजननी वाणी बोले छे हुं मुनिपुंगवोनी वाणी बोलुं बुं. हे राजन् ! ए तें प्रत्यक्ष दीठुं जे संसर्गथकी दोषो अने गुणो थाय छे सारना संगथी सारी बुद्धि आवेछे अने नरसाना संगथी नरसी बुद्धि आवे माटे सज्जननो संग करवो ॥१२॥

कोप्यन्यएव महिमाननु शुद्धदृष्टे, र्यत् श्रेणिकोह्यवि
रतोऽपि जिनोत्र भावी॥पुण्यार्गलः किमितरोऽपि न
सार्वभौमो,रूपच्युतोऽप्यधिगुणस्त्रिजगन्नतश्च ॥१३॥

अर्थः– (शुद्धदृष्टेः के०) सम्यक्त्व वंत एवा जननो (कोपि के०) कोइपण (ननु के०) निश्चें (अन्यः के०) बीजो (महिमा एव के०) प्रभावज होय छे. (यत् के०) जे कारण माटे (अविरतोपि के०) अविरत एवो पण (श्रेणिकः के०) श्रेणिकराजा, (अत्र के०) आ भरतक्षेत्रनेविषे पद्मनाभनामा (जिनः के०) तीर्थंकर (भावी के०) थाशे (इतरोपि के०) बीजो नीच कुलमां उत्पन्न थयेलो एवो पण (पुण्यार्गलः के०) पुण्याढ्य नामें (सार्वभौमः के०) चक्रवर्त्तिजेवोसर्वभूमिनोराजा (किं के०) शुं (न के०) न थयो. अर्थात् थयोज (च के०) वली ते (रूपच्युतोपि के०) रूपथकी भ्रष्ट थयेलो पण (अधिगुणः के०) अधिक गुणवान् थयो (त्रिजगन्नतः के०) त्रण जगतें जेने नमन करेलु छे एवो थयो ॥

आहिं श्रेणिक राजानी कथा कहे छे. श्रेणिकनामा राजा राजगृही नगरीने विषे राज्य करे छे. ते सम्यक्त्व पाम्या पछी त्रणेकालनेविषे जिननी अर्चा करतो हतो जिननी पासें प्रतिदिवस अष्टोत्तर शत सोनाना जवनो स्वस्तिक पूरतो हतो अने पात्रने दान देतो हतो, ते राजाना सम्यक्त्वनी प्रशंसा इंद्रे देवताउनी पासें करी हती ते देवतायें आहिं आवीने ते श्रेणिकराजानी सम्यक्त्वनेविषे परीक्षा करी. परंतु सम्यक्त्वथकी ते चलायमान थयो नहीं. तोपण ते अविरति छे स्वयंभू रमण समुद्रना मत्स्य

नक्षणनो नियम पण तेणे लीधो नहिं एवो अविरति श्रेणिक राजा पण क्षायिक सम्यक्त्वना लाभथकी आवती चोवीशीमां पद्मनाभनामा प्रथम तीर्थंकर थशे बोहोंतेर वर्षनुं आयु तथा स्वर्णवर्णकाय, शरीरें सात हाथ उंचो, सिंहना लांछन युक्त एवो श्रीवीरभगवानना समान थशे.

हवे पुण्याढ्य राजानी कथा कहे छे. पद्मपुरने विषे तपन राजा राज्य करे छे. तेने ते नगरना रहेनारा कोइ शेठें एक हस्ती भेट कर्यो. ते हाथी राजानो पूर्वभवें मित्र हतो पछी ते हस्तीयें करी राजायें दिग्विजय कर्यो. नगरमां प्रवेश करता ते हाथीयें राजाने बोध करवा माटे एक रस्तामां प डेला खडीना कटकायें करी प्रतोली उपर एक श्लोक लख्यो. ते श्लोक॥ अविज्ञातत्रयीतत्त्वो,मिथ्यासत्त्वोल्लसद्भुजः ॥ हा मूढशत्रुवेषेण,मित्रप्लोषेण हृष्यति ॥ आ श्लोकनो अर्थ सर्व विद्वानोने पूछ्यो पण कोइयें तेनो अर्थ कह्यो नहिं परंतु आनंदसूरियें ते श्लोकनो अर्थ सारी रीतें कह्यो. तेवारें राजायें कह्युं के आ मारो हस्ती जेने राज्य आपे ते राजा. एम मंत्रीने कहीने पोते व्रतग्रहण करतो हवो. पछी ते ज्ञानवान् हस्तीयें वनमांथी कोइ पांगलाने आणी राज्य आपी दीधुं. परंतु ते राजाने पंगु जाणीने कोइ प ण तेनी आज्ञा माने नही. बीजे दिवसे प्रातःकालमां कोइ अन्य राजाउ साथें संग्राम थये छते हाथीपर बेठेला पांगलाना हाथनेविषे रहेलुं तृण ते देवताना प्रभावथकी वज्रतुल्य थयुं. तेवारें ते पंगु कहेवा लाग्यो जे मारी आज्ञा नहि माने तेने शिर आ वज्र पडशे. ते सांभली सर्व राजायें तेनी आज्ञानो स्वीकार कर्यो. पछी ते पंगुनुं पुण्याढ्य एवुं नाम सर्व लो कोयें पाड्युं. ते अनुक्रमें त्रण खंडनो राजा थयो पछी कालेंकरी ते हस्ती मरण पाम्यो. राजायें तेना स्थानकने विषे मोहोटो प्रासाद कराव्यो. प्र तिमानी पासें हाथीनुं रूप कराव्युं. एक दिवस राजा ते श्रीजिनप्रतिमाने देखतो छतो करीरूपने जोतां शुभध्यानथकी केवलज्ञान पामीने मोक्षें ग यो परंतु पाछला भवमां पुण्याढ्यना जीवें मलिन गात्रवाला ऋषिना नेत्र थकी कांटो खेंची लीधो तेथी तेने निष्कंटक राज्य प्राप्त थयुं. अने ते म लिनगात्रवाला ऋषिने जोइ डुगंछा कीधी ते कर्मे करी पंगुत्व प्राप्त थयुं ॥

प्राप्याल्पमप्यमलबोधवचश्चिलाती,पुत्रो यथाघम
लिनोऽपि बिभर्त्ति शुद्धिम् ॥ किं कोटिवेधि रसचंदनर
त्नबिंदु,स्पर्शेपि हेमशिशिरं च न तप्तलोहम् ॥१४॥

अर्थः- (चिलातीपुत्रः के०) चिलातीपुत्र, (यथा के०) जेम (अ ल्पमपि के०) अल्प एवा पण (अमलबोधवचः के०) निर्मल बोधवचनने (प्राप्य के०) पामीने (अघमलिनोपि के०) पापथकी मलिन बे तोपण (शुद्धिं के०) शुद्धिने (बिभर्त्ति के०) धारण करे बे. तेमां काहिं आश्चर्य नथी. जेम के? (कोटिवेधि के०) कोटिप्रमाण लोहने वेधनारो एवो (रस के०) रस अने (चंदनरत्नबिंदु के०) सर्वोत्तम चंदनरसनो बिंदु तेना (स्प र्शेपि के०) स्पर्शनेविषे पण (हेम के०) सुवर्ण (ह के०) अने (तप्तलोहं के०) तपावेलुं लोढुं ते (शिशिरं के०) शीतल (किं के०) शुं (न के०) न थाय ना था यज.तेम सुजनना संगथी शुं मूर्ख होय, ते ज्ञानी न थाय ? ना थायज.

आहिं चिलातीपुत्रनी कथा कहे बे. राजगृही नगरीने विषे एक धन श्रेष्ठी रहेतो हतो तेने पांच पुत्रो हता,तथा सुसीमा नामें एक दीकरी हती. तेने चिलाती नामे एक चाकर हतो ते सुसीमासाथें कुचेष्टा करवा लाग्यो तेथी शेठें तेने बाहेर काढी मूक्यो ते कर्मना वशें करी पल्लीपति थयो. चो रनी धाड लइनें तेज शेठना घरमां चोरी करवा रातें पेठो, अने धाडवा लाने कह्युं के जे धन मलशे ते तमें लेजो परंतु सुसीमा स्त्री बे ते हुं राखीश चोरोएं ते धनश्रेष्ठीनुं घर लूटयुं. चिलातीपुत्र सुसीमाने लइनें निकल्यो,तेनी पठवाडे ते सुसीमानो बाप आव्यो तेने जोइने चिलाती विचारवा लाग्यो के हवे आने लइने जवाय तेम नथी पठी ते चिलातीपुत्रें सुसीमानुं मस्तक पोता नी पासें तरवार हती तेणे करी काप्युं. ते जोइ धनश्रेष्ठी रुदन करीने पोतानी दीकरीनुं कलेवर लइ पाठो आव्यो. पठी आगल जतां ते चिलातीपुत्रें का योत्सर्गने विषे रहेला कोइ मुनिने नजरें जोयो,तेवारें तेनी समीप जइने चि लातीपुत्र केहेवा लाग्यो के माहाराज ! थोडा अक्षरमां धर्म कहो,नहिं तो त मारुं माथुं कापी नाखीश. तेने मुनियें " उवसमविवेग संवर, " ए गाथा क हीने आकाशमां गमन कर्युं. ते चिलातीपुत्र तेना स्थानमां रहीने ते गा थाना अर्थने चिंतवन करतो ठतो कायोत्सर्गनेविषे रह्यो, तेना शरीरने मको

डा अने वज्र जेवा मुखवाळी कीडीयोयें पादादिकथी आरंभीने शिरपर्यंत फोळी खाधुं चारणी जेवुं शरीर कीधुं. ए रीतें साडा त्रण दिवस उपसर्गने सहन करीने सहस्रार देवलोकनेविषे देवता थयो. एम थोडा अक्षरना उपदेशथकी चिलातीपुत्र महापापी हतो तोपण देवता थयो, माटे थोडो पण धर्मोपदेश सुखदायक छे एम जाणवुं ॥ १४ ॥

द्वेषेऽपि बोधकवचः श्रवणं विधाय, स्याद्रौहिणेय
इव जंतुरुदारलाभः॥ क्वाथोऽप्रियोपि सरुजां सुख
दो रविर्वा, संतापकोपि जगदंगभृतां हिताय॥१५॥

अर्थः-(द्वेषेपि के०) द्वेषनेविषे पण एटले मननी अरुचिमां पण (जंतुः के०) जीव (बोधकवचः के०) बोधकारक वाक्यनुं (श्रवणं के०) श्रवणने (विधाय के०) करीने अर्थात् बोधकारक वचन सांभल्युं होय तो हितने माटे थाय. (यथा के०) जेम (क्वाथः के०) क्वाथ (अप्रियोऽपि के०) कडवो छे तो पण (सरुजां के०) सरोगीजनने (सुखदः के०) सुखदायक (स्यात् के०) थाय (वा के०) तथा (रविः के०) सूर्य (संतापकोपि के०) संतापकारक छे तो पण (जगदंगभृतां के०) जगतनेविषे प्राणीयोना (हिताय के०) हितने माटे थाय छे. केनी पेरें? तोके (उदारलाभः के०) महोटो थयो छे लाभ जेने एवो (रौहिणेयइव के०) रौहिणिया चोरनी पेरें ॥ १४॥

आहिं रौहिणिया चोरनी कथा कहे छे. राजगृहीनेविषे विभारगिरि पर्वतमां रूप्यखुरनो पुत्र लोहखुरनामा कोइक चोर रहेतो हतो,ते मरणना समयनेविषे पोताना पुत्र रौहिणियानी पासें कहे छे के धूर्त्त एवा श्रीमहावीरस्वामीनुं वचन तारे क्यारेपण सांभळवुं नहिं ते वचन तेणें कबुल कर्युं. तदनंतर लोहखुरो चोर मरण पाम्यो पछी रौहिणियो एकदिवस रस्तामां चाल्यो जाय छे तेटलामां वीरस्वामीनी योजनगामिनी वाणीने सांभळी तेमां आ गाथा सांभळी जेम केः-" अणमिसनयणा मणक,ज्जसाहणा पुप्फदाम अमिलाणा ॥ चउरंगुलेण भूमिं, न छिविंति सुरा जिणा विंति ॥१॥ आ गाथा सांभळी तेने घणी वीसारे छे तो पण ते विस्मरण थाती नथी. हवे ते चोर श्रेष्ठी थइने राजगृहने विषे फरे छे अने अभयकुमारने प्रणाम कर्या विना जमतो नथी. एकदिवस जिनमंदिरमां वेळा अभयकुमारनी पासें

श्रावक थइने प्रवेश कर्यो. वंदन स्थानकनेविषे अभयकुमारने जुहार कर्यो. पछी अभय कुमारें रौहिणियाने साधर्मिकना मिषे पोताने घेर तेडी जइने भोजन करवा बेसाड्यो भोजनानंतर दहींमां नाखेला सुरापानें करी तेने अचेतन करी नाख्यो पूर्वें घणुंज सारुं धवल करेलुं घर हतुं तेमां शय्यामां सुवाड्यो, ज्यारें जाग्यो,त्यारे जीवता रहो आनंद रहो एम बोलती एवी अने चामर नाखती एवी देवांगना तुल्य वारांगनाउनी साथें वार्त्ता करवा लाग्यो.

तद्दर्शनं किमपि सा सुलसाप येन, प्रादाज्जिनोपि म
हिमानममानमस्यै ॥ नैर्मल्यतः शशिकला नवकेत
कीत्वं, मालातुलां च हरमूर्ध्नि बभार गंगा ॥ १६ ॥

अर्थः-(तत् के०) ते (किमपि के०) अपूर्व एवा (दर्शनं के०) सम्यक्त्वदर्शनने (सा के०) ते (सुलसा के०) सुलसानामनी श्राविका (आप के०) पामती हवी. (येन के०) जे सम्यक्त्वे करीने (अस्यै के०) ए सुलसाने (जिनोपि के०) जिनभगवान् पण (अमानं के०) जेनुं प्रमाण नथी एवा (महिमानं के०) महिमाने (प्रादात् के०) आपता हवा अर्थात् सुलसा श्राविकाना सम्यक्त्वने महावीर भगवाने वखाण्युं ते सम्यक्त्वनुं फल छे. त्यां दृष्टांत कहे छे. (शशिकला के०) चंद्रमानीकला तथा (गंगा के०) गंगा ते (नैर्मल्यतः के०) निर्मल पणाथी अनुक्रमें (हरमूर्ध्नि के०) शंकरना मस्तकनी उपर (नवकेतकीत्वं के०) नव केतकीपणाने (च के०) वली (मालातुलां के०) मालानी तुल्यताने (बभार के०) धारण करती हवी. अर्थात् ईश्वरना मस्तकने विषे चंद्रकला केतकी रूपने शुं नथी धारण करती ? तथा गंगा जे छे ते कुसुममालानी तुल्यताने शुं धारण करती नथी ? ना करे छे ॥

आहिं सुलसानी कथा कहे छे. राजगृहीनगरीनेविषे क्षायिक सम्यक्त्व धारणकरनारी शीलालंकारें भूपित एवी सुलसा नामनी श्राविका रहेती हती एकदिवस अंबडनामा परिव्राजकना मुखथी श्रीवीरभगवाने धर्मलाभ ते सुलसाने कहेवराव्यो अंबड नामा पारिव्राजक राजगृहीमां जइने प्रथमना दिवसमां वैक्रिय शक्तियें करी पूर्व प्रतोलीमां चार मुखेंथी चार वेदनो उच्चार करतो हंसवाहनपर बेठो अने अर्धांगमां सावित्री छे जेने

एवो साक्षात् पोतें ब्रह्मा थइ बेठो तेने एक सुलसाविना बीजी सर्व प्रजा प्रणाम करवा माटे आवी. तदनंतर बीजे दिवसें दक्षिण प्रतोलीनेविषे गरुडपर बेठेला, लक्ष्मीयें सहवर्त्तमान सुशोभित तथा पीतांबरधारी, श्यामशरीरवाला अने चार हाथनेविषे शंख, चक्र, गदा, पद्म, तेने धारण करनारा एवा साक्षात् वैक्रिय शक्तिथी विष्णु थइ बेठो. तेना दर्शन करवां पण सुलसा शिवाय सर्वलोक गयां. पछी त्रीजे दिवसें पश्चिम प्रतोलिकानेविषे वृषभना वाहनवाला, तथा पार्वती अर्धांगें होवाथी शोभायमान, भस्में करी उद्धूलित अंगवाला, कंठनेविषे मरेला मनुष्यना तुंबडानी माला पेहेरनारा, जटा जूटथी सुशोभित मस्तकवाला त्रिशूलने धारण करनार, कर्पूर गौर शरीर वाला, एवा साक्षात् शंकरनुं रूपवैक्रिय शक्तिथी कर्युं तेनां दर्शन करवा सर्व सुलसा विना गया. तदनंतर वली चोथा दिवसनेविषे उत्तर प्रतोलीने विषे सोनाना, रूपाना,अने रत्नना ए त्रण प्राकारना मध्यनेविषे दिव्यसिंहासनपर बेठेला, मस्तकउपर त्रण छत्रने धारण करनार, भामंडल, धर्मध्वज, अशोकवृक्ष, धर्मचक्रादि समृद्धियें करी संशोभित, सुर असुर किन्नर तेनी कोडा कोडीयें सेव्यमान, पचवीशमो हुं तीर्थंकर छुं एवो जगत्मां उद्घोष करावतो साक्षात् पोतेंज तीर्थंकर थतो हवो ते दिवसें तेने वांदवा माटे ते गामना सर्व श्रावको आव्या, परंतु सुलसा श्राविका गइ नही. पछी ते अंबडे सुलसाने घेर जइने नमस्कार कर्यो अने कह्युं के तुने धन्य छे कारण के श्रीवीरभगवान पण तारा धर्मने वखाणे छे. इत्यादि वीरभगवाने करेली एवी प्रशंसा सर्वजन सांभले. तेम अंबडे कहीने ते पोतें पण दृढ सम्यक्त्वी थतो हवो ॥ १६ ॥

दूरेऽर्हतोस्तु महनादि नतीछयापि, श्रेयः सुरोजनि
न सेडुकदर्डुरः किं ॥ कल्पद्रुमः स्मरणतोपि न किं
फलाय, पार्श्वेपि वामृगमदोनहि सौरभाय ॥१७॥

अर्थः– (अर्हतः के०) वीतरागनुं (महनादि के०) पूजनादिक तो (दूरेऽस्तु के०) दूर रहो. परंतु (नतीछयापि के०) नमन वांछनायें करीने पण (श्रेयः के०) कल्याण थाय. तेमां आश्चर्य नथी. केम के (सेडुकदर्डुरोपि के०) सेडुकनामा ब्राह्मणनो जीव, दर्डुर थयो छतो पण नमन वांछ

नायें करी (सुरः के०) देव (किं के०) शुं (न के०) नहिं (अजनि के०) थयो. अर्थात् थयोज? एटले सेडुकब्राह्मण वातें करी कुष्टी थयो ब तो जलजल करतो मरण पाम्यो तेणें करीने तेने कोइ वावमां देडकानो अवतार आव्यो. तेने लोकोना कहेवाथकी श्रीवीरभगवाननी स्तुति सांभली ने जातिस्मरण उत्पन्न थयुं तेथी श्रीवीरभगवानने नमस्कार करवा चाल्यो तेटलामां रस्तामां घोडाना पगमां आववाथी ते नमन करवानी इछा सहित मरण पामवाथी प्रधान देवता शुं थयो नहि? अर्थात् थयोज ॥

आहिं दृष्टांत कहे छे. (कल्पद्रुमः के०) कल्पवृक्षनुं, (स्मरणतोपि के०) स्मरण करवा थकी पण (फलाय के०) फलने माटे (किं के०) शुं (न के०) न होय अर्थात् होय. वली बीजो दृष्टांत कहे छे के (वा के०) वली (पार्श्वेपि के०) पडखामां रहेली एवी (मृगमदः के०) कस्तूरी ते (किं के०) शुं (सौरभाय के०) सुगंध माटे (नहि के०) न होय. ना होयज. अर्थात् कस्तूरी पडखे पडी होय तो पण सुगंधने आपे छे. अने कल्पवृक्ष पण स्मरण करवाथी वांछित फल आपे छे. तेम भगवानने नमवानी इछा पण देवपणाने आपे एमां आश्चर्य नथी ॥ १७ ॥

हवे आहिं दर्दुरांग देवनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. एक दिवस श्रीवीरभगवान् वैभारगिरिने विषे समोसर्या त्यां सर्वलोक वंदन करवाने गया. ए अवसरने विषे प्रतोलीपालक बुभुक्षित एवो सेडुक नामना ब्राह्मणने वडां आपी ते ठेकाणें ते सेडुकने राखीने सर्वलोक प्रभुने वांदवा गया. पछी ते सेडुक ब्राह्मण बीजे स्थानकें जवाने असमर्थ होतो हवो. पण तृषा लागवाथी मरण पामीने आगल रहेली वाव्यने विषे देडको थयो. ते वाव्यमां जल भरवा आवेली एवी श्राविकाना मुखथी श्रीवीरभगवान् आव्या एम सांभलीने जातिस्मरण ज्ञान उपनुं तेवारें वीर भगवान्नें वांदवाने देडको चाल्यो रस्तामां श्रेणिकराजाना घोडानी खरीथी चंपाइ देडको मरण पाम्यो त्यांथी ते दर्दुरांगनामनो देव थयो पछी ते देवें महोटी ऋद्धि सहित श्रीवीरभगवान पासे आवीनें वंदन कर्युं ॥ १७ ॥

ध्यातः परोक्षेपि जिनस्त्रिशुध्या, जीर्णाभिधश्रेष्ठिवदिष्टसिध्यै ॥
सिंधुप्रवृध्यै कुमुदौघलक्ष्म्यै, चकोरतुष्ट्यै विधुरभ्रगोपि ॥ १८ ॥

अर्थः–(जिनः के०) भगवान् (परोक्षेऽपि के०) अप्रत्यक्ष होय तो पण (त्रिशुद्ध्या के०) मन वचन कायानी शुद्धियें करीने (ध्यातः के०) ध्यान कर्या छता (जीर्णाभिधश्रेष्ठिवत् के०) जीर्णनामाश्रेष्ठिनी पेठें (इष्टसिद्ध्यै के०) वांछितनी सिद्धिने आपे छे जेम (अभ्रगोपि के०) आकाशमां रह्यो एवो पण (विधुः के०) चंद्रमा जे ते (सिंधुप्रवृध्यै के०) समुद्रनी वृद्धि ने माटे तथा (कुमुदौघजृम्भ्यै के०) कमलना उघनी शोभानेमाटे तथा (चकोरतुष्टयै के०) चकोरपक्षीनी तुष्टिने माटे शुं न होय ? ना होयज.

आंही जीर्णश्रेष्ठीनी कथा कहे छे. चंपानगरीनेविषे श्रीवीरभगवान् चोमासुं रह्या त्यां जीर्णश्रेष्ठी आवीने वीरभगवानने कहे छे के महाराज! पारणने दिवसे मारे घेर पारणुं करवा आवजो. पछी वीरभगवान् तो पारणाने दिवसे मिथ्यादृष्टि अभिनवश्रेष्ठीने घेर पारणुं करवा गया, तेणे आ जैनदर्शनी छे एवी बुद्धियें कुल्मापें करी पारणुं कराव्युं. तेना घरमां त्रीश कोडी स्वर्णरत्न अने रूपैयानी देवताउएं वृष्टि करी पछी ते नगरना राजायें कोइ एक मुनिनी आगल कह्युं के महाराज ! अमारुं नगर धन्य छे जेमां श्रीवीरभगवाने पारणुं कर्युं. पारणुं करावनार भाग्यवान् अभिनवश्रेष्ठी छे. त्यारें मुनियें कह्युं के हे राजा ! ते शेठें तो द्रव्यपारणुं कराव्युं परंतु भावपारणुं तो जीर्णशेठें कराव्युं छे जेने प्रसादें करी ते देवता थाशे माटे भावज प्रमाण छे. एम जाणवुं भाव विना सर्वे मिथ्या जाणवुं ॥ १८॥

नव्योगुरुः सुरतरुर्विहितामितर्द्धि,र्यत् केवलाय कव
लार्थिषु गौतमोऽभूत् ॥ तापातुरेऽमृतरसः किमु शै
त्यमेव, नाप्रार्थितोऽपि वितरत्यजरामरत्वम्॥ १९॥

अर्थः–(नव्यः के०) नवीन एवा (गुरुः के०) गुरु, ते (सुरतरुः के० कल्पवृक्ष समान छे. वली केवा छे ? तो के (विहितामितर्द्धिः के०) अण याच्याथका पण प्रमाण विनानी ऋद्धिना देवावाला छे (यत् के०) जे कारण माटे (गौतमः के०) गौतमऋषि तो (कवलार्थिषु के०) कवलनी याचना करनार, पारणार्थी तापसोने विषे (केवलाय के०) केवलज्ञानने माटे (अभूत् के०) थाता हवा अर्थात् गौतम ऋषि कवलनी याचना करनारने केवल ज्ञानना दातार थया (अप्रार्थितोपि के०) नहि प्रार्थना क

रेला एवा पण गुरु (अजरामरत्वं के०) अजरामरपणाने (नवितरति के०) नहि आपे शुं ? अर्थात् आपेज ठे. जेम (तापातुरे के०) तापेंकरी आतुर एवा मनुष्यने विषे (अमृतरसः के०) अमृतरस (किमु के०) शुं (शैत्यमेव के०) शीतलपणाने न पामे शुं ? पामेज.

आहिं गौतमस्वामीनी कथा कहे ठे. एकदिवस श्रीवीर मुखथकी गौतमें एवुं सांनल्युं के जे स्वलब्धियें करीने अष्टापद पर्वतउपर चडीने चोवीश जिनने नमस्कार करे ते तेज नवमां मोक्षने प्राप्त थाय ठे तेवारें गौतमस्वामी गगनमार्गें करी अष्टापद पर्वतनेविषे गया. तेमने गगनमार्गेथकी आवता जोइने पन्नरसोत्रण तापसो चिंतववा लाग्या जे आ पुरुष केवी रीतें आठ योजन उंचा पर्वत उपर चडी शकशे ? तेटलामां तो गौतम गणधर,रविकिरणोनुं अवलंबन करीने गिरिपर चढी गया. त्यां चोविशजिनने नमस्कार कस्यो. रात्रें रह्या त्यां श्रीवज्रस्वामीना जीवें तिर्यक्जृंनकदेव पणे तेने बोध कस्यो. प्रातःकालमां गिरिथकी उतरता गौतमस्वामीयें रस्तामां पंदरसो ने त्रण्य तापसोने प्रतिबोध्या. पठी छुधना नरेला एकपात्रें करी सर्वेने पारणुं कराव्युं अक्षीणमहाणसी लब्धियेंकरी परम अन्ननी वृद्धि थइ. पांचशे साधुने चखुं करतां केवलज्ञान उत्पन्न थयुं अनेपांचसोने समवसरण जोतां केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. तथा पांचसोने श्रीवीरनगवाननीवाणी सांनलतां केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. कहेलुं ठे के ॥ कोडिन्नदिन्नसेवा,लनाम एपंच पंचसय कलिए ॥ पडिबुद्धे गोयमदं, सएोण पणमामि सिद्धिगया ॥ १ ॥ १ए॥

कुबोधमतयोन्नितः कुगुरवोजमाल्यादिवत्, पुनः क्वचन वज्रवत्, सुगुरवोऽमलाजन्मतः ॥ करीरपिचुमंदवन्नघनसारसच्चंदना,घनान च खरोष्ट्रवज्जयतुरंगनद्रद्विपाः ॥२०॥ गुरुद्वारं२

अर्थः—(जमाल्यादिवत् के०) जमाल्यादिकनी पेठें (कुबोधमतयः के०) कुत्सितज्ञानमां ठे मति जेनी एवा (कुगुरवः के०) कुगुरुउ जे ठे ते मलवा तो (अन्नितः के०) सुलन्न ठे (पुनः के०) वली (जन्मतः के०) जन्मथकी (अमलाः के०) निर्मल, एटले निष्पाप एवा (सुगुरवः के०) सुगुरु जे ठे ते तो (वज्रवत् के०) वज्रस्वामीनी पेठें (कचन के०) कोइक ठेकाणेज होय. जेम (करीरपिचुमंदवत् के०) केरडा

लींबडा वगेरेना ऊाड घणा होय वे पण (घनसारसच्चंदनाः के०) कर्पूर चंदननां वृक्षो (घनाः के०) ऊाऊां (न के०) नथी होतां (च के०) व ली (खरोष्ट्रवत् के०) गर्दन्न उंटनी पेठें कुगुरु घणा होय वे तथा (जय तुरंगन्नद्रद्विपाः के०) जेणें करी संग्राममां जीताय एवा जयजातना अश्वो तथा नद्रजातीना हाथीयो जे वे ते घणा (न के०) नथी होता. तेम कु गुरु घणा होय वे अने सुगुरु घणाज थोडा होय वे.

आंहिं जमालीना तथा वज्रस्वामीनो दृष्टांत वे. तेमां प्रथम जमालीनी कथा कहे वे. श्रीमहावीरस्वामीना जमाइ जमालि नामा राजकुमारें पोता नी स्त्री सहित नगवान पासेंथी दीक्षा लीधी क्रमेंकरी तेने आचार्यपद प्राप्त थयुं तेना परिकरमां पांचशें साधु रहेता एक दिवस ते जमाली आचार्यने शरीरें ज्वर आव्यो त्यारें साधुने कह्युं के मारे माटे संथारो करो,के जेथी हुं सुइ जाउं, त्यारें ते साधुयें पथारी करवा मांमी एवामां वली पाबुं जमालीयें कह्युं के संस्तारण कर्युं के नहिं ? साधुयें कह्युं हा मा हाराज पधारो. ते सांनली जमाली आचार्य त्यां आव्या. पथारी कराती हती ते जोइने बोल्या हे साधुउ ! तमें तो सत्यवक्ता बो ने खोटुं शुं कर वा बोल्या जे हा संस्तारक कर्यो वे ? ते बोल्या महाराज अमे असत्य नथी बोल्या त्यारे सूरि कहे वे के तमें खोटुं बोल्या ? कारण करेलुं कार्य होय ते नेज करेलुं वे एम कहेवुं एम ते उत्सूत्रप्ररूपनार निन्हव थया. तेमां ते जमालीनी स्त्री महासती ते श्रीमाहावीरनी पुत्री हती, तेने कोइ एक कुं नकार श्रावके कांबलीना एक प्रदेशना ज्वालनें करी बोध कर्यो तेथी बोध पामी पण जमाली प्रतिबोध पाम्यो नही निन्हवज रह्यो.

हवे वज्रस्वामीनी कथा कहे वे. श्लोक ॥ यः पालनस्थः,श्रुतमध्यगीष्ट, पाएमासिकोयश्चरितान्निलापी ॥ त्रिवार्षिकः संघममानयद्यः, श्रीवज्रनेता न कथं नमस्यः ॥१॥ तुंववनसन्निवेशें धनगिरिनामा श्रेष्ठीनी स्त्री सुनंदा नामें हती तेने वज्र नामे पुत्र थयो ते पारणामां रहेता तेवारें साध्वीउ एकाद शांगी नणाती हती ते सांनलतावेंत नणी गया अने त्रणवरसना थया तेवारें तेणे दीक्षा ग्रहण करी. पठी दिन दिन गुणना वधवाथी तेने गुरुयें आचा र्यपद दीधुं. एक दिवस श्रीवज्राचार्य विहार करता ठता कुसुमपुर नामे नगरें गया ते नगरमां नगरशेठने घेर उतरेली एवी साध्वीउयें श्रीवज्रस्वामीनी रू

पसंपत्ति वखाणी ते शेठनी दीकरी सौभाग्यमंजरीयें सांभली तेथी ते श्री वज्रस्वामीने विषे अनुरागिणी थइ थकी पोतानां माता पितापासें बोली के एक वरदान तमारी पासें मागवा इछुं छुं. त्यारे पितायें कह्युं के माग्य. ते वखत कन्या कहे छे के श्रीवज्रस्वामी विना बीजा पुरुष साथे मने वरा ववी नही. आवो आग्रह पोतानी कन्यानो जोइने ते नगरशेठ पोतानी कन्याने तथा एक कोटि धनने लइने श्रीवज्रस्वामी पासें जइने कहेवा ला ग्यो के हे प्रभो! आ कन्याने आप वरो अने कोटिधन ग्रहण करो मारी उपर प्रसन्न थाओ त्यारे सूरीयें कह्युं के हे शेठ! ए वाक्य बोल्या ते तमो ने घटे नही. जेणे सर्व स्वधन, कनक, वगेरे त्याग कर्युं छे एवा मुनिने विषयो विष समान दुःखदायक थाय छे. कहेलुं छे ॥ विसयविसं हालह लं, विसयविसं उक्कडं पियंताणं॥ विसयविसायन्नंपिव, विसयविस विसोइ या हुंति ॥ १ ॥ कोडिसहेहिं धणसं, चयस्स गुणसुभरियाइ कन्नाए ॥ न विलुद्धो वयर रिसी, अलोभया एस साहूणं ॥ २ ॥ ए प्रकारनी वज्रस्वा मीनी वाणी सांभलीने ते कन्या दीक्षाने ग्रहण करती हवी. त्यां श्रीवज्र स्वामीना उपदेशथी अनेक जीवोयें दीक्षा ग्रहण करी ॥ २० ॥

विज्ञाय धन्याजिनधर्ममर्म्म, रज्यंति शय्यंभववन्न जाड्ये ॥ पी त्वा सिताभावितधेनुदुग्धं,कोवाम्लतक्रार्कपयांसि पश्येत्॥२१॥

अर्थः-(धन्याः के०) सुभाग्य जाणवा. जे (जिनधर्ममर्म के०) जिन धर्मना मर्मने (विज्ञाय के०) जाणीने (जाड्ये के०) जाड्यनेविषे (शय्यं भववत् के०) शय्यंभवस्वामीनीपेठें (न रज्यंति के०) राग करता नथी ते धन्य छे. अर्थात् जडभावनेविषे आसक्त नथी थता ते धन्य जाणवा, शय्यं भव भट्ट मनकनो पिता दशवैकालिकनो कर्त्ता जिनप्रतिमाने जोइने बोध पाम्यो. अहो कष्टमहो कष्ट कोइ तत्त्व जाणता नथी! एम साधुनां वचन सांभलीने गुरुने तत्त्व पूछीने मिथ्यात्व यागादियकी वैराग्य पामीने प्राप्त थइ छे भवयशिक्षा जेने एवो छतो शय्यंभवनामा आचार्य थयो. त्यां दृष्टांत कहेछे. (सिताभावित के०) शर्करायें मिश्रित एवुं (धेनुदुग्धं के०) गायनुं जे दुध, तेने (पीत्वा के०) पान करीने (कः के०) कयो पुरुष (आम्लतक्र के०) खाटी छासने (वा के०) अने (अर्कपयांसि

के०) आकडाना डुधने (पश्येत् के०) जोवे ? अर्थात् खाटी ग्रास तथा आकडाना दूध सामुं जोवेज नहिं, तो जक्षण तो केमज करे.

अहिं शय्यंजव स्वामीनीकथा कहे छे. राजगृह्दी नगरीने विषे मोटी समृद्धि वालो शय्यंजवनामा जट्ट वसे छे. ते धर्मार्थी थको लोकोने यज्ञ करावे छे. एटलामां पोताने पाट योग्य पात्रने जोता एवा प्रजव स्वामीयें तेना यज्ञमां बे साधु मोकल्या अने ते साधु बोल्या के अहो कष्ट महोकष्ट तत्त्व कोइ जाणतुं नथी. एवुं वचन सांजलीने शय्यंजवें साधुने पूछ्युं. के तत्त्व ते शुं छे ? ते कहो कारण के जैनदर्शनी कल्पांतमां पण असत्य जापण करता नथी. त्यारें साधुयें कह्युं के अमारा गुरुपासें आवो ते तत्त्व कहेशे ते सांजली तेनी साथे तेमना गुरु आगल गया. अने गुरुने पूछ्युं के हे गुरो ! तत्त्व ते शुं छे ? त्यारे गुरुयें कह्युं के तमारो याजक कहेशे ते सांजली पाछा वली तत्काल शय्यंजवें उपाध्यायने पूछ्युं के तत्त्व ते शुं छे ? ते कहो. कारण जैनो कल्पना अंतमां पण असत्य बोलता नथी. माटे जो तमे सत्य नहि कहो तो शिरछेदमांज तत्त्व छे एम वेदवाक्य छे माटे तमारुं शिर छेदी नाखीश. एम कही हाथमां खड्ग उपाड्युं तेवारें याज्ञिकोयें तेना यज्ञस्तंजनी नीचें रहेली शांतिनाथनी प्रतिमा देखाडी तेवारें शय्यंजव स्वामीयें प्रतिबोध पामीने सगर्जा स्त्रीने मुकीने गुरुनी पासे व्रतग्रहण करी अनुक्रमें आचार्यपद पाम्या. तेमना पुत्र मनकनुं शेष छ महीनानुं आयु रह्युं तेवारें पोताना पुत्रने माटे दशवैकालिक रच्युं. छ मासनी दीक्षा पालीने ते मनक पण देवलोकें गयो ॥ २१ ॥

लब्धे जडः कोपि हितेऽपि धर्मे, स्तौत्यक्षसौ
ख्यानि शशीव राजा ॥ न पंकजं जेक उपैति
पंकं, क्रमेलकोनाम्रमुपैति निंबम् ॥ २२ ॥

अर्थः—(कोपि के०) कोइ पण (जडः के०) मूर्ख प्राणी, (हिते के०) हित करनार एवा (धर्मेपि लब्धे के०) धर्म प्राप्त थये छते पण (शशी के०) शशी नामा (राजा के०) राजानी (इव के०) जेम (अक्षसौख्यानि के०) इंद्रियोनां सुखने (स्तौति के०) वखाणे. अर्थात् शशीराजा जिनधर्म पाम्या पछी पण इंद्रियसुखनें माटे आकांक्षी थयो तेनी पेठें ते जड पण

थाय ढे. आंही दृष्टांत कहे ढे के जेम (नेकः के०) मेडको (पंकजं के०) कमलने (नउपैति के०) प्राप्त थातो नथी परंतु (पंकं के०) गाराने प्राप्त थाय ढे तथा (क्रमेलकः के०) उंट ते (आम्रं के०) आंबाने (नउपैति के०) नथी प्राप्त थातो परंतु (निंबं के०) निंबवृक्षने प्राप्त थाय ढे॥

आंही शशीराजानी कथा कहे ढे. शुक्तिमती पुरीने विषे सूर अने शशी बे नाइ राज्य करता हता एकदिवसें बेहुजण उद्यानने विषे श्रीशीलसागर उपाध्यायनी पासें धर्मनी देशना सांनलता हता, तेमां आ श्लोक श्रवण कस्यो ते जेम के॥ मानुषं नवमवाप्य दक्षिणा,वर्त्त शंखमिव ये नवांबुधौ॥ पूरयेत्सुकृतगांगवारिणा, पापवृत्तिसुरया न चोत्तमः॥ नावार्थः—जे जीव मनुष्य देह पामीने नवांबुधिने विषे दक्षिणावर्त्त शंखनी पेठें सुकृतरूप गंगाजलने पूरे, ते उत्तमजीव जाणवो. तथा जे जीव नवांबुधिने विषे मनुष्यदेहरूप दक्षिणावर्त्त शंखने पापवृत्तिरूप मदिरायें करीने नरे ढे ते जीव उत्तम नहिं॥ आ गुरुवाक्य सांनलीने सूरराजा बोध पाम्यो अने धर्माचरण करवा लाग्यो अने शशी राजा उपदेश समजीने इंद्रियसुखने नोगवे ढे,परंतु धर्मनुं आचरण करतो नथी. पढी वृद्धनाइयें घणो समजाव्यो तो पण तेणे विषयासक्ति ढोडी नही. पढी तेमरण पामी नरकें गयो. अने सूरराजा स्वर्गे गयो. त्यां अवधिज्ञानें करी नाइने नरकमां पडेलो जोयो तेवारें ते देव पोतें त्यां नरकमां गयो ते सूर राजानी समृद्धि जोइनें शशी राजा पश्चात्ताप करे ढे अने नाइने कहे ढे के हे नाइ! त्यां जइने मारा देहनुं नेदन करो ढेदन करो अने मने स्वर्गसुख मले, तेम करो. ते सांनलीने तेने महोटो नाइ कहेवा लाग्यो के हे नाइ! जीवरहित जडदेहनी कदर्थना करे शुं थाय? पूर्वजन्में जीव होय तेवारें कष्ट कस्युं होय तोज तेने सुख मले, हवे शुं मले? एम कहीनें ते देव पोताना स्थानक प्रत्यें गयो. कह्युं ढे के॥ नरयढो ससिराया, बहु नणइ देहलालणा सुहिउ॥ पडिउंमि नए नाउ, अंतो मे जाय तं देहं॥ १॥ को तेण जीवरहिए, ण संपयं जाइ एण दुक्ख गुणो॥ जइसि पुरा जायंतो, तो नरए नेव निवडंतो॥ २॥ जावा उसावसेसं, जावय थोवोवि अढि विवसाउ॥ ताव करि ऊ प्पहिअं, माससिराया वसोहेसि॥ २२॥

अष्टाब्दोपि तथा विधव्रततपः स्वाध्यायकृत्यासहो,
प्युच्चैर्ध्यानबलेन कर्मरिपुनिर्मुक्तोतिमुक्तोमुनिः ॥ श
त्त्या गच्छत तन्न किं हितपथं मुक्त्वा प्रमादोत्तरं,श्रूयं
ते च मदालसा तनुभुवो बाल्येपि योगोज्ज्वलाः॥१३॥

अर्थः—हे भव्यजीवो ! (अष्टाब्दोपि के०) आठ वरसनी उमर वालो एवो पण अने (तथाविधव्रततपःस्वाध्यायकृत्यासहोपि के०) जे शास्त्रोक्त रीतें करवा दुःकर एवां अहिंसादिक बारव्रत तथा तपःस्वाध्याय करवामां अशक्त कारण के अत्यंत नानो छे. एवो पण (अतिमुक्तः के०) अतिमुक्तनामा (मुनिः के०) मुनि ते (उच्चैर्ध्यानबलेन के०) उंचा एवा ध्यानबलें करीने (कर्मरिपुनिर्मुक्तः के०) कर्मशत्रुथकी मुक्त थयो. (तत् के०) ते कारण माटे (शक्त्या के०) पोतानी शक्तियें करी हे भव्यो ! (प्रमादोत्तरं के०) प्रमादथकी उत्तर अर्थात् आलस्य तेने (मुक्त्वा के०) मूकीने (हितपथं के०) हितमार्गप्रत्यें (किं के०) केम (नगच्छत के०) जाता नथी? त्यां दृष्टांत कहे छे. जेम के (मदालसातनुभुवः के०) मदालसाना पुत्रो, (बाल्येपि के०) बालपणामां पण मातायें बोध कर्या छता दीक्षा लइने (योगोज्ज्वलाः के०) ध्यानमां निर्मल थइ गया. एम (श्रूयंते के०) संभलाय छे ॥

आंहिं अतिमुक्तऋषिनी कथा कहे छे. शावस्ती नगरीनेविषे रत्नादित्य नामा कोइ शेठ वसे छे. तेनो पुत्र अतिमुक्त नामा हतो. तेंणे छ वर्षनी उमरमां श्रीशीलंधराचार्यनी पासें दीक्षा ग्रहण करी. एक दिवस श्रीगुरुनी सार्थे वहिर्भूमिकायें गयो. गुरु जल लइने बीजे ठेकाणे जुदा गया. अने ते क्षुल्लक हतो ते पोतानी पासें कांचली हती तेने लघु तलावनेविषे फेंकी दीधी अने ते काचली जलमां तरवा लागी त्यारे ते अतिमुक्तनामा क्षुल्लक कहेवा लाग्यो जे जुवो भाइओ आ मारी वेडी तरे छे ए प्रकारें बोलता ते पुत्रने गुरुयें दीठो. पछी ज्यारे पोताने स्थानकें आव्यो त्यारें गुरुयें कह्युं के, तुने मोहोटुं पाप लाग्युं कारण के तें मृत्तिकानी अने नीरनी विराधना करी. माटें ईर्यापथिकी रूडी रीतें पडिक्कम ते सांभली ते ईर्यापथिकीने अर्थेथी प्रतिक्रमतो छतो “ दगमट्टीमक्कडा ” ए पद तथा अर्थनो उच्चार करतो शुक्लध्याने करी केवल ज्ञानने प्राप्त थयो.

आ काव्यमां बीजी मदालसानी कथा छे, ते कहे छे. कांचनपुरनें विषे ऋतुध्वज राजा राज्य करे छे. तेनी मदालसा नामे पट्टराणी हती. तेणें अनुक्रमें संसारजोगने जोगवतां पुत्र प्रसव्यो राजायें पुत्रजन्म महोत्सव कस्यो. ते बालक पारणामां पोढयो बतो रुदन करे छे. त्यारें ते मदालसा तेने हिंचकावती आ श्लोक कहे छे के ॥ मृत्योर्बिजेषि किं बाल, सच जी तं न मुंचति ॥ अजातं नैव गृह्णाति, कुरु यत्नमजन्मनि ॥ जावार्थः—हे बालक! मृत्युथकी शा माटें जय पामे छे? ते मृत्यु बीहीता प्राणीने पण मुकतुं नथी. अने जे उत्पन्न थातो नथी तेनें काल पण ग्रहण करतो न थी. माटें तहारो फरी संसारमां जन्म न थाय तेवो उपाय कर. एवो अ र्थ जाणीने बालक पण वैराग्यने प्राप्त थयो. रुदन करतो बंध थयो आठ वरसनो थयो त्यांज तेणे योग ग्रहण कस्यो. एम सात पुत्रो मदालसाना उपदेशें करी बालपणामांज तपस्वी थइ गया ॥ १३ ॥

शीलं तपश्च बलदेवमुनिश्चरित्वा, दानं प्रदाय रथकृन्नितये ऽप्यशक्तः ॥ एणोमुदा तदनुमोदनया सुरोऽजूत्, योगाद्धि सिद्धिमगमच्चतुरंगितांह्निः ॥ १४ ॥ शक्तिद्वारं संपूर्णम् ॥

अर्थः—(त्रितये के०) शील, तप, जावने विषे (अशक्तोपि के०) अ शक्त एवो पण (रथकृत् के०) रथकार सूत्रधार, (दानं के०) दानने (प्रदाय के०) दइने (सुरोऽजूत् के०) देवता थतो हवो. अने (बलदेवमुनिः के०) बलदेव मुनि, (शीलं के०) शीलनें (च के०) वली (तपः के०) तपने (चरित्वा के०) आचरण करी देवता थयो तथा (एणः के०) हरिण ह तो ते (मुदा के०) हर्ष थकी (तदनुमोदनया के०) दान शीलना अनु मोदनें करीनेज (सुरोजूत् के०) देवता थयो. (हि के०) यस्मात् (चतु रंगितांह्निः के०) चतुरंगी इति प्रसिद्ध (योगात् के०) सारा जीवना यो गथकी (सिद्धिं के०) सिद्धिने (अगमत् के०) प्राप्त थयो.

आहीं बलदेवमुनिनी कथा कहे छे, नवम वासुदेव श्रीकृष्ण लघु जाइ विपन्न थये बते तेमना महोटा जाइ बलदेव वैराग्य पामी व्रत ग्रह ण करी तुंगिका पर्वतनी उपर तप करतो हतो एक दिवसें कोइ नगरने वि षे आहारने अर्थें जातां कूवाना कांठा उपर रहेली कोइ स्त्रीयें ते कूपिनें

दीठा. ते मुनिनुं रूप जोवाथी आक्षिप्त थइ एवी ते स्त्रीयें घटने बदले पोताना छोकराना गलामां दोरडानो फांसो घाल्यो. ऋषियें जोइने कह्युं के अरे आ शुं करे छे? एम कही ते छोकराना कंठमांथी दोरडी काढी लीधी. पछी ते ऋषियें जाण्युं जे धिक्कार छे मारा रूपने के जेथकी आवां अकार्य थाय छे, माटे म्हारे आजथी कोइ दाहाडे पारणुं करवा नगरमां जावुंज नही. पछी एक दिवसें ते पर्वतनेविषे काष्ठकापवानें माटे मोह्होटा साथने लेइने कोइ रथकार आव्यो तेने जोइ ते मुनिनी साथें रहेलो मृगलो जातिस्मरणज्ञानेकरीने ते बलदेवमुनिने पारणार्थें त्यां सुतार पासें लावतो हवो. ते रथकार मध्यान्हें अतिथिने प्राप्त थयेला जोइने हर्षित थयो छतो अन्ननो पूरेलो पोतानो थाल लावी देवाने उत्सुक थतो हवो. ऋषियें पात्र धरी वह्होर्युं ते वखत हरिणें ते दाननुं अनुमोदन कर्युं तेज अवसरनेविषे अर्द्ध कपाइ गयेली एवी झाडनी शाखा वायुना जोरथी नांगी गइ अने ते त्रणे उपर पडवाथी ते त्रणेय मरण पामीने ब्रह्मदेवलोकनेविषे देवता थया कह्युं छे के ॥ अप्पहिय मायरंतो, अणुमोयंतो अ सुद्द गइं लहइं ॥ रहकार दाणअणुमो, अगोअ मिगो जहय बलदेवो ॥

शमेन सिध्यंति मतानि कृष्णा,नुजर्षिवत्तीव्रतपोस्तु वा मा ॥ दिनाधिनाथेन कृतेऽन्नपाके, संधुक्षणं कः कुरुतेऽनलस्य ॥ १५ ॥

अर्थः–(शमेन के०) समतायें करीने (मतानि के०) मनोनिष्ट (कृष्णानुजर्षिवत् के०) कृष्णानुजऋषिनी पेठें (सिध्यंति के०) सिद्ध थाय छे माटे (तीव्रतपः के०) तीव्रतप, (अस्तु के०) हो (वा के०) अथवा (मा के०) म हो. तथापि समतायें करी सर्व अनीष्टसिद्ध थाय छे. जेम कृष्णनो अनुज एटले नानेरो नाइ गजसुकुमाल ऋषि तपविना श्वसुरे करेला अग्निना कष्टने सहन करतो छतो सिद्धिने पाम्यो तेनी पेठे सिद्धिने पामे छे. त्यां दृष्टांत कहे छे. (दिनाधिनाथेन के०) सूर्यें करी (अन्नपाके कृते के०) अन्नपाक करे छते (कः के०) कयो पुरुष, (अनलस्य के०) अग्निनुं (संधुक्षणं के०) सलगाववुं तेने (कुरुते के०) करे. ना कोइ न करे.

आंही गज सुकुमालनी कथा कहे छे. द्वारिका नगरीनेविषे श्रीकृष्णवासुदेव राज्य करे छे. तेनो नानो नाइ गजसुकुमाल नामें हतो, ते सर्व दशार्ह

ने घणोज वालो हतो ज्यारें युवान थयो त्यारें श्रीकृष्णे तेनें बे कन्या परणावी श्रीनेमीनाथनी पासें धर्म देशना सांजली प्रतिबोध पामी बेहु कन्यानो त्याग करी ते दिवसेंज व्रत ग्रहण करतो हवो. तेणे जगवानने पूब्युं के महाराज! मने क्यारे क्यां मोक्षप्राप्ति थाशे प्रजुयें कह्युं के,हमणांज स्मशानमां जो कायोत्सर्ग करे, तो मोक्ष थाय. आ वात गजसुकुमाल सांजलीने स्मशानमां जइ कायोत्सर्गमां उनो रह्यो. ते समयने विषे श्वसुर सोमिल नामा ब्राह्मणें तेने जोयो अने ते केहेवा लाग्यो के हे पापी! मारी पुत्रीने मुकीने आवो आ पाखंम शुं करे छे? एम कहीने ते डुरात्मायें खेरना काष्ठना अग्निना अंगारानुं गाडुं तेनी उपर नाख्युं अने त्यांथी चाल्यो गयो. ते गज सुकुमाल समता आणी उपसर्गने सहन करतो छतो बलतां बलतां केवलज्ञान पामीने सिद्धिने प्राप्त थतो हवो कहेलुं छे के ॥ सपरिक्कम्मराउल,वा ईएण सीसे पलिवीए नियए ॥ गयसुकुमालेण खमा,तहा कया जहा सिवं पत्तो ॥ १ ॥ ॥ २५ ॥

प्रीत्यै शमी स्वपरयोरपि चंमरुद्र, शिष्योयथात्मनि
गुरावपि केवलर्ध्या ॥ सप्तर्षिसंगतिमवाप्य विशा
खनामा,चौरोऽप्यनूद्विलसडुज्ज्वलदिव्यशक्तिः ॥२६॥

अर्थः—(शमी के०) उपशम करनारो प्राणी, (स्वपरयोरपि के०) पोताने तथा परने पण (प्रीत्यै के०) प्रीतिने माटे थाय छे. (यथा के०) जेम (चंमरुद्रशिष्यः के०) चंमरुद्राचार्यनो शिष्य (केवलर्ध्या के०) केवलज्ञाननी ऋद्धियें करीने (आत्मनि के०) पोतानेविषे तथा (गुरावपि के०) चंमरुद्राचार्यनामा गुरुने विषे प्रीति पात्र थयो. वली लुंटवाने आवेलो (विशाखः नामा के०) विशाख नामा (चौरोपिः के०) चोर पण तीर्थयात्राने माटे आकाश मांथी उतरता एवा (सप्तर्पिसंगतिं के०) सात ऋषिनी संगतिने (अवाप्य के०) पामीने (विलसडुज्ज्वलदिव्यशक्तिः के०) प्रकाशित छे उज्ज्वल दिव्य कीर्त्ति जेनी एवो थयो. वली "काड घोडो संसार थोडो" एम बोलतो अने घोटकना वृक्षनी चोतरफ बार वरस फरतां फरतां ते दिव्यशक्तिवालो थयो तेज सात ऋषिना उपदेशथी वाल्मीकीऋषि एरीते प्रसिद्ध थयो.

आमां बे दृष्टांतमां प्रथम चंमरुद्रना शिष्यनी कथा कहे छे. ताम्रलिप्ति

नगरीनेविषे गंगदत्तनामा शेठनो सागर नामेंपुत्र हतो तेने पितायें रुडा कुल नी कन्या परणावी. ते पुत्र पोताना सालानी साथे चंमरुद्रगुरुने उपाश्रयें गयो. त्यारें तेना सालायें मशकरी करी जे हे कुमार! तुं शुं गुरुपासेंथी दीक्षा ग्रहण करीश? ताहरे तो गुरुनो पडखुं मूकवुं नहिं एम पोताना बनेवीने कहीने पछी गुरु प्रत्यें कहेवा लाग्यो हे महाराज! आने दीक्षा आपो. ए प्रकारें साले उपहासथी कहे छते गुरुयें कोपायमान थइ जस्में करी तेना शिरनुं लुंचन कर्युं. पछी ते कुलीन पुत्र गुरुने कहेवा लाग्यो के, आ नगरने तमे मूकी दीयो, नहिं तर मारा स्वजनो मनें व्रतनो त्याग करावशे त्यारें गुरु कहे छे मारी पींमीमां चालवानी शक्ति नथी माटे हुं चाली शकुं नहिं. तेवारें ते शिष्य गुरुने पोताना स्कंधपर वेसाडीने रात्रियें गाम मूकी चाल्यो गयो उंची नीची जगामां चालतां गुरुनें ज्यारे धशको लागे त्यारे ते गुरु शिष्यने दंमथी ताडन करे अने दुर्वचन कहे. जे हे पापिष्ट! सारा मार्गमां केम चालतो नथी? त्यारे शिष्य कहे के हे महाराज! क्षमायें करी महारो अन्याय सहन करो. हुं अपराधी छुं एम पोताना स्वरूपने निंदतो निंदतोज केवलज्ञान पाम्यो ते वात गुरुने जाणवामां आवी तेवारें गुरु पण ते शिष्यने पगें पड्यो अने मिथ्या दुष्कृत देता गुरुने पण केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं.

हवे वीजी विशाख चोरनी कथा कहे छे. कांपिल्य नगरनेविषे वलज्ञ नामा श्रेष्ठी वसे छे. तेनो विशाख नामा पुत्र ते वापने अत्यंत वालो हतो. तेथी वालपणामांज ते पुत्रने सर्वकलामां कुशल अने सर्व शास्त्रनो पारगामी कर्यो तेने यौवनावस्थामां सारी तदनुरूप कन्या परणावी एक दिवस रस्तामां चालतां कौतुकें करी जुगारना स्थानमां जइने वेठो. त्यां थोडे थोडे तेने द्यूत रमवानुं व्यसन थयुं. द्यूत रमतो छतो सर्वस्व हारवा लाग्यो पितायें वार्यो तो पण रम्या विना रहे नहिं एम करतां वापना घरनी सघली पुंजी हारी गयो. एक दिवस ते पापीयें वनमां फरतां मूर्त्तिमंत उपशमरूप एवा सप्तऋषिउने जोया. तेवारें तेनी समीपें आवीने वेठो तेणें धर्मोपदेश कर्यो ते विशाख, लघुकर्मी होवाथी दीक्षा ग्रहण करी तेनें अतिचार रहित पालीने सौधर्म देवलोकें देवता थयो. इतिशमप्रकरणं ॥

व्रतमपि बहु चीर्णं सातिचारं कुगत्यै,दिनमपि शुचि मुक्त्यै पुंमरीकादिवत्तत् ॥ अहह दहति चित्रावारिपूरोऽपिशस्यं, भृशमपि कृशपाथः स्वातिजं पाति जंतून् ॥ १७ ॥

अर्थः–(व्रतमपि के०) व्रत जे छे ते पण (सातिचारं के०) अतिचारोयें सहित (बहु के०) जाजा दिवस सुधी (चीर्णं के०) पाळ्युं होय, तो (कुगत्यै के०) माठी गतिने माटे एटले नरकने माटे थाय छे. (तत् के०) तेज व्रत, (दिनमपि के०) एक दिवस पण (शुचि के०) निरतिचार पणायें करीनें पाळ्युं होय तो (पुंमरीकादिवत् के०) पुंमरीक कुंमरीक बे भाइउनी पेठें थाय छे. जेम कुंमरीकें घणा दिवस पर्यंत व्रत पाळ्युं पण सातिचार व्रत पाळ्युं तेथी तेने ते नरकने माटे साधनभूत थयुं अने पुंमरीक तेनो भाइ हतो तेणे थोडो काळ व्रत अतिचाररहित पाळ्युं तो तेनें मुक्तिने माटे साधन थयुं. तेम बीजाने पण जाणवुं त्यां दृष्टांत कहे छे (अहह के०) खेदकारक छे के (भृशमपि के०) अत्यंत एवो पण (चित्रावारिपूरोपि के०) चित्रा नक्षत्रमां वरसेला मेघना जळनो समूह छे ते पण (शस्यं के०) धान्यने (दहति के०) बाळी नाखे छे. अने (स्वातिजं के०) स्वातिनक्षत्रमां वरसेलुं एवुं (कृशपाथः के०) थोडुं एवुं जळ ते (जंतून् के०) सर्व प्राणीने (पाति के०) रक्षण करे छे.

हवे आ ठेकाणे कुंमरीक तथा पुंमरीकनी कथा कहे छे. पुष्कळावती विजयमां पुंमरिकिणी नामनी नगरीनेविषे पुंमरीक कुंमरीक नामना बे भाइयो राज्य करे छे. एक दिवस ते बेहुयें गुरुनी पासें देशना सांभळीने बेहुजणा व्रत लेवाना अर्थी थया. एक कहे छे के हुं दीक्षा ग्रहण करीश. बीजो भाइ कहे छे हुं दीक्षा लइश, पछी कोइ रीतें वृद्ध भाइनी आज्ञा लेइने नानो भाइ कुंमरीक दीक्षा ग्रहण करतो हवो. तेणे हजार वरस दीक्षा पाळन करी ज्यारें ते कुंमरीक मांदो थयो त्यारें ते रूषिने पुंमरीक राजायें पोतानें घेर राखी सेवा करी. ते कुंमरीकें रसलांपट्यथकी दीक्षा मूकी दीधी. अत्यंत आहारना प्रयोगें करी गूढविशूचिकानो रोग उत्पन्न थवाथी वैद्योयें कह्युं के आ रसलोलुप छे माटे एने औषध करवुं अयोग्य छे एम मानी औषध न करवाथी ते रौद्रध्यानेंकरी मरण पामी नरकमां गयो. पछी पुंम

रीक तो मनःशुद्धियें करी थोडा दिवसज दीक्षा पालीने सर्वार्थसिद्धिविमानने विषे देव थयो ॥ वास सहस्संपि जइ, काऊणं संजमं सुविउलंपि ॥ अंते कि लिछ्भावो, नवि सिज्झइ कंमरीउ व्व ॥१॥ अप्पेणवि कालेणं, केवि जहा ग हिय सील सामन्ना ॥ साहंति नियय कज्जं,पुंमरीय महारिसि व्व जहा ॥२॥

व्रतेन शुचिनापि किं किमथ सद्गुरूपासनै, रुदायिनृपमारकश्रमणवत्सपापात्मनः ॥ शिरःस्थविषहृन्मणिः फणिगणः किमानंदनः,स चंदनवनस्थितः किमथ वा जगत्तापहृत् ॥ २८ ॥

अर्थः–(सपापात्मनः के०) पापयुक्त जेनुं मन ले एवा पुरुषने (शुचिना के०) पवित्र एवा (व्रतेनापि के०) व्रतें करीने पण (किं के०) शुं ? कांहिज नहिं. वली (अथ के०) ए थकी अनंतर (सद्गुरूपासनैः के०) सारा गुरुनी उपासनायें करीने पण (किं के०) शुं ? तो के कांहीज नहिं. केनी पेठें ? तो के (उदायिनृपमारकश्रमणवत् के०) उदायिनृपने मारनार श्रमणनी पेठें, जेम ते पापात्मा उदायि राजाने मारवाने माटे श्रमण थयो. हवे त्यां दृष्टांत कहे ले. (शिरःस्थविषहृन्मणिः के०) शिरने विषे रह्यो ले विषापहारी मणि जेने एवो (फणिगणः के०) सर्पसमूह, मनुष्यने (किं के०) शुं (आनंदनः के०) आनंदनो देनारो थाय ले. ना थातो नथी,प रंतु प्रध्वंसक थाय ले. (अथवा के०) अथवा (चंदनवनस्थितः के०) चंदनवनने विषे रह्यो एवो (सः के०) ते सर्पगण (जगत्तापहृत् के०) जगतना तापने हरण करनारो (किं के०) शुं थाय ले ? ना थातो नथी.

आ ठेकाणे उदायिनृपमारक द्रव्यसाधुनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ले. श्रेणिक माहाराजाना पुत्र कोणिक नृपति तेनो पुत्र उदायी राजा पाडलीपुरने विषे राज्य करतो हतो. ते राजायें पोताना प्रचंमदोर्दंमना बलें करी सर्व सामंत राजाउने स्वाज्ञापालक कस्या. पठी ते सर्व राजा उयें द्वेषभावथी घणुं द्रव्य आपी कोइ एक अधम क्षत्रियने उदायिनृपने मारवाने माटे पाडलीपुरमां मोकल्यो. ते अधम क्षत्रियें बीजो उपाय न जडवाथी कपटें करी सूरिपासें व्रत ग्रहण कस्युं अने ते सूरि, अष्टमी, चतुर्दशी.पूर्णिमा,एटला दिवसने विषे सुधर्मना उपदेशने माटे राजभवनने विषे रहेता. बारमा वरसनी आसेरीमां जंघामां ठरी बांधी ते कपटीपण सूरीनी

साथें त्यां गयो पछी अवकाश जोइने लोहनी छरीथी तेणे उदायि राजाने चीरी नाख्यो. गुरु जाग्या पछी धर्मना उड्डाहनी बीकथी गुरुयें पोतानुं शिर छुरीथी कापी नाख्युं. कह्युं छे के ॥ चेइयदव्व विणासे, रिसिघाए पवयणस्स उड्डाहे ॥ संजइ चउत्थ भंगे, मूलग्गीबोहि लाभस्स ॥ १ ॥ २७ ॥

साधोरह्नाय सिद्धिः सुचरणकरणैः श्रावकस्यापि हि स्या-
न्मध्येष्टानां भवानां शशिविशदगुणानंदनानंदवृत्तेः ।
चेन्नौभिः शीघ्रगाभिर्जलधिजलपथैस्तीरदेशेषु पांथाः,
चिद्यांत्याशु नान्ये हयकरभरथैर्भूपथैः किं क्रमेण ॥ २८ ॥

अर्थः-(साधोः के०) साधुनां (सुचरणकरणैः के०) रूडां ए[illegible] त्रनां करणें करीने (अह्नाय के०) शीघ्र (सिद्धिः के०) सिद्धि, [illegible] के०) होय (श्रावकस्यापि के०) श्रावकनी पण (शशिविशद[illegible] नानंदवृत्तेः के०) चंद्रमा सरखा निर्मल आनंदश्रावकना वर्त्तनेंकर[illegible] के०) निश्चें (अष्टानां के०) आठ एवा (भवानां के०) भवनी (मध्ये के०) मध्यमां सिद्धि थाय छे. त्यां दृष्टांत कहे छे (पांथाः के०) पथिक जनो (शीघ्रगाभिः के०) उतावलथी चालती एवी (नौभिः के०) नौकायें करीने (जलधिजलपथैः के०) समुद्रांतर्जलमार्गें करीने (तीरदेशेषु के०) समुद्रना कांठाने विषे (यांतिचेत् के०) जाय छे खरा. परंतु (केचित् के०) कोइ एक (अन्यें के०) बीजा पथिको (हयकरभरथैः के०) घोडा, हाथी अने रथेंकरी (भूपथैः के०) भूमिमार्गें करी (क्रमेण के०) अनुक्रमें (किं के०) शुं (आशु के०) उतावलथी (न यांति के०) नथी जाता ?

आ ठेकाणे आनंदश्रावकनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. आनंद नामा कौटुंबिक श्रीवीरवचनना प्रतिबोधें करी बोध पामेलो हतो श्रमणोनी उपासकतायें करी जगत्मां कीर्त्तिपात्र थयो हतो. तेने घेर चार गायोनां गोकुल हतां. तथा तेनां पांचशें वाहाण चालतां हतां, तथा पांचशें हल खेडाय तेटली जमीन तेने हती. तथा बार करोड द्रव्य हतुं. एम घणो आरंभ हतो ते छतां पण तेना शुद्धमनें करी तेनो मोक्ष थोडा अवतार मां थयो. कहेलुं छे ॥ मनःशुद्धिमबिभ्राणा ये, तपस्यंति मुक्तये ॥ त्यक्त्वा नावं भुजाभ्यां ते, तितीर्षंति महार्णवम् ॥ १ ॥ तदवश्यं मनःशुद्धि, र्मिछता

पुरुषेण वै ॥ तपःश्रुतयमप्रायैः, किमन्यैः कायदंमनैः ॥२॥ आ श्लोकनो भावार्थः— मननी शुद्धिने न धारण करता एवा जे पुरुष मुक्तिने माटे तप करे छे ते केवा जाणवा के जेम कोइ मूर्ख मनुष्य नावने मूकी समुद्रने हाथिथी तरवाने इछे तेवा जाणवा ॥ माटे अवश्यें करी मनःशुद्धिने इछनार

त्र्रने बीजा तपादिकें करीने शुं? कांहीज नहिं. जो मनःशुद्धि होय तो सर्व

रक प्राप्त थाय छे मनःशुद्धि विना जे करीयें ते सर्व व्यर्थ थाय छे ॥२ए॥

किम म्यक्त्वोदारतेजा नवनवफलदा वर्त्तरूपव्रतालिः, सिद्धां

अर्थ कैकविंशत्यमलगुणगतिः श्राद्धधर्मस्तुरंगः ॥ प्रापय्यांतं

विना वे गाद्रेर्नयति शिवपुरं कामदेवादिवत्तत्, मिथ्यात्वाधीश

कांहिज कादिकहयहरतोः यत्नतोरक्षणीयः ॥ ३० ॥ श्रावकत्वं ॥

रा गुरुर्न :— (सम्यक्त्वोदारतेजाः के०) सम्यक्त्वरूप छे उदार तेज जेने पेठें? तथी तथा (नवनवफलदावर्त्तरूपव्रतालिः के०) नवीन नवीन फलदायक चक्रकुंमाली समान द्वादशव्रतपंक्ति छे,जेमां एवो तथा (सिद्धांतोक्तैकविंशत्यमलगुणगतिः के०) सिद्धांतोयें कहेला एवा एकवीश गुणो ते रूप छे गति जेने एवो (श्राद्धधर्मस्तुरंगः के०) श्रावकना धर्मरूप अश्व, ते (कामदेवादिवत् के०) कामदेवादिक श्रावकोनी पेठें (नवाद्रेः के०) संसार पर्वतना (अंतं के०) अंतने (प्रापय्य के०) पमाडीने (तत् के०) ते (शिवपुरं के०) मोक्षनगर प्रत्यें (नयति के०) पमाडे छे, माटे ते (मिथ्यात्वाधीशशंकादिकहयहरतः के०) मिथ्यात्वरूप राजाना शंकाकांक्षादिकरूप अश्वचोरो ते थकी (यत्नतः के०) यत्नें करी (रक्षणीयः के०) रक्षण करवा योग्य छे.

आंहि कामदेवादिकनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. कामदेवनामा कौटुंबिक ते ऋद्धियें करी पूर्वे कह्यो एवो आनंदश्रावक समान छे. ते दृढ सम्यक्त्व पालनारो होवाथी अष्टम्यादिक पर्वतिथिनेविषे स्मशानमा कार्योत्सर्ग करे छे. एक दिवस इंद्रमहाराजें दृढसम्यक्त्वविषे तेनी प्रशंसा करी. ते सांजली कोइक देवतायें आवी मदोन्मत्त हाथीनुं तथा भुजंगनुं तथा व्याघ्रनुं, सिंहनुं चित्रविचित्ररूप विकुर्वी कायोत्सर्गमां रहेला कामदेवने क्षोभ पमाडवा उपाय कर्या, परंतु तेथी ते लगारमात्र पण कुंभित थयो नही. कहेलुं छे के, देवेहिं कामदेवो, गिहिवि नविचालिउ तवगुणेहिं॥

मत्तगयंद भुयंगम, रस्कस घोरट्टहासेहिं ॥२॥ धन्नासजाह्णिज्जा० ॥ ३० ॥

॥ अथ मृषावादद्वारं ॥

धर्माणां गुरुरेव जंतुषु दयाधर्मस्ततः संस्थितः,
श्रीवज्रायुधचक्रवर्त्तिसदृशां नो संगमादेर्हृदि ॥ चू
लायां कनकाचलस्य रमते कल्पद्रुमोनो मरौ, किं
चैरावणवारणः कुनृपतेर्द्वारेस्ति यः स्वस्पः तेः ॥३१॥

अर्थः–(जंतुषु के०) प्राणीयोनें विषे (दयाधर्मः के०) दयारूप जे धर्म, ते (धर्माणां के०) धर्मोनी मध्ये (गुरुरेव के०) श्रेष्ठज ले. (ततः के०) तेमाटे (श्रीवज्रायुधचक्रवर्त्तिसदृशां के०) श्रीवज्रायुध चक्रवर्त्ति समान पुरुषोना (हृदि के०) हृदयनेविषे (संस्थितः के०) दयारूप धर्म रहेलो ले ते दयाधर्म, (संगमादेः के०) संगमादिक नव अनव्यना हृदयनेविषे (नो के०) नथी रहेतो ते नव अनव्योनां नाम कहे ले ॥ संगमय कालसूरि,कविला अंगार पालयाडुन्नि ॥ नोजीव गुठ्ठ माहिल, उदाइनिव मारउ चेव ॥ १ ॥ ए नव अनव्य जाणवा. संगमदेव अनव्य हतो तेणे श्रीमहावीरस्वामीने उपसर्ग कस्यो. आहिं दृष्टांत कहे ले. (कल्पद्रुमः के०) कल्पवृक्ष, (कनकाचलस्य के०) मेरुपर्वतनी (चूलायां के०) चूलिकानी उपर (रमते के०) रह्यो ले. परंतु (मरौ के०) मरुस्थलिनेविषे (नो के०) रहे नहिं. तथा वली (यः के०) जे (ऐरावणवारणः के०) अहिरावण नामा हस्ती ते (स्वःपतेः के०) इंद्रना (द्वारे के०) द्वारनेविषे (अस्ति के०) ले (च के०) वली (कुनृपतेः के०) डुष्टराजाना घरनेविषे (किं के०) शुं होय ? ना होयज नहिं. तेम दयाधर्म सकलधर्ममां मोहोटो ले ते वज्रायुध जेवा महोटा पुरुषोना हृदयमां रह्यो ले एम जाणवुं ॥

अहिं हवे वज्रायुध तथा संगमदेवना दृष्टांत होवाथी बेहुनी कथामां प्रथम वज्रायुधनी कथा कहे ले. कांचनपुरनेविषे श्रीवज्रायुध नामा राजा राज्य करे ले. ते महापराक्रमी होवाथी शरणें आवेला जीवोनी रक्षा करवामां कुशल हतो. तेथी तेनुं नाम जगतमां वज्रपंजर करी सहु कहेता हता. एक दिवस सनानेविषे इंद्रमहाराजें तेनुं दयाधर्मसंबंधि पराक्रम वर्णव्युं. ते वातमां अश्रद्धा राखनारा बे देवताउ प्रत्यक्ष पराक्रम जोवाने माटे आ

व्या. तेमां एकजणें पारेवानुं रूप धारण कर्युं अने एकजणे शीचाणा पक्षी नुं रूप धारण कर्युं तेमां पारेवानुं रूप धारणकरनार देवता मारी रक्षाकर मारी रक्षा कर. एवां वचन बोलतो बोलतो वज्रायुधना खोलामां आव्यो. पठवाडे सींचाण पक्षीना रूपने धरनार एवो देव बोल्यो के ए मारुं नक्ष्य ठे ते तुं मने आप. एम बोलतो बोलतो आव्यो. अने कहेवा लाग्यो के हे राजन्! तुने क्यां दया ठे जेमाटे मारुं नक्ष्य जे पारेवुं पक्षी तेतें ग्रहण कर्युं. तेने राजाए कह्युं के तुने जे रुचे ते तुं खावानुं माग्य. त्यारे सींचाणे कह्युं के मांसविना मने काइ रुचतुं नथी माटे महामांस मने तुं आप. त्यारे राजाये पोताना अंगनुंज ठेदन करीने अर्पण करवा मांम्युं. ते पठी त्राजवुं मगावी, एकत्राजवामां पारेवाने बेसाड्युं अने एक ठावडामां पोतें बेठो. एवुं तेनुं साहस तथा शरणागत रक्षणत्व जोइने देवता तुष्टमान थया अने प्रत्यक्ष थइ कहेवा लाग्या के तारी कीर्त्ति अमे इंद्रमहाराजपासें सांजली पण ते वात उपर अमोने श्रद्धा न थइ तेथी तारी पासें प्रत्यक्ष पारखुं जोवा आव्या. परंतु शरणागतना रक्षणमां प्राण खोवामाटे पण तुं उत्कंठित थयो एम कहीने ते देवता देवलोकमां गया. ते राजा वज्रायुधना नवथकी स्वल्प नवें ज श्रीशांतिनाथनामा शोलमा तीर्थंकर थया. यतः ॥ जो अत्तणोहिएसी,अनयं जीवाण दिक्ष निच्चंपि ॥ जह वक्षाउह जम्मे,दिन्नं सिरिसंति नाहेणं ॥ १ ॥

हवे बीजी संगमदेवनी कथा कहे ठे. एक दिवस सौधर्मेंद्रें देवताउनी आगल वीरनगवाननुं सत्त्व वखाण्युं. जे त्रण नुवनमां पण श्रीवीरनगवानने कोइ क्षोन करी शके नही. ते वचन न मानतो एवो संगमदेव, अनार्यदेशमां पोलास चैत्यने विषे कायोत्सर्गमां रहेला एवा श्रीवीरनगवाननी समीप आवीने तिहां हस्तीनुं रूप विकुर्वीने पोताना शुंमादंमें उपाडी उपाडीने प्रनुने गगनने विषे उलाली नाख्या. तो पण वीरनगवान् क्षोन न पाम्या पठी प्रनुनी उपर रजनी वृष्टि करी. पठी सर्प थइने नगवानने मश्या, एम एकज रात्रिमां वीश उपसर्गो कर्या. तो पण क्षोन न पामता एवा प्रनुने जोइने प्रनुना मस्तकनी उपर चक्र मूक्युं. तो पण परानव न पाम्या. एवा माहात्म्यवाला प्रनुने मानीने पगे पड्यो. पठी सौधर्म देवलोक प्रत्यें जतां इंद्रें तेने वज्रें करी मार्यो अने स्वर्गथकी ते दुष्ट देवने काढी मूक्यो ते हाल मेरुनी चूलिका उपर रहेलो ठे ए अनव्य जीव अनंतसंसार पर्यटन करशे ॥

एका जीवदयैव नित्यसुखदा तन्नेमिना स्वामिना, कन्या
राज्यधनादि फल्गु तृणवत् संत्यज्य सैवादृता ॥ सोऽर्ह
न्वास्य किमुच्यते निजहिते नान्योऽपि मंदायते, किं
कस्या प्यजरामरत्वमथवा नेष्टं सुखं शाश्वतम् ॥३३॥

अर्थः- (एका के०) एक एवी (जीवदयैव के०) जीवदया जे तेज (नित्यसुखदा के०) निरंतर सुखने देनारी छे, (तत् के०) ते कारण माटे (नेमिना स्वामिना के०) नेमनाथ स्वामीयें (कन्याराज्यधनादि के०) स्त्री राज्य, धनादिक (फल्गु तृणवत् के०) सडेला घांसना तरणानी पेठें (संत्यज्य के०) त्याग करीने (सैव के०) ते जीवदयाज (आदृता के०) अंगीकार करी छे. (वा के०) अथवा (सः के०) ते (अर्हन् के०) तीर्थंकर छे. माटे (अस्य के०) एने (किमुच्यते के०) शुं कहीयें अर्थात् ते तीर्थंकर दयाधर्म पाले तेमां तो शुंज कहेवुं? परंतु (अन्योपि के०) कोइ बीजो जन पण (निजहिते के०) पोताना हितमां (नमंदायते के०) मंद आचरण करतो नथी. (अथवा के०) अथवा (कस्यापि के०) कोइ जीवने (अजरामरत्वं के०) अजरामरपणुं तथा (शाश्वतं के०) शाश्वत एवुं (सुखं के०) सुख (किं के०) शुं (न इष्टं के०) नथी सारुं लागतुं ? अर्थात् सर्व प्राणीने सारुं लागेज छे ॥३१॥ आहीं नेमिनाथ भगवाननुं दृष्टांत होवाथी तेमनी कथा प्रसिद्ध छे ते माटे आहीं लखता नथी.

संकटेपि न महान् मृपा वदे, दत्तमातुलककालिकार्यवत् ॥
चंदनः सुरभिरश्मघर्पणे, पीलुरद्भुतरसोपि पीलने ॥ ३३ ॥

अर्थः-(महान् के०) माहापुरुष, (संकटेपि के०) संकटने विषे पण (न के०) नहि (मृपा के०) जुठुं (वदेत् के०) बोले. केनी पेठें ? तो के (दत्तमातुलक के०) दत्तपुरोहितनो मामो (कालिकार्यवत् के०) कालिकसूरि गणधरनी पेठें. अर्थात् जेम कालिकाचार्य संकटमां खोटुं बोलता न हता तेम महान् पुरुष कष्टमां पण जुठुं न बोले. कह्युं छे के ॥ जीयं काऊण पणं, तुरमणिदत्तस्स कालि अज्जेण ॥ अविय सरीरं चत्तं, नयभणिय मह्म्म संजुत्तं ॥ १ ॥ हवे आहिं दृष्टांत कहे छे. (चंदनः के०) चंदन ते (अश्मघर्पणेपि के०) पाषाणनी साथें घसवामां पण (सुरभिः के०) सु

गंधमय थाय छे. तथा (इक्षुरपि के०) शेरडीनो सांठो पण (पीलने के०) पीलवामां (अद्भुतरसः के०) अद्भुतरस रूप थाय छे. अर्थात् अपूर्व स्वाद मय थाय छे ॥ ३३ ॥

आहिं कालिकाचार्यनी कथा कहे छे. तुरमिणी नगरीनेविषे दत्तराजानो मातुल कालिकाचार्य आव्या,तेमने एकदिवस दत्तराजायें पूछ्युं के महाराज ! यज्ञ करवानुं शुं फल छे ? त्यारें गुरुयें कह्युं जे एमां हिंसा होवाथी महापाप थाय छे. त्यारें दत्तराजायें कह्युं के महाराज ! हुं पूछुं छुं तेथी उलटो जवाब शा माटे आपो छो ? हुं तो यज्ञ करवाथी फल शुं थाय ? एम पुछुं छुं तेने गुरुयें कह्युं के नरकमां जवुं एज यज्ञनुं फल छे वली राजायें पुछ्युं के तेवारें हुं मरीने क्यां जइश ? गुरुयें कह्युं तुं नरकमां जइश. ते सांभली क्रोधायमान थइने राजायें पुछ्युं के तमे मरण पामीने क्यां जाशो, तेवारे गुरुयें कह्युं के हुं स्वर्गमां जइश. तेवारें राजायें पूछ्युं म्हारुं आयु केटलुं छे ? तेने गुरुयें कह्युं सातदिवसनुं ताहरुं आयुष्य छे, ते सांभली राजा गुरुनी पासें सीपाइनी चोकी राखीने पोताने घेर जइ बेशी रह्यो. सातमे दिवसें प्रधानोयें दत्तराजाने राज्य उपरथी उठाडी तेलनी कडाहमां नाखी तेनुं शरीर पचावीने कुतराने भक्षण कराव्युं ते मरीने नरकें गयो. गुरुपासें बेसाडेला सीपाइउ नाशि गया. ए रीतें कालिकाचार्यने प्राणांत कष्ट प्राप्त थयुं तो पण असत्य भाषण न कर्युं. माटें मरणां ते पण असत्य बोलवुं नही ॥

घोरां दुर्गतिमेत्यलीकलवमप्यभ्यर्थितोऽपि ब्रुवन्, वादे
नारदपर्वताख्यसुहृदोर्यद्वसुर्भूपतिः ॥ चक्रेऽर्चाविधुरोवि
रंचिरनृतात् केतक्यनिष्ठा मृषा, साद्यात्किं न हरि
र्भवेन महितः,सत्यात्परीक्षाक्षणे ॥ मृषावादद्वारं ॥३४॥

अर्थः—बीजा कोइयें (अभ्यर्थितोपि के०) अभ्यर्थित कर्यो छे तो पण कोइ प्राणी (अलीकलवमपि के०) असत्यवाक्यना लवने पण (ब्रुवन् के०) बोलतो छतो (घोरां के०) भयंकर एवी (दुर्गतिं के०) दुर्गतिने (एति के०) पामे छे. (यद्वत् के०) जेम (नारदपर्वताख्यसुहृदोः के०) नारद अने पर्वत नामना बे स्नेहीना (वादे के०) विवादमां (वसुर्भूपतिः के०) वसु नामा भूपति जेम घोरगतिने प्राप्त थयो अर्थात उपाध्या

यनी पत्नीनी करेली प्रार्थनायें करी कूटसाक्षी नरवाथी वसुराजा दुर्गतिने प्राप्त थयो. त्यां लौकिक दृष्टांत कहे छे. (नवेन के०) ईश्वरें (विरंचिः के०) ब्रह्माने (अनृतात् के०) असत्य नाषणथकी (अर्चाविधुरः के०) पूजारहित शुं (नचक्रे के०) न कस्या, ना कस्याज, अद्यापि ब्रह्मा छे ते लोकोयें पूजाता नथी. वली शंकरें (मृषासाक्ष्यात् के०) खोटी साक्षी नरवाथकी (केतकी कें०) केतकीने, (अनिष्ठा के०) अनिष्ठित (किंन के०) शुं न करी. अर्थात् करीज. जेमाटे ईश्वरने आजदिन पर्यंत केतकी चडती नथी ए प्रत्यक्ष वात छे. तथा इश्वरें (परीक्षाक्षणे के०) परीक्षा नी वेलाने विषे (सत्यात् के०) सत्यनाषणथकी (हरिः के०) विष्णु, (किं के०) शुं (नमहितः के०) न पूजाया अर्थात् पूजायाज एटले श्रीकृष्ण अद्यापि जगत्मां पूजाय छे ते सत्यनाषणथकी जाणवुं ॥ २४ ॥

इहां दृष्टांतमां वसुराजा तथा ब्रह्मादिकनी कथा कहेवी जोइयें. तिहां प्रथम ब्रह्मा विष्णुनी कथा कहे छे एकदा ब्रह्मा अने विष्णुने वाद थयो के शिवना लिंगनो आपणने पार पामवो. तेने महादेवजीयें कह्युं के उपर तथा नीचें महारुं लिंग पारविनानुं छे माटे तेनो कोइ पार पामी शके नही तो पण ते बेहु देव पार पामवाने चाल्या, तेमां ब्रह्माजी विष्णुना नानिप्रदेशथी निकलीने छ मास पर्यंत उपर चाल्या अने विष्णु छ मास पर्यंत नीचें चाल्या, तो पण महादेवजीना लिंगनो पार आव्यो नही एवामां शंकरनां मस्तक उपरथी केतकी नीचें उतरी तेने ब्रह्मायें पूछ्युं के तुजने शिवना मस्तक उपरथी उतरतां केटला दिवस थया? तेवारें केतकीयें कह्युं के छ महीना थया ते सांनली ब्रह्मायें विचास्युं जे मने छ महीना थया पण हुं पार पाम्यो नही एम चिंतवी केतकीनें कह्युं के तुं शिवनी पासें एवी साक्षी आपजे के मुजने तमारा मस्तक उपरथी ब्रह्मायें आणी छे. एटलुं असत्य बोलजे. ते वात केतकीयें कबुल करी तेवारें ब्रह्मा त्यांथी पाछा वल्या अने विष्णुने आवी कहेवा लाग्या के हुं ईश्वरना लिंगनो पार पाम्यो तेनें टेको आपवा केतकीयें खोटी शाक्षी पूरी तथा श्रीकृष्ण तो सत्यज बोल्या के हुं तो छ महीना पर्यंत ईश्वरनो पार पामवा माटे नीचो गयो पण पार पाम्यो नही एवी रीतें ब्रह्मायें असत्य नापण कर्युं माटे शिवजीयें ते ब्र

ब्रह्माने अपूज्य कर्या. ते अद्यापि जगत्मां कोइ ब्रह्माजीने कोइ पूजतो नथी अने केतकीयें जूठी साक्षी नरी तेथी शिवजीयें तेनो त्याग कर्यो जेमाटे आजपर्यंत केतकीनां फूल महादेव उपर चडतां नथी अने विष्णु सत्य बोल्या तो तेने महादेवे जगत्मां पूज्य कर्या, ते अद्यापि पूजाय छे माटे गमे तेवुं डुःख पडे तो पण सर्वथा असत्य नाषण करवुंज नही असत्य नाषण करनारो पुरुष जे होय ते ब्रह्मा अने केतकीनी पेठें थाय छे.

हवे वसुराजानी कथा कहे छे. शुक्तिमतिपुरीने विषे वसुराजा राज्य करे छे. त्यां क्षीरकदंब उपाध्याय रहे छे. ते पोताना पुत्रने तथा राजाना पुत्र वसुराजाने तथा नारदने ए त्रणने नणावे छे. एक दिवस उपलीनूमियें उपाध्याय रात्रिनेविषे ध्यान करता हता. तेवामां आकाशमार्गथकी बे मुनिनुं एवुं वाक्य सांनल्युं जे आ आचार्यनी पासें त्रण जणशास्त्र नणे छे तेमां बे जण नरकगामी थाशे अने एक जण स्वर्गें जशे. पछी उपाध्यायें त्रणे जणने कुर्कुट वधने माटे मोकल्या तेमां नारद विना बे जणे तो कुर्कुटवध कर्यो माटे ते बेहु जण नरकगामी थाशे अने नारदें वध न कर्यो माटे ते स्वर्गगामी थाशे. अनुक्रमें उपाध्याय मरण पाम्या, तदनंतर पर्वतें तो " अजैर्यष्टव्यं " ए वाक्यनो आम अर्थ कर्यो जे पशुयें करी यज्ञ करवो, तेने नारदें कह्युं के हे नाइ! उपाध्यायें तो अज शब्दनो अर्थ त्रण वर्षनी जुनी व्रीहि कहेली छे. एम बेहु जणनो विवाद थतां थतां एक बीजायें एवुं पण लीधुं के जेनुं बोलवुं खोटुं ठरे, तेनी जिह्वानुं छेदन करवुं. ते बेहुजणे कबुल कर्युं. अनें वसुराजा जे उपाध्यायनो त्रीजो शिष्य हतो तेणे पर्वतनी माताना उपरोधेंकरी खोटी साक्षी पूरी ने कह्युं के अज ए टले बकरो जाणवो एम उपाध्यायें कह्युं हतुं आवीरीतें खोटुं बोल्यातांज शासनदेवीयें तेने सिंहासन उपरथी उंधो नाखीने चपेटीयें करी मरण पमाड्यो ते मरीने नरकमां गयो, माटे जे कोइ असत्य नाषण करशे तथा असत्य साक्षी नरशे ते वसुराजानी पेठें डुःखी थाशे. ए वैराग्यद्वार पूरुं थयुं.

वैराग्यशस्त्रहतमोहतमोऽमलांत, दृष्ट्या पटिष्ठपरि
दृष्टहिताहितार्थः ॥ चौरोपि शुध्यति शमेन दृढ
प्रहारी. वाप्नोति वा दवजवोजलदेन किं न ॥ ३७ ॥

अर्थः—(चौरोपि के०) चोर पण (शमेन के०) शमतायें करी (शुध्य ति के०) शुद्ध थाय छे. अर्थात् पापथकी मुक्त थाय छे केनी पेठें? तो के (दृढप्रहारीश्व के०) दृढप्रहारी चोरनी पेठें शमतायें करीनें शुद्ध थाय छे. त्यां दृष्टांत कहे छे. के (दवजवः के०) दावानलनो वेग ते (जलदेन के०) मेघें करी (नअपैतिकिं वा के०) शांतिने न पामे शुं ? अर्थात् शांतिने पामे छेज. हवे ते चोर कहेवो छे? तो के (वैराग्यशस्त्रहतमोहतमोमलांतर्दृ ष्टया के०) वैराग्यरूप शस्त्रेंकरी हणायुं छे मोहरूप तम जेनुं एटला मा टेज अंतर्दृष्टियें (पटिष्टपरिदृष्टहिताहितार्थः के०) मनोज्ञ जेम होय तेम अंतरदृष्टियें करीने जोयो छे हिताहितनो अर्थ जेणे एवो छे. अर्थात् आ देय अनादेय पदार्थ जेणे जाण्यो छे एवो छे.

आंहिं दृढप्रहारी चोरनी कथा कहे छे. माकंन्दीपुरीने विषे सुन्नद्र नामा श्रेष्ठी वसे छे. तेनो पुत्र दत्त करीने हतो, तेने बालपणामांज तेना पितायें सर्व शास्त्रो नणाव्यां, वली तेने परणाव्यो. अनुक्रमें ते जुगार रमतो डुष्ट मनुष्यना संगें करी चोर थयो. लोकमां दृढप्रहारी एवे नामें विख्यात थयो. एक दिवस कोइ एक ब्राह्मणना घरमां चोरी करवा पेठो, त्यारें ते ब्राह्मण जागतो हतो माटे चोरनी पछवाडे दोड्यो. तेने चोरें खड्गें करी मारी नाख्यो तेवारें ते ब्राह्मणनी स्त्री सगर्ना हती ते राड्यो नाखती चो र पासें आवी, तेने पण चोरें मारी नाखी. पछी चोरीमां अंतराय करना री ते ब्राह्मणनी गाय बाहिर उन्नी हती ते शृंगें करी चोरने मारवा लागी, तो तेने पण चोरे मारी नाखी, एवामां ब्राह्मणीना पेटमांथी निकलीने पृथ्वी उपर लोटता बालकने जोइने ते चोरना मनमां दया आवी अने अत्यंत वैराग्य उत्पन्न थयो, तेवारें विचार्युं जे अरे! में पापिष्टें आ केवुं पापकर्म कर्युं? अरे धिक्कार होजो मुफ डुष्टने! एम पश्चात्ताप करतो करेलां पापने वारंवार स्मरणमां लावतो अन्न तथा जल बेहुनो त्याग करीनें ते ज पुरना मार्गने विषे कायोत्सर्ग करी उन्नो रह्यो. ते नगरनां लोकोयें तेने डु ष्ट हत्यारो जाणीने लाकडीना तथा पाषाणना प्रहारें करी मार्यो, तो पण समताधारण करी रह्यो. छ मासमां कर्मोनुं उन्मूलन करी केवलज्ञान पा मी सिद्धिने प्राप्त थयो. माटें चोर पण शांतियें करीने सिद्धिने पाम्यो, तो बीजा जन पामे तेमां तो शुंज आश्चर्य? ॥ ३५ ॥

नानाकलाविदपि लाघवमेति चौर्या, द्विद्यानताम्रफ
लचौर इव प्रियार्थे ॥ दोषो महानधिगुणेपि हि लांछ
नाय, रत्नाकरे कुजलवच्छशवत् सुधांशौ ॥ ३६ ॥

अर्थः–(नानाकलाविदपि के०) नानाप्रकारना कलाने जाणनार एवो पुरुष पण (चौर्यात् के०) चोरपणाथी (लाघवं के०) लघुपणाने (एति के०) प्राप्त थाय छे. केनी पेठें ? (प्रियार्थे के०) पोतानी स्त्रीने माटे (विद्यानताम्रफलचौर इव के०) विद्यायें करीने नम्र करेला एवा आंबाना फलना चोरनी पेठें. इहां दृष्टांत कहे छे. (हि के०) निश्चें (अधिगुणे पि के०) अधिक गुणवाला एवा पुरुषनेविषे पण (महान् दोषः के०) महोटो दोष, (लांछनाय के०) कलंकने माटे थाय छे. जेम (रत्नाकरे के०) समुद्रने विषे (कुजलवत् के०) क्षार जल जेम लांछनने माटे थयुं छे, तथा (सुधांशौ शशवत् के०) निर्मल चंद्रमाने विषे, शश एटले मृगनुं चिन्ह जे छे ते जेम लांछनरूप थयो छे. तेम घणा गुणमां एक महोटो दोष ते लांछनने माटे थाय छे ॥ ३६ ॥

चोरनी कथा कहे छे. चेलणाराणीने एकस्तंभुं धवलगृह करावनानी इच्छा थइ. माटे श्रेणिक राजायें देवनुं आराधन करी एकस्थंभवालुं घर बनाव्युं. तेनी पासे एक वाडीमां अत्यंत उंचा आंबाना वृक्ष छे. तेना फल कोइ लइ शके नही. ते नगरमां कोइ आकर्षणी विद्याना जणेला चांमालनी स्त्रीने आम्र फल खावानो दोहलो उपन्यो. तेवारें चांमालें आकर्षणीविद्यायें आम्र फल ग्रहण कर्यां. चांमालना स्पर्शें आम्र सुकाइ गयो. कोइ युक्तिथी अजय कुमारें ते चांमालने पकड्यो तेवारें ते आकर्षणीविद्या श्रेणिकने आपीने छूटो.

स्युर्ब्रह्मणा नृसुरमोक्षसुखानि किंतु, जंबूमुनेः सुभ
गताम्निनवेव काचित् ॥ भेजुर्व्रतं सममनेन मुदा प्रि
यास्ता, अन्यारता सह जगाम च केवलश्रीः॥३७॥

अर्थः–(ब्रह्मणा के०) ब्रह्मचर्य एटले मैथुनपरित्यागरूपव्रतें करीने (नृसुरमोक्षसुखानि के०) मनुष्य, देव, अने मोक्षनां सुखो (स्युः के०) होय, (किंतु के०) केम तो के ब्रह्मचर्य करीने (जंबूमुनेः के०) जंबूस्वामीने (काचित् के०) कोइक (अभिनवेव के०) नवीन एवीज (सुभग

ता के०) सुभगता प्राप्त थइ. ते केम तोके (ताः के०) ते पोतानी प्रसिद्ध एवी आठ (प्रियाः के०) स्त्रियो ते (मुदा के०) हर्ष करी (अनेन समं के०) आ जंबूस्वामीनी साथें (व्रतं के०) दीक्षाने (भेजुः के०) भजती हवी. (च के०) वली (केवलश्रीः के०) केवलज्ञान रूप लक्ष्मी, ते (अन्यार ता के०) अन्यने विषे आसक्तिरहित एवी थकी. (सह के०) जंबूस्वामीनी साथेंज (जगाम के०) जाती हवी. कारण के, जंबूस्वामी पछी कोइने केवल ज्ञान उपनुं नथी. ए बे वातां जंबूस्वामीने सुभगता दर्शावनारां छे. केम के जेनुं अंत पर्यंत खरुं सौभाग्य होय ते स्त्री, पोताना भर्त्तारनी सहचरी थाय छे. तेम जंबूस्वामीनी आठे स्त्री साथेंज मोक्षें गइ अने केवलज्ञानरूप स्त्री पण जंबूस्वामीनी साथें मोक्ष गइ अन्य जीवोने विषे आसक्त रही नहीं॥

आंहिं जंबूस्वामीनी लेशमात्र कथा कहे छे. कुसुमपुरने विषे धनदत्त नामा शेठना भवदत्त अने भवदेव नामना बे पुत्रो हता. तेमां भवदत्तें दीक्षा ग्रहण करीने, वली कालांतरें पोताना भाइने बोध देवा माटे त्यां आव्यो. ते वखत भवदेव अर्द्धी शणगारेली पोताने परण नारी कन्याने मूकीने महोटा भाइने वांदवा गयो. महोटा भाइयें वात्तो करावतां गुरुनी पासें पहोंचाड्यो. गुरुयें तेने प्रतिबोधी दीक्षा आपी. ते तेणे भावविना पालवा मांमी. जेवारें महोटो भाइ भवदत्त साधु मरण पाम्यो तेवारें न्हानो भाइ फरी भोगनी अभिलाषा करतो नगरमां आव्यो, ते वात पूर्वें परणवा माटें सज्ज थयेली अर्द्ध शणगारेली स्त्रीयें जाणवाथी तेणें तेने बोध कस्यो. पछी ते मरण पामीनें पुंमरीकिणी नगरीयें पद्मरथ राजानी वनमाला नामें राणीनी कूखें शिवकुमार एवे नामें पुत्रपणें उपन्यो, बापें तेने बत्रीश कन्या उ परणावी. तेणें पूर्वजन्मना भाइ सागरचंद्र मुनि पासेंथी धर्म श्रवण करी संवेग पामी ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण कर्खुं. पछी दीक्षा लेवानी इच्छा करी, त्यारें अशक्त जाणी तेना पितायें वास्याथी ते दृढधर्मा श्रावक थइने प्राशुका न्ननो आहार वहोरी एकांतरें उपवास करीने पारणुं करे. पछी वली चोवी श वर्षपर्यंत यावत् छठ तपें पारणामां आंबेल कर्खुं ते मरीने विद्युन्माली नामें देव थयो, त्यांथी च्यवीने राजगृहीनेविषे ऋषभदास शेठनी धारिणी स्त्रीनी कूखें पुत्रपणें उपन्यो, एनुं नाम जंबू पाड्युं. तेणे इच्छा विना पण पिताना आग्रहथी आठ कन्या परणीने एकेक स्त्रीने नवी नवी कथा सं

जलावी प्रतिबोध पमाडे छे, तेवामां प्रजवनामा चोर ते जंबूकुमारना घरमां पांचशें चोरोनी साथें चोरी करवा आव्यो. तेणें छानो उनो रहीने जंबूकुमारें स्त्रीउने करेलो बोध सांजली वेराग्य पामी दीक्षा लीधी. ते व्रत पालीने देवता थयो. अने जंबूकुमार तथा तेनी आठे स्त्रीयो मोक्ष पामी॥ ३७॥

न व्रह्मतः सकलशर्मकृतश्चलन्ति धीराः सुदर्शन इव
व्यसने धनेऽपि॥ शेषोऽब्धिवृध्धलहरीचलशैलव
ल्गभ्रूग्नुग्नमौलिरपि विश्वजरं बिजर्त्ति ॥ ३८ ॥

अर्थः—(सकलशर्मकृतः के०) समस्त सुकृतने करवावाला एवा (धीराः के०) धैर्यवान पुरुषो (व्यसने के०) संकट आव्या छतां अथवा (धनेपि के०) धन प्राप्त थया छतां पण (सुदर्शन इव के०) सुदर्शन शेठनी पेठें (व्रह्मतः के०) धर्मथी (न चलंति के०) चलायमान थता नथी. त्यां दृष्टांत कहे छे. (शेषः के०) नागेंद्र ते, (अब्धिवृध्धलहरीचलशैलवल्गभ्रूग्नुग्न मौलिरपि के०) सागरना मोटा मोजाथी चंचल थयेला एवा जे पर्वत तेथी धुजती अने विदारण पामती एवी जे पृथ्वी तेणें करी वक्र थयुं छे मस्तक जेनुं एवो छतो पण (विश्वंजर के०) जगतनो जार तेने (बिजर्त्ति के०) धारण करे छे. पण मूकतो नथी. तेम मोटा लोको धर्मने क्यारें पण मूकता नथी॥

इहां सुदर्शन श्रेष्ठिनी कथा कहे छे. चंपानगरीमां दधिवाहन राजा तेने अजया नामें राणी छे. ते नगरीमां सुदर्शन नामें शेठ वसे छे. तेनी देवांगना सरखी मनोरमा नामें स्त्री छे. तेना पांच पुत्रो छे. एकदा सुदर्शन शेठनुं रूप जोइने अजया राणी अनुरागणी थइ त्यारें शेठने तेडवा माटे पोतानी सखीने मोकली. शेठने बुद्धि उपनी तेथी कह्युं के हुं नपुंसक छुं, माटे ए काम करवाने शक्तिमान नथी. दासीयें पण ते प्रमाणेंज राणीने कह्युं. वली एकदा शेठना पुत्रोने मार्गे जता जोइने राणीयें विचार्युं के नपुंसकने संतति होय नही, माटे शेठें मने छेतरी छे. तो हवे एनुं फरीथी उपाय करीश. एक दिवसे कोइ कार्यनिमित्तें शेठने उपाडी लावीने राणीयें प्रार्थना करी ते शेठें न मानी त्यारें तेणे स्त्री चरित्र करी बुमो पाडी जे शेठें म्हारी लज्जा लीधी एवो होकार करवाथी राजायें शेठने शूलीयें चडाव्यो. त्यां शीलना प्रजावथी शूली ते सिंहासन रूप थइ पछी राजाना सेवकोयें खड्गना प्रहार कर्या

ते मुकुट, कुंमल, हार, बाजुबंधादिक आनूषण रूप थता हवा. ए रीतें कष्ट पडतां पण ठोठें अंगीकार करेलुं शीलव्रत न मूक्युं॥ ३७ ॥

विश्वोपकारि धनमल्पमपि प्रशस्यं, किं नंदवत् फलम मानपरिग्रहेण ॥ प्रीत्यै यथा हिमरुचिर्न तथा हिमौ घः, स्याद्वा यथाऽत्र जलदो जलधिस्तथा न ॥ ३७॥

अर्थः—(अल्पमपि के०) अल्प एवुं पण (धनं के०) धन, (विश्वोप कारि के०) सर्वलोकना कार्यने साधवावालुं ठतुं (प्रशस्यं के०) वखाणवा योग्य थाय ठे. परंतु (अमानपरिग्रहेण के०) संख्याविनाना परिग्रहें करी (नंदवत् के०) नंदराजानी पेठें (किं फलं के०) शुं फल होय ठे? अर्थात् कांहीपण फल ते धननुं न थयुं. आहीं दृष्टांत कहे ठे. (यथा के०) जेम (हिमरुचिः के०) चंद्रमा, (प्रीत्यै के०) लोकने प्रीतिने माटे (स्यात् के०) होय, (तथा के०) तेवीरीतें (हिमौघः के०) हिमनो समूह (न के०) न होय, (वा के०) अथवा (यथा के०) जेम (जलदः के०) मेघ ते (अत्र के०) आ जगत्ने उपकारी थाय ठे, (तथा के०) तेम (जलधिः के०) समुद्र, ते क्षारजलें करी निरुपयोगी ठे माटे (न के०) थतो नथी.

आहीं नंद राजानी कथा कहे ठे, पाटली पुरनेविषे उदायिन राजाने कोइक पुरुषें साधुवेष धारण करीने कंकलोहनी ठुरीयें मारी नांख्यो! ते राजाने ठोकरो न होवाथी राज्य रेढुं थयुं, ए अवसरे हजाम पिता अने गणिका मातानो पुत्र नंदनामा हतो तेणें पोताना आंतरडायें वीटायला पाटलीपुरने स्वप्नमां दीठुं. प्रातःकालें स्वप्नपाठकने स्वप्ननुं फल पूठ्युं, पाठकें पण पोतानी दीकरी तेने परणावीने पठी कह्युं के तमने आ पुरनुं राज्य मलशे. नंदपण ते कन्या परणीने घेर आव्यो. अनुक्रमें पंचदिव्य हाथीयें नंदने अनिषेक कर्यो, नंद राज्य गादीयें बेठो, परंतु कोइ मंत्री प्रमुख ते नंदनी आज्ञा माने नही. त्यारें नंदें नित उपर चित्रेला असवारोनी सामुं जोयुं. के तरत ते चित्रेला स्वारोयें उतरीने अनेक सामंतोने पाडी नांख्या. ते जोइ सर्व सामंत नय पामीने तेनी आज्ञा पाली ते पठी ते नंदनी गादीयें जे बेसे ते नंद कहेवाय,ने सर्व नंद त्रणे खंमना अधिपति थया. सोना ना पर्वतो कराव्या; पण ते द्रव्य कोइ सुकार्यमां वपरायुं नहि ॥ ३७ ॥

धन्यः परिग्रहमितैः सुखभाङ्न पापी, प्राङ्मम्मणो व णिगिवेंधहृदीश्वरोऽपि ॥ वंद्यः कृतादरमहो जगतोमित श्रीः, पश्याधिकाऽधिकवसुः शशभृत् कलंकी ॥ ४० ॥

अर्थः—जे मतिमान् पुरुष, (परिग्रहमितैः के०) परिग्रहना मानें करी वर्त्ते, ते (धन्यः के०) धन्य जाणवो. तथा (सुखभाक् के०) सुखभोगवनारो जाणवो परंतु (पापी के०) लोभी पुरुष (न के०) सुखभाग् नथी. केनी पेठें? तो के (प्राक् के०) पूर्वें (ईश्वरोपि के०) कोटी धनवालो पण (इंधहृत् के०) नदीना पूरथी तणातां लाकडांनो लावनार (मम्मणोवणिगिव के०) मम्मण शेठज जेम कहेलुं ठे के ॥श्लोक॥ असंतोषवतः सौख्यं, न शक्रस्य न चक्रिणः ॥ जंतोः संतोषभाजोय,दभयस्यैव जायते ॥ भावार्थः— असंतोषवाला इंद्रने तथा चक्रीने पण सुख होतुं नथी अने निर्धन होय परंतु संतोषी होय तो ते सुखी जाणवो. (पश्य के०) जो के (शशभृत् के०) चंद्रमा, (मितश्रीः के०) थोडी लक्ष्मीवालो होय त्यारे (अहो के०) आश्चर्य! (कृतादरं के०) कर्यो ठे आदर जेने विषे एवो जेम तेम (जगतः के०) जगतने (वंद्यः के०) वंदन करवा योग्य होय ठे. अने (अधिकाधिकवसुः के०) अधिकवसु वालो चंद्रमा, तथा अधिकवसुवालो पुरुष, (कलंकी के०) कलंकवालो होय ठे अने कोइने नमन करवा लायक होतो नथी. पुरुषपक्षें वसु एटले द्रव्य जाणवुं अने चंद्रपक्षें वसु एटले किरण जाणवां.

आहिं मम्मण शेठनी कथा कहे ठे. राजगृही नगरीयें श्रेणिक राजा राज्य करे ठे. एक दिवस चेलणाराणी गवाक्षमां वेठां, तेवामां अर्द्धरात्रिने समयें अत्यंतपवने युक्त वरसाद वरसवा मांड्यो, तेथी नदियें पूर आव्युं तेवारें नदीमां तणातां एवा लाकडाउने बाहिर खेंचता एवा कोइ वृद्ध पुरुषने विजलीना उद्योतें करीने, राणीयें दीठो. तेवारें श्रेणिक राजाने राणीयें कह्युं के महाराज! मेघ राजानी पेठें तमें पण भरतामांज भरो ठो? परंतु जुवो आवा दुःखी दरिद्री आपणा नगरमां वसे ठे. तेना भरण पोषणनी तमे चिंता पण करता नथी वाह!! तमारुं आतो मोहोटुं चातुर्य भासे ठे? तदनंतर श्रेणिक राजायें पण तणातां काष्ठोने खेंचनार वृद्धपुरुषने गोखमांथी जोयो, तेथी तेने बोलाव्यो अने पूछ्युं के अरे तुं

कोण ठो ? त्यारें ते वोल्यो के हुं वणिक छुं, मारुं नाम मम्मण छे. मह्हारे एक वलद सुवर्ण रत्ननो छे अने वीजो वलद मेलववा माटे आ काम करुं छुं तेथकी ते कौतुक युक्त थइने श्रेणिक राजायें चेलणा राणीनी साथें जइ ते मम्मण शेठना घरमां त्रीजी भूमिने विषे सुवर्ण अने रत्न समूहथी जडेला एवा शीगडावाला वे वृषभोने नजरें दीठा. ते जोइने श्रेणिकराजा चेलणा राणीने कहे छे के हे स्त्रि ! आवी समृद्धि मारा भंमारमां पण नथी. वली श्रेणिक राजा ते मम्मण शेठने पूछे छे के एटली समृद्धि छतां तमो नदीमांथी काष्ठने शामाटे खेंचीलीयो छो ? त्यारें मम्मण शेठें कह्युं के हे राजन् ! आकाष्ठोनां रत्न थाशे. त्यारें राजायें कह्युं के थोडी किम्मतनां काष्ठोयें करी रत्न ते केम थाय ? त्यारें तेणें कह्युं के आ बावना चंदननां घणी किम्मतनां काष्ठो हुं लउं छुं ते वात सांभली साश्चर्य थइने राजा तथा राणी बेहु पोताने घेर गयां. ए रीतें जन्मपर्यंत मम्मण शेठें छते धने कोइने कांही पण आप्युं नहिं तेम खाधुं वापर्युं पण नहीं ॥ ४० ॥

सीमस्थिते जलनिधौ निजकालमाने, शीतातपांभ
सि च जीवति जीवलोकः॥ दिग्मानमानमपि जंतुहिता
य तद्वत्, स्याच्चारुदत्तवदिहाप्रयतोति दुःखी ॥ ४१ ॥

अर्थः–(जलनिधौ के०) समुद्र, (सीमस्थिते के०) मर्यादामां रहे छते (जीवलोकः के०) जीवलोक, (जीवति के०) जीवे छे. जो तेनी मर्यादा मूकीने समुद्र वर्त्ते तो केवी रीतें जीवलोकथी जीवाय ? (च के०) तथा (शीतातपांभसि के०) शीतकाल, उष्णकाल अने वर्षाकालते (निजकालमाने के०) निजप्रस्ताव वर्त्तमान थये छते जीवलोक, जीवे छे. पण पोतानो जे काल तेनो मान मूकी अणे व्यतिक्रम पामे, तो जीवलोक केम जीवे ? जीवेज नही. (तद्वत् के०) तेनी पेरें निज समयप्रमाणें (दिग्मानमानमपि के०) दिशा परिमाणनुं व्रत पण (जंतुहिताय के०) जीवोना कल्याणने माटे (स्यात् के०) होय. तथा (इह के०) आ व्रतने विषे (अप्रयतः के०) अनादर करनार जे पुरुष थाय, ते (अतिदुःखी के०) अत्यंत दुःखी थाय छे. केनी पेरें ? तो के (चारुदत्तवत् के०) चारुदत्तनी पेरें. जेम चारुदत्तदिग्व्रतना त्यागें करी दुःखी थयो. तेम थाय छे. ए भावार्थ जाणवो.

आंहिं चारुदत्तनी कथा कहे छे. मिथिलापुरीने विषे भीमक शेठनो पुत्र चारुदत्त नामा हतो, तेने परणाव्या पछी तेना पितायें चतुराइने माटे वेश्याने घेर मूक्यो. त्यां तेणे वेश्याना व्यसनें करी पोतानुं घर पण छोडयुं तेना पितायें मरती वखतें ते चारुदत्तने बोलावी कह्युं के हे नाइ! जन्म पर्यंत तें मारुं वाक्य पाल्युं नहिं. हवे बीजुं कांहिं कहेतो नथी परंतु एट लुंज कहुं छुं के कष्टना वखतमां नवकारनुं स्मरण करवुं एम कहीने चारुदत्तनो पिता मरण पाम्यो. पछी तेनुं द्रव्य बधुं क्षीण थइ गयुं. तेवारें निर्धन थको पृथ्वीमां भमतां भमतां ते चारुदत्तने कोइ योगी मल्यो तेणें सुवर्णरस लेवा माटे रसकूपिकामां नाख्यो त्यां कूपिकामां मरण पामता एवा कोइ पुरुषने तेणे नवकार संभलाव्यो अने पोतें चंदनघोने पुछडे वलगीने कुवाथी बाहेर नीकली पोताना मामाने गाम गयो. तिहां मामायें अने पोतें कपास ग्रहण कस्यो,ते कपासने अरण्यमां लइ जता हता,तेवामां दावाग्नियें करी कपास बलीने राख थइ गयो. पछी मामो कहेवा लाग्यो जे आपणे एक चामडानी धमणमां प्रवेश करीने रहियें,तो मांसना लोभी भारंम पक्षीयो आपणने उपाडी उडीने सुवर्णद्वीपमां लइ जाशे. तिहां सुवर्ण ग्रहण करशुं ? एम कही मामायें पोताना लीधेला बे बकराने मारवा मांड्या तेने चारुदत्तें वास्यो तो पण मामायें सांभल्युं नही चारुदत्तें पोताने बेसवा माटे जे मामायें बकरो आप्यो हतो तेने मरती वखतें नवकार संभलाव्यो पछी मामो भाणेज बेहु जण ते बकराउनी खालनी धमणमां बेठा तेवारें भारंमपक्षीयें ते बेहुने मांसनी भ्रांतिथी उपाडी लीधा, ते सुवर्णद्वीपें जइ नाख्या. त्यां खोलमांथी निकलीने ते चारुदत्त एक मुनिनी पासें गयो. जेवामां ते गुरुनी पासे बेसे छे तेवामां एक देदीप्यमान कांतियें विराजमान देवता तिहां आव्यो, तेणे प्रथम चारुदत्तने वांदीने पछी मुनिने वंदन कर्युं ते जोइ कोइ बीजा त्यां बेठेला पुरुषें मुनिने पूछ्युं महाराज आ देवतायें प्रथम चारुदत्तने वांदी पछी मुनिने वंदन करवारूप विपरीत वंदन केम कर्युं ? गुरुयें कह्युं एणे पूर्वले भवे आ देवताना जीवने नवकार संभलाव्यो हतो तेना प्रभावथी ए देवता थयो छे माटे एनो गुरु होवाथी एणे चारुदत्तने वंदन कर्युं. पछी चारुदत्तने ते देवे केटलुं एक द्रव्य आप्युं अने पाछो तेने स्वस्थानकें पोहोंचाड्यो. अर्थात् ए चारुदत्त बहुकर्मी हतो परंतु तेणे पो

ताना पिताना उपदेशथी नमस्कार आपवानो नियम राख्यो तो ते पाछो सुखी थयो अने देवतायें पण पूर्वजन्मनो गुरु मानीने नमस्कार कस्यो.

न गम्यं नागम्यं क्वचिदकृतदिग्यानविरतेः, कथं वा स्याद्विश्वे सततगतिरेकत्र वसतिः ॥ द्वितीयद्वीपांतर्गतभरतमाक्रांतजलधि, र्नकिं द्रौपद्यर्थे हरिरमरकंकापुरमगात् ॥ ४१ ॥

अर्थः– (अकृतदिग्यानविरतेः के०) नथी करी दिग्गमननी विरति जेणे एवा सदा भ्रमण शील जीवनें (नगम्यं के०) नही जवा लायक तथा (नागम्यं के०) नही आववा लायक एवुं स्थानक (क्वचित् के०) कोइपण कालें नथी कारणके (विश्वे के०) जगतमां (सततगतिः के०) निरंतरगति करनारो एवो जे वायु ते (एकत्रवसतिः के०) एकस्थलने विषे रहेनारो (कथं के०) केवी रीतें (स्यात् के०) होय ? ना होयज नहिं. अहिं दृष्टांत कहे छे. (हरिः के०) श्रीकृष्ण, (द्रौपद्यर्थे के०) द्रौपदी वालवाने माटे (आक्रांतजलधिः के०) उल्लंघन कस्यो छे समुद्र जेणे एवा छता (द्वितीयद्वीपांतर्गतभरतं के०) बीजो द्वीपजे धातकी खंम तेमां रहेला भरतक्षेत्रमां (अमरकंकापुरं के०) अमरकंकापुर प्रत्यें (किंनअगात् के०) शुं न जता हवा ? एम दिशिनुं प्रमाण न करनारा पुरुषने सर्वत्र फरवुं प्राप्त थाय छे. तेमाटे दिग्परिमाण व्रत अंगीकार करवुं ॥ ४१ ॥

आहिं श्रीकृष्णनी कथा कहे छे. द्वारिकानगरीने विषे श्रीकृष्ण राजा राज्य करे छे. अने पांच पांमवो हस्तिनापुरमां राज करे छे एक दिवस द्रौपदी पांमवनी स्त्री, काचमां मोढुं जोतां हतां तेवामां नारदमुनि आव्या तो तेने द्रौपदीयें सन्मान आप्युं नही तेथी नारदजीयें तेनी उपर कोपायमान थइने धातकी खंममां अमरकंकापुरीने विषे पद्मोत्तर राजानी पासें द्रौपदीना स्वरूपनुं वर्णन कस्युं ते सांभली पद्मोत्तर राजायें देवनुं आराधन करी, देवना बलें करी द्रौपदीने पोताना नगरमां मगावी लीधी ते पछी नारदमुनियें आवी श्रीकृष्णने सर्व वात कही ते सर्व वृत्तांत जाणीने श्रीकृष्ण, पांमवोये सहवर्त्तमान समुद्रनुं उल्लंघन करीने धातकी खंममां अमरकंकायें आवीने संग्रामने विषे पद्मनाभराजानो पराजय कस्यो नृसिंहरूप धारण करीने ते नगरनो किल्लो तोडी नाख्यो तेवारें स्त्रीनुं रूप धारण करी पद्मो

त्तर राजा श्रीकृष्णना पगमां आवी पड्यो पछी द्रौपदीने लइने श्रीकृष्ण पोताना पुरप्रत्यें आव्या. माटे दिग्परिमाणव्रतने धारण करवुं ॥ ४२ ॥

भोगोपभोगनियमोऽपि शिवाय चेन्न, स्याद्वंकचू
लइवदेवपदप्रदस्तु ॥ प्रीणाति चातकमनन्यरतिं
पयोदश्चूताशनैकरसमन्यभृतं वसंतः ॥ ४३ ॥

अर्थः— (भोगोपभोगनियमोपि के०) भोगोपभोगनो नियम पण (प्राक् के०) प्रथम (शिवाय के०) मोक्षने माटे छे जो (नस्यात्चेत् के०) न थाय तो पण (वंकचूलइव के०) वंकचूलनी पेठे (देवपदप्र दस्तु के०) देवदपदने देवावालो तो निश्चें होयज त्यां दृष्टांत कहे छे के (पयोदः के०) मेघ, (अनन्यरतिं के०) नथी बीजा कोइनी उपर प्रीति जेने एवा (चातकं के०) बपैयाने (प्रीणाति के०) संतोष पमाडे छे अने (वसंतः के०) वसंतऋतु जे छे ते (अन्यभृतं के०) कोकिलने संतोषयुक्त करे छे ते, कोकिल केवो छे ? तो के (चूताशनैकरसं के०) आम्रकलिका भक्षणें करीनेज छे एक रस जेने एवो छे ॥ ४३ ॥

हवे आंहिं वंकचूलनी कथा कहे छे. विंध्यपल्लीने विषे वंकचूल राजा राज्य करे छे. त्यां एक दिवस धर्मघोषसूरि आवीने चोमासुं रह्या परंतु राजाना आदेशें करी कोइने धर्मोपदेश न देता हवा. चोमासुं वीत्या बाद धर्मघोषसूरियें विहार कर्यो तेमने वलावा माटे परिवार सहित केटली एक भूमि सूधी वंकचूल राजा आव्या. पाछा वलतां वंकचूल राजाने धर्मघोषसूरियें चार नियमो आप्या. तेमां प्रथम अजाण्या फलनुंभक्षण न करवुं. बीजो क्रोध चडे त्यारे साडात्रण मगला पाछा फरीने पछी प्रहार करवो. त्रीजो राजानी पट्टराणीने मातानी पेठें मानवी. चोथो काकमांस भक्षण करवुं नहिं एवा चार नियमग्रहण करी राजा पाछो वल्यो. एक दिवस वंकचूलें किंपाक फलने अज्ञात फल जाणीने न खाधां. अने तेना परिकरें ते फल खाधां तेथी सर्व परिकर यमने घेर पहोतो वली एक दिवस वंकचूल ग्रामांतरथी अर्धरात्रियें पोताने गामें आव्यो तिहां पोतानी स्त्रीना पडखामां कोइक पुरुषने सुतेलो जोइने तेने साडात्रण मगलां पाछो फरीने प्रहार कर्यो ते प्रहार ते पुरुषना कपालमां लाग्यो त्यां ते वंकचूलराजानी बेन पुरुषनो वेष

धारण करीने सूती हती ते जागी गइ. तेणीए आशीर्वाद दीधो तेवारें चिंतववा लाग्यो के अहो ! आ मारी बेनने में प्रहार कर्यो में जाण्युं जे कोइ पुरुष मारी स्त्रीनी साथें सुतो बे पण आतो, मारी बेन पुरुषवेष धारण करीने सुती बे एम तेने पश्चात्ताप थयो. तदनंतर एक दिवस ते वंकचूल कोइ एक नगरने विषे राजद्वारमां पेठो, तेने अत्यंत सुकुमार जोइने ते नगरना राजानी पट्टराणीयें कह्युं के तुं मारो उपभोग कर्य तेम तेणे प्रार्थना करी तो पण तेणे ते काम कर्युं नहिं अने तेणे काकमांस भक्षण न कर्युं तेने अंते जिनदास श्रावकें अनशन आप्युं ते नियमना प्रभावथी ते वंकचूल स्वर्गनेविषे देवता थयो. माटे एक पण नियम पले, तो तेथी कदापि मोक्षसुख न मले तो पण स्वर्गप्राप्ति तो निश्चें ते प्राणीने थाय. तेमां संदेह जाणवो नहिं माटे सर्व जने परिग्रहनुं परिमाण करवुं ॥ ४३ ॥

भोगादिलोलुपतया लघुता न शर्म, श्रीब्रह्मदत्तसखिविप्रकुटुंबवत् स्यात् ॥ पीताधिकेंडुरुचिरुज्झति सीमसिंधुः, शक्रोपि गौतमकलत्ररतश्च शप्तः ॥४४॥

अर्थः—(भोगादिलोलुपतया के०) भोगादिकनी घणी लोलुपतायें करीने जीवने (लघुता के०) लघुपणुं (स्यात् के०) होय बे परंतु (शर्म के०) सुख (न के०) न होय केनी पेठें तो के (श्रीब्रह्मदत्तसखिविप्रकुटुंबवत् के०) श्रीब्रह्मदत्त जे दशमो चक्री तेनो सखि जे ब्राह्मण तेना कुटुंबनी पेठें. जेम चक्रवर्त्तीनी मीठी रसोइ जमवाथी ब्राह्मणनुं कुटुंब लघुताने प्राप्त थयुं अने सुखने न पाम्युं. तेनी पेठें जाणवुं. त्यां दृष्टांत कहे बे. (पीताधिकेंडुरुचिः के०) पान करी बे अधिक इंडुनी कला जेणे एवो (सिंधुः के०) समुड ते पोतानी (सीम के०) सीमाने (उज्झति के०) त्याग करे बे. अर्थात् चंड किरणना पानथकी समुड वृद्धिगत थाय बे एटले अति चंडकिरणना पाननी लोलुपतायें निर्मर्याद समुड थाय बे. (च के०) अने (शक्रोपि के०) इंड पण (गौतमकलत्ररतः के०) गौतमऋषिनी स्त्रीमां आसक्त थयो तेने (शप्तः के०) गौतम ऋषियें शाप आप्यो लघुता पाम्यो.

आंहिं ब्रह्मदत्तना सखा विप्रनो तथा इंडनो एम बे दृष्टांत बे तेमां प्रथम ब्रह्मदत्तचक्रीना सखा ब्राह्मणनी कथा कहे बे. कांपिल्यपुरने विषे ब्र

ब्रह्मदत्तचक्री राज्य करे छे तेनो मित्र एक ब्राह्मण छे एक दिवस संतुष्ट थइ ने चक्रवर्त्तीयें जोजन करवा माटे ब्राह्मणने कह्युं तेने ब्राह्मणे कह्युं महारा आखा कुटुंबनें जोजन करावो तो हुं जोजन करुं तेवारें चक्रवर्त्तियें कह्युं महारा घरनुं जोजन कोइ सहन करी शके नही तेवुं छे एम घणो वार्यो तो पण ते रस लोलुपतायें ब्राह्मण जोजन करवा आव्यो तिहां जोजन करवाथी ब्राह्मणनुं कुटुंब सघलुं ग्रथिल पशुप्राय थइगयुं तेथी ब्राह्मणने रोप चड्यो तेवारें धनुर्गोलिकाना प्रयोगथी राजानां बे चक्षु काहाढी नाख्यां.

हवें बीजी इंद्रनी कथा कहे छे एक दिवस इंद्र अत्यंत कामातुर होवाथी गौतमऋषिनी नार्या अहल्या तापसणीने जोगववा लाग्यो एवामां गौतमऋषियें आवी दीठुं तेणे इंद्रने शाप आप्यो के हे डुष्ट ! तें ब्राह्मणनी स्त्री साथे व्यनिचार कर्यो, माटे तुं सहस्र योनियुक्त शरीरवालो था. पछी देवताउयें ऋषिनी प्रार्थना करी के महाराज ! एम करवाथी अमारो राजा कदरूपो लागे माटे कांइक अनुग्रह करो त्यारे ऋषियें अनुग्रह करीने इंद्रने सहस्र नयन कर्यो. आ वात लौकिकशास्त्रनी छे पण आहीं केहेवानुं कारण ए जे इंद्रिय लोलुपता राखवी नही राखेथी पूर्वोक्त फलनी प्राप्ति थाय छे.

नाऽनर्थदंभमघदं दधते महांत, एकेषुमात्रविजयीव सचेटनूपः ॥ लोकस्य जाड्यहतये तरणेः प्रज्ञाऽह्नि, तापच्छिदे च शशिनोनिशि नो तदर्थ्यें ॥ ४५ ॥

अर्थः–(महांतः के०) सत्पुरुषो, जे छे ते (अघदं के०) पाप दायक एवा (अनर्थदंभं के०) अनर्थदंभने (न दधते के०) धारण करता नथी केनी पेठें तो के जेम (सःचेटनूपः के०) ते चेटक नामा राजा (एकेषुमात्रविजयी के०) एकज वाणें करी विजयी थयो. अर्थात् चेटकराजा युद्ध करती वखत एकज बाण मुकतो एवो नियम हतो ए वात सर्वत्र प्रसिद्ध छे इहां दृष्टांत कहे छे. जेम के (शशिनः के०) चंद्रमानी (प्रज्ञा के०) कांति, ते (निशि के०) रात्रिने विषे (लोकस्य के०) लोकना (तापच्छिदे के०) तापने छेदवाने माटे थाय छे. (च के०) अने (तरणेः के०) सूर्यनी (प्रज्ञा के०) कांति ते (अह्नि के०) दिवसने विषे (जाड्यहतये के०) लोकना जाड्यने हरण करवा माटे थाय छे, परंतु ते बेहुनी कांति लोकने पीडा

करवा माटे होती नथी. तेम अनर्थदंमनो परिहार पण लाजने माटें थाय ले.

हवे आंहिं चेटकराजानी कथा कहे ले. विशाला नगरीने विषे परमआर्हत एवा अर्थात् अनन्य जैनमतानुयायी चेटक नामा राजा राज्य करे ले. तेणे श्री वीरज्ञगवाननी पासे सम्यक्त्वसहित परिग्रह प्रमाणनुं ग्रहण करतां युद्धमां लडवा जावुं. त्यारें धनुपथी एकज वाण मुकवुं एवो नियम कस्यो. पली ज्यारें संग्राममां चडे, त्यारें वैरी राजा प्रत्यें एकज वाण मूके, परंतु वीजुं वाण कोइ वखत मूके नहिं. तथापि तेना एकज वाणथी वैरी राजा मरण ज पामे. तेमां संशयज नहिं. एकदा संग्राममां चड्या एवा चेटक राजायें पोतानी दिकरीना दीकरा एटले दोहित्रा काल अने महाकालादिक कुमारोना सैनिकोने एकेकज वाणथी दिनदिन प्रत्यें नाश पमाड्या ॥ ४६ ॥

मूढोसुधैति कुगतिं धिगनर्थदंमात्, चक्रित्वमिछुरिव ज्ञू ज्ञृदशोकचंडः ॥ किं नांगज्ञंगमयतेशरज्ञोऽब्दशब्द, म ज्युत्पतन् परिणमंश्च गजोनुशैलं ॥४६॥ इत्यनर्थदंमद्वारं॥

अर्थः– एक सकार्यपाप अने एक अकार्यपाप तेथी (मूढः के०) मूढ (कुगतिं के०) कुगतिने (मुधैव के०) वृथाज (एति के०) प्राप्त थाय ले. ते अनर्थदंमने (धिक् के०) धिक्कार होजो. (अनर्थदंमात् के०) अनर्थदंमथकी (अशोकचंडःज्ञूज्ञृत् के०) अशोकचंड नामा राजा, ते (इव के०) जेम (चक्रित्वमिछुः के०) चक्रिपणानी इछा करतो लतो कुगतिने प्राप्त थयो तेम जीव कुगतिने अनर्थदंमथकी प्राप्त थाय ले. जेम (शरज्ञः के०) अष्टापद नो जीव, (अब्दशब्दं के०) मेघगर्जारवना शब्दनी सन्मुख (उत्पतन् के०) उडीने पडतो लतो पण (अंगज्ञंगं के०) अंगना ज्ञंगने (किं नअयते के०) शुं नथी प्राप्त थातो अर्थात् थाय ले. तथा (गजः के०) हस्ती (अनुशैलं के०) पर्वतपर्वत प्रत्यें (परिणमन के०) दंतमुशलना प्रहारने देतो लतो (अंग ज्ञंगं किं न अयते के०) शुं अंगज्ञंगने न प्राप्त थाय ना थायज ॥ ४६ ॥

आंहिं अशोकचंडनी कथा कहे ले. राजगृही नगरीने विषे अशोकचंड राजा राज्य करे ले. ते राजानुं वीजुं नाम कोणिक करीने पण हतुं. तेणे पूर्वजन्मने विषे तापसपणामां मासक्षपणादि उग्र तप तप्युं हतुं तेना पुण्यें करी आ लोकने विषे मोहोटा राज्यने प्राप्त थयो. एक दिवस चमरेंड ते

कोणिक राजाने त्रिशूल आप्युं. तेना प्रजावथी बीजा राजाउयें वासुदेवनी पेठें तेनो त्रिखंमना अधिपतिपणाना राज्य उपर पट्टाजिपेक कस्यो. एक दिवस श्रीवीरप्रजुनी पासें कोणिक राजायें पूछ्युं स्वामी ! चक्रवर्त्ति केटला थया. जगवान् बोल्या के आ अवसर्पिणीकालने विषे बार चक्रवर्त्ति थया छे. त्यारे कोणिकें कह्युं हुं तेरमो चक्रवर्त्ती थइश एम कहीने नवीन चक्र रत्नादि चक्रवर्त्तिनें योग्य बनाव्यां पछी वैताढ्यनी गुफाना द्वार पासें गयो तिहां द्वारने दंम मारवाथी अधिष्ठायक देवें द्वार उघाडयुं तेनी उष्णताथी कोणिक राजा तेज समय बलीने जस्मीजूत थइ मरीने नरकें गयो माटे अनर्थदंमथी विराम पामवुं,नही तो कोणिकनी पेठें अवश्य नाश थाय॥इति अनर्थ दंमद्वारं ॥

सामायिकं द्विघटिकं चिरकर्मजेदि, चंडावतंसक वदुच्चधियोऽत्र किंतु ॥ स्पर्शेऽपि सत्यमुदकं मलि नत्वनाशि,घोरं तमोहरति वा कृतएव दीपः ॥४७॥

अर्थः-(सामायिकं के०) सामायिक (द्विघटिकं के०) बे घडी पाल्युं होय तो पण (चिरकर्मजेदि के०) घणा कालनां संचेलां कर्मोने जेदना रु थाय छे. केनी पेठे ? तो के (चंडावतंसकवत् के०) चंडावतंसक राजानी पेठे ? अर्थात् बे घडीवार पालेलुं सामायिक अनेक कर्मोनो नाश करे छे. तो काजीवार पालवाथी (अत्र के०) ए सामायिकमां (उच्च धियः के०) उंची बुद्धिवालाने कर्मनो नाश थाय. तेमां तो शुंज आश्चर्य छे ? (सत्यं के०) ते वात सत्य छे त्यां दृष्टांत कहे छे. जेम के (उदकं के०) जल (स्पर्शेपि के०) स्पर्शने विषे पण (मलिनत्वनाशि के०) मलिन पणाना नाशने करनारुं थाय छे (वा के०) तथा (दीपः के०) दीपक. (कृतः के०) कस्यो छतो (घोरंतमः के०) जयंकर घणा कालना अंधारने (हरतिएव के०) हरण करे छेज तेम जाणवुं ॥ ४७ ॥

हांहिं चंडावतंस राजानी कथा कहे छे. विशालापुरीने विषे चंडावतंस राजा राज्य करे छे. ते जैनधर्मपालक परमनैष्ठिक साम्राज्यने करतो हतो. एकदा पांखीने दिवसें ते राजायें पोताना घरने विषे एवो अजिग्रह कस्यो के ज्यां सुधी आ दीवो रहेशे त्यां सुधी मारे कायोत्सर्ग पारवुं नहि. दासीने ते अजिग्रहनी खबर न होवाने लीधे, स्वामी जक्तियें करीने दा

सीयें आवीने तेल वली गयुं, त्यारें बीजी वार पूर्युं एम ज्यारें ज्यारें तेल थइ रहे,त्यारें त्यारें दासी आवीने तेल पूरी जाय. ए रीतें आखी रात्रि दीवो बल्यो त्यां सुधी राजायें कायोत्सर्ग पूरो न कर्यो. सूर्योदय थयो त्यारें कायोत्सर्ग पूरो थयो आखी रात्र उन्नो रहेवाथी शरीर रुधिरें करी न्नराइ गयो, तेथी जेम पर्वतनुं शिखर त्रूटी पडे,तेम ते राजा नीचें न्नूमीयें पडी मरण पाम्यो. ते शुन्नध्यानें करीने शुन्नगतिनें पाम्यो. वास्ते सामायिक करनारा मनुष्योनां पातक दहन थइ जाय ठे एम जाणवुं ॥ ४७ ॥

सामायिकं समतयारिसुहृत्सुसिध्द्यै, प्रद्योतमुक्ति
कृडुदायिनराजवत्स्यात् ॥ सच्चंदनांशुकमिवास्फुट
कुष्टन्नाज, स्तत्कुर्वतः कपटतोबहिरंगशुध्द्यै ॥ ४८ ॥

अर्थः-(अरिसुहृत्सु के०) शत्रुमित्रोने विषे (समतया के०) समन्नाव रूप (सामायिकं के०) सामायिक कर्युं होय तो (सिध्द्यै के०) सिद्धिने माटे (स्यात् के०) होय. केनी पेठें तो के (प्रद्योतमुक्तिकृत् के०) चंमप्रद्योतराजाने बंधनथी मूकनार एवा (उदायिनराजवत् के०) उदायिन राजानी पेठें अने (कपटतः के०) कपटथकी सामायिक, (कुर्वतः के०) करनारने (बहिरंगशुध्द्यै के०) बाहेरना अंगनी शुद्धिने माटे थाय ठे. त्यां दृष्टांत कहे ठे के जेम (अस्फुटकुष्टन्नाजः के०) नथी बाहेर पड्यो कुष्टरोगनो विकार जेने एवा प्राणीने (सच्चंदनांशुकमिव के०) सारु चंदन चोपडवुं तेज अंशुक एटले वस्त्र, ते जेम लागे तेम ते सामायिक बाहिरना दोषोने मटाडे ठे माटे तेवुं सामायिक, सर्व न्नव्य जीवें जरुर करवुं ॥ ४८॥

आंहिं उदायिनराजानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ठे. वीतन्नय पत्तनने विषे उदायिन राजा राज्य करे ठे, तेनी पट्टराणी प्रन्नावती नामे हती, ते राजाना घरमां अत्यंत रूपवाली एवी सुवर्णगुलिका नामें दासी हती. ते निरंतर अतिशय न्नाव सहवर्त्तमान देवाधिदेवनी प्रतिमानुं पूजन करती हती. एक दिवसे उजेणीना राजा चंमप्रद्योतें प्रतिमासहित ते दासीनुं हरण कर्युं तेवातनी उदायिनराजाने खबर पडवाथी दश राजाने सायें लइने लडवा माटे उजेणीयें गयो, बेहु राजायें दारुण युद्ध कर्युं. तिहां उदायिनराजायें चंमप्रद्योतने जीवतो पकडीने बंदी

वान कीधो मार्गे चालतां वर्षाकाल आववाथी राजा, दशपुरनगरें रह्यो तिहां पर्यूषण पर्व आववाथी उदायिराजायें उपवास कर्यो अने चंमप्रद्योतने रसोइयो पूछवा गयो के आपना सारु केवी रसोइ बनावीयें ? चंमप्रद्योतें कह्युं के जे उदायिराजा सारु बनावो तेज रसोइ मह्यारा वास्ते बनावजो तेने रसोइयें कह्युं के उदायिराजाने आज उपवास छे ते सांजली चंमप्रद्योतने शंका उपनी जे आज एणे मने फेर आपवानो विचार कर्यो जणाय छे माटेज जुदी रसोइ बनाववानुं कहे छे एवा नय थी बोल्यो जे मह्यारे पण आज उपवास छे अने हुं पण जैनधर्मी छुं उदायीनो साधर्मीजाइ छुं पण मने विस्मरण थइ गयुं तेथी रसोइ करवानुं कह्युं तेवात रसोइये जइ उदायिनराजा आगल कही तेवारे उदायिनें विचार्युं जे ए धूर्त्तताथी बोल्यो छे खरो तो पण मह्यारो साधर्मीजाइ थइ चूको माटे एनी साथे मिछाडुक्कड आप्याविना शुद्ध सामायिक करवुं सूजे नही पछी उदायि राजायें चंमप्रद्योतने कह्युं के मह्यारी साथे मिछाडुक्कड कर्य तेणे कह्युं मह्यारुं राज्य पाछुं आप्य पछी बीजो कोइ उपाय नही होवाथी तेने छोडी मूकीने पाछुं उज्जयणीनुं राज्य आप्युं अने पूर्वे उदायिराजायें ते चंमप्रद्योतना ललाटमां दासीपति ए राजा छे एवा अक्षरनो मांम दीधो हतो ते मांमने ढांकी मूकवाने माटे तेने सोनानो पट्ट बंधावी सन्मान करीने उज्जयणी नगरीयें मोकली दीधो ते दिवसथी चंमप्रद्योतना कपालमां सुवर्णपट्टबंध निरंतर रह्यो एवीरीतें अविज्ञात पणाथी उपवासादि सामायिक करे तो पण लान्न थाय तेवारे विज्ञातपणाथी फलप्राप्ति थाय तेमां तो कहेवुंज शुं ? माटे सामायिक अवश्य करवुं ॥४७॥

देशावकाशिकमपास्य सकाकजंघ, कोकाशवद्विपदमेति जनः प्रमादी ॥ धत्ते प्रन्नां दिनचरोन निशाकरोऽपि,न स्तूयतेऽपि च पयोन्नृदकालवृष्टः ॥४८॥

अर्थः–(जनः के०) मनुष्य. (देशावकाशिकं के०) देशावकाशिकव्रतने ग्रहण करीने पछी (प्रमादी के०) आलसु थयो हतो. ते देशावकाशिक व्रतने (अपास्य के०) तजीने (सकाकजंघकोकाशवत् के०) काकजंघ सहितकोकाशनीपेठे (विपदं के०) फुःखने (एति के०) पामे छे. एज अ

र्थनो दृष्टांत कहे छे. (दिनचरः के०) दिवसे विचरनारो एवो (निशाक रोपि के०) चंद्रमा पण (प्रभां के०) कांतिने (न धत्ते के०) धारण कर तो नथी. (च के०) वली (पयोभृत् के०) मेघ, (अकालवृष्टः के०) अ कालें वरसे तो (न स्तूयते के०) वखणाय नही. तेम देशावकाशिकने त्या गनारो कोकाशनामा सूत्रधार,अने काकजंघनामा राजा काकजंघनी साथें जे वर्त्ते, ते सकाकजंघ कोकाश जाणवो. तेनी पेठें थाय ॥ ४९ ॥

आहिं काकजंघकोकाशनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. विदेहा नगरीनेविषे काकजंघनामा राजा अने कोकाशनामा सूत्रधार वसे छे. ते कांकजंघराजा लाकडाना संचायें गोठवेला एवा गरुडपर बेसीने फरेछे तथा ते कोकाशिक लाकडाना संचावाला अश्वउपर बेसीने फरे छे. ते सूत्रधार ने लोको कोकाशी एवे नामे कहे छे. ते काकजंघ परमजैन हतो, पोता नी विद्याना बलेंकरी समेतशिखर पर्वत तथा अष्टापद प्रमुख तीर्थने विषे श्रीदेवाधिदेव अरिहंत प्रभुने नमस्कार करे छे एकदिवस ते काकजंघें, प्रा तःकालनेविषे गुरुनी पासें जइ आ नगरथी माहारे बाहेर जावुं नही. एवा देशावकाशिक व्रतने ग्रहण कर्युं. पछी एक दिवस ते एक पोतानाज गामने विषे संचायें करी चालता एवा काष्ठना घोडा उपर बेसीने गगनमार्गनेविषे चालवा लाग्यो गामबाहेर निकली गयो दैवयोगें तें काष्ठना अश्वनी कीलि का भांगी. तेवारें आकाश थकी पर्वतनी उपर पड्यो. त्यां मरण पामवाथी व्रतनी विराधनायेंकरीने ते काकजंघ दुर्गतिने पाम्यो. माटे व्रत ग्रहण क रवुं ते कोइ दिवस अजाण पणायें पण छोडवुं नही ॥ ४९ ॥

गुरुवचनवियोगाऽज्ञातदेशावकाशो, विपदि तरतिपुण्याच्चेद्यथा लोहजंघः ॥ हयमयवृषभावाः स्वामिना वाह्यमानाः सततमभि तगत्या किं हितं स्वस्य कुर्युः ॥ ५० ॥ देशावकाशिकव्रतद्वारं ॥

अर्थः—(गुरुवचनवियोगाज्ञातदेशावकाशः के०) गुरु वचनना वि योगें करी नथी जाण्युं देशावकाशिकव्रत जेणे एवो पुरुष जो पण (विपदि के०) विपत्तिने विषे पडे छे तो पण ते व्रतरूप (पुण्यात्के०) पुण्यथकी (तरतिचेत् के०) तरे छे केनी पेठे ? तो के (यथा के०) जे म (लोहजंघः के०) लोहजंघ नामा चंडप्रद्योत राजानो लेखकहार

हतो ते गुरुना वचनविना देशावकाशक व्रतमां अज्ञात थयो छतो विपत्ति मां आव्यो तो पण तस्यो, ते पुण्यथकीज तरतो हवो त्यां दृष्टांत कहे छे. (हयमयवृषन्नावाः के०) अश्व, उंट, बेल ए सर्व (स्वामिना के०) स्वामियें (वाह्यमानाः के०) वहन कस्या छता (सततं के०) निरंतर (अमितगत्या के०) अप्रमित गतियें करी (किं के०) शुं (स्वस्य के०) पोताना (हितं के०) हितने (कुर्युः के०) करे ? ना नज करे ॥ ५० ॥

आहिं लोहजंघनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. उज्जयिनी नगरीनेविषे चंडप्रद्योत नामा राजा राज्य करे छे. तेनो लोहजंघ नामा दूत हतो. ते प्रतिदिवस चोवीश योजन चालतो हतो. एकदा सामंत राजाउयें विचार्युं के ज्यारें ए लोहजंघ पोताना राजानी सेवा माटें आपणा नगरमां आवे, त्यारे तेने युक्तियें करीने मारवो कारण के ते आपणा समाचार लइ जाय छे, तेथी आपणने कष्ट थाय छे. एम विचारी एक सलाह करीने पछी ज्यारें ते लोहजंघ तेमना गामथी पाछो वल्यो, त्यारें तेने संबलने माटें विष मिश्रित लाडु करीने आप्यो. जेवामां ते रस्तामां खावानो आरंभ करे, तेवामां त्रण छीक थइ त्यारें तेने शंका पड्याथी ते लाडु खाधो नहिं, अने जोयुं तो विषमिश्रित लाडु दीठो पछी पोतें उजयणीमां चंडप्रद्योत राजा पासें आवीने ते लाडुनुं वृत्तांत सर्व संभलाव्युं अने ते मोदक राजाने आप्यो. राजानी पासें ते वखत अभयकुमार बंदीवान हतो तेने राजायें पूछ्युं जे हे कुमार ! आ मोदकमां शुं छे ? त्यारें अभयकुमारें कह्युं के, आमां दृष्टिविष सर्प उत्पन्न थयो छे. त्यारें ते लाडु राजायें ली लाखडवाला वननेविषे नाखी दीधो. तेमांथी निकलेला सर्पनी दृष्टियी थोडाज वखतमां ते लीलुं वन सुकाइ गयुं. ए देशावकाशिकव्रत संपूर्ण थयुं.

हवे पोषधव्रतनुं द्वार कहे छे.

शुचिपोषधेन मुनितुल्यतेति किं, जिनतापि मेघ
रथवद्भवेत् क्रमात् ॥ किमु निर्धनस्य मणिनेष्टदा
यिना, धनितुल्यतेव नृपतुल्यता न किं ॥ ५१ ॥

अर्थः—(शुचिपोषधेन के०) पवित्र पोषधें करी गृहस्थने पण (मुनितुल्यता के०) मुनिनुं तुल्यत्व थाय छे (इति के०) ए प्रकारें होय तेमां (किं के०)

शुं केहेवुं वली तेने (मेघरथवत् के०) मेघरथनी पेठें (जिनतापि के०) तीर्थंकर पणुं पण प्राप्त थाय छे. ते मेघ रथनो जीव अनुक्रमें दशमे नवे श्रीशांतिनाथ नामें तीर्थंकर थयो. त्यां दृष्टांत कहे छे. जेम के (इष्टदायिना के०) इच्छित पदार्थने देनारा एवा (मणिना के०) चिंतामणियें करीने (धनितुल्यताएव के०) धनवाननी तुल्यताज (नवति के०) होय छे ? परंतु (नृपतुल्यता के०) राजानी तुल्यता (किं के०) शुं (न के०) न होय. ना होयज अर्थात् व्रतें करीने गृहस्थने केवल मुनितुल्यताज थाय अने जिनता न थाय एम जाणवुं नहिं परंतु जिनता पण थायज.

आहिं मेघरथ राजानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. शावस्ती नगरीने विषे मेघरथ राजा राज्य करे छे. एकदा ते राजानी सनामां निमित्तियो आव्यो. ते निमित्तियाने मंत्रीयें पूछ्युं जे कांइक निमित्त कहो त्यारें नेमित्तियें कह्युं के आजथी सातमे दिवसें आ राजाना मस्तक उपर वीजली पडशे. ते वचनथी सर्व जनो नयभ्रांत थइ गया. पछी राजायें पूछ्युं के हवे मारे केम करवुं ? त्यारें केटलाएकें कह्युं के वाणमां वेशीने समुद्रमां जावुं, केटलाएकें कह्युं के गिरिगुफामां जइने रहेवुं. त्यारे तेनो एक सुबुद्धि नामें प्रधान हतो,तेणें कह्युं के ए सर्व जवा द्यो अने देवधर्माराधन करो. जेणें करी सर्व विघ्नोनो नाश थइ जाय. पछी राजायें नवीन पाषाणनो यक्ष कराव्यो अने तेने राज्यानिषेक कराव्यो. अने पोतें सर्व त्याग करी जिनालयमां वेसी पौषध व्रत धारण कर्युं, सातमो दिवस ज्यारे आव्यो, त्यारें वीजली पाषाणना यक्ष उपर पडी, तेथी ते यक्ष तरत फाटी गयो एटले राजाने मूकी यक्षनी उपर विद्युत् पडी. अने राजा पौषधव्रतना प्रतापें करी वची गयो ते राजाना जीववाथी सर्व जनोने परम प्रमोद थयो. ते राजा अनुक्रमें दशमे नवें श्रीशांतिनाथ नामा तीर्थंकर थया. एम पौषधना प्रतापें करी मरण दुःख मटचुं तथा अनुक्रमें तीर्थंकरपणुं प्राप्त थयुं. माटे सर्व नव्य जीवें पोषधव्रत धारण करवुं ॥ ५१ ॥

सत्पोषधं विविधसिद्धिदमौषधं य, स्तन्नावनाशमरसार्द्र
हृदन्निलीढः ॥ स्वः सागरेंडरजनि स्फुटहेममूर्त्ति, रौर्वा
न्नितततविमलाऽद्रिरिवाब्धिमंथा ॥ ५२ ॥ पौषधद्वारं ॥

अर्थः—(यत् के०) जे (औपधं के०) औषधसमान एवुं (सत्पौषधं के०) उत्तम एवुं पौषधव्रत, (विविधसिद्धिदं के०) अनेक प्रकारनी सिद्धिने देनारुं छे. अने (तद्भावनाशमरसार्द्रहृदग्निलीढः के०) ते पौषधनी भावना तेज शम तद्रूप जे रस,तेणें आर्द्र एटले अकठोर नम्र एवुं जे हृदय तेज अग्नि, तेणें करी आस्वादित एवो (सागरेंदुः के०) सागरचंद्र नामा राजा, (स्फुटहेममूर्त्तिःके०) प्रगट छे सुवर्ण समदेह जेनो एवो छतो (स्वः के०) स्वर्गने विषे (अजनि के०) उत्पन्न थयो. वीजुं सुवर्ण पण रससंयोगें करी अग्नियें करी फूंक्युं होय तो शुद्ध थाय छे. केनी पेठें? तो के (अब्धिमंथा के०) मेरु नामनो (अद्रिरिव के०) पर्वत तेज जेम (और्वाग्नितप्तविमलः के०) वाडवाग्निना तापें करी निर्मल थाय छे तेनी पेठे. मनुष्य पण प्रधान पौषध व्रतें करी शुद्ध थाय छे एटले ते प्राणीना कर्ममलनो नाश थाय छे.

आंहिं सागरचंद्रनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. द्वारिकाने विषे श्रीकृष्णनो श्वसुर उग्रसेन राजा हतो तेना पुत्रनुं नाम नभसेन हतुं. तेने परणाववा माटे तेना पितायें कमलामेला नामनी कोइ एक कन्या जोइ मुकेली हती, पछी नभसेनने घेर नारदमुनि आव्या, तेनुं सन्मान नभसेनें कर्युं नहीं तेथी रुष्ट थइने नारदें कमलामेलानुं रूप पट्टमां लखीने बलदेवना पुत्र सागरचंद्रनी पासें देखाड्युं. ते कन्यानुं चित्र जोइने सागरचंद्र, कमलामेलानुं नाम गांमानी पेठें बोलवा लाग्यो, अने भूताभिनिवेश जेम थाय, तेम थइ गयो. ते पछी बाकछलें करी सांबकुमारें ते कमला मेला सागरचंद्रने परणावी आपी. नभसेन ते कन्या पोताने न परणवाथी सागरचंद्र साथें द्वेष वहन करवा लाग्यो, एकदा श्रीनेमीनाथनी पासें सागरचंद्रें श्रावकनां व्रत लीधां तेने पालन करतो स्मशानमां कायोत्सर्ग रात्रियें करतो हतो तिहां भमतां भमतां दैवयोगें नभसेनें ते सागरचंद्रने कायोत्सर्गमां उभो रहेलो दीठो, त्यारें अग्निना अंगारानी भरेली ठीब. तेना माथा उपर ते पापियें मूकी. ते सागरचंद्र उपसर्गने सहन करतो बलतो छतो मरण पाम्यो अने देवलोकने विषे देव थयो. माटे पवित्र पौषध करनारो एवो प्राणी सद्गतिने पामे छे. तेमां शुं आश्चर्य जाणवुं? ॥ इति पौषधव्रत ॥

किमपिफलमपूर्वं संविज्ञागस्य साधो, र्यदजिलषित सि
द्ध्यै मूलदेवेऽपिमाषाः॥ कृशमपि हि सुपात्रे न्यस्तमुच्चैः
फलर्द्ध्यै, ननु तृणमपि धेनोर्डुग्धपीयूषवृद्ध्यै ॥ ५३ ॥

अर्थः—(यत् के०) जे (संविज्ञागस्य के०) संविज्ञाग व्रतनुं (किम पि के०) काइक अनिर्वचनीय (फलं के०) फल, (अपूर्वं के०) अपूर्व थाय ठे. जेम (मूलदेवेपि के०) मूलदेव नामा राजाने विषे पण (साधोः के०) साधुने आपेला (माषाः के०) अडदना बाकला, ते अजिलषितसि द्ध्यै के०) इच्छित पदार्थनी सिद्धिने माटे थया. (हि के०) निश्चे ते वात घटे ठे जेम के (सुपात्रे के०) सुपात्रने विषे (कृशमपि के०) थोडुं पण (न्यस्तं के०) आरोपण करेलुं ठतुं (उच्चैः फलर्द्ध्यै के०) उंचा फलनी ऋद्धिने माटे थाय ठे. केनी पेठे? तो के (धेनोः के०) गायने दीधेलुं ए वुं (तृणं के०) घांस पण (डुग्धपीयूषवृद्ध्यै के०) डुग्धरूप अमृतनी वृ द्धिने माटे थाय ठे तेम ए पण जाणी लेवुं ॥ ५३ ॥

आंहिं मूलदेवनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ठे. कौशांबी नगरीने विषे रिपुमर्दननामा राजा तेनो पुत्र मूलदेव करीने हतो, ते अत्यंतदान नो व्यसनी हतो एक दिवस कोइना मुखथी नवुं काव्य सांजलीने तेने एक लक्षद्रव्य आपतो हवो, ते सांजली तेना पितायें दाननो निषेध कस्वो. त्यारें ते ठानो मानो घरथकी निकली गयो. अनुक्रमें एक अटवीमां आ व्यो त्रणदिवसें ते अटवी उत्तरी गयो त्यां कोइक नगरीनेविषे जमतां जमतां ते मूलदेवने बाफेला बाकला कोइयें आप्या. ते बाकला पोते न खाधा अने जाव सहित कोइ एक साधुने वहोरावी आप्या. ते जोइ ते वननी देवीयें तुष्टमान थइ मूलदेवने कह्युं वरदानके माग्य, कहेलुं ठे के ॥ धन्नाणं सुनराणं, कुम्मासाहुंति साहु पारणए ॥ गणियंच देवदत्तं, दंति सहस्सं च रज्जं च ॥ १ ॥ तेवारें मूलदेवें एक हजार हाथी युक्त राज्य मा ग्युं, देवीयें पण तेज वरदान आप्युं, त्यार पठी नगर प्रत्यें जातां कांइक गामनेविषे पर्णकुटीमां सुतो, त्यां पोताना मुखमां चंद्रप्रवेश थयो एवुं स्वप्न दीठुं प्रजातें उठीनें मूलदेवें तेनुं फल कोइ स्वप्नपाठकने पूठ्युं. तेवारें ते स्वप्नपाठकें प्रथम तो मूलदेवने पोतानी पुत्रीनुं पाणिग्रहण कराव्युं.

ते पछी कह्युं के आ स्वप्नना फलमां राज्यप्राप्ति तमोने थाशे. ते पछी सा तमे दिवसें माहिष्मति नगरीनेविषे अपुत्रीयो राजा मरण पाम्यो ते राजा नुं राज्य पंचदिव्य थकी ते मूलदेवने प्राप्त थयुं. एवीरीतें संविभागव्रतना प्रतापथी तेनी स्थिति उत्तम थइ तेमाटे संविभागव्रत करवुं ॥ ५३ ॥

यदसदपि ददौ प्राक्शालिभद्रोऽतिथेः स्वं, तदसदपि स लेभे कामरर्द्धिः कमर्त्यः॥ क भुविजलधिरिंदुः कांबरे तं सपुण्णा, त्यमृतभृतपयोदः शोषणेप्यौर्ववन्हेः ॥ ५४ ॥

अर्थः–(प्राक् के०) पूर्वभवें (शालिभद्रः के०) शालिभद्रनो जीव ते (यत् के०) जे (असदपि के०) असत् एवा पण (स्वं के०) पोताना पर मान्नरूप पारका घरथकी याचना करीने लावेलो हतो ते (अतिथेः के०) साधुने (ददौ के०) आपतो हवो (तत् के०) तेथी (असत् के०) अ सत्एवा मनुष्यलोकना सुखने (सः लेभे के०) ते पामतो हवो नहीं तो (अमररिर्द्धिः क के०) अमरनी समृद्धि क्यां अने (क मर्त्यः के०) म नुष्य ते क्यां ? अर्थात् अन्ननो कीटक एवो मनुष्य क्यां अने देवतानी रूद्धि क्यां त्यां दृष्टांत कहे छे (भुवि के०) पृथ्वीने विषे (जलधिःक के०) समुद्र क्यां ? अने (अंबरे के०) आकाशने विषे (इंदुःक के०) चंद्रमा क्यां एम छे तो पण (अमृतभृतपयोदः के०) जेणे पाणीयें करी मेघने परिपूर्ण भरेलो छे एवो (सः के०) ते चंद्र जे छे ते (और्ववन्हेः शोषणे पि के०) वाडवानलथी थता एवा शोषणनेविषे पण समुद्रनुं (पुष्णाति के०) पोषण करे छे. आहीं शालिभद्रनी कथा प्रसिद्ध छे माटे लखी नथी.

हवे सप्तक्षेत्रनुं द्वार कहे छे.

क्षेत्रेषु सप्तस्वपि पुण्यवृद्ध्ये, वपेद्धनं संप्रति राजवद्धनी ॥ कृषीवलः केवलशालितंडुला न्, वपेत्सकिंयोऽखिलशस्यलालसः ॥५५॥

अर्थः–(धनी के०) धनवान् पुरुष, (संप्रतिराजवत् के०) संप्रति रा जानीपेठें (सप्तसुक्षेत्रेषुअपि के०) सातक्षेत्रने विषे पण (पुण्यवृद्धये के०) पुण्यनी वृद्धिने माटे (धनं के०) धनने (वपेत् के०) वावे, (कृषीवलः के०) खेड करनारो एवो (यः के०) जे प्राणी, (अखिलशस्यलालसः

के०) समग्र धान्यनो लालची होय, (सः के०) ते (किं के०) शुं (केवल शालितंडुलान के०) केवल शालितंडुलनेज वावे छे. ना सर्व धान्यने वावे छे.

आहिं संप्रतिराजानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. पाडलीपुर नगरे मोर्यवंशने विषे अलंकार रूप चंद्रगुप्त राजा राज्य करे छे. तेना पुत्र नुं नाम बिंडुसार तेनो पुत्र अशोक तेनो पुत्र कुणाल तेनो पुत्र संप्रति राजा थयो ते जन्म्या पछी दशमे दिवसेंज राज्य पाम्यो ते राजा वासुदेव नीपेठे त्रण खंमनो जोक्ता थयो एकदिवस गवाक्षमां वेठा राजायें रस्तामां जतां आर्यसुहस्ति सूरिने जोया. तेना दर्शन करतांज संप्रति राजाने जातिस्मरण उत्पन्न थयुं तेथी तरत आवीने सूरीने वंदन कर्युं. राजायें पुछयुं हे जगवन् ! अव्यक्त सामायिकनुं शुं फल छे ? गुरुये कह्युं के. राज्य प्राप्त थाय. पछी गुरुजीये ते संप्रति राजानो पूर्वजव कहेवा मांड्यो. हे राजा ! तुं पूर्वजवनेविषे कोइक रंक हतो अमारा साधुपासे लाडुनी याचना करी हती. अमोयें कह्युं के तुं जो अमारो शिष्य थायतो लाडु आपीयें त्यारें तें मोदकनी इछाथी प्रव्रज्या ग्रहण करी. ते पछी ते मोदकादि अति स्निग्धाहारथी गूढ विशूचिकायें करी पीडा पामतो छतो पण धर्मनुं अनुमोदन करतो मरण पामीने हमणां तुं संप्रति राजा थयो छो. ए अव्यक्त सामायिकनुं फल छे एवुं गुरुवचन सांजली वली गुरुपासें दीक्षा लेवानी प्रार्थना करी. त्यारे गुरुयें कह्युं के तारे राज्य संबंधि जोगावली कर्म शेष रह्यांछे ते सांजली राजायें पोताना नगरनेविषे दान शालाउ मंमावी तथा श्रीजिनप्रासादें मंमित पृथ्वी करी एक लाख, जिनबिंबो कराव्यां अनार्य देशोमां पण धर्मनी प्रवृत्ति करावी. चतुर्विध श्रीसंघनी जक्ति करवा मांमी, अंते मरण पामीने स्वर्गे गयो माटे सातक्षेत्रमां आपनार प्राणी सजतिने पामेछे तेमां शंका जाणवी नहीं ॥ ५५ ॥

क्षेत्राणि सप्तापि फलंति सर्व, मप्येककं कल्कि
जवत् सुजुष्टं ॥ यत्पुण्यमारात्तिकसप्तदीपे,
रेकेन तन्मंगलदीपकेन ॥ ५६ ॥ सप्तक्षेत्रद्वारं ॥

अर्थः—(सप्तापि के०) सात एवां पण (क्षेत्राणि के०) क्षेत्रो, जे वे ते यथाशक्तियें स्पर्श कर्यां छतां (फलंति के०) फलदायी थाय वे (ए

कैकमपि के०) एकेक एवुं पण (क्षेत्रं के०) क्षेत्र, (सुजुष्टं के०) सारी रीतें सेवन करेलुं (सर्वमपि के०) सर्व प्रकारना महोटा एवा पण फलनुं आपनार थाय छे. केनी पेरें? तो के (कल्किजवत् के०) कल्किना पुत्र दत्त नी पेरें. त्यां दृष्टांत कहे छे (यत् के०) जे (पुण्यं के०) पुण्य (आरात्रिकसप्तदीपैः के०) आर्त्तिना सात दीवायें करीने थाय छे (तत् के०) ते पुण्य (मंगलदीपकेन के०) एक मंगलदीपें करीने पण थाय छे ॥ ५६ ॥

आहिं कल्किपुत्र दत्त राजानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. श्री महावीरना निर्वाण दिनथी बे हजार वर्षना प्रांतमां पाटलीपुरमां कल्कि राजा थाशे. ते पूर्वजवना मित्र देवतायें आपेला त्रिशूलें करी जरतना त्रण खंमने साधशे, तेनो पुत्र दत्त नामा थाशे, ते श्रीजिनना प्रासादोयें करी पृथ्वी अखंमित करावशे, परंतु श्री सर्वज्ञना नांखेला वचनने छद्मस्थ जाषितनी पेरें असंबद्ध जाणशे. हवे ते कल्किना पुत्र दत्तराजें जिनप्रासाद रूप एकक्षेत्र सेवन सारी रीतें कर्युं, तो पण तेथी ते सुखी थयो ॥ ५६ ॥

विंबं महल्लघु च कारितमत्र विद्यु, न्माल्यादिवत् परजवे
ऽपि शुजाय जैनम्॥ ध्यातुर्गुरुर्लघुरपीप्सितदायिमंत्रः,
प्रागदौःस्थ्यजाविघनविघ्नजिदे न किं स्यात्॥ ५७ ॥

अर्थः-(अत्र के०) आ जवने विषे जो (महत् के०) अत्युत्कृष्टथी पांचशे धनुष प्रमाण अने (लघु के०) न्हानुं अंगुष्टपर्व समान एवुं (जैनं के०) जिननुं (विंबं के०) बिंब (च के०) वली (कारितं के०) करावेलुं होय, तो ते (विद्युन्माल्यादिवत् के०) विद्युन्मालि देवादिकनी पेरें (परजवेऽपि के०) परजवने विषे पण (शुजाय के०) शुजने माटे थाय छे. कह्युं छे के "उक्कोसपणधणुसय, लहुआअंगुठ्ठ पव्व समा" ए वचन छे. हासा प्रहासा देवांगनाना अधिकारने विषे स्वर्णकारनो जीव विद्युन्माली देव, तेणें जिनविंब कराव्युं, ते तेने लाजने माटे थयुं. इहां दृष्टांत कहे छे (गुरुः के०) गुरु, अने (लघुरपि के०) लघु एवो पण (ध्यातुः के०) ध्यान करनारने (इप्सितदायि के०) इच्छित पदार्थने आपनारो एवो (मंत्रः के०) मंत्र जे छे ते (प्रागदौःस्थ्यजाविघनविघ्नजिदे के०) पूर्वजन्मनां करेलां जे दुष्कर्म तेणें

करी थयेला एवा जे निविड विघ्नो तेना भेदवाने माटे (किं के०) शुं (नस्यात् के०) न थाय? अर्थात् थायज ॥ ५७ ॥

आहिं विद्युन्माली देवतानी कथा कहे छे. चंपानगरीने विषे कुमारनंदी स्वर्णकार रहेतो हतो. ते अत्यंत विषयी हतो, ते एक दिवस हासाप्रहासा व्यंतरीयोनुं रूप जोइने वाणमां बेशी पंचशैल द्वीपप्रत्यें गयो. त्यां ते बेहु व्यंतरीयोयें कह्युं के, आ सात धातुनुं बनेलुं एवुं जे तारुं शरीर तेनाथी अमारे कांइ प्रयोजन नथी. एम कही ते बेहु जणीउयें तेने मूकी दीधो, परंतु तेना रूपथी मोह पामेलो एवो ते सोनी तेने मित्रें वार्यो तो पण अग्निमरणने साधतो हवो. त्यांथी मरण पामीने हासाप्रहासा व्यंतरीयोनो भर्त्ता थयो, परंतु आभियोगिक देवमां उपन्यो छे माटे आभियोग कर्मे करी अत्यंत शोक करतो हतो. त्यारें देवता थयेला एवा तेना पूर्वभवना मित्र देवें तेने कह्युं के हे मित्र! हवे शोक कर नही. तुं नवीन जिनबिंब कराव्य, जेथी ते पुण्यें करीने तारी सद्गति थाय, एवा पोताना मित्र देवना वचनें करी ते विद्युन्माली देवतायें चंदननी मूर्त्ति करावी. तेने लाकडानी पेटीमां मूकी ने समुद्रमां तरती मूकी. क्रमें करीने ते पेटी उदायी राजाना हाथमां आवी. ते पुण्यना योगें करी ते विद्युन्माली देवता थोडाज भवोमां सिद्धि पामशे ॥

निर्मायाऽर्हतबिंबमार्हतपदस्थानाग्रिमं धार्मिकः,स्वा
त्मानं च परं च निर्मलयति स्तुत्यर्चनावंदनैः ॥ मंत्रि
श्रेणिकसूरिवार्द्रकसुतं मोहांधकारे स्थितं,दीपः पुण्य
ति कस्य कस्य न मुदं श्रेयः श्रियामास्पदम् ॥५८॥

अर्थः—(धार्मिकः के०) धार्मिक एवो पुरुष ते (आर्हतबिंबं के०) जिनबिंबने (निर्माय के०) निर्माण करीने (स्वात्मानं के०) पोताना आत्माने (च के०) वली (परं के०) परना आत्माने (आर्हतपदस्थानाग्रिमं के०) अरिहंत सिद्ध पवयवणेत्यादिने विषे अग्रिम स्थान एटले प्रथम स्थानप्रत्यें पमाडे छे. अथवा आर्हत्पदवीनुं स्थान जे मोक्ष ते मोक्ष मार्गने विषे अग्रेसरपणाने पमाडे छे. इहां दृष्टांत कहे छे. (मंत्रिश्रेणिकसूरिव के०) श्रेणिकनो पुत्र अभयकुमार मंत्री जे तेज जेम (मोहांधकारेस्थितं के०) मोहरूप अंधकारने विषे रहेला एवा (आर्द्रकसुतं के०) आर्द्र

कुमारनें (स्तुत्यर्चनावंदनैः के०) जिनबिंबनां स्तुति, अर्चन, अनें वंदनें करी (निर्मलयति के०) निर्मल करता हवा. ते वात घटे ले. (च के०) वली (श्रेयः श्रियामास्पदं के०) कल्याण अने लक्ष्मीना स्थानकरूप एवो (दीपः के०) दीप ते (कस्यकस्य के०) केना केना (मुदं के०) हर्षने (नपुष्यति के०) नथी पोषण करतो ? अर्थात् करेज ले ॥५७॥ द्वार अष्टावीशमुं ॥

आहिं अजयकुमारनी कथा कहे ले. राजगृही नगरीने विषे श्री श्रेणिक राजानो पुत्र अजयकुमार मंत्री, राज्यव्यापारने चलावतो हतो, ते एक दिवसें वीरजगवानने पोतानो पूर्वजव पूलवाथी पोताना पूर्वजवनो मित्र अनार्यदेशमां उपन्यो जाणीने अत्यंत शोक करवा लाग्यो. पली ते मित्रने बोध करवा माटे पोताना मित्र वणिक पुत्रना हाथथी श्री जैनबिंबने आर्डकुमार पासें मोकलतो हवो. ते वखत पूर्वें नही जोयेला एवा जिन बिंबने जोइने आर्डकुमार, चिंतववा लाग्यो के आ केवुं आजरण मारा मित्रें मोकल्युं ले ? एम समजीने पोताना मस्तकें मूक्युं ती पालुं त्यांथी लइने पोताना बेहु हाथमां बांध्युं, तो पण कोइ ठेकाणे आजरण बंध बेतुं नही ? पली सिंहासननी उपर स्थापन कर्युं, तेथी अति शोजवा लाग्युं. ते जोइने आर्डकुमार चिंतववा लाग्यो के आ ते केवुं आजरण ? जे कोइ ठेकाणें मह्रारा जोवामां ते आव्युंज नहिं ? एम उहापोह करतां करतां जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. तेथी पोतानो पूर्व जव जोयो पली वैराग्य उपज्यो, तेवारें व्रत ग्रहण करीने सिद्धिने प्राप्त थयो ॥ ५७ ॥

हवे तीर्थद्वार कहे ले.

तीर्थं मुदे स्वपरयोरपि कीर्त्तिपाल,नृपालकारित
तुरंगमबोधवत्स्यात्॥उद्यानसारसहकारवनं फल
र्द्धयै, किं वप्तुरेव न पुनस्तदुपासकानाम् ॥ ५ए ॥

अर्थः— (स्वपरयोरपि के०) पोताने तथा परने पण (मुदे के०) हर्षने माटे (तीर्थं के०) तीर्थ, ते जरुचक्षेत्र, (कीर्त्तिपालनृपालकारिततुरंगमबोधवत् के०) कीर्त्तिपालनृपालें करावेला तुरंगम बोधनी पेठें (स्यात् के०) थाय. त्यां दृष्टांत कहे ले. (उद्यानसारसहकारवनं के०) प्रधान एवा आम्रना वृक्षनुं वन, (वप्तुरेव के०) वावनारनेज (फलर्द्धै के०) फलनी स

मृद्धिने माटेज थाय छे? (पुनः के०) वली (तडुपासकानां के०) ते सत्कार वननी उपासना करनार प्राणीयोने (किं के०) शुं (न के०) नथी थातुं? ना थाय छेज. अर्थात् वावनारने तो फल मले,तेमां शुं आश्चर्य, परंतु तेने उपासन करनार प्राणीने पण ते फलरूप ऋद्धिने आपनार थाय छे ५ए

आंहिं अश्ववोध तीर्थनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. प्रतिष्ठान पुरमां सुमित्र नामा श्रेष्ठी वसे छे. तेनो परम मित्र जिनदास नामें श्रावक परमजिनधर्मी रहे छे. ते सुमित्र श्रेष्ठी प्रतिदिन कुपात्रने दान आपे छे. तेने जिनदास मित्रें वार्यो तो पण दीधाविना रहेतो नथी. एम करतां सुमित्र आर्त्तध्यान वशें मरण पामीने अनुक्रमें नृगुकछपुरने विषे राजानो पट्ट तुरंगम थयो. अने जिनदासनो जीव,मरीने स्वर्गमां जइने तिहांथी चवी श्री मुनिसुव्रत जिन तीर्थंकर थयो. ए अवसरमां नृगुकछनो राजा ते पट्टाश्वने प्रातःकालमां अश्वमेध यज्ञने माटे कुंममां होमशे. एम जाणीने श्रीमुनिसुव्रत तीर्थंकर तेने वोध करवा माटे रातमां साठ योजन पृथ्वी उल्लंघन करी प्रातःकालें नृगुकछें आवी समवसर्या. तेवारें ते राजा तेज घोडा उपर वेसीने स्वामीने वंदन करवा माटे आव्यो. तीर्थंकरना दर्शनें करी अश्वनें जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. तेथी पोताना पगना माबलाथी नूमि खोदीने अश्रुपात करवा लाग्यो. राजानी पासें श्रीमुनिसुव्रत स्वामीयें पोतानुं तथा ते अश्वनुं वृत्तांत सर्व कही आप्युं. पछी ते अश्वें पूर्वनवना जातिस्मृति ज्ञानें करी अनशन व्रत ग्रहण कर्युं. ते मरीने अष्टमस्वर्गमां देवता थयो. पछी ते नृगुपुरमां कीर्त्तिपाल नूपालें त्यां अश्वाववोध एवे नामे श्रीजिन प्रासाद कराव्यो. ते राजा पण तेज नवमां दीक्षा लइने मोक्षें गयो. अने त्यां अश्वाववोध नामक तीर्थ थयुं, माटे तीर्थथी परोपकार थाय छे॥५ए॥

वित्तं स्थिरं सुकृतकीर्त्तिकरं च वाढु, वत्याद्विविधवि
धतीर्थनिवेशिकानाम् ॥ केतूल्लसन्नरतपुण्ययशोर्थ
वाद, मष्टापदं कइव नानमदद्य यावत् ॥ ६० ॥

अर्थः–(विविधतीर्थनिवेशिकानां के०) अनेक प्रकारना तीर्थमां धनने निवेश करनार पुरुषोनुं, (वित्तं के०) द्रव्य, ते (सुकृतकीर्त्तिकरं के०) सुकृतने अने कीर्त्तिने करनारुं थाय छे. (च के०) तथा (स्थिरं के०) ते द्रव्य स्थिर

थाय छे. एम जाणवुं. कोनी पेठें? तो के (बाहुबल्यादिवत् के०) बाहुब ल्यादिकनी पेठें. बाहुबलीयें पोताना द्रव्यथी जेम श्रीरुषज्ञ पाडुकारूप ती र्थ,तक्षशिलाने विषे स्थापन कर्युं. ते अद्यापि पर्यंत 'हक्का' एवे नामें उलखाय छे. आहिं (इव के०) इव शब्द जे छे ते अलंकारार्थ छे. (केतूल्लसद्भरतपुण्य यशोर्थवादं के०) केतुना मिषें करी उल्लसित एवुं भरत राजानुं पुण्य तथा यश तेनी प्रशंसाने कहेवा वालुं एवुं (अष्टापदं के०) अष्टापद तीर्थ, तेनें (कः के०) कयो पुरुष, (अद्ययावत् के०) अद्यापि पर्यंत (नअनमत् के०) न नमतो हवो? अर्थात् सर्व ते तीर्थने नमेज छे ॥ ६० ॥

आंहि प्रथम बाहुबलीनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. तक्षशिला पुरीने विषे बाहुबली राजा राज्य करे छे. एक दिवस श्रीरुषज्ञदेवजी छद्मस्था वस्थायें विचरता थका तक्षशीला नगरीना उद्यानमां पधार्या. ते आराममां रहेनारे आवी बाहुबलीने तेनी वधामणी आपी. बाहुबली राजायें संतुष्ट थइने वधामणीयाने पोताना अंगनो शृंगार सर्व आप्यो. पछी राजायें वि चार्युं जे हमणां सांज पडवा आवी माटें प्रातःकालमां महोटा आडंबरें स्वामीने वांदवा जाइश. पछी ज्यारें रात्रि गइ, अने सूर्योदय थयो त्यारें जेवामां बाहुबली राजा चतुरंगिणी सेना सहित श्रीरुषज्ञ देवजीने वांदवा आव्यो, तेवामां श्रीरुषज्ञदेवजी तो,अन्यस्थलमां विहार करी गया. बाहुबली यें स्वामीने न देखवाथी माहाक्लेश करवा मांड्यो. पछी जिहां स्वामी रात्रि रह्या हता ते दिशानी सन्मुख थइने परिवार सहित राजायें नमस्कार कर्यो. अने ज्यां स्वामी पधार्या हता, त्यां रत्नमय बे पाडुकायें युक्त धर्मचक्रनुं नि र्माण कर्युं. त्यां हाल म्लेछ लोकोनुं हक्का एवा नामनुं तीर्थ थयुं छे.

हवे बीजी अष्टापद तीर्थनी उत्पत्तिनी कथा कहे छे. अयोध्या नगरीने विषे श्री रुषज्ञदेव स्वामी वीश लाख पूर्व कुमरपणामां तथा त्रेशठ लाख पू र्व राज्य जोगवीने सर्व मली त्याशी लाख पूर्व गृहस्थाश्रममां रही जरतने राज्य आपी पोतें दीक्षा लीधी. हजार वर्ष दीक्षा पालीने केवलज्ञान पामीने श्रीअष्टापद गिरिने विषे मोक्षने प्राप्त थया. पछी स्वामीना निर्वाणना स्था नकनी उपर जरत राजायें बे गाउ पहोलो अने चार गाउ लांबो अने त्रण गाउ उंचो चार दरवाजायें सहित सिंहनिषद्या एवा नामवालो नंदीश्वरद्वी पादि शाश्वत प्रासादने अनुसरतो सर्व तीर्थंकरना पोतपोताना शरीरनां

मान, अने शरीरना वर्णें करी सरखी एवी चोवीशे जिनप्रतिमाउयें करी अलंकृत एवो प्रासाद बनाव्यो. ॥ ६० ॥ इति चैत्यद्वार.

ज्ञानं जगत्त्रयहितं पुनरप्यधीते, ज्ञोप्यार्यरक्षित
इवेतरशास्त्रपाठैः ॥ ये स्वर्णधीकनककाचकृतादरा
स्ते, हेमैव सत्यमधिगम्य किमु त्यजंति ॥ ६१ ॥

अर्थः–(ज्ञोऽपि के०) विद्वान् एवो जन पण (जगत्त्रयहितं के०) त्रण जगतना हितने करनार एवा (ज्ञानं के०) ज्ञानने (पुनरपि के०) वली पण (अधीते के०) नणे ठे. केनी पेठें ? तो के (आर्यरक्षितइव के०) श्रीआर्यरक्षितजीनी पेठें ? (इतर शास्त्रपाठैः के०) अन्य जैनशास्त्रना पाठ करवा एटले जेम आर्यरक्षित ब्राह्मण चउदविद्यानो पारगामी हतो तथापि पोतानी माताना कहेवाथी तथा तेनी प्रेरणाथी चौद पूर्व शास्त्र नणवा गयो. त्यां दृष्टांत कहे ठे. के (ये के०) जेउ (स्वर्णधी के०) सोनानी बुद्धियें करी (कनककाचकृतादराः के०) सोना समान काचनेविषे कस्यो ठे आदर जेणे एवा ठे, (ते के०) ते पुरुषो (सत्यमेव के०) सत्य एवुंज (हेम के०) सुवर्ण तेने (अधिगम्य के०) प्राप्त थइने (किमु के०) शुं (त्यजंति के०) ते खरा सुवर्णनो त्याग करे ठे? ना त्याग करता नथी. अर्थात् जेणें अजाणपणे पीला काचना कटकाने सुवर्ण मानी लीधुं हतुं ते पुरुषने जेवारें खरा सुवर्णनी प्राप्ति थाय तेवारें ते खरा सुवर्णनो त्याग करे? ना ते नहींज करे ॥ ६१ ॥

आहीं आर्यरक्षित ब्राह्मणनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ठे. माहेश्वरी नगरीने विषे सोमदेव ब्राह्मणनी फल्गुमित्रा नामें स्त्री हती, तेने आर्यरक्षित नामा पुत्र हतो, ते अत्यंत विद्या नणवामां रसिक होवाथी परदेशें जइ चउद विद्या शीखीने पोताने घेर आव्यो, मातापिताने प्रणाम कस्यो. ते आर्यरक्षितने नणेलो सांनली सहु लोक खुशी थयां, परंतु पोतानी मातानी अप्रसन्नता जोइने आर्यरक्षितें पूठयुं के हे माताजी ! सहु मारी विद्याथी खुशी थयां, ने तमे केम नाराजी थया ठो? त्यारें माता बोली के हे पुत्र ! जो तुं चौद पूर्व नणीने आव्यो हत,तो मुने हर्ष थात, त्यारें तेणे पूठयुं के ते चौद पूर्व कोण नणावे ठे? मातायें कह्युं के तारो मामो पुष्पमित्राचार्य

जणावे छे. ते सांभली तरत ते चौदे पूर्व जणवा माटे बाहेर निकल्यो रस्ता मां प्रथम साडानव इक्षुदंम भेट थयेला जोवामां आव्या, पछी ढढ्ढर श्राव कना प्रयोगथी वंदन विधि शीखीने आचार्यनी सान्निध्यें जइ कह्युं के महा राज! चउद पूर्व मने जणावो. त्यारें सूरियें कह्युं के जे दीक्षित होय तेना थीज ते पूर्वो जणाय छे. गृहस्थथी जणाय नहिं. ते सांभली दीक्षा लेइ साडानव पूर्व पर्यंत जणीने गुरुने कह्युं के हे महाराज! हवे केटलुं जणवुं छे? त्यारे सूरियें कह्युं के हजीतो तुं समुद्रमांथी एक बिंदु जणेलो छे. समुद्र तो अखंम छे आ वात सांभलीने तरत भग्नोद्यम थइ गयो. त्यारें सूरियें कह्युं के इक्षुदंमना योगें करी अमोयें जाण्युं जे तुं एटलांज पूर्व जणीश. त दनंतर तेणें माता पिताने पण दीक्षा लेवरावी ॥ ६१ ॥

पठ पठति यतस्वान्नादिना लेखय स्वैः, स्मर वितर च साधौ ज्ञानमेतद्धि तत्त्वं॥ श्रुतलवमपि पुत्रे पश्य शय्यंभवोऽदा, जगति हि न सुधायाः पानतः पेयमन्यत्॥६२॥

अर्थः—हे साधो! तुं पोतें (ज्ञानं के०) ज्ञानने (पठ के०) भण. तथा (पठति के०) भणेला जनने विषे (अन्नादिना के०) अन्नादिकथी (यतस्व के०) यत्न कर (स्वैः के०) पोताना (द्रव्यैः के०) द्रव्यें करी (लेखय के०) ज्ञानने लखाव. (स्मर के०) ज्ञाननुं स्मरण कर. अने (साधौ के०) सुजनने विषे (च के०) वली (वितर के०) जणाववा माटे यत्न कर. आ संसारने विषे (एतत् के०) ए (ज्ञानं के०) ज्ञान (हि के०) निश्चें (तत्त्वं के०) तत्त्व छे. (पश्य के०) जुवो. के (पुत्रे के०) पुत्रने विषे (शय्यंभवः के०) श्रीशय्यंभवस्वामी (श्रुतलवमपि के०) श्रुतनो लवज (अदात् के०) आपता हवा. (हि के०) ते वात घटे छे जुवो के (जगति के०) जगतने विषे (सुधायाः के०) अमृतना (पानतः के०) पानथकी (अन्यत् के०) बीजुं कांइ (पेयं के०) पान करवा लायक (न के०) नथी ॥६२॥

हवे आंहिं पण शय्यंभवनो दृष्टांत छे पूर्वें तेनी कथा जो के कहेली छे तो पण स्थानशून्यना हेतु माटे कांइक शय्यंभवस्वामीनी कथा कहे छे. चउद पूर्वमांथी दशवैकालिक नामा ग्रंथ काढीने शय्यंभव गणधरें पोताना पुत्र मनकने जणाव्यो मनकना मरण पछी शय्यंभव गणधर रडवा लाग्या,

त्यारें यशोजद्र मुनियें पूछ्युं के हे जगवन्! आ शुं कहेवाय? गुरुयें कह्युं के संसारनो स्नेह तो एवोज छे. आ वृत्तांत सांजलीने साधु सर्व खेद पाम्या.

लोकेज्योनृपतिस्ततोपि हि वरश्चक्री ततोवासवः, सर्वे
ज्योपि जिनेश्वरः समधिकोविश्वत्रयीनायकः ॥ सोऽ
पि ज्ञानमहोदधिं प्रतिदिनं संघं नमस्यत्यहो, वैरस्वा
मिवडुन्नतिं नयति तं यः स प्रशस्यः क्षितौ ॥ ६३ ॥

अर्थः– (लोकेज्यः के०) सर्वलोकोथी (नृपतिः के०) राजा (वरः के०) श्रेष्ठ जाणवो. वली (ततोपि के०) ते थकी पण (हि के०) निश्चें (चक्री के०) चक्रवर्त्ती श्रेष्ठ जाणवो. अने (ततः के०) ते चक्रीथकी (वासवः के०) इंद्र श्रेष्ठ जाणवो. तथा ते पूर्वोक्त (सर्वेज्योपि के०) सर्वथकी पण (विश्वत्रयी के०) त्रण जगतना (नायकः के०) नायक, एवा (जिनेश्वरः के०) जिनेश्वर श्रीतीर्थंकर देव ते (समधिकः के०) रूडे प्रकारें अधिक जाणवा. (सोपि के०) ते जिनवर पण (ज्ञानमहोदधिं के०) ज्ञानरूप समुद्र छे जेमां एवा (संघं के०) चतुर्विध श्रीसंघने (अहो के०) आ श्चर्ये (प्रतिदिनं के०) रात्रिदिवस (नमस्यति के०) नमस्कार करे छे. माटे (तं के०) ते श्रीसंघने (यः के०) जे पुण्यवान् मनुष्य, (वैरस्वामिवत् के०) वैरस्वामीनी पेठें (उन्नतिं के०) उन्नति प्रत्यें (नयति के०) पमाडे छे, (सः के०) ते (क्षितौ के०) पृथ्वीने विषे (प्रशस्यः के०) प्रशंसा करवा लायक जाणवो. जेम वज्रस्वामी माहेश्वरी नगरीनेविषे बौद्ध राजानी आगल श्रीसंघनी उन्नति करता हवा. तेम संघनी उन्नति बीजा पण पुण्यवान् प्राणीयें करवी ॥ ६३ ॥

आंहि वज्रस्वामीनी कथा पूर्वें कही छे तो पण यत्किंचित् कहे छे. प्रजावकचक्रवर्त्ति श्रीवज्रस्वामीनी पेठे शासनरूप गगनें उद्योत करवो. एकदा बार वरसनो डुष्काल पड्यो, ते वखत श्रीवज्रस्वामी साधु तथा श्रावकना संघने पट्टमां बेसारीने गगन मार्गें करी माहेश्वरी नगरी प्रत्यें पहोंचाडता हवा. त्यां महासुनिक्ष वर्त्ते छे. एवा समयमां पर्यूषण पर्व आव्युं, ते समयें श्रीसंघ आठ दिवस नवनवा महोत्सव करे छे. त्यां ईर्ष्या करनारा बौद्धोयें राजानी आज्ञा लइने जिनजगवानने पुष्प चडाववां निषेध करा

थ्यां, ते जाणीने श्रीवज्रस्वामी गगन मार्गेंथी हुताशन देवने घरे गया. श्री वज्रस्वामीना आदेशें करी ते देव,मंदारना पुष्पोयें जरेला लक्ष करंमिया माहेश्वरी नगरीने विषे लाव्यो, ते प्रजाव जोइने बौद्धो हतप्रजाव थइ गया. अने ते नगरीनो राजा बौद्ध हतो ते पण ते दिवसें जैनधर्मी थयो ॥ ६३ ॥

कोप्यन्योमहिमास्त्यहो जगवतः संघस्य यस्य स्फुर,
त्कायोत्सर्गबलेन शासनसुरी सीमंधरस्वामिनं ॥
नीत्वा तत्कृतदोषशुद्धिमुदितां यक्षार्यिकां चानयत्,
किंचैतत्तनुतत्प्रजावविजवैस्तीर्थंकरत्वं जवेत् ॥ ६४ ॥

अर्थः-(जगवतः के०) समर्थ एवा (संघस्य के०) चतुर्विध संघने (कोपि के०) कोइ पण अनिर्वचनीय एवो (अन्य के०) बीजो (महिमा के०) महिमा (अहो के०) आश्चर्ये (अस्ति के०) छे. केम के (यस्य के०) जे श्रीसंघना (स्फुरत्कायोत्सर्गबलेन के०) प्रकाश थतुं एवुं जे कायोत्सर्ग तेना बलें करीने (तत्कृतदोषशुद्धिमुदितां के०) पोताना जाइने पर्यूषण पर्वमां तप करवाथी मरण प्राप्त थवाना दोषोनी शुद्धिने इछती एवी (यक्षार्यिकां के०) यक्षा साध्वीनें (शासनसुरी के०) शासननी अधिष्टायिका देवी (सीमंधरस्वामिनं के०) ते श्रीसीमंधर स्वामीनी पासें (नीत्वा के०) लइ जइने बे चूलिकानुं दान कराव्युं. माटे (किंच के०) शुं (एतत् के०) आ (तनुप्रजावविजवैः के०) श्रीसंघना तनु एटले थोडा प्रजावना विजवोयें करी (तीर्थंकरत्वं के०) तीर्थंकरपणुं (जवेत् के०) होय, एवो श्रीसंघनो महिमा जाणवो ॥ ६४ ॥

आंहिं यक्षासाध्वीनी कथा कहे छे. पाडलीपुरने विषे शकमाल मंत्रीनी दीकरी यक्षा हती तथा ते शकमालनो पुत्र श्रीयक नामा हतो, तेणें श्रीनंदराजानो कारजार घणा दिवस पर्यंत कस्यो. पछी वैराग्य पामीने श्रीयकें दीक्षा ग्रहण करी. परंतु ते श्रीयक तप करवाने समर्थ हतो नही तेथी क्रिया अनुष्ठान करतो हतो, एम करतां पर्यूषण पर्व आववाथी ते श्रीयक मंत्रीनी बेन यक्षार्यायें आग्रह करी तेने उपवास कराव्यो तेथी ते रात्रे मरण पाम्यो. त्यारे तेनी बेने कह्युं जे मने ऋषिहत्या लागी. पछी श्रीसंघें तथा गुरुयें घणुं कह्युं के एमां तमने पाप लागे नहि तो पण ते य

क्षार्यिकाने संतोष थयो नहिं. त्यारे श्रीसंघें कायोत्सर्ग कर्युं. ते करवाथी शासन देवता आवी तेणें ते यक्षार्यिका साध्वीने उपाडीने श्रीसीमंधरस्वामीपासें पोहोंचाडी. त्यां भगवानें कह्युं के तुने कांइ पण ऋषिहत्या लागी नथी. परंतु उलटुं पुण्य थयुं. ते वखतें तेने आगतानिज्ञानने माटे बे चूलिका आपी पछी ते शासन देवतायें पाछी यक्षार्यिकाने स्वस्थाने पोहोंचाडी. श्रीसंघें कायोत्सर्ग पार्यो. सर्वने आनंद थयो पछी ते बे चूलिकानुं दशवैकालिक सूत्रनी अंतें अद्यापि स्थापन कर्युं छे. एम श्रीसंघना महिमाथी ते सर्व कार्य बन्युं. माटे ए चतुर्विध श्रीसंघनी ते महत्ता जाणवी ॥६४॥

भवति हि भवपारः शुद्धया साधुभक्त्या, धनगृहपतिजीवानंदवैद्येशवत् प्राक्॥ पृथुरपि हि पयोधिस्तीर्यते चारुतर्या, तिमिरभरभृतोध्वा दीप्तयादीपयष्ट्या ॥ ६५ ॥

अर्थः—(शुद्धया के०) शुद्ध एवी (साधुभक्त्या के०) साधुनी भक्तियें करी (प्राक् के०) पूर्वे भवनेविषे (धनगृहपतिः के०) धनसार्थवाहनो जीव तथा (जीवानंदवैद्येशवत् के०) आदिनाथनो जीव जे जीवानंद वैद्य, तेनी पेठे (भवपारः के०) संसारनो पार (भवति के०) थाय छे. अर्थात् ते जीवानंदसाधुनी भक्तियें करी संसारनो पार पाम्या. त्यां दृष्टांत बे कहे छे. (पृथुरपि के०) मोहोटो एवो पण (हि के०) निश्चें (पयोधिः के०) समुद्र, (चारुतर्या के०) मनोहर एवी नौकायें करी (तीर्यते के०) तराय छे. तथा (दीप्तया के०) प्रकाशित एवी (दीपयष्ट्या के०) दीपपंक्तियें करीने (तिमिरभरभृतोध्वा के०) अंधकारें भरेलो एवो रस्तो शुद्ध थाय छे तेम साधुभक्तिथी सर्व पदार्थ लभ्य थाय छे ॥ ६५ ॥

आंहिं जीवानंद वैद्यराजनी कथा कहे छे. महाविदेह क्षेत्रमां पुंडरिकिणी पुरीने विषे जीवानंद नामा वैद्य वसे छे. तेने एक राजानो पुत्र, एक मंत्रीनो पुत्र,एक श्रेष्ठीनो पुत्र,एक सार्थवाहनो पुत्र,ए चार मित्र हता,एक दिवस जीवानंदने घेर चारे मित्र आवीने बेठा हता तेवामां एक महा कर्मी युक्त कुष्ट रोगना उपद्रवें करी दुःखी एवो साधु वहोरवा माटे त्यां आव्यो, ते साधुने जोइने ते सर्वे कहेवा लाग्या के हे वैद्यराज ! आ बिचारा साधुने साजो करो त्यारे जीवानंद वैद्यें कह्युं के मारे त्यां लक्षपाक तेल ने प

रंतु तेथी शुं थाय? बीजुं रत्नकंबल तथा चंदन जोइयें ते तमो लावो तो ए नो उपाय थाय. आ वात सांजली ते साधुने त्यां बेसाडी चंदनकाष्टनी डु कान मांमनार वाणीआनी डुकानपर गया. लक्ष द्रव्य ते वणिक पासें मूकी ने कह्युं के तमो रत्नकंबल तथा गोशीर्ष चंदन आपो. तेवारें ते वाणीयें गरीबनो पण पुण्यनो आदर जोइने धर्मथीज रत्नकंबल अने चंदन ए बेहु वानां म फत आप्यां अने पोतें पण वैराग्य पामी प्रव्रज्या ग्रहण करीने तेज नवने विषे सिद्धिने प्राप्त थयो. पढी ते पांचे जण एकत्र थइने ते मुनिने रोग म टाडवा माटे वनमां लेइ गया. प्रथम लक्षपाक तैलें करी ते साधुने अभ्यं ग कर्युं. पढी रत्नकंबलें करी एनुं अंग ढांक्युं तेवारें कृमी हता, ते सर्व बा हेर निकली गया. पढी ते साधुना अंगने चंदनें करी विलेपन कर्युं, एम त्र ण वार करवाथी ते साधुना शरीरथी कुष्ट मूलमांथी जतो रह्यो. अने ते मु नि नीरोगी देहवालो थयो ते जीवानंदनो जीव ते पुण्यना प्रजावें करी चा र नव करीने आदीश्वर जगवान थइ श्रीतीर्थंकर पदने प्राप्त थयो ॥ ६५ ॥

दानैः प्रासुकनक्तपानवसनावासौषधानां मुने,
वैयावृत्यकृतेश्च विस्मयकरा नोगा बलं चाप्यते॥
श्रीमद्बाहुसुबाहुवत्परनवे सा कामगव्यप्यहो, स
च्चारीजलदानकोमल करस्पर्शैरलं तुष्यति॥६६॥

अर्थः-(प्रासुकनक्त के०) प्रासुकएवो नात, तथा (पान के०) जल, (वसन के०) वस्त्र, (आवास के०) उपाश्रय, तथा (औषधानां के०) औषधो तेनो (मुनेः के०) मुनिने (दानैः के०) दानदेवे करी (च के०) वली (वैय्यावृत्यकृतेः के०) वैयावञ्च करवाथकी (परनवे के०) परनवने विषे (श्रीमद्बाहुसुबाहुवत् के०) शोनायमान एवा बाहु अने सुबाहु, पांचशे साधुने नक्त पान आवास विश्रामण करवायकी बेहु श्रीऋषनदेव जीना पुत्र थया तेनी पेठें (विस्मयकराः के०) विस्मयने करनारा एवा (नोगाः के०) नोगो, (च के०) वली (बलं के०) बल, तेने (आप्यते के०) प्राप्त थाय ढे. अर्थात् साधुनक्ति एवुं फल आपे ढे पण (अहो के०) आश्चर्य (सा के०) ते प्रसिद्ध एवी (कामगवी अपि के०) काम धेनु पण (सच्चारीजलदानकोमलकरस्पर्शैः के०) सारो चारो, जलपान,

करस्पर्श एटले हाथेथी खजवाळवुं तेणें करी (अलं तुष्यति के०) परिपूर्ण संतोष पामे छे अने फलदायक थाय छे अर्थात् गायने जेम सारो चारो आपवाथी तथा जलदान एटले पाणी पीवरावधाथी तथा करस्पर्शेकरी ए टले हाथफेरववे करी दुग्ध वगेरेनी देनारी थाय छे तेम साधुसेवा रूप गाय पण वैयावृत्यादि सारो चारो आपवाथी तथा फासु जलनुं दान देवाथी तथा पगचंपी वगेरे करस्पर्श करवाथी सारा फलनी देवावाली थायछे माटे सा धुसेवा अवश्य करवी ॥ ६६ ॥

अहिं बाहुबलीनी कथा कहे छे. माहाविदेह क्षेत्रने विषे पुंमरिगीणी नामनी नगरीयें वज्रसेन राजा राज्य करे छे. तेने पांच पुत्र हता तेनां ना म, एक वज्रनाभ, बीजो सुबाहु, त्रीजो बाहु, चोथो पीठ, पांचमो महा पीठ,ए पांच पुत्र हता ते पांचपुत्रोये पण संसार सुख भोगवीने तीर्थंकर नी पासें दीक्षा ग्रहण करी. तेमां प्रथम पुत्र चौदपूर्व शास्त्र भणी आचार्य थ यो. अने बीजा चारेजण हता ते अग्यार अंगधारक थया. तेमां बाहुनामा मुनि नित्य पांचशें साधुने भात पाणी लावी आपता हता. अने सुबाहुना मा मुनि पांचशे साधुनुं वैयावच्च करे तथा पीठ अने महापीठ नामा बेहु मुनि ते बाहु अने सुबाहु ए बेहुमुनिनो महिमा सांभलीने तेनी ईर्ष्या करता ह वा, हवे वज्रनाभनो जीव तो श्रीयुगादि देवआदिनाथ भगवान् थया. अने बी जा चार तो अनुक्रमें भरत अने बाहुबली तथा ब्राह्मी अने सुंदरीपणे आवी उत्पन्न थया. तेमां बाहुना जीवने भरतना भवमां परिपूर्ण भोगफल प्राप्त थयुं. अने सुबाहुना जीवने बाहुबलिना भवमां समग्र बाहु बल लन्यमान थयुं, एम तेउ साधुसेवा थकी उत्तमताने पाम्या ॥ ६६ ॥

धर्मःपुंप्रभवोयदेतदिदमेवार्योऽपिपूज्यापुन,र्यस्या
धर्मसमुद्भवा गुरुजनेष्वप्युन्नतिर्यत्पुरा ॥ सौनंदे
यनृपेऽन्निकासुतगुरौ श्रीचंदनायां न किं, ब्राह्मी पु
ष्पवतीसुता किलमृगावत्यप्यभून्मुक्तये ॥ ६७ ॥

अर्थः-(यत् के०) जे कारण माटे (पुंप्रभवः के०) पुरुषथकी छे उत्पत्ति जेनी एवो (धर्मः के०) धर्म, (एतत् के०) ए वात. (इदमेव के०) एमज छे. कहेलुं छे के “धम्मोपुरिसप्पभवो, पुरिमवरदेसिउ पुरिसजिहं” इत्यादि

सर्व ठेकाणे कहेलुं ठे. (पुनः के०) परंतु तेमां (आर्यापि के०) आर्या एटले तपोधना स्त्री ते पण (पूज्या के०) पूजवा लायक होय ठे. कारण के (यस्याः के०) जे आर्यानी (धर्मसमुद्भवा के०) धर्मथकी उत्पन्न थइ एवी (उन्नतिः के०) उन्नति एटले गुरुता ते (गुरुजनेष्वपि के०) गुरुजननेविषे पण मुक्तिने माटे थाय ठे. जुवो (यत् के०) जे कारण माटे (पुरा के०) पूर्वें (किल के०) निश्चें (सौनंदेयनृपे के०) सुनंदा पुत्र बाहुबलि राजानेविषे तातश्री ऋषजदेवजीयें प्रेरेली एवी (ब्राह्मी के०) ब्राह्मी बेहेन ते 'हेजाइ हाथी थकी हेठो उतरय' एवुं वाक्य कहेती ठती (मुक्तये के०) मुक्तिने माटे (अजूत् के०) थाती हवी. तथा (अन्निकासुतगुरौ के०) अन्निकापुत्र गणधरनेविषे (पुष्पवतीसुता के०) पुष्पवतीनी पुत्री पुष्पचूला साध्वी मुक्तिने माटे थइ तथा (श्रीचंदनायां के०) श्रीचंदनबाला साध्वीनेविषे (मृगावती के०) मृगावती साध्वी (किं के०) शुं (न के०) मुक्तिने माटे न थइ ? ना थइज ठे. अर्थात् साध्वीउ पण गुरुजननी मुक्तिने माटे साधनजूत थाय ठे ॥ ६७ ॥

आ श्लोकमां ब्राह्मी तथा पुष्पचूला अने मृगावती ए त्रणेनो दृष्टांत होवाथी त्रणेनी कथामां प्रथम ब्राह्मी साध्वीनी कथा कहे ठे. श्रीजरतचक्री पट् खंम पृथ्वी जीत्या, पण न्हाना जाइ बाहुबलीयें आज्ञा न मानी तेथी जरतचक्री पोताना जाइने जीतवानी इहाथी सैन्यसहित बाहुबलीनी तक्षशिलानगरीयें गयो. त्यां ते बेहु जाइने मोहोटुं युद्ध थयुं. अनेक मनुष्यनो संहार थयो. पठी इंद्रें आवी युद्ध बंध करावीने बाहुबलीनी साथें वाग्युद्ध, मुष्टियुद्ध, बाहुयुद्ध, दृष्टियुद्ध, अने दंमयुद्ध ए पांच युद्ध करवां ठेराव्यां, सर्व युद्धमां बाहुबलीयें जरतनो पराजय कर्यो. तेवारें जरत राजायें चक्र मुक्युं ते बाहुबली कुटुंबनो होवाथी तेने लाग्युं नही त्यारें बाहुबली मुष्टि उपाडीने जरतनी सन्मुख दोड्यो ते वली पोतेज विवेकें करीने ते मुष्टि जाइने मारी नही. परंतु उत्तम पुरुषनी मुष्टि पाठी फरे नही माटे वैराग्य पामी ते मुठीयें करी पोताना मस्तकना केशनो लोच करी पोतानी मेलें प्रव्रज्या ग्रहण करीने त्यांज कायोत्सर्ग करी रह्या. त्यां शीतोष्ण कष्टने सहन करता हता, ते वात जाणीने श्रीऋषजदेवजीयें महासती एवी बाहुबलीनी जगिनी ब्राह्मी हती तेने मोकली. ते बाहुबलीनी पासें आवीने कहेवा लागी के हे जाई ! गजथी हेठो उतरय. ते बाहुब

लीयें विचार करीने जोयुं तो जाण्युं जे आंहिं गज तो नथी पण तेनो कहे वानो अभिप्राय एवो छे के मानरूप गज थकी उतरव एम समजीने पछी माननो त्याग कस्यो तेवारें तुरत तेने केवल ज्ञान वर्ष प्रांतमां उत्पन्न थयुं.

हवे पुष्पचूलानी कथा कहे छे. पुष्पपुरने विषे पुष्पकेतुनामा राजा तेनी पुष्पवती नामनी राणी हती तेना पुत्रनुं नाम पुष्पचूल अने पुत्री नुं नाम पुष्पचूला पाडयुं, ते बेहुभाइ बेन युवावस्थाने प्राप्त थयां परस्पर स्नेह होवाथी बेहुनुं समान रूप जोइने राजायें विचार कस्यो जे बेहु जणा नो वियोग करीयें ते सारुं नही? माटे भाइ भगिनी बेहुनो परस्पर विवा ह कस्यो ते अधर्म तेनी माता पुष्पवती जोइ शकी नही तेथी दीक्षा लइ मरण पामीने देवता थइ. ते देवता ते बेहु जणने स्वप्नामां आवी अधर्मे करी थतां नरकनां दुःखो देखाडवा लागी. ते दुःखथकी बीहीती एवी पुष्प चूलायें वैराग्य पामीने अन्निकापुत्र आचार्यनी पासें जइने दीक्षा ग्रहण करी. ते आचार्य क्षीणजंघाबल होवाथी साध्वी आहार लावी आपती सा ध्वीने केवलज्ञान उपन्युं एकदिवस वर्षाकालें गुरुने माटे अन्न लावी त्यारें गुरुयें कह्युं के हे सति! अचित्त प्रदेशविषे अन्न लावता विराधना कां करे छे? त्यारें साध्वीयें कह्युं एमां विराधना थइ नथी त्यारे गुरुयें कह्युं के तें केम जाण्युं के आ अचित्त स्थल अने आ सचित्त स्थल कहेवाय? त्यारे पुष्पवती कहे छे के भगवन्! तमारा प्रसादथकी में जाण्युं. ते सांभली केवलज्ञान उपनुं जाणी मिथ्यादुष्कृत दइने गुरुयें पूछ्युं के मने केवल ज्ञान क्यारे उत्पन्न थशे. त्यारें तेणें कह्युं जे गंगा उतरतां तमने केवल ज्ञान उत्पन्न थाशे ते पछी नावें करी गंगाने उतरता एवा सूरिने पूर्वभवना वैरी देवता यें त्रिशूलें करीने मास्या, त्यां गुरुने ध्यान ध्यावतां अप्काय जीवोनी उ पर दया उत्पन्न थई ते दयायें करी केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. देवोयें केव लज्ञाननो महोत्सव कस्यो त्यां प्रयागनामा तीर्थ थयुं ते लोकमां अद्या पि प्रसिद्ध छे ॥ ए पुष्पचूलानो संबंध थयो.

हवे मृगावतीनी कथा कहे छे. कोशांबी नगरीनेविषे शतानीक नामा रा जा राज्य करे छे. तेनी पट्टराणी चेटक राजानी दीकरी मृगावती नामा हती. तेणें ज्यारें पोतानो स्वामी मरण पाम्यो तेवारें पोताना पुत्रने रा ज्य उपर स्थापीने पोतें वैराग्य पामीने श्रीवीरस्वामी पासें दीक्षा ग्रहण

करी. एकदा ते बीजी साध्वीयोनी सार्थे श्रीवीर भगवानने वांदवाने समवसरणमां आवी. ते दिवसें श्रीवीरभगवानने वांदवा माटे सूर्य चंद्र पण विमानसहित आवेला हता. तिहां बीजी साध्वीउ तो दिवस अस्त थया पहेलां पोताने उपाश्रयें आवीयो अने मृगावती तो चंद्रसूर्य स्वस्थाने गयानंतर अंधकारनो प्रसार थयो तेवारें उपाश्रयें आवी. त्यां चंदनबाला सुती हती ते तेने कहेवा लागी. के हे भद्रे ! तुं महोटा कुलमां उत्पन्न थयेली बो. तने रात्रिमां फरवुं योग्य नथी. एम शिक्षा करतां करतां चंदनबालाने निद्रा आवी, अने मृगावती तेना चरणमां मस्तक मूकीने कहेवा लागी के हे भद्रे ! क्षमा करो. एम क्षमा मागतां मागतां ते मृगावतीने केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. पढी चंदनबालाने पण मृगावतीने पगें पडतां क्षमा मागतां केवलज्ञान उत्पन्न थयुं ॥ ६७ ॥

किं पूज्या श्रमणी न सा श्रुतरसा डुर्बोधहृन्मोहहृन्,
मात्रासक्तकुबेरदत्तदयिता साध्वीवजातावधिः ॥ धन्या
एव चिरंतना व्रतधना अप्याधुनिक्यः शुभा, याकि
न्याहरिभद्रवादि मुकुटः सोऽबोधिवाङ्मात्रतः ॥ ६८ ॥

अर्थः-(किं के०) शुं (सा के०) ते (श्रुतरसा के०) सांजव्यो बे शास्त्ररस जेणे एवी (श्रमणी के०) साध्वी (न पूज्या के०) पूजवा लायक नथी. ना बेज. कारण के जुवो (डुर्बोधहृत् के०) माठा बोधने हरण करनार, तथा (मोहहृत् के०) मोहने हरण करनार. एवी (मात्रासक्त कुबेरदत्तदयिता के०) मातानेविषे आसक्त एवो जे कुबेरदत्त तेनी दयिता एवी जे कुबेरदत्ता ते (जातावधिः के०) उत्पन्न थयुं बे अवधिज्ञान जेने एवी (साध्वी इव के०) साध्वी जे बे तेनी पेरें केम पूजवा योग्य थाय नहीं अर्थात् थायज. वली (आधुनिक्यः के०) आधुनिक एवी अने (शुभाः के०) पवित्र एवी (चिरंतनाः के०) घणा कालनी (व्रत धनाः के०) व्रतरूप बे धन जेने एवी साध्वी (धन्याःएव के०) धन्यज जाणवी. जुवो (याकिन्या के०) याकिनी नामा साध्वीयें (सः के०) ते (हरिभद्रवादिमुकुटः के०) वादकरनाराउनेविषे मुकुटसमान एवा जे श्रीहरिभद्रसूरि, तेने (वाङ्मात्रतः के०) एक गाथामात्रेकरीने (बोधितः के०)

बोध पमाड्यो. माटे साध्वीथी पण मोहोटा पुरुषोने ज्ञान प्राप्त थाय छे.

आ श्लोकमां कुबेरदत्तानो तथा याकिनी साध्वीनो दृष्टांत होवाथी प्रथम कुबेरदत्तानी कथा कहे छे. मथुरा नगरीनेविषे वसंततिलका नामा एक वारांगना रहे छे. एकदिवस ते वारांगनाने बे बालक उत्पन्न थयां के तुरत पोतानी नामांकित मुद्रिका सहवर्त्तमान पेटीमां नाखी पेटीने यमुनामां तरती मूकी, तेमां छोकरो तथा छोकरी हती पछी तरती तरती ते पेटी शौर्यपुरमां गइ. ते शौर्यपुरना बे वेपारी हता तेने ते पेटी मली तेमांथी एक पुत्र, अने एक पुत्री अतिस्वरूपवान मल्यां, तेवारें बेहुजणने संतान न होवाथी एकें कन्या लीधी अने एकजणे पुत्र लीधो ते बेहु वेपारीयें ते बेहु भाइबेननो विवाह कर्यो पछी एक दिवस कुबेरदत्तायें पोतानी तथा पोताना भाइनी मुद्रिका जोइने समानता देखीने विचार्यु जे अमो बे भाइ बेन छैयें एम जाणवाथी कुबेरदत्तने कह्या विना एकदम दीक्षाग्रहण करी. एकदा कुबेरदत्त वेपारने माटें मथुरामां ज्यां पोतानी माता गणिका रहेछे त्यां आव्यो. तेणे पोतानी माताने गणिका जाणी भोगववा मांडी. तेथकी तेने एक पुत्र उत्पन्न थयो. तदनंतर कुबेरदत्ता साध्वीने अवधिज्ञान उत्पन्न थवाथी ते त्यां आवीने ते सुतेला बालकने अढार नात्रां थयां ते प्रकट करवामाटें रमाडवा लागी अने हिंचको नाखतां केहेवा लागी के हे पुत्र! सांभल्य ॥ श्लोक ॥ भ्रातासि तनुजन्मासि, वरस्यावरजोपि च ॥ भ्रातृव्योसिपितृव्योसि, पुत्रपुत्रोसि चार्भक ॥१॥ यश्च ते बालकपिता, समे भवति सोदरः ॥ पिता पितामहो भर्त्ता, तनयः श्वसुरोपि च ॥२॥ याच बालक ते माता, सा मे मातापितामही ॥ भ्रातृजायावधूःश्वश्रूःसपत्नीचभवत्यहो ॥ ३ ॥ आ श्लोकनो भावार्थः– तुं म्हारो भाइ, पुत्र, देर, भत्रीजो, काको, दीकरानो दीकरो, थाय छे अने हे अर्भक! ताहरो जे बाप ते माहरो भाइ थाय छे. पिता थाय छे, पितामह थाय छे, स्वामी थाय छे, पुत्र थाय छे, अने श्वसुर पण थाय छे. वली हे बालक!! जे तारी माता ते माहरी माता तथा पितामही थाय छे. अने भाइनी वहु थाय छे. वहु थाय छे. सासु थाय छे अने शोक्य थाय छे आम अढार संबंध कह्या. ते सांभली कुबेरदत्त नीचें आवीने पूछवा लाग्यो के हे साध्वी! आ शुं कहो छो अने तमे कोण छो? त्यारें साध्वीयें सर्व बनेलो

संबंध कही आप्यो, ते सांजली कुबेरदत्तने वैराग्य उपन्यो तेवारें संसार छोडी दीक्षा ग्रहण करी. स्वर्गने प्राप्त थयो.

हवे याकिनी साध्वीनी कथा कहे छे. नफूलकपुरनेविषे चउद विद्याने जाणनारो अनेक वादनेविषे महा प्राज्ञ एवो हरिजद्रनामा जट्ट रहेतो हतो,तेनी एवी प्रतिज्ञा हती के जेनुं कहेलुं हुं न जाणुं, तेनो हुं शिष्य थाउं. एक दिवस ते हरिजद्र नामा जट्ट, साध्वीनी शाला प्रत्यें जाता हता, तेवामां महासती एवी याकिनीयें कहेली एवी गाथा सांजली ते जेम के ॥ गाहा ॥ चक्किडुगं हरिपणगं, पणगं चक्कीण केसवो चक्की ॥ केसवचक्की केसव, डुचक्कि केसीय चक्कीय ॥ १ ॥ आ गाथा सांजली तेनो अर्थ न जाणता हरिजद्रसूरियें पूछ्युं, हे आर्ये! चाकचक्य बहु ए गाथामां करेलुं जासे छे. त्यारें ते आर्यायें कह्युं के नवीनलिपित जूमिनेविषे चाकचक्य थाय छे. ते पछी वाणीयें करी छलेला जाणीने गाथाना अर्थनुं अविज्ञातत्व जाणीने हरिजद्र जट्ट साध्वीने पगे लागीने कहेवा लाग्यो के हे साध्वी! तमे मने शिष्य करो पछी ते साध्वीयें तेने आचार्यनी पासे दीक्षा अपावी. अनुक्रमें ते श्रीहरिजद्रसूरि, याकिनीपुत्र नामनुं विरुद धारण करनारा थया. एमणे चौदशें चुम्मालीश प्रकरण कर्यां श्रीजिनशासनमां महाप्राजाविक थया.

अकृत जरतचक्रीविश्वसाधर्मिकार्चां, कुरुत तदनुमा
नाच्छ्रेयसेऽत्रोद्यमं तत् ॥ यदिसकलधरित्रीं प्रीणयत्यं
बुवाहः, किमु न तदरघट्टःक्षेत्रमात्रं पृणातु ॥ ६ए ॥

अर्थः—(जरतचक्री के०) जरत चक्रवर्त्ती (विश्वसाधर्मिकार्चां के०) सर्व साधर्मिक जाइउनी अर्चाने (अकृत के०) करता हता, (तत् के०) तेमाटे (तदनुमानात् के०) तेना अनुमानथी (अत्र के०) आंहीं साधर्मिकना वात्सल्यने विषे (श्रेयसे के०) मोक्षरूप कल्याण माटें (उद्यमं के०) उद्यमने हे जव्यजनो! (कुरुत के०) करो. जुवो (यदि के०) जो (अंबुवाहः के०) मेघ, (सकलधरित्रीं के०) सर्व पृथ्वीने (प्रीणयति के०) पूरे छे (तत के०) त्यारे (अरघट्टः के०) अरहट्ट (क्षेत्रमात्रं के०) क्षेत्रमात्रने (किमु के०) शुं (नपृणातु के०) न पूर्ण करे? करेज अर्थात् जर

तचक्रवर्त्तियें सर्व साधर्मीनुं पोषण कर्युं तेथी आपणथी तेटलुं न बने तो यथाशक्तिपणें साधर्मी वात्सल्य करवुं जेम वरसाद तो आखी पृथ्वीने तृप्त करे ले, परंतु अर्हट्ट जे ले ते पण एक क्षेत्रने तृप्त करे ले ॥ ६ए ॥

आंहिं भरतचक्रवर्त्तीनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ले. अयोध्या नगरीनेविषे भरतचक्रवर्त्ती राज्य करे ले. एक दिवस श्रीऋषभदेवजी चोराशी हजार साधुयें युक्त उद्यानमां समोसस्या. तेनी भरतचक्रवर्त्तीने खबर पडवाथी अशन, पान, खादिम, स्वादिमनां सहस्रशकट भरीने समवसरणनेविषे गया. स्वामीने वंदन करीने भरतचक्रवर्त्तीयें कह्युं के स्वामिन्! आ सर्व अन्नपानादि साधुना पारणाने माटे ग्रहण करो. त्यारे स्वामीयें कह्युं के आ अन्नादिकमां घणाज दोषो ले, एकतो आंहि लाव्यो तेमां जीव हिंसा दोष, बीजो अन्याहृत दोष, त्रीजो राजपिंम दोष, एम अनेक दोषो ले माटें ए अमारे सर्वथा कल्पे नहिं. ते सांभली भरत राजा अत्यंत पश्चात्ताप करवा लाग्यो. त्यारें स्वामीयें कह्युं के मध्यम पात्र श्रावको ले, माटें ते साधर्मिक ले तेथी श्रावकोनी भक्ति तुं कस्य. पढी ते भरतचक्रवर्त्तीयें सर्वत्र उद्घोषण देवरावी जे सर्व श्रावकोयें माहरें घेर जमवुं. अने रसोयाउनें पण कह्युं के जे श्रावक आवे तेउने भोजन करावजो. एम करवाथी सर्व लोको त्यांज जमवा लाग्या. पढी रसोया थाकी जवाथी भागी गया. चक्रवर्त्तियें जाण्युं जे आ तो सर्व जण भोजन करवा आवे ले, माटें श्रावकनी परीक्षा करीने पढी जमाडवा अने तेने कांइक चिन्ह करवुं एम विचारीने चक्रवर्त्तियें श्रावकनी परीक्षा करी तेमना कंठमां काकिणी रत्नें करी त्रण रेखा करी. एम ल ल मासें परीक्षा करवा मांमी. तेथी श्रावकनी अने बीजानी व्यक्ति थवा लागी. एवी रीतें भरतचक्रवर्त्तियें साधर्मीवात्सल्य कर्युं.

श्राद्धानां सडपासका बहुमताएवैकधर्मत्वतः, साधूनामपिजातु गौरवपदं वीतस्पृहाणाममी ॥ रुग्नाशाउपसर्गहृत्स्तवनतःश्रीभद्रबाहोर्यथा, चंद्रार्कोद्भवउत्तमेषु सहजंविश्वोपकारिव्रतं ॥७०॥

अर्थः-(सडपासकाः के०) श्रेष्ठ उपासना करनारा (एकधर्मत्वतः के०) एक धर्मपणाथी एटले साधर्मिपणाथी (श्राद्धानां के०) श्रावकाने (बहुमताएव के०) अति अभीष्ट एवाज (अमी के०) आ उपास

को (जातु के०) कोइ समये (वीतस्पृहाणां के०) निःस्पृह एवा (साधूनामपि के०) साधुउने पण (गौरवपदं के०) गौरवना स्थानरूप (नवंति के०) थाय ठे. (यथा के०) जेम (श्रीनद्रबाहोः के०) श्रीनद्रबाहुना उपासको (रुग्नाशात् के०) रोगने नाश करनार एवा (उपसर्गहृत्स्तवनतः के०) उपसर्गहर स्तोत्रथी गौरवताना स्थानरूप थया तथा (उत्तमेषु के०) उत्तम पुरुषोने विषे (चंद्रार्काब्दवत् के०) चंद्र सूर्य अने मेघनी पेठें (सहजं व्रतं के०) स्वाजाविक व्रत जे ठे ते (विश्वोपकारि के०) विश्वनो उपकार करनार ठे. अर्थात् जेम सूर्य, चंद्र अने मेघ ए त्रणे स्वजावेज परोपकारी ठे तेम उत्तम जननेविषे पण विश्वने उपकार करनारुं एवुं व्रत स्वाजाविक होय ठे एम जाणी लेवुं ॥ ७० ॥

आ श्लोकमां नद्रबाहुनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ठे. पोलासपुरनगरनेविषे सोमदत्त ब्राह्मणना पुत्र नद्रबाहु अने वाराहमिहर नामे बे नाइ हता. तेणें एकदा गुरुनी वाणी सांजली वैराग्य पामी दीक्षा लीधी बेहु नाइ सर्व शास्त्रना जाणनारा थया. तेमां नद्रबाहुने अधिक गुणवालो जाणी गुरुयें आचार्यपद आप्युं.तेथी वाराहमिहर खेद पामीने दीक्षानो त्याग करी पुनः संसारासक्त थयो. एक दिवस वाराहमिहरें राजा पासें आवी कह्युं के, आ कुंमालानेविषे बावन पलनुं मत्स्य आकाशमांथी पडशे अने श्रीनद्रबाहु गुरुयें कह्युं के कुंमथकी बाहेर पडशे. तेवार पठी श्रीनद्रबाहुयें जेम कह्युं हतुं तेज प्रमाणें थयुं. एक दिवस वाराहमिहिरें राजाना पुत्रनुं आयुर्दा सोवर्षनुं वरत्युं अने कह्युं के तमारो पुत्र सो वर्ष जीवशे. त्यारें नद्रबाहु गुरुयें कह्युं के ए सात दिवसज जीवशे अने मार्जारीथकी मरण पामशे तो ते त्रण गुरुना कहेवा प्रमाणेज थयुं. एम स्थानकें स्थानकें वाराहमिहिरने श्रीनद्रबाहुयें जीत्यो. तदनंतर थोडोक काल रहीने वाराहमिहिर मरण पामीने व्यंतर थयो. ते साधुश्रावक वगेरेने महामारीनो उपद्रव करवा लाग्यो संघें आवीने श्रीनद्रबाहुस्वामीने कह्युं के संघमां मनुष्य मरण पामे ठे ? ते सांजली गुरुयें उपसर्गहर स्तोत्र रचीने आप्युं तेनो पाठ करवाथी मारीनो उपद्रव शांत थयो धरणेंद्रें श्रीगुरुनी पासेंथी ठठी गाथा जंमारें मूकावीने कह्युं के एटलाथीज हुं महारे थानके रहीने सर्वने सान्निध्य करीश ॥७०॥

स्त्रीपुंसोप्यधिका त्रिपक्षविशदा पुंरत्नखानिर्यतः, स्वा
मिन्या मरुदेवया तु सदृशी नूता नभाविन्यपि ॥ वि
श्वार्यौ जिनचक्रिणौ प्रथमतो यत्पुत्रपौत्रावहो, याप्रागे
व शुभेह्नयभूच्छिवपुरप्रस्थानकस्था प्रभोः ॥ ७१ ॥

अर्थः– (पुंसःअपिअधिका के०) पुरुष थकी पण अधिक एवी तथा जे (त्रिपक्षविशदा के०) मातृपक्ष, पितृपक्ष, अने श्वसुरपक्ष, एवा त्रणे पक्षोयें करी निर्मल, एवी वली (यतः के०) जे कारण माटे (स्त्री के०) ते स्त्री (पुंरत्नखानिः के०) पुरुष रूप रत्ननी खाण एवी (मरुदेवया के०) मरुदेवा (स्वामिन्या के०) स्वामिनी (सदृशी के०) सरखी कोइ पण (नभूता के०) नथी थइ तथा (नभाविनीअपि के०) थवानी पण कोइ नथी. वली (अहो के०) आश्चर्यें (यत्पुत्रपौत्रौ के०) जे मरुदेवीना पुत्र श्रीऋषभदेव अने पौत्रा श्रीभरत ते केवा छे तो के (विश्वार्यौ के०) सर्व विश्वमां आर्य छे तथा वली कहेवा छे तो के (जिनचक्रिणौ के०) ए श्रीऋषभदेव जिनेश्वर तीर्थंकर थया छे तथा बीजा श्रीभरत ते चक्रवर्त्ती थया छे. वली (या के०) जे मरुदेवी (प्रभोः के०) श्रीऋषभदेव तीर्थंकरनी (प्रागेव के०) प्रथमज (शुभेह्नि के०) शुभदिवसनेविषे (शिवपुरप्रस्थानकस्था के०) शिवपुर प्रत्यें प्रस्थानने विषे रहेनारां (अभूत् के०) थतां हवां. जेम बीजो कोइ पुरुष पण महोटा कार्यने माटे जती वखतें प्रथमथी प्रस्थान मूके छे तेम ज्यां भगवान् श्रीऋषभदेवजी शिवपुर प्रत्यें आवनार छे तेना प्रस्थानने माटे प्रथमथी श्रीमरुदेवी माताजी पोतेंज प्रस्थाननेविषे रहेतां हवां. एवी स्त्री जगत्मां उत्तम जाणवी ॥ ७१ ॥

आ श्लोकमां मरुदेवीनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. अयोध्यानेविषे नाभिराजानी स्त्री मरुदेवीजीना पुत्र श्रीऋषभ देवजी हता तेमणे पोताना सो पुत्रने राज्य आपी दीक्षा ग्रहण करी पछी पोताना पुत्रना दुःखें करीने मरुदेवीनां चक्षुने पडल आव्यां ते ज्यारें ऋषभदेवजीने पुरिमतालनेविषे वडनी नीचें केवलज्ञान उत्पन्न थयुं, त्यारें तेमना पुत्र भरत चक्रवर्त्ती मरुदेवीजीने हस्तीउपर बेसारीने श्रीऋषभदेवजीने वंदन करवा गया त्यां श्रीऋषभदेवजीनी वाणी सांभलीने मरुदेवि माताने हर्ष उ

त्पन्न थयो तेथी आंखनां पडल उघडी गयां. त्यां पोताना पुत्रनी समृद्धि जो इने पोताने पण केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं तरत मुक्तिने पामतां हवां ॥७१॥

या श्राविकाप्यमलशीलपवित्रितांगी, सा श्लाघ्यतेत्रि
भुवनेऽपि यथा सुभद्रा ॥ यस्यास्त्रिवारिचुलकाहित
लोकतुष्टेः स्रोतःसहस्रकृतमुत्सदृशी क्व गंगा ॥ ७२ ॥

अर्थः—(या के०) जे (अमलशीलपवित्रितांगी के०) निर्मल एवा शीलें करी पवित्रित छे अंग जेनां एवी (श्राविका के०) श्राविका छे (साऽपि के०) ते पण (त्रिभुवनेपि के०) त्रण भुवननेविषेपण (श्लाघ्यते के०) वखणाय छे. केनी पेठे ? तो के (सुभद्रा यथा के०) सुभद्रा श्राविका छे तेज जेम ? वली (त्रिवारिचुलकाहितलोकतुष्टेः के०) पाणीनी त्रण अंजलिने छांटवेकरीने करी छे सर्वलोकनी तुष्टि जेणें एवी (यस्याः के०) जे सुभद्रा श्राविका ते (सदृशी के०) समान (गंगा के०) गंगानदी (क्व के०) क्यांथी होय ? अर्थात् नज होय. कारण के सुभद्रा श्राविकायें तो त्रण अंजलिथी त्रण द्वार उघाड्यां अने गंगा नदी तो वली (स्रोतःसहस्रकृतमुत् के०) पोताना हजारो पाणीना प्रवाहोयें करी लोकोने हर्ष देनारी थाय छे अर्थात् सहस्रप्रवाहें करी जगत्नुं कल्याण करे छे अने आ सुभद्रा श्राविका तो पाणीनी त्रण अंजलियेंज जगतने संतोष दायक थइ छे माटे गंगाथकी सुभद्रा श्राविका अधिक छे ॥ ७२ ॥

आहिं सुभद्रानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे.. चंपापुरीनेविषे जिनदत्तनामा श्रेष्ठी रहे छे. तेनी दीकरी परम जैनधर्म पालनारी सुभद्रा नामें हती ते बौद्धना भक्त बुद्धदास नामा व्यवहारीना पुत्रनी सार्थे परणी. एकदा सुभद्राने घेर कोइ जिनकल्पी साधु आव्या. ते साधुनी आंखमां घासनुं फोतरुं पडेलुं हतुं तेने जिह्वायें करी लइ लीधुं. तेवारे सुभद्राना कपालमां सिंदूरनुं तिलक हतुं ते मुख अडवाथी साधुना भालमां सिंदूर लागी गयो, हवे ते सुभद्रानी नणंद महा दुष्ट हती तेणे पोताना भाइने कह्युं के भाइ ! आ मारी भाभीने में साधुसाथें संग करतां नजरें जोइ, ते जो खोटुं मानोतो जुवो आ मारी भाभीना कपालमां लगावेलो सिंदूर ते एक बीजाना मुखे मुख मलवाथकी साधुने लाग्यो छे ते वात सांभलीने

जुवे तो साधुने कपालें सिंदूर लागेलो दीठो. के तरत ते सुभद्राने असती मानीने तेना स्वामीयें तेनो त्याग कर्यो पछी सुभद्रा कायोत्सर्ग करवा बेठी तेवारे शासनसुरी प्रगट थइने कहेवा लागी के हे सुभद्रे ! तारुं कलं क हुं उतारीश तेनी तुं चिंता करीश नहिं एम कही गामना त्रणे दरवाजा ना बारणां ते शासनदेवीयें कोइथकी न उघडे एवां कमाड बंध करी दीधां. राजायें बीजा उपाय करवा मांड्या तेवारें आकाशमांथी शासनदेवीयें कह्युं के जो कोइ सती काचा सूतरना तांतणायें बांधेली चारणीएं करी सि चेलो जल द्वारने छांटे, तो ते द्वार उघडे, परंतु बीजा कोइ उपायथी उ घडे तेम नथी. पछी गाममां जे सती स्त्रीयो हती ते सर्वेने राजायें बोला वी अने तेमने काचे तांतणे चारणीयो बांधी कूवामांथी जल काढवानो ठेराव कर्यो परंतु कोइथी ते बन्युं नहिं एम सर्व सतीनो मदभंग थयो. त्यारे सुभद्रा पोताना सतीपणानी परीक्षा देवा माटे त्यां आवी काचे तां तणे बांधेली चारणीयें करी कुवामांथी जल काढ्युं काढीने त्रणे दरवाजा उपर एक एक छांट जलनी नाखी के तरत ते त्रणे दरवाजानां कमाड उ घाड्यां अने कदापि कोइ बीजी स्त्री कहे के ए रीतें तो हुं पण उघाडी आपुं तो तेने उघाडवा माटे एक दरवाजो रहेवा दीधो ॥ ७२ ॥

पुष्पाक्षताद्भुतगुणस्तवनादिभेदात्,त्रैविध्यतःप्रति
दिनंजिनपादपूजा॥ श्रीश्रेणिकादिजनवज्जिनतादि
दत्ते, चक्रादयःकलशतामिवभृद्दलस्य ॥ ७३ ॥

अर्थः–(पुष्पाक्षताद्भुतगुणस्तवनादिभेदात् के०) पुष्प, अक्षत, अद्भु त एवा गुण स्तवनादिक तेना भेदें करीने (प्रतिदिनं के०) प्रति दिवस, (जिनपादपूजा के०) जिनभगवानना पगनी पूजा (त्रैविध्यतः के०) त्रणे प्रकारें करी करवी. आ ठेकाणे आदिशब्द प्रत्येक भेदें जाणवो. जेम के पुष्प ते त्यां पुष्पादि, अक्षत ते त्यां अक्षतादि, स्तवन ते त्यां स्तवनादि एम आ दिशब्द लेवो अने जे देह उपर चढे छे ते पुष्पादि पूजा जाणवी. अने जे देवनी पासें मूकीयें ते अक्षतादि पूजा जाणवी अने जे गीतनाटक करियें ते पूजा स्तवनादिकमां जाणवी. ए पूजाना त्रण प्रकार जाणवा. ते जिनपू जा (श्रीश्रेणिकादिजनवज्जिनतादि के०) श्रीश्रेणिकादि राजानी पेठे तीर्थंक

रादिक पदवीने (दत्ते के०) आपे छे. आहिं आदिशब्दें करी वासुदेव, बल देव राज्यादिक पण लेवां एटले जिनपूजा करनारने ए सर्व पदवी प्राप्त था य छे. केनी पेरें. तो के (मृद्दलस्य के०) मृत्तिकाना दलना (चक्रादयः के०) चक्र, लाकडी, दोरडी, कुंनारप्रमुख जेछे, ते (कलशतामिव के०) कुंनादिक ने जेम आपे छे. तेम जिनपूजा पण तीर्थंकरादिकपणाने आपे छे ॥७३॥

आ ठेकाणे श्रेणिक राजानो दृष्टांत होवाथी पूर्वें श्रेणिक राजानी कथा कही छे तो पण फरीने किंचित्मात्र कथा कहे छे. श्रेणिक नामा राजा प रम जैनी क्षायिक सम्यक्त्वने धारण करनारो हतो त्रण काल श्रीजिनज गवाननुं पूजन करतो हतो. ते राजा प्रति दिवस एकशो आठ सोनाना य वोयें करी श्रीजिननगवाननी पासें स्वस्तिक पूरतो हतो. ए प्रकारनी श्री जिननक्तियें करी तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन ते राजायें कर्युं. ॥ ७३ ॥

स्याज्जिनार्चनकृतस्त्रिकशुध्द्या, शंविपद्यपियथा दवदंत्याः ॥
स्वस्तरुःफलति किं नहिरोरे, नेंऽरस्यतितृषंचचकोरे ॥ ७४ ॥

अर्थः-(त्रिकशुध्द्या के०) मन, वचन अने कायानी शुद्धियें करी (जि नार्चनकृतः के०) जिननुं अर्चन करनारने (विपद्यपि के०) विपत्तिने वि पे पण (शं के०) सुख (स्यात् के०) होय. केनी पेरे ? तो के (दवदं त्याःयथा के०) दवदंतीनी पेठे जेम (रोरे के०)दारिद्र्येंकरी परानव पामेला एवा पुरुषने विषे (स्वस्तरुः के०) कल्पवृक्ष (किं के०) शुं (नहिफलति के०) नथी फलतो ना फलेज छे. (च के०) वली (इंडुः के०) चंद्रमा, (चकोरे के०) चकोर पक्षीने विषे (तृषं के०) तृष्णाने (न अस्यति के०) नथी फेंकतो ? अर्थात् फेंकेज छे ॥ ७४ ॥

आहीं दृष्टांतमां दवदंतीनी कथा कहे छे. अष्टापद पर्वतनी पासें धन्य नामा गाम छे. तेनो मम्मण नामें राजा हतो, तेनी वीरमती नामें स्त्री हती. एक दिवस ते राजा आयडो करवा नीकल्यो तेने जैनसाधु सामो मलवाथी अपशुकन थयुं एम मानीने ते साधुने पकडीने बार प्रहर राख्यो पछी वीरमतीयें राजाने समजावीनें ते साधुने छोडाव्यो. साधुयें धर्मोपदे श दीधो वीरमती श्राविका थइ पांचशें आंबिल कर्यां वली अष्टापद ऊपर जइने चोवीश जिननगवानने मणिमय तिलक कराव्यां. ते पछी ते वीरमती

मरण पामीने कुंमिनपुरनेविषे श्रीभीमनृपनी कन्या दवदंती नामें थइ. म म्मणनो जीव नल राजा थयो. ते दवदंतीने परण्यो ते दवदंतीना कपाल मां जन्मतांज स्वाभाविक रविमंमल जेम शोभे तेवुं देदीप्यमान तिलक थइ रह्युं हतुं. एकदा जुगारें रमता नलराजा राज्यादिक सर्व हार्या. बार व रस ते स्त्री पुरुषने परस्पर वियोग रह्यो. दवदंतीने स्थानस्थानमां विकट डुःखो आव्यां हतां ते सर्व जिन अर्चनना प्रभावथकी लय थइ गयां बार वरसना अंतमां नलराजाने फरीने राज्य प्राप्त थयुं. इति जिनपूजनाधिकार.

श्रीरामवद्भोनयएव सेव्यः, प्रजानुरागव्रतवित्तमूलं ॥ कोद
क्षिणावर्त्तमुपेत्यशंखं, त्यजेन्मुधाश्यामलचित्रकंवा ॥ ७५ ॥

अर्थः—(भो के०) हे भव्यजनो ! (प्रजानुरागव्रतवित्तमूलं के०) प्रजाने विषे अनुरागप्रतीति, व्रत, आचार, अने ड्रव्यना मूलरूप एवो (नयःएव के०) न्याय तेज (श्रीरामवत् के०) श्रीरामचंड्रनी पेठे (सेव्यः के०) सेववा योग्य छे. त्यां दृष्टांत कहे छे के (मुधा के०) खोटा एवा (श्यामलचित्रकं के०) काली चित्र वल्लीरूप कोडाने (उपेत्य के०) पामीने (दक्षिणावर्त्त के०) दक्षिणावर्त्त नामना (शंखं के०) शंखने (कःवा के०) कयो पुरुष, (त्यजेत् के०) त्याग करे ? कोइ त्याग करे नही ॥ ७५ ॥

आ ठेकाणे श्रीरामनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा प्रसिद्ध छे तो पण कहे छे. कौशला नगरीनेविषे रामचंड्रजी राज्यने भोगवे छे तेनी पट्टराणी सीताजी हतां, ते रामना भाइ लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, एवे नामें हता. बा पनी आज्ञाथी राज्यनो त्याग करीने बार वरस वनवास भोगव्यो. न्याय मार्गने अनुसरी रावण प्रतिवासुदेवने मारीने तेणे हरण करीने लइ गयेली निष्कलंक एवी पोतानी स्त्री सीताने पाठी वाली. ते पठी दशहजार वरस पर्यंत न्यायें राज्य भोगव्युं, लोकमां पण सारुं देखतुं राज्य होय तो राम राज छे एम अद्यापि पर्यंत ख्याति छे एवुं राज्य चलाव्युं ॥ ७५ ॥

मनसि वचसि शश्वतन्यायएवोत्तमानां, यदमरवर
लभ्या पारदारिक्यचौर्ये ॥ अनुविपयमरोत्सीत्चक्र
भृद्ब्रह्मदत्तः, क्वसुरसरितिपंकः क्वेशचंडे कलंकः ॥७६॥

अर्थः—(मनसि के०) मनने विषे (वचसि के०) वाणीने विषे (शश्व

तू के०) निरंतर (उत्तमानां के०) उत्तमोने (न्यायएव के०) न्यायज योग्य छे. (यत् के०) जे कारण माटे (अमरवरलब्ध्या के०) प्रधानदेवतानी प्राप्तियें करी (पारदारिक्यचौर्य के०) परदारानी चोरीना कार्यने (अनुविषयं के०) देशदेश प्रत्यें (चक्रभृत् ब्रह्मदत्तः के०) ब्रह्मदत्त नामा चक्रवर्त्ती (अरौत्सीत् के०) निवारण करतो हवो. त्यां दृष्टांत कहे छे. के जेम (सुरसरिति के०) स्वर्गगंगाने विषे (पंकः के०) कचरो (क के०) क्यांथी होय, तथा (ईशचंद्रे के०) शंकरना शिर उपर रहेला चंद्रने विषे (कलंकः के०) कलंक ते (क के०) क्यांथी होय. ना नज होय ॥ ७६ ॥

आंहिं ब्रह्मदत्तचक्रवर्त्तीनी कथा कहे छे. ब्रह्मदत्तें वनने विषे कोइक देवतानी स्त्रीने कोइ पुरुष साथें रमती जोइने ते स्त्री पुरुष बेहुनुं ताडन कर्युं. ते स्त्री त्यांथी जइने पोताना स्वामी प्रत्यें कहेवा लागी के हे स्वामिनाथ ! मने आवी रीतें ब्रह्मदत्तचक्रीयें मारी,पछी तेना पति नागकुमार देवने सहेज तरतज कोप चड्यो, अने तरत त्यां आव्यो. ते वखतें ते ब्रह्मदत्त चक्री पोतानी स्त्रीने घरमां कहेतो हतो के हे स्त्री ! में कोइ स्त्रीने कुकर्म करती जोइने मार मार्यो छे,ते वाक्य सांभलतांज नागकुमार देव प्रसन्न थयो थको प्रगट थइने कहेवा लाग्यो के हे राजन् ! वरदान मागो. त्यारें ब्रह्मदत्तें कह्युं के तमें अवधिज्ञानथी सर्व वात जाणो छो, माटे मारा देशमां परस्त्रीनी चोरी जो थाय, तो मने आवीने कहेवुं,तेने हुं शिक्षा आपीश. ए वरदान मागुं छुं. पछी ते प्रमाणें ते देवें कर्युं अने ब्रह्मदत्तचक्रवर्त्तीयें पण तेमज कर्युं ॥ ७६॥

विद्याविभूतिमहिमव्रतधर्म्ममोक्ष, संपत्तये विनय
एव विभुः किमन्यैः॥ किं किं नमिः सविनमिर्जिनतो
न लेभे, पूज्यांघ्रिरेणुरपि पश्य नमस्यएव ॥ ७७ ॥

अर्थः-(विद्या के०) विद्या, (विभूति के०) लक्ष्मी वा संपत्ति, (महिम के०) महिमा (व्रत के०) व्रत, (धर्म के०) धर्म, (मोक्ष के०) मोक्ष तेनी (संपत्तये के०) संपत्तिने माटे (विनयएवविभुः के०) विनय तेज समर्थ छे. (अन्यैःकिं के०) बीजाउयें करीने शुं ? (सविनमिः के०) ते विनमियें सहित एवो (नमिः के०) नमि ते (जिनतः के०) श्रीऋषभदेव तीर्थंकरथकी (किंकिं के०) शुं शुं. (न लेभे के०) न पामतो हवो. अर्थात्

सर्व राज्यादि लक्ष्मीने प्राप्त थतो हवोज. माटे (पञ्य के०) हे भव्यजन ! जुवो. (पूज्यांघ्रिरेणुरपि के०) पूज्य एवा तीर्थंकरना चरणनी रज पण (नमस्यएव के०) नमन करवा योग्यज छे माटे विनय राखवो ॥ ७७ ॥

आहिं नमि विनमिनी कथा कहे छे. नमि अने विनमि बे क्षत्रिय ते कछ महाकछना पुत्र ते श्रीऋषभदेवजीना अंगरक्षक होता हवा, ते बेहु कोइक कार्यने विषे देशांतर गया. तदनंतर श्रीऋषभदेव स्वामीयें दीक्षा ग्रहण करी पछी, ते जेवारें पाछा आव्या तेवारें स्वामी ज्यां विहार करे, त्यां साथें फरता रहे. प्रातःकालमां श्रीऋषभदेवजीना चरणने कमलें करी पूजीने कहे के हे स्वामी ! राज्य देनारा थाजो. एम मागता हता. एक दिवस धरणेंद्र, श्रीऋषभदेवना वंदन माटे आव्यो ते बेहु जणने जोइने कहेवा लाग्यो. के तमो बेहु भरतचक्रवर्त्ती पासें जाउ ते तमोने राज्य आपशे. त्यारे तेणें कह्युं के शुं ऋषभदेवजी नहिं आपे ? वचमां तमारे बोलवानुं शुं काम छे ? तमारे जावुं होय तो जाउ. अमोने तो ज्यारें स्वामी राज्य आपशे, तेवारें लेशुं. अमारे कांइ भरतनी साथें प्रयोजन नथी.ते सांभली धरणेंद्रें तुष्टमान थइने चोराशी हजार विद्याउ आपी. अने वैताढ्य पर्वतने विषे दक्षिण श्रेणी अने उत्तर श्रेणीनुं राज्य वेंचीने बेहु भाइउने धरणेंद्रें आप्युं, ते तेणें लीधुं ॥ ७७ ॥

किं मर्त्यैस्त्रिदशोप्यपास्तविनयोम्लानेः सहानेः पदं,
यक्षोहुड्डकरः किमार्यखपुटाचार्येण ना शिक्षितः ॥
किंवा विष्णुकुमारतोन नमुचिर्मृत्वाऽगमदुर्गतिं,नद्यो
घरस्त[illegible]मुन्नतं रुजति वा नम्रं तु नो वेतसम् ॥ ७८ ॥

अर्थः–(अ[illegible]स्तविनयः के०) त्याग कर्यो छे विनय जेणें एवो (त्रिदशोपि के०) देव[illegible] पण (सहानेः के०) हानियें सहित एवा (म्लानेः के०) पराभवनुं ([illegible] के०) स्थानक थाय. जुवो (हुड्डकरः के०) हुड्डकर नामा (यक्षः क[illegible]) यक्ष तेने (आर्यखपुटाचार्येण के०) आर्यखपुटाचार्यें (किं के०) शुं [illegible]शिक्षितः के०) न शिक्षा कर्यो ? ना कर्योज छे. तो (मर्त्यैःकिं के०) [illegible]सनुं तो शुंज कहेवुं ? हवे ते हुड्डकर यक्ष केवो हतो ? तो के जिनशासन[illegible]द्वेषी, साधुने दुःख दायक हतो अने हुं महा

ज्ञानी छुं. एम अभिमान कर्युं तेथी आर्यखपुटाचार्यें प्रासादनो अंतराय करे छते गुरुयें तेने प्रतिपत्तिने पमाड्यो. पछी गुरुयें बोध कर्यो (वा के०) वली (विष्णुकुमारतः के०) विष्णुकुमार जे मुनीश्वर तेथकी (नमुचिः के०) नमुचि नामा प्रधान ते (मृत्वा के०) मरीनें (दुर्गतिं के०) दुर्गतिने (किंनअगमत् के०) शुं न पामतो हवो? कवि कहे छे ते वात घटे छे. जेम (वा के०) वली (नद्योघः के०) नदीना जलनो समूह, (उन्नतं के०) उंचा एवा (तरुं के०) वृक्षने (रुजति के०) भंग करे छे परंतु (नम्रं के०) नम्र एवा (वेतसं तु के०) वेतस नामा वृक्षने तो (नो के०) भंग करतो नथी. अर्थात् अभिमाननो तो भंग पण थाय छे. परंतु विनयनो भंग कोइ ठेकाणें थतोज नथी. एम जाणवुं ॥७८॥

आ श्लोकमां बे दृष्टांत होवाथी प्रथम वृद्धकर यक्षनी कथा कहे छे. गूढशस्त्र नगरने विषे भुवनमुनियें वृद्धकर नामा बुद्धमुनिनो वादमां विजय कर्यो. ते मरीने यक्ष थयो. पछी ते यक्षें संघने उपद्रव करवा मांड्यो. तदनंतर त्यां श्रीखपुटाचार्य देवइछायें आव्या. गुरु ते यक्षना घर प्रत्यें जइने यक्षना कर्णनें जुना खासडानो निवेश करी तेनी छातीने विषे पोतानो पग मूकी वस्त्रें करी ते यक्षनुं अंग ढांकीने खपटाचार्य सुता, ते प्रभातें यक्षना पूजन करनारें जोइने सर्व वृत्तांत राजाने निवेदन कर्युं. राजायें तिहां आवीने सेवकोना हाथें कोरडायें करी गुरुने मारवा मांड्यो. ते कोरडाना प्रहार राजाना अंतःपुरमां लाग्या, ते जोइ आचार्यने पगे लागीने राजायें क्षमा मागी. तेवारें गुरु त्यांथी उठ्या अने गुरुयें तिरस्कार पमाडेला यक्षें चतुर्विधसंघनी रक्षा करी. पछी ते गुरुयें यक्ष विनायक रुद्रादि देवतायें युक्त थया छता पुर प्रत्यें जइ बे पाषाणनी कुंभीउ नगरने दरवाजे स्थापन करी सर्व देवताउने रजा आपी. देवो पोताने स्थानकें गया. ते अद्यापि पर्यंत पाषाणनी कुंभिकाउ प्रतोलिकामां देखाय छे. कोइ पण तेने चलावी शकतुं नथी.

हवे विष्णुकुमारनी कथा कहे छे. पद्मपुर नगरने विषे पद्म नामा चक्रवर्त्ती राज्य करे छे. तेनो नमुचि नामा मंत्री हतो. तेने एक दिवस नास्तिक मतने प्ररूपण करता थकां सुस्थिताचार्यना लघु शिष्यें सर्व लोकोनी समक्ष जींती लीधो. एकदा नमुचियें कोइ कार्य करीने चक्रीने अत्यंत प्रसन्न कर्यो. तेवारें चक्रीयें कह्युं तुं माग, ते हुं आपुं. तेणें सात दिवस पर्यंत राज्य

माग्युं. ते राजायें पण सात दिवस राज्य आप्युं. नमुचि मंत्री राज्यासने बेगे. अने साधुउने कहेवा लाग्यो के मारी पृथ्वीनो तमो त्याग करो, नहिं तो हुं सर्व साधुउने हणीश. पठी कोइक साधुयें गगनमार्गें मेरुना शिखरप र जइने श्रीपद्मचक्रवर्त्तीना नाइ श्रीविष्णुकुमारनी पासें नमुचिनुं वृत्तांत स र्व कह्युं. विष्णुकुमार त्यांथी आवीने नमुचिने कहेवा लाग्या के हे राजन्! आ साधुउने उपद्रव करवो तुजने घटे नहिं? केटली एक पृथ्वी तुं साधु उने आप के जे ठेकाणे सर्वे साधुउ निवास करे. त्यारें मंत्री कहेवा ला ग्यो के त्रण पगलां पृथ्वी अमो आपीयें ठेयें, माटे जाउ तेटली पृथ्वीमां रहो. ते सांजली विष्णुकुमार मुनियें लाख योजननुं वैक्रियरूप धारण क रीने पृथ्वीने उल्लंघन करी एक पगलुं पूर्वसमुद्र उपर मूक्युं, अने एक प गलुं पश्चिम समुद्रें मूक्युं. पठी विष्णुकुमार कहेवा लाग्या के हे पापी! त्रीजुं पगलुं हुं क्यां मूकुं? ते मने कहे. एम कही तेना मस्तकपर एक पग मूक्यो ते पगना प्रहारें करी तेने चूर्ण करी नारव्यो. पठी विष्णुकुमारें पो तानुं वैक्रियरूप संहरण करी लीधुं पोते आलोयणा लेता हवा ॥ ७८ ॥

राज्यं शक्रकृताभिषेचनमहो रूपं त्रिलोकेऽप्यस,
त्सारूप्यं च सनत्कुमारनृपतेः सोऽप्यंगवैराग्यतः ॥
चक्रे चारुतपः सलब्धिरपि तत् स्वं नाचिकित्सत्पुना,
रज्येद्वा प्रतिकर्मनिर्मलरुचौ कः कुप्यपात्रे सुधीः॥७९॥

अर्थः—(शक्रकृताभिषेचनं के०) इंद्रें कर्यो ठे अभिषेक जेनो एवुं (राज्यं के०) राज्य, (च के०) तथा (अहो के०) आश्चर्ये (त्रिलोकेऽपि के०) त्रण लोकनेविषे पण (असत् के०) नथी विद्यमान (सारूप्यं के०) समानपणुं जेनुं एवुं (रूपं के०) रूप, ते बेहु (सनत्कुमारनृपतेः के०) सनत्कुमाररा जाने हतां, (सोऽपि के०) ते सनत्कुमारनृपति, पण (अंगवैराग्यतः के०) ते अंगनेविषे वैराग्यथकी (चारुतपः के०) मनोहर एवा तपने (चक्रे के०) करतो हवो. तथा (सलब्धिरपि के०) ते लब्धियें सहित थयो तो पण ते सनत्कुमारराजा (पुनः के०) फरीने (तत् के०) ते (स्वं के०) पोताना अं गने सारुं करवानो (नाचिकित्सत् के०) उपाय न करतो हवो. एटले शरीर बगड्युं तो पण तेनी प्रतिक्रिया करी नही. कवि कहे ठे. ते वात घटे ठे कारण

के (सुधीः के०) रूडी छे, बुद्धि जेनी एवो (कः के०) कयो पुरुष, (प्रतिकर्मनिर्मलरुचौ के०) प्रतिकर्मकरीने छे निर्मल कांति जेनी एवा (कुप्यपात्रे के०) ताम्रपात्रनेविषे (रज्येद्वा के०) राजी थाय वारु? नज थाय. तेम वैराग्य थवा पछी कूप्यादि सदृश देहादिकनेविषे कोण राजी थाय? ॥ ७९ ॥

आंही सनत्कुमारनी कथा कहे छे. अयोध्यानगरीनेविषे सनत्कुमार नामा चक्री राज्य करे छे. एकदिवस सनत्कुमारनुं रूप इंद्रें पोतानी सन्नामां वखाण्युं, तेनुं रूप जोवाने तत्काल बे देवता आव्या, ते वखत चक्रवर्त्ती स्नान करवा बेठा हता, तेनुं रूप जोइने ते बेहुजण विस्मय पामी गया. चक्रवर्त्तीयें कह्युं के हे देवताउ! हुं जेवारें सिंहासन उपर बेसुं, तेवारें तमो माहरा स्वरूपने जो जो. पछी जेवारें सन्नामां सिंहासन उपर बेठा, तेवारें सनत्कुमारनुं रूप जोता बेहु देवोनां मुख विछाय थयां. जोइने ते बेहुने चक्रवर्त्ती कहेवा लाग्यो के केम तमारुं मुख विछाय देखाय छे? देवतायें कह्युं के तमारा शरीरमां कुष्टादिक रोग थवाथी अमोयें स्नानवखतें जेवुं तमारुं रूप जोयुं हतुं, तेथी हमणां अत्यंत हीन थइ गयुं. आ वात देवताना मुखथी सांभली चक्रीने तुरत वैराग्य उत्पन्न थयो, तेथी राज्य छोडीने दीक्षा ग्रहण करी. पछी तेने कुष्टादिक आठ रोग उत्पन्न थया. सातशो वर्षरोगनुं दुःख सहन कर्युं. परंतु पोतामां लब्धि छते पण तेना निवारणनो कोइ उपाय कर्यो नहिं. वली ते उंसड करे छे के नहिं एवी तेनी परीक्षा करवा माटे बे देवताउ वैद्य थइ आव्या परंतु सनत्कुमार मुनियें वैद्यें कहेलो उपाय कांइ पण कर्यो नहिं. माटे वैराग्य ते तेज ज्ञानसाधन छे ॥ ७९ ॥

आजन्मांतमनंतदुर्मुदि भवे वैराग्यमस्त्येव त, व्यक्तं हेतुषु सत्सु किंतु भवति प्रत्येकबुद्धेष्विव ॥ सूर्याश्मन्यनलं पयः शशिमणौ स्वर्णं सुवर्णावनौ, कोऽज्ञासीत् पुनरर्कचंद्रहुतभुग्प्रयोगात् कुतोप्येति वा ॥ ८० ॥ वैराग्यप्रक्रमः ॥

अर्थः—(आजन्मांतं के०) जन्मथी आरंभीने मरण पर्यंत (अनंतदुर्मुदि के०) अनंत छे दुःखाकुलमुद् जेमां एवा (भवे के०) संसारने विषे (वैराग्यं के०) वैराग्य (अस्त्येव के०) होय छेज. (तद्व्यक्तं के०) ते स्पष्ट देखाय छे (किंतु के०) केम? तो के (सत्सु के०) प्रसिद्ध एवा

(हेतुषु के०) वृषभादि हेतु छते (प्रत्येकबुद्धेष्विव के०) प्रत्येक बुद्धोने विषे जेम वैराग्य (भवति के०) थयो. त्यां कवि कहे छे. दुःखदायक संसारने विषे पण वैराग्य रह्यो छे. केनी पेठें तो के (सूर्यादिमनि के०) सूर्य मणिने विषे (अनलं के०) अग्निने (कोऽद्राक्षीत् के०) कोण जोतो हवो कोइ नहि तथा (शशिमणौ के०) चांदमणिने विषे (पयः के०) अमृतरूप दुधने कोण जोतो हवो तथा (सुवर्णावनौ के०) सुवर्णमय पृथ्वीने विषे (स्वर्ण के०) सुवर्णने कोण जोतो हतो, अर्थात् ते पूर्वोक्त सर्व वस्तु एटलाने विषे अदृष्टज छे. परंतु (पुनः के०) वली (अर्कचंद्रहुतभुग्योगात् के०) सूर्यमणि, चंद्रमणि, सुवर्ण तेनें एटले अनुक्रमे सूर्यमणिनें सूर्यनो, चंद्रमणीनें चंद्रनो तथा स्वर्णभूमिने अग्निनो योग होवाथी अग्नि, दुध, अने सुवर्ण उत्पन्न थाय छे (वा के०) तेम (कुतोपिके०) क्यारेंक पण देहथकी वैराग्य (एति के०) उत्पन्न थाय छे. एम जाणवुं. जेम पूर्वोक्त पदार्थ सूर्यादिकना योगथी थाय छे तेम कोइक वखतें देहादिकथी वैराग्य उत्पन्न थाय छे ॥ ८० ॥ इति वैराग्यप्रक्रमः ॥

आंहिं चार प्रत्येक बुद्धनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथाउमां प्रथम करकंडु प्रत्येक बुधनी कथा कहे छे. कलिंग देशें कांकंदी नगरीमां करकंडु राजा राज्य करे छे. तेणें एक दिवस राजमार्गमां जतां एक गोकुलने विषे जाडा कांधवालो, उंची कोट वालो, धोला दांत वालो, अने महाबलवान्, पोतानी त्राडथी दिशाउने गजवतो, अत्यंत सुशोभित,एवो एक वृषभ दीठो. तेथी राजाना मनमां अत्यंत प्रमोद उपनो. वली केटला एक वर्ष पछी पाछा तेज रस्ते चालता ते राजायें जर्जरीभूत गात्रवालो पडी गयेला छे दांत जेना एवो तथा जेना मोढामांथी लाल पडती जाय छे विरसस मुखवालो अने पगउथी दुःख सहन करतो शोभा रहित एवा तेज वृषभने जोयो ते जोइने राजा विचार करे छे के जेवी दशा आ वृषभनी थइ तेवी दशा आ माहारा कलेवरनी पण थशे? एम चिंतवता वैराग्य उत्पन्न थवाथी ते करकंडु राजा पोतेंज दीक्षा ग्रहण करी कर्मनो क्षय करी सिद्धिने प्राप्त थयो. ए करकंडु प्रत्येक बुद्धनी कथा.

हवे दुम्मुहराजानी कथा कहे छे. पंचाल देशमां कांपिल्यपुरने विषे दुर्मुख नामा राजा हतो. ते एक दिवस नगरथी बाहेर निकल्यो छे तेणें रस्तामां नगरना घणा लोकोयें पूजन करेलो, तथा जेनी आगल शृंगार

सजेली एवी स्त्रीयोनां वर्गें गान करेलो अनें नानाप्रकारनां याचक लोको यें स्तुति करेलो तथा हजार ध्वजायें करी शोजायमान जाणीयें साक्षात् इंद्रज होय नहिं. एवा इंद्र स्तंजने जोइने राजाना मनमां विस्मय थयो. पाछो फरीने राजा तेज रस्तामां सायंकालें गयो त्यां दरिद्रयुक्त पृथ्वीने विषे पडेलो शोजा रहित एवा तेज स्तंज जोइने राजाने वैराग्य उपन्यो, तेवारें चारित्र लइ मोक्षसुख पाम्यो ए डुर्मुख प्रत्येक बुद्धनी कथा कही.

हवे नमि प्रत्येक बुद्धनी कथा कहे छे. श्रीमिथिला नगरीने विषे नमि राजा राज्य करतो हतो. ते अत्यंत स्वरूपवान् तथा लक्ष्मीने पण तिरस्कार करनारी देवांगना सरखी पांचशो स्त्रीयोनी सायें जोग जोगवतो सूर्यना उदय अस्तनी पण तेने खबर नथी. एक दिवस ते नमि राजाना अंगने विषे दाहज्वर उत्पन्न थयो. तेथी राजा कोइ ठेकाणें सुखने न पाम्यो. ते अवसरें राजाना अंगने शीतलता थवाने माटे पांचशें स्त्रियोयें चंदन घसवा मांड्युं, तिहां स्त्रीयोना हाथमां पहेरेली चुडीयोना खणखणाटथी राजाने कंटालो आव्यो, तेवारें एकेक चूडी सर्व स्त्रीयोने राखवानो हुकुम कर्यो. ते सांजली सर्व स्त्रीयोयें एकेक कंकण हाथने विषे राख्युं, ते वखत राजाने समाधि थइ, अने मनमां विचार्युं के जाजाना संगथी मोहोटुं डुःख थाय छे, माटे एकलांज रहेवुं ते सारुं छे. ए द्वारें वैराग्य उत्पन्न थयो तेवारें पांचशे स्त्रीयोने तथा राज्यनें छांमीने प्रव्रज्या ग्रहण करी. तेनी इंद्रें ब्राह्मणनुं रूप विकूर्वी अनेक प्रकारें परीक्षा करी, तो पण चलायमान थया नही. ए नमि प्रत्येक बुद्धनी कथा कही.

हवे चोथा नग्नति प्रत्येक बुद्धनी कथा कहे छे. गांधार देशने विषे माहिष्मती नगरीमां नग्नति नामें राजा राज्य करे छे. एक दिवस ते राजा वनने विषे क्रीडा करतां थाकी गयो. ते समयें मनोहर नवपल्लवनी शोजायें विराजमान. नवी आम्र मंजरीयें करी सुशोजित. पाकेला फलें करी देदीप्यमान अने अत्यंत छायायुक्त एक आम्रवृक्षने राजायें जोयो. तेनी नीचें जइने घणीवार सुधी विश्रांति लीधी. फरी केटलाएक कालें पाछो राजा ते वनमां गयो. त्यां तेज आम्रने सुकाइ गयेलो पत्र रहित मालविनानो जोइने ते नग्नति राजाने वैराग्य उत्पन्न थयो. तेवारें व्रत ग्रहण करी केवलज्ञान पामीने मुक्तिने प्राप्त थयो ॥८०॥ इति वैराग्यप्रक्रमः संपूर्णः ॥

सुप्रापं शुद्धपात्रं धनमपि विशदं किंतु निष्पुण्यकानां, नो
वित्तं पात्रदानं प्रति भवति मतिर्यत्र शुद्धाशनाद्यैः ॥ आद्यो
ऽर्हन् वर्षमेकं प्रतिदिनमगमच्छुद्धभैक्ष्येऽपि देशे, श्रेयांस
स्त्वेकमाद्यं सुकृतिषु कृतवान् स्वं प्रभोः पारणेन ॥ ८१ ॥

अर्थः—जे दानथकी (यत्र के०) जे वित्तने विषे (शुद्धाशनाद्यैः के०) शुद्ध एवा अशनादिकोयें करी दान देवानी (मतिः के०) बुद्धि, उत्पन्न थाय तथा तेवुं दान अने (शुद्धपात्रं के०) शुद्धपात्र, (सुप्रापं के०) प्राप्त थयेलुं होय तथा (धनमपि के०) द्रव्य पण (विशदं के०) शुद्ध होय (किंतु के०) तो पण (निष्पुण्यकानां के०) पुण्य रहित जनोनुं (वित्तं के०) द्रव्य, ते (पात्रदानंप्रति के०) पात्रदान प्रत्यें (नोभवति के०) थतुं नथी. त्यां दृष्टांत कहे ने के (आद्योऽर्हन् के०) आदिनाथ जे श्री ऋषभदेवजी तीर्थंकर ते, (वर्षमेकं के०) एक वर्ष पर्यंत. (शुद्धभैक्ष्येऽपि के०) शुद्ध ने भैक्ष्य एटले अन्न जेमां एवा (देशे के०) देशने विषे (प्रतिदिनं के०) प्रतिदिन (अगमत् के०) जता हवा, परंतु शुद्ध अशनादिक कोइयें पारणा माटे आप्युं नहिं. अने (सुकृतिषु के०) एक सुकृतिजनने विषे कृतार्थ एवो (श्रेयांसस्तु के०) श्रेयांस राजा जे ने तेज (आद्यं के०) अदन करवा योग्य (एकं के०) एक एवा (स्वं के०) पोतानी पासे रहेला शेरडीना रसने (प्रभोः के०) श्रीआदिनाथना (पारणेन के०) पारणाने करावबे करीने सार्थक (कृतवान् के०) करतो हवो ॥ ८१ ॥

आंहिं श्रेयांस राजानी कथा कहे ने. गजपुर नगरने विषे नद्मस्थ अवस्थायें विहार करता एवा श्रीऋषभदेवजी मध्याह्ने समयें भिक्षाने माटे भमे ने परंतु ते समये भिक्षा ते वली शुं? अने कोण भिक्षाचर होय. ते वात कोइ पण जाणतुं न हतुं, एवामां पोताना घरनी उंची बारीमांथी श्री श्रेयांस कुमारें श्रीऋषभदेवजीने जोया. ते जोता वेंतज ते श्रेयांस कुमारने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं, तेवारें श्रेयांसकुमार त्यांथी उठी प्रभु पासें जइने प्रभुने पोताने घेर तेडी लाव्यो. तेवामां कोइक जन घणा एक शेरडीना रसना कुंभ भेट लाव्यो. तेज शेरडीना रसथी प्रभुने पारणुं कराव्युं ते समय पांच दिव्य प्रगट थयां आकाशमांथी सुवर्णनी वृष्टि थइ. कहे

छुं छे के " रिसहेस समं पत्तं, निरवज्जं इक्कुरससमाहारं ॥ सेयंस समो भावो, हविज्ज जइ मग्गियं हुज्जा ॥ १ ॥ एम सुपात्रने दान आपवाथी तेज भवमां श्रेयांस मुक्तिने प्राप्त थयो ॥ ८१ ॥

यदपि तदपि शुद्धं चंदनावत्प्रदत्तं,झटिति फलति पात्रेऽन्य त्र नो चार्वपि स्वं॥ जलधिजलमसारं वारिवाहेऽमृती स्या त्, मधुरमपि हि दुग्धं पन्नगास्ये विपी स्यात् ॥ ८२ ॥

अर्थः—(यदपितदपि के०) सरसविरसएवुं पण (शुद्धं के०) बहेंतालीश दोषरहित एवुं दान, (चंदनावत् के०) चंदनबालानी पेरें (पात्रे के०) पात्रनेविषे (प्रदत्तं के०) दीधेलुं होय तो (झटिति के०) उतावलथी (फलति के०) फले छे (अन्यत्र के०) कुपात्रनेंविषे (चार्वपि के०) सारुं एवुं अने (स्वं के०) पोतानुं द्रव्य दीधुं होय तो पण ते (नो के०) नथी फलतुं. केनी पेरें ? तो के (असारं के०) साररहित एवुं जे (जलधिजलं के०) समुद्रनुं खारुं जल छे ते (वारिवाहे के०) मेघनेविषे (अमृती स्यात् के०) अमृतवालुं थाय अर्थात् अमृत समान मिष्ट थायछे,अने (मधुरमपि के०) मधुर एवुंपण (दुग्धं के०) दूध छे तो पण ते (हि के०) निश्चें (पन्नगास्ये के०) सर्पना मुखने विषे (विषी स्यात् के०) विषवालुं थाय छे अर्थात् सुपात्रने दान आपेलुं अमृतसदृश फल आपे अने कुपात्रने आपेलुं दान विष जेवुं फल आपे छे ॥

आहीं चंदनबालानी कथा कहे छे. चंपानगरीनेविषे दधिवाहनराजा तेनी धारिणी नामा पटराणी हती. ते राजाने वसुमती नामनी दीकरी हती. पछी शतानीकराजायें चंपानगरी भग्न करी, तेवारें एक प्यादो हतो तेणे ते वसुमती कन्यानुं हरण कर्युं. तेने कोशांबी नगरीमां आणी. ने वेचवा काढी त्यां धनावहनामा श्रेष्ठियें ते द्रव्यआपीने वेचाती लीधी. घेर आणी पोतानी पुत्री करी राखी, तेनुं चंदनबाला एवुं नाम स्थाप्युं. पछी ते धनावह श्रेष्ठीनी मूला नामें स्त्री हती तेना मनमां एवी शंका थइ जे आ कुमरीने मारो धणी स्त्री करी राखशे. एवा हेतुथी तेने दुःख देवा माटें छल जोती रहे छे. एकदा शेठ बीजे गाम गया तेवारें अवसर पामीने ते मूलायें चंदनबालानुं शिर मुंमन करावीने भंधीग्याने नाखी. पछी धनावह श्रेष्ठी पाछो आव्यो तेवारें ते वात जाणीने त्रण उपवास वाली चंदनबालाने जमवा माटे शुद्ध

एवा अडदना बाकला सूपडाना खुणामां नाखीने आप्या. अने तेने उंबरा उपर बेसाडी पोतें तेनी बेडी भंगाववा माटे लूहारने तेडवा गयो. एवा समयमां श्रीवर्द्धमान स्वामी ठमासी तपना पारणा माटे त्यां आव्या. ते वखतें त्रण उपवासना अंतमां ते बाकला चंदनबालायें वर्द्धमानस्वामीने आप्या. त्यां पांच दिव्य प्रगट थयां. साडाबार कोटि सुवर्णनी वृष्टि आकाशमांथी पडी. नवो वेणिदंम आव्यो. अने लोढानी बेडीयो हती ते सुवर्णनी थइ गइ, पठी चंदनबाला, भगवान् पासे दीक्षा लइ केवलज्ञान पामीने मोक्षसुखने प्राप्त थइ. ए चंदनबालाये पात्रदान आप्युं, तेथी सद्गतिने पामी ॥ ८२ ॥ दानप्रक्रमः॥

स्त्रीविभ्रमैश्चलति लोलमनानधीरः, श्रीस्थूलभद्र
इव तादृशसंकटेपि ॥ चूर्णीभवेदृषदयोपि विलीय
ते च, वैमूर्यमेति विकृतिं ज्वलनात् पुनर्न ॥ ८३ ॥

अर्थः-(लोलमनाः के०) चंचल ठे मन जेनुं एवो पुरुष, (स्त्रीविभ्रमैः के०) स्त्रीना हावभाव कटाक्षादिकें करी (चलति के०) चलायमान थाय ठे परंतु (धीरः के०) धीर पुरुष जे ठे ते (न के०) चलायमान थतो नथी. केनी पेठें ? तो के (श्रीस्थूलभद्रइव के०) श्रीस्थूलिभद्रनी पेठें. ते जेम (तादृशसंकटेपि के०) कोश्यागणिकाना संकटने विषे पड्यो ठतो पण चलायमान न थतो हवो. कवि कहे ठे खरी वात ठे. जुवो (ज्वलनात् के०) अग्निथकी (दृषद् के०) पाषाण ते (चूर्णीभवेत् के०) चूनो थइ जाय ठे (च के०) वली (अयोपि के०) लोह पण (विलीयते के०) विशेषें करी लय पामे ठे परंतु (वैमूर्य के०) वैमूर्य नामा रत्न, जे ठे ते (विकृतिं के०) विकारने (नएति के०) प्राप्त थतुं नथी. (पुनः के०) परंतु विशेषं करी देदीप्यमान थाय ठे ॥ ८३ ॥

आंहिं श्रीस्थूलिभद्रजीनी कथा कहे ठे. पाटलीपुर नगरें नंदराजानो प्रधान शकडाल नामें हतो तेनो एक स्थूलिभद्र अने बीजो श्रियो ए बे पुत्र हता तेमां स्थूलिभद्रें तो कोशावेश्याने त्यां साडी बार करोड सुवर्णनो व्यय कर्यो अने नाना प्रकारना भोग भोगव्या. पठी पोताना पिता शकडालनुं मरण सांभलीने ते स्थूलिभद्रने तरत वैराग्य उत्पन्न थयाथी श्रीसंभूतिविजय गुरुनी पासे दीक्षा ग्रहण करी. चोमासुं करवा माटे श्रीगुरुनी

आज्ञाथी चार मास कोशावेश्याने घरे चित्रशालीयुक्त घरमां रह्यो त्यां अनेक प्रकारना हाव, नाव, कटाक्ष ते वेश्यायें कर्या. परंतु तेथी लगार पण चलायमान थयो नहिं. एम कामराजने जींतीने कोशावेश्याने बोध कर्यो. चातुर्मास पूर्ण थयेथी गुरुयें त्रण वार डुःकरकार कहीने तेनां वखाण कर्यां. कह्युं बे के, "वेश्या रागवती सदा तदनुगा, षड्भीरसैर्नोजनं, शुभ्रं धाम मनोहरं वपुरहो नव्यं वयोयौवनं ॥ कालोयं जलदागमस्तदपियः कामं जिगाय क्षणात्, तं वंदे युवतिप्रबोधचतुरंश्रीस्थूलनद्रं गुरुं ॥ १ ॥ नावार्थः—जे स्थूलनद्रने कोशावेश्या अनुराग वाली तथा पोताना कहेवा प्रमाणे चाल नारी अने ते कोशावेश्याना घरमां रहेवाथी षट्रस नोजन मलतुं हतुं अने मनोहर धाममां रहेता हता. पोतानुं तथा वेश्यानुं पण नवयौवन हतुं तेमज समय पण वर्षाऋतुनो हतो तो पण स्थूलिनद्रमुनियें महाप्रबल कोइथी न जींताय एवा कामदेवने जींतीने ते कोशावेश्याने पण एक क्षणमां ज बोध कर्यो. एवा ते श्रीस्थूलिनद्र महामुनिने कवि कहे बे के हुं वारंवार प्रणाम करुं बुं, कारण कोइथी न बने तेवुं तेणें काम कर्युं ॥ ७३ ॥

सद्रूपयौवनगुणागतसानुराग, वित्तेशदत्ततनयान
यनेष्वनेदात् ॥ वज्रेण वज्रमुनिना स्वयशोर्ण
साऽसत्, संगाशुचि क्वचिदपूयत शीलमेव ॥७४॥

अर्थः—(सद्रूप के०) सारुं रूप (यौवन के०) सारुं यौवन अने (गुण के०) सारागुणो तेणें करी (आगतसानुराग के०) आव्यो बे अत्यंत स्नेह जेने एवी (वित्तेशदत्ततनया के०) धनदत्तनामा व्यवहारीनी कन्या ते तेना पितायें आपी(नयनेष्वनेदात् के०)तो पण ते कन्याना नयनबाणें करी ननेदाणा एवा (वज्रेण के०) वज्रसमान (वज्रमुनिना के०) वज्रमुनियें (क्वचित् के०) कोइ वखत (असत्संगाशुचि के०) असत्संगथकी अपवित्र थयेलुं एवुं (शीलमेव के०) शीलनेज (स्वयशोऽर्णसा के०) पोताना यश रूप जलेंकरी (अपूयत के०) पवित्र करता हवा. अर्थात् स्त्रीना हावनावथी नहिं पराजय पामेला वज्रस्वामीयें कोइक दिवस कुसंगथी अपवित्र थयेला एवा शीलने यशरूपजलें करी पवित्र कर्युं ॥ ७४ ॥

आंहिं वज्रस्वामीनां दृष्टांत होवाथी ते पूर्वे कथा कही ने तो पण फरी

संक्षेपथी कहे ठे, कह्युं ठे के ॥ जो कन्नाइ धणेणय, निमंतिउ जुव्वणंमि गिहि वयणे ॥ नयरम्मि कुसुमनामे, तं वयररिसिं नमंसामि ॥१॥ एक दिवस धन दत्तव्यवहारीना गृहनेविषे आवेली साध्वीउयें दत्तव्यवहारीनी पुत्री पासें वज्रस्वामीना रूपनुं वर्णन कर्युं. ते सांन्नली ते कन्याये मनमां विचार्युं जे मह्यारे वज्रस्वामीनेज परणवुं अने जो तेम नहीं बने तो अग्निमां पडीने मरण करवुं पण अन्यजननुं पाणिग्रहण करवुं नहिं. पठी ते कन्यानो बाप कोटि धन लइने वज्रस्वामी पासें आव्यो अने कह्युं के हे स्वामिन्! आ कन्याने अने धनने अंगीकार करो. त्यारें वज्रस्वामीये कह्युं के अमें जो प्रमदाने इह्यीयें तो अमारुं यतिपणुं क्यां रहे? ते विचार करो. एवा तेमना उपदेशथकी कन्याने पण बोध थयो. तेवारें ते कन्यायें पण वैराग्य पामीने वज्रस्वामीना हाथथीज दीक्षा ग्रहण करी ॥ ७४ ॥

तपःशिवकुमारवच्चरति मंदिरस्थोऽपि यः, सदेवपरिषद्यपिद्युतिमहत्त्वविस्फूर्त्तिन्नृत् ॥ कृशान्वकृशतापनोल्लसितवर्णिकं कांचनं, न धातुषु विशिष्टतां नृपतिमौलितामेति च ॥ ७५ ॥

अर्थः–(यः के०) जे पुरुष, (मंदिरस्थोऽपि के०) मंदिरने विषे रह्यो ठतो पण (शिवकुमारवत् के०) शिवकुमारनी पेठें एटले जेम जंबुस्वामीनो जीव पूर्वेला न्नवे शिवकुमार नामे हतो तेणे मंदिरने विषे रह्या ठतां पण पांचशो अंतःपुरीमध्यें बार वर्ष पर्यंत तप कर्युं अने पारणामां आंबिल कर्युं, तेनी पेठें (तपः के०) तपने (चरति के०) कोइ पण पुरुष घरने विषे रह्यो ठतो पण आचरण करे ठे तो (सः के०) ते पुरुष, (देवपरिषद्यपि के०) देवताउनी सन्नाने विषे पण (द्युतिमहत्त्वविस्फूर्त्तिन्नृत् के०) तेजना महत्त्वनी विस्फूर्त्तिने धारण करनारो थाय ठे. त्यां दृष्टांत कहे ठे के (कृशान्वकृशतापनोल्लसितवर्णिकं के०) अग्निना महोटा तापें करी प्रकाशित ठे वर्ण जेनो एवुं (कांचनं के०) सुवर्ण जे ठे ते, (धातुषु के०) सर्व धातुउने विषे (विशिष्टतां के०) विशेषपणाने शुं (न एति के०) न पामे? ना पामे ठे (च के०) वली (नृपतिमौलितां के०) राजाना मुकुटपणाने शुं नथी प्राप्त थातुं? ना प्राप्त थायज ठे. एम घरमां बेठो तप करनारा पण महा अग्निमां तपावेला सुवर्णनी पेठें सर्वने विषे उत्तमताने पामे ठे. एम जाणवुं.

आंहिं शिवकुमारनी कथा कहे छे. शिवकुमार पूर्वभवने विषे अर्द्धमंमिता स्त्रीना पतिपणामां चारित्रने विराधवे करी दीक्षा लेवामां समर्थ थयो नहिं. परंतु त्यां बत्रीश अंतःपुरीना मध्यमां रहीने निरंतर छठ छठ तपने पारणे आंबिल करतो एरीतें तेज नगरमां दृढधर्मी श्रावक पासें रह्यो थको साधुनी पेरें अन्न पाणी वहोरी लावीने भोजन करतो हतो, एम बार वर्ष पर्यंत एवुं तप कर्युं. पछी ते मरण पामीने महाद्युतिमान् देव थयो. ते देवनुं अत्यंत कांतिमत्त्व जोइने श्रेणिक राजाना मनमां विस्मय थयो. तेवारें ते वात श्रीवीरभगवानने पूछी श्रीवीरस्वामीयें शिवकुमारना पूर्वना सर्व भव कह्या. वली कह्युं के ए देवता एज नगरीनेविषे रूषभदेव नामा श्रेष्ठी रहे छे, तेनी धारिणी नामनी स्त्रीनी कूखें आवी श्रीजंबु कुमार नामें पुत्रपणे अवतरशे. ते चारित्र लइ केवलज्ञान पामीने मोक्षने प्राप्त थाशे. ते सांभलीने त्यां जंबुस्वामीनो पितृव्य अनादृत नामा देव हतो ते नृत्य करवा लाग्यो ॥ ७५ ॥

तपःसकलकर्मभिद्विविधलब्धिकृन्निश्चितं, गृहे पुरि च दुर्भगो प्यहह नंदिषेणो द्विजः॥ व्रते शमतपःपरःसुरनरैकवंद्योऽभव, द्रविज्वलनतापितः,श्रयति दीप्तिमामोघटः ॥७६॥ तपोद्वारं ॥

अर्थः—(सकलकर्मभिद् के०) सर्व कर्मने भेदनारुं अने (विविधलब्धि कृत् के०) अनेक प्रकारनी लब्धिने करनारुं एवुं (तपः के०) तप (निश्चितं के०) निश्चें छे (अहह के०) खेदें (गृहे के०) घरने विषे (च के०) वली (पुरि के०) पुरने विषे (दुर्भगोपि के०) दुर्भाग्य एवो पण (नंदिषेणो द्विजः के०) नंदिषेण नामा ब्राह्मण, (व्रते के०) व्रतने विषे (शमतपःपरः के०) शम अने तपने विषे तत्पर छतो (सुरनरैकवंद्यः के०) देवताने अने मनुष्यने एकल वंदन करवा योग्य (अभवत् के०) थतो हवो. त्यां दृष्टांत कहे छे. के जेम (आमोघटः के०) माटीनो काचो घडो, होय ते (रवि ज्वलनतापितः के०) सूर्य अने अग्नि तेणे ताप पमाड्यो छतो (दीप्तिं के०) दीप्तिने (श्रयति के०) आश्रय करे छे. एटले प्रकाशने पामे छे ॥ ७६ ॥

आंहिं नंदीषेण ब्राह्मणनी कथा कहे छे. कोइ नंदिषेण ब्राह्मण हतो ते जन्मतांज तेनां माता पिता मरण पाम्यां. कोइ रीतें करी तेना संबंधी

ठयें पोषण करी महोटो कस्यो. जन्मथी आरंभीने डुर्भागी हतो, तेने ते ना मामायें कह्युं के माहरे सात दीकरीउ ठे तेमांथी तुने हुं एक दीकरी आपीश. तेवा लोभमां नाखी तेने घरनां काम करवामां राख्यो. परंतु ते डुर्भागी होवाथी कोइ पण दीकरी तेने परणवानी इछा करती न हती. तेवारें नंदिषेण मरवानो विचार करी कोइ पर्वत उपर चढ्यो. त्यां साधुयें प्रतिबोध आप्यो, तेथी प्रव्रज्या ग्रहण करी. महोटुं तप कह्युं. ते नंदिषे णनां वखाण इंद्रे पोतानी सभामां कस्यां. ते सांभलीने बे देवतायें त्यां आवीने ते नंदिषेणनी परीक्षा करी. तो पण ते ऋषि सत्यथकी चलायमा न थयो नहिं. हजारो वर्ष तप करी अंतमां दौर्भाग्यना स्मरणथकी एवुं नियाणुं कस्युं जे हुं आवता भवमां स्त्रीवल्लभ थाउं! एम विचार करतां म रण पामीने वसुदेव दशार्हपणे उत्पन्न थयो. त्यां स्त्रीयो, तेनुं पडखुं क्यारें पण मूकती न हती. अने सर्वत्र क्रीडा करतो हतो. तेवुं जोइने सर्व गामना महाजनें समुद्रविजय राजा पासें जइने कह्युं के आ महोटो अधर्म ठे जे सर्वत्र वसुदेव दशार्ह निर्लज्ज थको क्रीडा करे ठे. ते वात सांभली राजायें कह्युं के, वसुदेवें पोताना घरना कोटमांज क्रीडा करवी. बीजे स्थलें बाहेर क्यांही फरवुं नही. ते वात दासीना मुखथी वसुदेवें जाणी. ने पोतानुं अ पमान थवाथी वसुदेवें बाहेर जइने बहोंतेर हजार राजकन्याउ तथा वि द्याधर कन्याउ परणी. ते भवममां ते वसुदेवें पूर्ण भोग भोगव्या ॥ ७६ ॥

दानं वित्तव्ययेनापरयुवतिरतित्यागतःशीललीला, ना
नाहाराप्रचारात्तपइह तदहोहद्यपध्यानहीनाः ॥ भावं कु
र्वंतु येनाप्यखिलसुखभृतां वल्कलस्येव मुक्ति,र्मिष्टास्वा
देर्यदि स्यान्ननुतनुपहुतां कोन तां कारयेत्तत् ॥ ७७ ॥

अर्थः-(वित्तव्ययेन के०) द्रव्यना व्ययें करी एटले द्रव्य वावरवे ’ री (दानं के०) दान देवाय ठे, अने (अपरयुवतिरतित्यागतः के० ` र स्त्रीने विषे रतिना त्यागथकी (शीललीला के०) शीलनी लीला हतो अय ठे तथा (नानाहाराप्रचारात् के०) नानाप्रकारना आहारना संबंधी प्राकी (इह के०) आ लोकने विषे (तपः के०) तप, थाय ठे (र अर्थि (अहो के०) आश्चर्य हे भव्यजनो! ते पूर्वोक्त तप वगे

दि के०) हृदयने विषे (अपध्यानहीनाः के०) कुध्यानरहित थता (नावंकुर्वंतु के०) नावने करो. कारण के (येन के०) जे नावें करी (अखिलसुखनृतांअपि के०) समग्र सुखने धारण करनारा एवा पुरुषोनी मध्यें पण (वल्कलस्य इव के०) वल्कलमुनिनी जेम (मुक्तिः के०) मुक्ति थइ, तेम पूर्वोक्त नावयुक्त दानादिकें करी बीजा जननी मुक्ति थाय ले, वली (यदि के०) जो (मिष्टास्वादैः के०) मिष्टनोजनोयें करी मुक्ति (स्यात् के०) थाय (तत् के०) तो (ननु के०) वितर्के (कः के०) कयो पुरुष, (तां के०) ते (तनुपटुतां के०) शरीरपटुताने (नकारयेत् के०) न करे. ते कारण माटे सद्भावना शिवाय ए दानादिक सर्व व्यर्थ जाणवुं. अर्थात् सद्भावना युक्त दानादिक करवाथी मुक्ति थाय ले.

आ श्लोकमां वल्कलमुनिनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ले. पोतनपुर नगरने विषे सोमचंद्र राजा हतो तेनी धारिणी नामें स्त्री हती तेने प्रसन्नचंद्र नामा पुत्र थयो. एकदा राजायें पोताना मस्तकमां पली जोयुं तेथी तरत वैराग्य उत्पन्न थवाथी पोतें पोतानी नार्या सहित तापसी दीक्षा ग्रहण करी. पाउल प्रसन्नचंद्र पली तेनो पुत्र, राज्य करवा लाग्यो. अने ते प्रसन्नचंद्र राजानी माता तापसणी हती तेने केटला एक दिवस पली वननेविषे एक पुत्रनो प्रसव थयो ते तापसी सूतिकाना रोगथकी मरण पामी. पली ते पुत्रने सोमचंद्र तापसें हलु हलु उजेरीने महोटो कर्यो. ते पुत्रनुं नाम वल्कलचीरी पाडयुं. पली ते वल्कलचीरी पोताना पिताने माटे वनमांथी फलफूल लावी आपतो हतो. एकदा प्रसन्नचंद्र राजाने खबर पडी के माहारो नाइ वनमां ले अने माता मरण पामी ले माटे मारा नाइने वनमांथी तेडावी लावुं. एम विचारी गाममां पटह वगडाव्यो जे माहरा नाइ वल्कलचीरीने जे गाममां तेडी लावे, तेने जे अनीष्ट मागे ते आपुं. ते वात गामनी गणिकाउयें स्वीकार करी पली तापसीनो वेश धारण करीने ते वनमां गइ. वल्कलचीरीयें ते गणिकाउने पूलयुं जे क्यां तमारा आश्रमो ले ? कया वनमां तमारो निवास ले ? त्यारें ते कहेवा लागीउ जे अमें पोतनपुरमां रहीयें लैयें. माटे अमारा वनमां तमो आवो. अमें पण तमारी प्रतिपत्ति करशुं. एम कही ते तापसीउयें लाडु हता ते वल्कलचीरीने आप्या. तेने वल्कलचीरीयें पूलयुं के आ शुं

छे? त्यारें ते स्त्रीउयें कह्युं के,आ अमारा वनना फल छे. पछी ते वेश्याउयें पोताना अंगनो स्पर्श कराव्यो. वल्कलें पूछ्युं आ शुं? गणिकाउ कहेवा लागी के जे पोतनपुरमां आवीने फलो खाय छे, तेने आ प्रकारनां फल मले छे. एम करी लोभ पमाडीने ते वल्कलचीरीने लइने पोताना नगरमां गणिकाउ आवी. ते वल्कलचीरी मुनि लाडुमां लोभ पाम्यो थको नित्य वेश्याने घेर जवा लाग्यो, तदनंतर वेश्याउयें पोतानी दीकरीनी साथें पाणिग्रहण कराव्युं,ते लगननी वखत मृदंगनो शब्द थवा लाग्यो, अने धवल गावा मांड्यां तेनो नाद चोतरफ प्रसार थयो ते सांभली पोताना भाइना न आववाथी शोकातुर थयेला प्रसन्नचंद्र राजायें पूछ्युं जे आ महोत्सव कोने घेर थावा मांड्या छे? तेने लोकोयें कह्युं के वेश्याने घेर तेमनी कन्यानो विवाह थाय छे, तेनो महोत्सव वर्त्ते छे. ते सांभली राजायें वेश्याउने बोलावी पूछ्युं, वेश्याउयें कह्युं के तमारा भाइने अमो तेडी लाव्यां छैयें अने अमारी कन्यानुं पाणिग्रहण पण कराव्युं. ए वचन सांभली राजा संतोष पाम्यो, अने तेने घटे तेवुं द्रव्य आप्युं. पछी राजा ते वल्कलचीरीने पोताने घेर तेडी लाव्यो. त्यां थोडो थोडो व्यवहार जाणवा लाग्यो कारण के पशुउ पण शीखव्या छता व्यवहारने जाणे छे, तो मनुष्य जाणे, तेमां शुंज कहेवुं? एक दिवस पोताना पिताने वांदवाने माटें प्रसन्नचंद्र राजा वनमां गयो, वल्कलचीरी पोताना बापनी पर्णकूटीमां गयो. त्यां पोताना बापना उपकरणनुं प्रतिलेखन करतां छतां ते वल्कलचीरीने वैराग्य उत्पन्न थयो तदनंतर केवलज्ञान पामी मुक्तिने प्राप्त थयो ॥८७॥

योदानं न ददौ तथैव न तपःशीलार्हदर्चागमे, य
स्यानार्ययुजोऽत्र केवलमभूद्भावादिलानंदने ॥ स्व
र्णाद्रौ ज्वलनेन वह्निदपदोगोढं मिथोघट्टनै, रादर्शो
रविणा महोपधिवने किं तु स्वभावेन भा ॥ ८८ ॥

अर्थः-(यः के०) जे इलापुत्र, (दानं के०) दानने (नददौ के०) आपतो न हतो (तथैव के०) तेमज वली (शीलाऽर्हदर्चागमे के०) शील, अने जिननी पूजा तथा आगम श्रवण तेने विषे (अनार्ययुजः के०) अनार्य लोकोने योजना करता एवा (यस्य के०) जे इलापुत्र तेने (नतपः

के०) तप न हतुं परंतु (अत्र के०) इहां ए (इलानंदने के०) इलानंदनने विषे (जावात् के०) जावना जाववा थकीज (केवलं के०) केवलज्ञान (अजूत् के०) होतुं हवुं. त्यां दृष्टांत कहे छे. के (स्वर्णादौ के०) सुवर्णादिने विषे (ज्वलनेन के०) अग्नियें करी (जा के०) कांति उत्पन्न थाय छे, अने (वह्निदृपदोः के०) चकमकना पाषाणनेविषे (गाढंमिथोघट्टनैः के०) अत्यंत परस्पर घसवा थकी प्रकाश उत्पन्न थाय छे. अने (आदर्शे के०) दर्पणनेविषे (रविणा के०) सूर्यथकी कांति उत्पन्न थाय छे (किंतु के०) शुं वली तो के (महौषधिवने के०) महौषधिना वनने विषे (स्वजावेन के०) स्वजावें करीने पण कांति थाय छे. एम जीवमां पण जाणवुं ॥ ७७ ॥

आंहिं इलापुत्रनी कथा कहे छे. सांकेतिक पुरनेविषे धनदत्त नामा श्रेष्ठी वसे छे. तेने इलाची नामापुत्र हतो, एक दिवस तेणें गवाक्षमांथी सुरूपवती कोइ नटडीने जोइने मोह पामी नाटकीयाने कोइने मुखें कहेवरावुं के तारी पुत्री मने तुं परणाव्य. ते सांजली नट कहेवा लाग्यो के ए वट लीने अमारी न्यातमां आवे तो हुं मारी पुत्री आपुं. तेवारें कन्याना लोजें करी इलाचीपुत्रें ते वात अंगीकार करी वटलीने नट थयो अनेक नाटक करी घणुंज इव्य उपार्जन कर्युं. एक दिवस जितशत्रुराजानी पासें नाटक करवा माटे इलापुत्र, वांसडा उपर चड्यो छे ते समय जाणीयें विजलीनो जबकारोज होय जी ? एवी नीचें उन्नेली नटीनी उपर राजानी दृष्टि पडी. तेने जोइ मोह पामीने राजा मनमां विचारे छे जे जो आ वांसडेथी नीचें पडीने मरण पामे तो हुं ए नटीने ग्रहण करुं. एवी राजाना मननी वात इलाचीपुत्रें पण जाणी जे हवे राजा मने दान आपतो नथी अने एनी नजर मारी स्त्रीनी उपर पडी छे राजा एनी उपर आसक्त थयो छे. ते समयमां कोइ व्यवहारीने घेर वहोरवा आवेला साधुने व्यवहारीयानी स्त्रीयें अन्ननुं दान आप्युं, ते साधुनी दृष्टि अन्न उपर हती पण ते स्त्री उपर पडी नहीं. अने तेवी तेनी जावना पण थइ नहीं ते साधुनी तथा राजानी दृष्टिने जोइने इलाचीपुत्रने मनमां वैराग्य उत्पन्न थयो. त्यारें विचारतो हवो के अरे धिक्कार हजो मने जे हुं महोटा कुलमां उत्पन्न थयेलो छतां केवी मारी बुद्धि मने उपनी के जे बुद्धि कोइ हीन जातिवाला मनुष्यने पण न थाय? अरे में विषयासक्तियेंकरी मारा आत्मानें कुगतिमां पाड्यो ए प्रकारें संसा

रथकी मन वलयुं अने स्वस्वरूपमां मन तल्लीन थतां थतां एलाचीपुत्रने वंश उपर रह्यां रह्यांज केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी त्यां शासन देवतायें आवी रजोहरणादिक साधुनो वेश आप्यो. त्यांज एलाचीपुत्रें देशना देवा मांडी. राजादिकने प्रतिबोध आप्यो ॥ ७७ ॥

मातुर्गर्भावतारे चतुरधिकदशस्वप्नसंसूचितौप्राक्, जातौ यावेकरात्रौत्वजितसगरयोः पुण्ययोः पश्य जातिं ॥ आग र्भोत्पादमिंद्रैरसुरसुरनरैः सेवनीयस्त्रिलोकी, नाथोऽर्हन्नेक आसीद्भरतनृपनतोऽन्यश्च चक्री द्वितीयः ॥ ७ए ॥

अर्थः—(प्राक् के०) पहेलां (मातुः के०) माताना (गर्भावतारे के०) गर्भावतारने विषे (चतुरधिकदशस्वप्नसंसूचितौ के०) चउद स्वप्नायें करी नाग्यसंपत्तिवाला एवा (यौ के०) जे बेहु (एकरात्रौ के०) एक रात्रिनेविषे (जातौ के०)उत्पन्न थया ते (तुके०)वली (पुण्ययोः के०) पुण्यशाली एवा (अजितसगरयोः के०) श्रीअजितनाथ तीर्थंकरनी अने सगरचक्रीनी (जातिं के०) जातिने हे नव्यजनो! (पश्य के०) जुवो (एकः के०) एक श्रीअजितनाथतो (आगर्भोत्पादं के०) गर्भे रहेवाना आरंनथी ते उत्पत्तिपर्यंत (इंद्रैः के०) इंद्रोयें तथा (असुरसुरनरैः के०) असुर देवो तथा मनुष्योयें (सेवनीयः के०) सेवन करवायोग्य अने (त्रिलोकीनाथः के०) त्रण लोकना नाथ एवा (एकः के०) एक (अर्हन् के०) तीर्थंकर थया (च के०) वली (अन्यः के०) अन्य (द्वितीयः के०) बीजा (नरतनृपनतः के०) नरतक्षेत्रना राजाउने नमस्कार करवा लायक एवा (चक्री के०) चक्रवर्त्ती थया ॥ ७ए ॥

आहिं श्रीअजितनाथनो तथा सगरचक्रवर्त्तीनो दृष्टांत होवाथी प्रथम श्रीअजितनाथ तीर्थंकरनी कथा कहे ले. शावस्तीनगरीने विषे जितशत्रु राजा तेमनी विजया नामे राणीना पुत्र श्रीअजितनाथ नगवान ते ज्यारें गर्भमां रह्या त्यारें तेमनी मातायें वृषनादिक चउद स्वप्नो दीगं तथा प्रनुजी गर्नगत थया, ते दिवसथी राजा साथें विजया राणी रमे तो तेमां राणीज जीतवा लाग्यां. त्यारें राजायें विचार्युं जे आ प्रनाव एना पेटमां गर्न रहेलो ले तेनो जाणवो परंतु कांइ मंत्रजंत्रथी राणी जीतती नथी. माटे प्रसवथया पछी तेनुं नाम अजित पाडयुं. पछी जन्मथया नंतर जन्मोत्सव

थयो उपन्न कुमारीकायें आवी सूतिका कर्म कर्युं. चोशठइंद्रोयें मेरुपर्वतनी उपर स्नात्रमहोत्सव कर्यो. ते स्वामीनो सुवर्ण सम वर्ण हतो, अने गजनुं लांछन हतुं. साडाचारसो धनुषनुं शरीरमान हतुं बोहोंतेरलाख पूर्व आयुष्य हतुं राज्यभोगवी सांवत्सरिकदान दइ चारित्र लइ,आठे कर्मनो नाश करी केवल ज्ञान पामी. तीर्थंकरनी लक्ष्मीनो उपभोग करीने मुक्तिने प्राप्त थया.

हवे सागरचक्रवर्त्तीनी कथा कहे छे. विनीता नगरीयें सुमित्र नामे राजा तेनी यशोमती राणीनी कुक्षिमां केसरी सिंहनी पेठें सगरचक्री उत्पन्न थया. गर्भरहेवाने समयें तेमनी माताने पण वृषभादिक चौद स्वप्न थयां पुत्र जन्म्या पछी तेनुं नाम सगर पाड्युं आयुधशालामां सगर कुमार गया, त्यां आयुधशालाने चलायमान करतो चक्र रत्न उपन्या पछी दक्षिण भरतार्द्धना त्रणखंम साधिने उत्तर भरतना त्रण खंमने साध्यानंतर अयोध्यामां आव्या पछी बत्रीश हजार राजायें सगरचक्रीने चक्रवर्त्तिनुं पद आपी अभिषेक कर्यो. एकदिवस अजितनाथ स्वामीनी वाणीने सांभली ते चक्रीयें श्रीशत्रुंजयपर्वतनी उपर ताम्रमय श्रीजिन प्रासाद करावी तेमां रत्नमय बिंबो पधराव्यां संघपति थइने अति विस्तारथी तीर्थ यात्रा करी अंते प्रव्रज्या ग्रहण करीने मुक्तिरूप लक्ष्मीने वरता हवा ए सगरचक्रवर्त्तीनी कथा.

तुल्यं तीर्थाधिपत्यं बलमपि सदृशं सर्वतीर्थंकराणां, किं
तु श्रीमल्लिनाथः प्रथयति सुकृतैः किंचिदाश्चर्यमुच्चैः॥
पूर्वाह्णे यस्य जज्ञे व्रतमपि सुलभं केवलं चापराह्णे,
ज्ञानं नाभेयवीरप्रभृतिजिनपतेरप्यभूद्यच्चिरेण ॥ ए० ॥

अर्थः– (तीर्थाधिपत्यं के०) तीर्थाधिपतिपणुं ते (सर्वतीर्थंकराणां के०) सर्व तीर्थंकरोनुं (तुल्यं के०) तुल्य छे तथा (बलमपि के०) बल पण सर्वतीर्थंकरोनुं (सदृशं के०) सरखुं छे. (किंतु के०) तो पण (श्रीमल्लिनाथः के०) श्रीमल्लिनाथ (उच्चैः के०) उत्तम एवा (सुकृतैः के०) सुकृतोयें करी (किंचित् के०) कांइक (आश्चर्यं के०) आश्चर्यने (प्रथयति के०) विस्तार करे छे, शुं आश्चर्य विस्तारे छे तो के (यस्य के०) जे श्रीमल्लिनाथने (पूर्वाह्णे के०) पूर्वप्रहरने विषे (व्रतमपि के०) व्रत पण प्राप्त थयुं (च के०) वली (अपराह्णे के०) अपराह्ण कालने विषे (सुलभं

के०) सुलन्न एवुं (केवलज्ञानं के०) केवल ज्ञान (जज्ञे के०) उपन्युं अने (नाभेयवीरप्रभृतिजिनपतेःअपि के०) ऋषभदेवथी वीरभगवान् प्रमुख जिनपतिने पण (यत् के०) जे केवलज्ञान (चिरेण के०) घणाकाले (अभूत् के०) थयुं. अर्थात् सर्व तीर्थंकर थकी मल्लीनाथ तीर्थंकरनो एटलो विशेष के बीजा तीर्थंकरने दीक्षा लीधा पढी घणाकालें केवलज्ञान थयुं अने मल्लिनाथने एकदिवसमांज व्रतादि सर्व प्राप्त थयां ॥ ए० ॥

आहीं मल्लीनाथनी कथा कहे ढे. मिथिलानगरीनेविषे श्रीकुंभनामा राजानी स्त्री प्रभावती राणीयें चउदस्वप्नायें सूचित तथा नील जेनो वर्ण ढे, कुंभनुं जेने लांढन ढे, पचवीश धनुष जेना देहनुं प्रमाण ढे एवा मल्लिनाथ तीर्थंकरने जन्म आप्यो. इंद्रोयें जन्ममहोत्सव कस्यो यौवन अवस्थामां पण जन्मथीज ब्रह्मचारी होवाथी पाणिग्रहण कर्युं नही अने राज्य पण ग्रहण कर्युं नहिं. सांवत्सरिक दान दीधा पढी स्वयमेव दीक्षा ग्रहण करी दिवसना प्रथम प्रहरमां व्रतनुं ग्रहण थयुं अने तेज दिवसना बीजा प्रहरमां प्रभुने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं ॥ ए० ॥ इति धर्मप्रकरः समाप्तः ॥

श्रुत्वाह्वानंस्त्रियस्तामनुसरतिरसोहंसकोन्नादपादे, ना
शोकः स्पृष्टमात्रस्तिलककुरुबकौचुंबनालिंगनाभ्यां ॥
पुष्प्येद्वक्त्राब्जवासाधिकरससुरयाकेसरश्चेद्विकारो, ऽप्ये
पांतत्सत्यकीत्राधिकविषयरतिर्यातुकिं नो भवार्त्तिं॥ए१॥

अर्थः—(स्त्रियः के०) स्त्रीना (आह्वानं के०) आह्वानने (श्रुत्वा के०) श्रवण करीने (रसः के०) पारो, ते (तां के०) ते स्त्रीने (अनुसरति के०) अनुसरे ढे. एटले तेनी पढवाडे जाय ढे. तथा (हंसकोन्नादपादेन के०) नेपुरें करी, अधिक नाद करता एवा स्त्रीना पगे करीने (स्पृष्टमात्रः के०) स्पर्श कराणो एवो (अशोकः के०) अशोक वृक्ष ते (पुष्प्येत् के०) पोषणने प्राप्त थाय ढे. तथा (तिलककुरबकौ के०) तिलक अने कुरबकनो वृक्ष, (चुंबनालिंगनाभ्यां के०) स्त्रीना चुंबन अने आलिंगनथकी पोषणने प्राप्त थाय ढे. अर्थात् बेहु वृक्षनां पुष्पो विकसित थाय ढे. (वक्त्राब्जवासाधिकरससुरया के०) कामिनीना मुखकमलना परिमलें करी अधिक ढे रस जेमां एवी मदिरायें करी ढांट्यो एवो (केसरः के०) केसर नामा वृक्ष पोषण था

य छे. (चेत् के०) जो वली (एषामपि के०) ए पूर्वोक्त वृक्ष वगेरे एकेंद्रिय जीवोने पण (विकारः के०) विषय विकार उत्पन्न थाय छे (तत् के०) तो (सत्यकीव के०) सत्यकीनी पेठे (अधिकविषयरतिः के०) अधिक छे विषयमां प्रीति जेने एवो जीव, (जवार्त्तिं के०) संसारना दुःखने (किं के०) केम (नो के०) नहि (यातु के०) पामे. अर्थात् एकेंद्रियने पूर्वोक्त विषयरसनी आसक्ति छे,तो सत्यकीनी पेठें बीजाने थाय तेमां तो शुंज कहेवुं ? तथा तेने संसार दुःखनी वृद्धि प्राप्त थाय तेमां शुं नवाइ ? ॥९१॥

आंहिं सत्यकी विद्याधरनी कथा कहे छे. चेडाराजानी सुज्येष्ठा नामे महोटी दीकरी साध्वी थइ हती तेने घणी स्वरूपवाली जोइने पेढालविद्याधरे जमरनुं रूप धारण करीने जोगवी तेने सत्यकी नामें पुत्र थयो तेणें रोहिणी प्रज्ञप्ति प्रमुख विद्याउ साधी पोतानी माताना शीलना लोपक पेढालने मारी नाख्यो ते सत्यकी महा समकेत धारी त्रणे काल जिनार्चामां तत्पर थइ तीर्थंकर नामकर्म उपार्ज्जन करतो हवो. तदनंतर ते स्त्रीलंपट थयो थको राजादिकनी स्त्रियोने विद्याबलथी लइ आवीने जोगववा लाग्यो, एकदा तेने मारवा माटे उज्जयणी नगरीयें चंडप्रद्योतन राजायें उद्घोषण कराव्युं तेवारें उमा नामें वेश्यायें राजाने आवी कह्युं के सत्यकीने हुं वश करीश पछी तमे मारजो एम कही शृंगार सजीने उमा वेश्या सात्यकीने मोह उपजाववा माटे जेवी रीतें सात्यकी तेना अंगने जूए तेवी रीतें उघाडां अंग मूकीने प्रतिदिवस अगासीमां आवी बेसे. एक दिवस तिहां बेठेली उमावेश्याने जोइने ते सत्यकीने मोह थयो तेवारें लुब्ध थइने बीजी स्त्रियोथी विरक्त थइ तेज स्त्रीने जोगववा लाग्यो. एकदा उमायें तेने एकांतमां पूछ्युं जे. तमारी पासे शी शी विद्या ले ? त्यारे तेणें कह्युं के मारे रोहिण्यादिक विद्याउ ले ते मारा अंगमां ले परंतु ज्यारें मैथुन करुं छुं त्यारें तेने मारा खड्गमां राखुं छुं त्यारें मारुं बल क्यांइ चालतुं नथी ते सर्व वात उमायें राजानी पासें निवेदन करी. वली उमायें कह्युं के शब्दवेधि जो कोइ पुरुष होय तो जे वखत ए मारे विषे आसक्त थयेलो होय ते वखत ते सिद्ध एने मारे तो तरत मरण पामे अन्यथा मरे नही, पछी राजायें शब्दवेधि पुरुषोनी परीक्षा करवाने अर्थे एकशो आठ कमल पत्र छेदाव्यां ते पुरुषें उमानी साथें मैथुनमां आसक्त थयेला सत्यकीने मारी नाख्यो,

सात्यकी मरीने नरकें गयो पछी तेना मित्र कालसंदीपक विद्याधरें नगरने चूरण करवा माटे एक शिला नगर उपर विकूर्वी. राजा ज्यारें भोगादि करे, त्यारे ते विद्याधर सात्यकीनो मित्र आवीने कहे के जो तुं मिथुनावस्था ने रूपें करी सात्यकीने पूजे, तो तुजने जीववा दश नहिं तो ताहरो नाश करीश आ वात सांभलीने राजायें जलाधारीमांहिं लिंगस्थापना करी तेनुं पूजन कर्युं ते दिवसथी लोकोमां लिंगपूजानो प्रचार चाल्यो. एम विषयासक्त प्राणी नरकें जाय ॥ ए१ ॥

संसारारण्यमध्ये मधुरसुखकटुप्रांतभृत्कामधूर्त्तो, दक्षा
न्मूढांश्च तत्तत्सुखलवभजनैः प्राणिनोविप्रतार्य ॥ हृत्वा
तत्पुण्यवित्तं गमयति कुगतिं ब्रह्मदत्तं यथातत्, पूर्वभ्रा
तेव धीरःशिवमटति पुनस्तं तपोऽस्त्रेणभित्वा ॥ ए२ ॥

अर्थः—(संसारारण्यमध्ये के०) संसाररूप वगडानेविषे (मधुरसुखकटुप्रांतभृत् के०) प्रथम मधुर अने अंते कडवा फलनो देनार एवो (कामधूर्त्तः के०) काम रूप धूर्त्त, (तत्तत्सुखलवभजनैः के०) ते तुच्छ विनिश्वर एवा लवमात्र सुखना भोगववायें करीने (मूढान् के०) मूढ (च के०) वली (दक्षान् के०) माह्या एवा (प्राणिनः के०) प्राणियोने (विप्रतार्य के०) छेतरीने (तत्पुण्यवित्तं के०) तेना पुण्यरूप वित्तने (हृत्वा के०) हरण करीने (ब्रह्मदत्तं यथा के०) ब्रह्मदत्तनेज जेम तेम (कुगतिं के०) नरकगति प्रत्यें (गमयति के०) पमाडे छे. (पुनः के०) वली (तं के०) ते कामदेवने (धीरः के०) धीर एवो (तत्पूर्वभ्राताइव के०) ते ब्रह्मदत्तनो पूर्वजन्मनो भाइ, जेम (तपोस्त्रेण के०) तपरूप अस्त्रें करीने (भित्वा के०) भेदीने (शिवं के०) मोक्षप्रत्यें (अटति के०) अटन करे छे. अर्थात् मोक्ष प्रत्यें जातो हवो. एम जाणवुं ॥ ए२ ॥

आंहिं ब्रह्मदत्तनी कथा कहे छे. कांपिल्यपुरने विषे ब्रह्मदत्तचक्री राज्य करे छे. एक दिवस त्यां तेनो पूर्वभवनो मित्र कोइक साधु आव्यो, तेने जोइने चक्रवर्त्तीने मोहोटो हर्ष उत्पन्न थयो. तदनंतर ते साधुयें ते चक्रवर्त्तीने पूर्वजन्म कहेवा मांड्या के हे राजन्! सांभल्य मारा अने तारा पूर्वभव हुं कहुं छुं ॥ श्लोक ॥ आश्वदासौ मृगौ हंसौ, मातंगावमरौतथा ॥

एपानोपग्रिकाजाति, रन्योन्याभ्यांवियुक्तयोः ॥ १ ॥ भावार्थः—आपणे बे पेहेलां घोडाना रखवाल हता त्यांथी मरी मृग थया, त्यांथी हंस थया, पछी हाथी थया, पांचमे भवे देवताउ थया अने आ आपणो छठो भव छे ॥ १ ॥ तेमां पूर्वभवें तें रूडीरीतें चारित्र पाल्युं, तेथी तुं चक्रवर्त्ती थयो छो अने हुं पुरिमतालने विषे धनदत्त व्यवहारीनो चित्रक नामा पुत्र थयो. तिहां श्रीगुरुनी वाणी सांभली वैराग्य उत्पन्न थवाथी में महाव्रत ग्रहण कर्यां. हमणां मुजने अवधिज्ञान उपन्युं छे तेथी हुं तने बोध करवा माटें आव्यो छुं. जे हवे तुं धर्माचरण कर. एम घणुं ते साधुयें कह्युं तोपण धर्माचरण न करतो छतो चक्री राज्य भोगववा लाग्यो, अने मरीने सातमे नरके गयो अने ते तेनो मित्र साधु हतो ते रूडीरीते व्रत आराधन करीने मोक्षने प्राप्त थयो ॥ ए२ ॥ इति विषयद्वारं ॥

गीतामृतातिरतिकर्णपुटस्त्रिपृष्ठ, पर्यंकपालइवक
ष्टमुपैति घोरम् ॥ सद्ध्वलुब्धककृताद्भुतगीतलु
ब्धं,बद्धं विलोकय मृगं भयविह्वलांगम् ॥ए३॥

अर्थः—(गीतामृतातिरतिकर्णपुटः के०) गीतरूप अमृतनेविषे छे अत्यंत प्रीति जेने एवा छे कर्णपुट जेना एवो (त्रिपृष्टपर्यंकपालइव के०) त्रिपृष्टराजानो शय्यापालक तेज जेम, एटले ते शय्यापालकने त्रिपृष्ट राजायें कह्युं के हुं ज्यां पर्यंत निद्रा न पामुं त्यां पर्यंत तुं गान थवा देजे, पछी गान बंध करावजे. हवे जेवारें राजाने निद्रा आवी तेवारें गान मांहे आसक्त थयेला एवा शय्यारक्षकें ना न पाडवाथी ते गान चालवा लाग्युं, तेथी ते शय्यापालक (घोरं के०) घोर एवा (कष्टं के०) कष्टने (उपेति के०) प्राप्त थयो. वली जुवो के (सद्ध्वलुब्धककृताद्भुतगीतलुब्धं के०) छल युक्त एवा पारधीयें करेला अद्भुत गीतनेविषे लोभायेलो एवो अने ते गाने करी (बद्धं के०) बंधायेलो तथा तदनंतर ते लुब्धकना (भयविह्वलांगं के०) भयें करी कंपायमान जेनुं अंग छे अर्थात् लुब्धकें कंपावेला एवा (मृगं के०) मृगने (विलोकय के०) हे भव्यजनो ! तमें जुवो ॥ ए३ ॥

थांहिं त्रिपृष्ठी राजाना शय्यापालकनी कथा कहे छे. द्वारवति पुरीने विषे त्रिपृष्ठी नामा वासुदेव राज्य करे छे, एक दिवस तेनी आगल रूडा स्वरवा

ना गंधर्व गान करता हता, तिहां पोताना शय्यापालकने त्रिपृष्ट राजायें कह्युं के हुं निद्रावश थाउं तदनंतर गीतगान बंध करावजे. तथापि गीतगान मां लुब्ध थयेला ते शय्यापालकें राजाने निद्रा आव्या पछी पण गान श रु रखाव्युं तेथी राजा जागी गयो, अने कोपायमान थइने कहेवा लाग्यो के हे दुष्ट! तें आ मारा कहेवाथी उलटुं कर्युं अने कर्णासक्तिने लीधे तें गान शरु रखाव्युं माटे तुं शिक्षापात्र ठो एम कहीने ते शय्यापालकना कानमां शीशुं तपावीने रेड्युं. तेथी ते मरण पामीने नरकें गयो. अने त्रि पृष्ट राजानो जीव अनुक्रमें केटला एक भव संसारमां करी चोवीशमा तीर्थं कर श्रीवीरभगवान् थया. ते वखत शय्यापालकनो जे जीव हतो ते अनुक्रमें गोवालियो थयो. पूर्वजन्मना वैरथकी ते गोपालें श्रीवीरना कानने विषे कटा हवंशशिलाकनुं क्षेपण कर्युं ते मरण पामीने नरके गयो. ए प्रमाणें त्रिपृ ष्टि राजाना शय्यापालकनी कथा कही ॥ ए३ ॥

स्यात् क्षुल्लकाभिधकुमारवदस्थिरेषु, स्थैर्याय गीतम
पि बोधकरं कदाचित् ॥ बालोपि निर्वृतिमुपैति निशम्य
सम्यक्, मात्रोदितानि कलमन्मथगीतकानि ॥ ए४ ॥

अर्थः-(अस्थिररेषु के०) अस्थिर पदार्थोने विषे (स्थैर्याय के०) स्थै र्यने माटे (गीतमपि के०) गीत पण (कदाचित् के०) क्यारेंक (क्षुल्लका भिधकुमारवत् के०) क्षुल्लक नामा कुमारनी पेठें (बोधकरं के०) बोध क रनारुं (स्यात् के०) होय. (बालोपि के०) बालक पण (मात्रोदितानि के०) मातायें कहेलां एवां (कलमन्मथगीतकानि के०) मनोहर काम गी तोने (सम्यक् के०) रूडे प्रकारें (निशम्य के०) सांभलीनें (निर्वृतिं के०) निर्वृतिनें (उपैति के०) प्राप्त थाय अर्थात् सुगीतथी पण बोध थाय ठे ॥

आ श्लोकमां क्षुल्लककुमारनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ठे. पूर्वे चंपापुरीनेविषे वज्रबाहु राजा राज्य करे ठे, केटला एक कालें राजा मर ण पाम्यो तेनो भाइ वज्रजंघ राजा राज्यगादीयें बेठो तेवारें वज्रबाहु रा जानी स्त्री पोताना पुत्रना संरक्षणने माटे पुत्रने लइने त्यांथी नाशीने म थुरामां आवी साध्वीनी पासे पुत्र सहित प्रव्रज्या ग्रहण करीने एक सा ध्वीनी पासें रही, अने तेनो क्षुल्लककुमार पुत्र श्रीगुरुनी पासें शास्त्रने भणतो

रह्यो. केटला एक काळें ते क्षुल्लककुमारें व्रतने मूकवानी इच्छा करवा मांमी, त्यारें तेनी मातायें तथा महोटा महोटा जनोयें उपाध्यायोयें आचार्यों यें मळी समजाववाथी तेनी दाक्षिणतायें करी बार वरस पर्यंत दीक्षा पाली. पछी पोताना काका वज्रजंघें राज्य दबावेलुं हतुं तेने लेवा माटे पोताने गाम गयो, त्यां राजसन्नामां नाटक थतुं हतुं. ते समयमां नाटक करनारनी स्त्री नटी थाकी गयेली होवाथी ते समय वृद्ध एवी कोइक स्त्रीयें गीतमध्यें एक गाथा कही. ते जेम के " सुठुगाइअं सुठुवाइयं, सुठु नच्चियं साम सुंदरी ॥ अणुपालियं दीहराईयं, उंसुमिणंते मा पमायए ॥ १ ॥ ए गाथा सांजळतां वेंत क्षुल्लक कुमारें रत्नकंबल ते वृद्ध नाटिकाने आप्यो, अने व्यवहारीनी स्त्रीयें रत्नजडित सोनानुं कंकण हतुं ते अर्पण कर्युं तथा मंत्री बेगो हतो तेणें सोनानी मुद्रिका आपी. राजाना पुत्रें एकावल हार समर्पण कर्यो, अने हस्तिपालकें कनकनो अंकुश अर्पण कर्यो. त्यारे ते सर्व आपनारने राजायें पूछ्युं जे तमोयें एने दान केम आप्युं? त्यारें क्षुल्लकें राजग्रहणादि सर्व स्वरूप कह्युं ते सर्व क्षुल्लक कुमारनी सायें प्रतिबोध पाम्यां क्षुल्लककुमार श्रीगुरुनी समीप जइने प्रायश्चित्त ग्रहण पूर्वक दीक्षाराधन करीने रूडी गतिने प्राप्त थयो. ए प्रमाणें एक गाथाना गीतें करी बोध पाम्या.

नोविंदत्युष्णशीताद्यपि न सदसदप्युक्तमाविष्करोति, डुः
सगंधान्न वेत्ति प्रथयति न रसान् रूपनिर्मग्नदृष्टिः ॥ तद्दृ
ष्टेकेंद्रियेऽस्मिन्नहितहितमतिः कः कुमाराग्रनंदो, चंपापृः
स्वर्णकारे विवशहशि यथा पंचशैलेशदेव्योः ॥ ए७ ॥

अर्थः-(रूपनिर्मग्नदृष्टिः के०) रूपने विषेज ते निमग्न दृष्टि जेनी एवो पुरुष. (उष्णशीताद्यपि के०) उष्ण शीतादिकने पण (नोविंदति के०) जाणतो नथी विचारणायें विचारतो नथी एणें करी शरीरेंद्रियनो जाय कह्यो, वळी (सत् के०) सारुं अने (असत्अपि के०) खराब (उक्तं के०) कहेलुं तेने पण (नआविष्करोति के०) प्रगट करतो नथी. काने आणनो नथी एणें करी कर्णेंद्रियनो जाव कह्यो. तथा (डुःसगंधान के०) सुगंध डुर्गंध ने (नवेत्ति के०) जाणतो नथी एणें करी घ्राणेंद्रियनो जाव कह्यो. तथा (रसान के०) रसोंने पण (नप्रथयति के०) विस्तार करतो नथी अर्थात्

त् पट्रस पण जाणतो नथी एणें करी रसनेंद्रियनी जावरहितता कही. एटले ए सर्व इंद्रियोने विषे जावरहितपणानुं प्रतिपादन करवाथी मात्र (अस्मिन् के०) आ (एकेंद्रियें के०) एक चक्षुरिंद्रियना व्यापारमां आसक्त होवाथी (तत् के०) ते रूप (दृष्ट्वा के०) जोइने (अहितहितमतिः के०) अहित अने हितनी मति वालो (कः के०) कोण उत्पन्न थाय ठे ? त्यां कहे ठे के (चंपापूःस्वर्णकारे के०) चंपापुरीनो सोनी (कुमाराग्रनंदी के०) कुमाराग्रनंदी (पंचशैलेशदेव्योः के०) पंचशैलद्वीपनी हासा प्रहासा नामनी देवीयोनुं रूप जोइने (यथा के०) जेम (विवशदृशि के०)पर वश दृष्टि थये ठते ते द्विपें गयो.

आंहिं कुमारनंदीसुवर्णकारनी कथा पूर्वे कहेली ठे तो पण आंही कहे ठे. चंपापुरीने विषे कुमारनंदी नामा सुवर्णकार आठ कोटी सुवर्णनो धणी अने पांचशे स्त्रीनो स्वामी हतो,एक दिवस ते हासा अने प्रहासा नामनी देवीयोनुं रूप जोइने मोह पामीने तेमने विषय सेववानी प्रार्थना करी त्यारे व्यंतरियोयें कह्युं के तारें इछा होय तो पंचशैल द्वीपमां आवजे. ते सुवर्णकारे उद्घोषणा करावी के जे कोइ मने पंचशैलद्वीपमां पोहोंचाडे, तेने हुं त्रण लाख सुवर्ण आपुं. ते वात सांजलीने कोइ वृद्ध नाविक हतो, तेणे तेने पंचशैलद्वीपें पोहोंचाड्यो. त्यां देवीयोयें नाकारो करवाथी अग्निमरण करीने ते देवीयोनो स्वामी विद्युन्माली देव थयो ॥ ए५ ॥

आस्तां सत्यं रूपमालेख्यविंब, स्यालोकेऽपि
क्लेशएवातिरागात् ॥ सुज्येष्टाश्रीश्रेणिकक्ष्मापव
त्स्यात्, नेणश्रांतिर्भ्रांतवारीक्षणात्किम् ॥ ए६ ॥

अर्थः–(सत्यं के०) प्रकट एवुं (रूपं के०) रूप (आस्तां के०) रहो अर्थात् प्रकटरूप तो दूर रहो, परंतु (आलेख्यविंबस्य के०) चित्रित एवा रूपना (आलोकेऽपि के०) जोवानेविषे पण (अतिरागात् के०) अत्यंत राग थकी (क्लेशएव के०) क्लेशज थाय ठे. (सुज्येष्टा के०) सुज्येष्टा स्त्रीनी, तथा (श्रीश्रेणिकक्ष्मापवत् के०) श्रीश्रेणिक राजानी पेठें (स्यात् के०) होय, एटले जेम सुज्येष्टानुं स्वरूप पट्टमां आलेखेलुं जोइने श्रेणिक राजाने मोह थयो, तेथी क्लेशने प्राप्त थयो, अजयकुमारें खोदेली सुरंगने रस्ते जइने श्रेणिक सुज्येष्टाने बदले चिलणानेज ग्रहण करीने पोताने

नगरें गयो. तथा (एणभ्रांतिः के०) हरणने थाक (भ्रांतवारीकृणात् के०) जलझांझवाना जोवाथी (किंन के०) शुं न होय. ना होयज ॥

आहिं सुज्येष्टानी कथा कहे ठे. विशाला नगरीयें चेडा महाराजानी सुज्येष्टा नामे दीकरी हती तेनी पासें एकदा कोइक तापसणी मिथ्यात्व नुं प्रतिपादन करवा लागी तेने सुज्येष्टायें निर्भंठी तेथी ते तापसणी तेनुं यथास्थित रूप पटमां आलेखीने राजगृहमां जइ श्रेणिकराजाने देखाड्युं, ते जोइने राजा मोह पाम्यो. पठी अजयकुमार श्रेणिकराजानुं रूप पटमां आलेखीने विशाला नगरीमां गयो, त्यां वणिक थइ सुगंधि वस्तुनी डुकान मांमी श्रेणिकराजानो चित्रपट लइने बेठो. सुज्येष्टाने श्रेणिकराजानुं चित्र देखाड्युं ते जोइने सुज्येष्टा पण श्रेणिकराजामां तल्लीन थइ गइ. पठी अजयकुमारें धरतीमां सुरंग खोदी, ते सुरंगेथी श्रेणिक राजा आवीने सुज्येष्टाने स्थानकें चिल्लणाने लइने पोताने पुर आव्यो. एम पटमां आलेखेलुं रूप जोवाथी परस्पर मोह प्राप्त थयो ॥ ए६ ॥

स्याद्गंधोपि यतस्ततोऽप्यधिगतः क्लेशाय नाशाय च,त
च्चाणाक्यधियाऽतुरः श्रुतिमगान्मंत्री सुबंधुर्न किं ॥ प
श्य क्लिश्यति पुष्पसौरभधृतः सर्पः सदर्पोपि सन्, सा
यं चांबुजकोशबंधनमलिः प्राप्नोति गंधात्तितट् ॥ ए७॥

अर्थः—(यतस्ततोपि के०) ज्यांथी त्यांथी पण (अधिगतः के०) आव्यो एवो (गंधोपि के०) गंध पण (क्लेशाय के०) क्लेशने माटे (च के०) वली (नाशाय के०) नाशने माटे (स्यात् के०) होय, केनी पेठें? तो के (चाणाक्यधिया के०) चाणाक्यनी बुद्धियें करी एटले चाणाक्ये प्रपण करेला पुष्पपुटना सुगंधना सुंघवाथकी (आतुरः के०) आतुर थको क्लेशने प्राप्त थयेलो एवो (सुबंधुःमंत्री के०) सुबंधुनामा मंत्री ते हे भव्यो? (किं के०) शुं तमारा (श्रुतिं के०) कर्ण पुट प्रत्यें (न अगात् के०) न आवतो हवो? एटले पुष्पपुटना सुंघवाथी कष्टने प्राप्त थयेला एवा सुबंधु मंत्रीने हे भव्यजनो! तमोये शुं नथी सांजल्या? वली (पश्य के०) जुवो (सदर्पोपिसन् के०) अहंकारयुक्त एवो ठतो पण (सर्पः के०) सर्प,

(पुष्पसौरभधृतः के०) पुष्पसौरभने धारण करतो बतो (क्लिश्यति के०) क्लेश पामे बे. एटले सुगंधनी लालचमां नाखीने ते सर्पने गारुडी लोको बंधनमां नाखी दुःख आपे बे. (च के०) वली (गंधातितृट् के०) गंध ने विषे अत्यंत बे तृष्णा जेने एवो (अलिः के०) भ्रमर, ते (सायं के०) सायंकालने विषे (अंबुजकोशबंधनं के०) कमल कोशना बंधनने (प्रा प्नोति के०) पामे बे. एटले भ्रमर जे बे ते सुगंधना लोभें कमल गंधने ले वा माटे कमलमां जइ बेसे, तेवामां सायंकाल पडवाथी कमल कोशबंध थइ जाय. तेथी तेमांज मरण पामे, माटे अतिसुगंधासक्त प्राणी सुबंधु मंत्री अने सर्प तथा भ्रमरनी पेठें क्लेश पामे बे. (तत् के०) ते माटे गंध नी अत्यासक्तिनो त्याग करवो ॥ ८७ ॥

आहीं सुबंधु मंत्रीनी कथा कहे बे. पाडलीपुरने विषे मौर्यवंशनो चं द्रगुप्त नामा राजा राज्य करे बे तेनो बुद्धिचतुर चाणाक्य नामा मंत्री बे, ते चाणाक्यें अवसर पामीने भातमां थोडुं थोडुं विष नाखीने राजाने खवराव्युं एक दिवस कोइएक राजानी राणी पोताना स्वामीनी साथें ज मवा बेठी परंतु ते तो जमतांज विष प्रयोगें करी मरण पामी. चाणाक्यें राणीनुं उदर विदारीने पेटमां गर्भ हतो तेने जीवतो काढयो ते बोकरानुं नाम बिंदुसार एवुं आप्युं. चंद्रगुप्त स्वर्गमां गयो त्यारें तेनो पुत्र बिंदुसार राजगादीयें बेठो. एवा वखतमां चाणाक्यनो वैरी सुबुद्धि नामनो मंत्री हतो तेणे एकांते बिंदुसार राजाने कह्युं के तमारी मातानुं पेट, चाणाक्यें फोडी नाख्युं, ते सांभली राजाने रीश चडी पढी प्रभातमां ज्यारें चाणा क्य आव्यो त्यारे तेनाथी पराङ्मुख थइ बेठो. ते राजायें सुबंधुने घर आप्युं, ते घरमां एक मंजुषा हती तेमांथी एक सुगंधवासनो दाबडो सुबंधुने मल्यो,सुगंधयुक्त वासनुं आघ्राण कर्युं तेमां लखेलो एक पत्र मली आव्यो, तेमां लख्युं हतुं जे आ सुगंधोने सुंघीने जे पोतें भोग वशे, रूडा वस्त्रोने धारण करशे, रूडां भोजन करशे ते मरण पामशे अने आ दाबडाने सुंघी ने ऋषिनी पेठें जे रहेशे, ते जीवशे. इत्यादि वांचीने विपरीत चालवाथी सु बंधु मंत्री आ लोकमां महाकष्टोने पाम्यो अने परलोकें नरकनां दुःख पाम्यो.

विस्रैर्धातुभिरंगमेतदघटि प्रागेव तत्राप्यहो, दुर्गं
धः प्रतिकर्मणापि हि वहिः प्राक्कर्मतःकश्चन ॥ दु
र्गंधेव मृगातनूजवदतः सौरस्ययत्नोत्रको, गंधद्रव्य
चयैर्निबोध शुचिता का नीलिकाभाजने ॥ ए७ ॥

अर्थः-(विस्रैः के०) बीभत्स एवा (धातुभिः के०) सात धातुयें करीने (एतत् के०) आ (अंगं के०) अंग, (प्रागेव के०) पूर्वेज (अघटि के०) बनेलुं डे. (तत्रापि के०) वली ते अंगने विषे पण (अहो के०) आश्चर्ये (कश्चन के०) कोइक (प्राक्कर्मतः के०) पूर्वकर्मना योगथी (दुर्गंधेव के०) दुर्गंधानामा नारीनीपेठें तथा (मृगातनूजवत् के०) मृगापुत्र लोढकनी पेठें (दुर्गंधः के०) दुर्गंध थाय डे, तो तेना (प्रतिकर्मणापि के०) दुर्गंध मटाडवाने माटे (वहिः के०) बाह्यकृत्रिम स्नानादि शुश्रूषायें करीने शुद्ध करे डे, तो पण (हि के०) निश्चें ते दुर्गंधज निकले डे, (अतः के०) ए कारण माटे (अत्र के०) ए पूर्वोक्त अंगने विषे (गंधद्रव्यचयैः के०) गंधद्रव्यना समूहोयें करी (सौरस्ययत्नः के०) सुगंधनो यत्न (कः के०) शो करवो? एम हे जव्य! तमे (निबोध के०) जाणो जे (नीलिकाभाजने के०) गलिना पात्रने विषे (शुचिता के०) पवित्रता (का के०) शी करवी? तेम आ शरीरनुं पण जाणी लेवुं ॥ ए७ ॥

आंहिं लोढकनी कथा कहे डे. चंपानगरीने विषे जितशत्रु राजानी मृगावती राणीना उदरथी कोइक पापी जीव प्रसूत थयो. तेने पग, हाथ, कान, आंखो, तथा मस्तक ए कांइ हतां नही मात्र जेवो पाषाणनो लोढक होय, तेवो ते हतो, तेथी पुत्रनुं लोढक नाम आप्युं. एक कल्लशी अनाजनो महोटो ढगलो करी तेनी उपर ते लोढकने बेसाडीने तेनी उपरथी लोटावे त्यारें तेना मुख रूप द्वारमां अनाज पेसवाथी पोषण थाय. ए प्रकारें आहार करे डे. एकदा त्यां श्रीवीरभगवान आवता हवा, तेनी साथें श्री गौतम गणधर हता. तेणें ते लोढकनुं स्वरूप जोइ विस्मय पामीने श्रीवीरभगवानने पूढ्युं के हे जगवन्! आणे पूर्वजन्में शुं पाप कर्युं हशे? जे कर्मे करी आवो थयो? त्यारें श्रीवीरभगवाने कह्युं के पूर्वजन्मने विषे लोढकनो जीव, मकाती नामा क्षत्रिय हतो, ते प्रकृतियें करी निर्दय हतो, अने गोधनने चा

तेने छोडाव्यो नही. अभय कुमारे तेने राजगृही नगरीनेविषे लावीने श्रेणिकने अर्पण कर्यो, पछी श्रेणिकें तेने दया करीने छोडाव्यो ॥ ९९ ॥

यः स्पर्शसौख्यलवमिछतिमूढबुद्धिः, सिद्धिप्रदेन तपसा सुकुमारिकेव ॥ चिंतामणेः सकलभूतलराज्यदातु, र्बालः सभृष्टचणकान् वृणुते क्षुधार्त्तः ॥१००॥

अर्थः—(यः के०) जे (मूढबुद्धिः के०) मूढ छे बुद्धि जेनी एवो पुरुष, (सिद्धिप्रदेन के०) सिद्धिने देनारा एवा (तपसा के०) तपें करीने (सुकुमारिकाइव के०) सुकुमारीकानी पेठें, (स्पर्शसौख्यलवं के०) स्पर्श इंद्रिय रूप सुखना लेशने (इछति के०) इछा करे छे, (सः के०) ते (बालः के०) मूर्खजन, (सकलभूतलराज्यदातुः के०) समग्र पृथ्वीना राज्यने देनारा एवा (चिंतामणेः के०) चिंतामणिथी (क्षुधार्त्तः के०) भूख्यो छतो (भृष्टचणकान् के०) भुंजेला चणाने (वृणुते के०) मागे छे. एम जाणवुं. अर्थात् जे तपश्चर्या करी फरी विषय सुखनी इछा करे छे, ते चिंतामणि छोडीने शेकेला चणानी इछा करे छे एम जाणवुं ॥ १०० ॥

आंहि सुकुमालिकानी कथा कहे छे. मथुरापुरीमां सागरदत्तश्रेष्ठीनी दीकरी सुकुमालिका करीने हती ते यौवनावस्था पामी तेवारें समुद्रदत्तव्यवहारीना पुत्रनी उपर मोहित थइ तेने घरजमाइ करीने ते कन्या परणावी दीधी परंतु तेनुं अंग अंगारानी पेठें तपतुं हतुं तेथी तेनो स्वामी तेने स्पर्श करवा जाय तेवामां दाजवा लाग्यो तेवारें ते स्त्रीने एमज शय्यामां सुतेली मूकीने पोताने घेर जतो रह्यो पाछलथी ते रुदन करवा लागी त्यारें माता पितायें रुदन करती अटकावी. तदनंतर कोइक भिक्षाचरनें तेने आपी, ते पण तेवी रीतें तेने छोडीने चाल्यो गयो, पछी पिताने घरे रही दान देवा लागी, तेवामां कोइ साध्वी त्यां आवी तेणे प्रतिबोध कर्यो तेथी वैराग्य पामीने दीक्षा ग्रहण करी, महोटुं तप करवा लागी, एक दिवस वनमां आतापना करती हती एवामां तेणें एक गणिकाने पांच पुरुषें सेवेली नजरें जोइ, तेवारें विचारवा लागी के अरे मारे आ भवमां एक पण स्वामी थयो नहीं आ भाग्यशाली स्त्रीने पांच स्वामी भोगवे छे, ते माटे मारे पण पांच भर्त्तारो थाय तो ठीक? एवुं नियाणु करी

मरीने देवपणुं पामीने पछी पांच पांडवोनी द्रौपदी नामें स्त्री थइ ॥१००॥

निःसत्वं निर्दयत्वं विविधविनटनाशौचनाशात्महानि,
रस्वास्थ्यं वैरवृद्धिर्व्यसनफलमिहामुत्र दुर्गत्यवाप्तिः॥ चौ
लुक्यक्ष्मापवत्तद्व्यसनविरमणे किं न दक्षा यतध्वं, जा
नंतोमांधकूपे पतत चलत मा दृग्विपाहेःपथा हे ॥१०१॥

अर्थः—(निःसत्त्वं के०) निःसत्त्वपणुं तथा (निर्दयत्वं के०) निर्दय पणुं अने (अस्वास्थ्यं के०) अस्वस्थपणुं (वैरवृद्धिः के०) वैरनी वृद्धि, (शौचनाशात्महानिः के०) पवित्रतानो नाश, तथा आत्मानी हानि, (विविधविनटना के०) विविध प्रकारनी जे जीवोने विडंबना ते सर्व (व्यसनफलं के०) कुव्यसननां फल ते (इह के०) आ लोकमां प्राप्त थाय वे अने (अमुत्र के०) परलोकमां तो ए कुव्यसन थकी (दुर्गत्यवाप्तिः के०) दुर्गतिनी प्राप्ति थाय ठे. केनी पेठें ? तो के (चौलुक्य क्ष्मापवत् के०) चौलुक्य राजानी पेठें, (तत् के०) ते कारण माटे (व्यसन विरमणे के०) व्यसननाविरमणने विषे (दक्षाः के०) हे माह्या पुरुषो ! (किं के०) शुं (नयतध्वंके०) यत्न नथी करता? अर्थात् ते व्यसन त्यागनो हे माह्या जनो ! तमो यत्न करो. (जानंतः के०) जाणता ठता (अंध कूपे के०) आंधला कूवाने विषे (मापतत के०) म पडो, अने (दृग् विपाहेः के०) दृष्टिमांज जेने विष रह्युं ने एवा सर्पना (पथा के०) मार्गे (हे के०) हे दक्षो ! तमें (माचलत के०) म चालो अर्थात् दृष्टिविषयुक्त सर्प ज्यां रहे ने ते मार्गमां तमो चालो नहिं ॥ १०१ ॥

आंहिं कुमारपाल राजानी कथा कहे ने. अणहिलपुर पाटणने विषे चौलुक्यवंशनो कुमारपाल राजा राज्य करतो हतो. ते राजा, कलिकालमां सर्वज्ञ बिरुदधारक, त्रण क्रोड ग्रंथना कर्ता एवा प्रभुश्री हेमाचार्यना वच नोयें करी बोध पामी परम जैनधर्मी थयो, तेणे पोताना अढार देशमांथी सात दुर्व्यसन निवृत्त कर्यां अने पोताना देशोमां रहेली कंटकेश्वरी देवी नी आगल पाडाउनो नाश थतो हतो, ते सर्व निवृत्त कराव्यो, तथा तेना राज्यमां कोइ जू पण मारे नही एवो हिंसानो निषेध कर्यो. जो कोइ जू ने मारे तेनो दंम करीने ते द्रव्यथी जु विगेरे जंतुना नाना महोटां रक्षण

स्थान कराव्यां हतां द्यूत तथा मारी शब्दना कथनें करी पोतानी बेहेनना वर शाकंभरी राजाने शिक्षा करी मांस भक्षण करनार पासेंथी दंम लइने बत्रीश जैनप्रासाद कराव्यां,ए प्रकारें साते दुर्व्यसननो नाश कस्यो ॥१०१॥

रुक् पथ्यं च रसैर्यथा बहुतया संसेवितैर्लोलुपै, र्धीरै र्यद्विधिना भवेदपि ॥ पाठांतरे ॥ (बहुतया घूनेन संतोषि णा योग्यायोग्यतयाशितैरिह) तथा संसारमोक्षावपि ॥ यन्नानारसलालसःस मथुरामंगुर्भवं भ्रांतवान्, यत्ती र्णश्च सुढंढणः सममघैः सन्मोदकक्षोदकः ॥ १०२ ॥

अर्थः–(लौलुपैः के०) रसलोलुप एवा पुरुषोयें (बहुतया के०) घणी रीतें (संसेवितैः के०) सेवन करेला एवा (रसैः के०) रसोयें करी (रुक् के०) रोग (यथा के०) जेम थाय छे (च के०) वली (तथा के०) तेम (धीरैः के०) धीर पुरुषोयें (यत् के०) जे (विधिना के०) विधियें करीने सेवन करेला रसें करी (पथ्यंअपि के०) पथ्य पण (भवेत् के०) थाय (पाठांतरथी) (बहुतयाघूनेन के०) अत्यंत भोजनना प्रीतिवानें तथा (संतोषिणा के०) भोजनमां संतोषी एवा पुरुषें (योग्यायोग्यतयाऽशितैः के०) योग्यायोग्य भोजनथी (इह के०) आहिं (तथा के०) तेम (अपि के०) वली (संसारमोक्षावपि के०) संसार अने मोक्ष पण प्राप्त कराय छे. अर्थात् रसलोलुपने संसार वृद्धि अने त्यागीने मोक्ष थाय छे. जुवो (यत् के०) जे कारण माटे (नानारसलालसः के०) नाना प्रकारना रसमां लोलुप एवो (सः के०) ते प्रसिद्ध (मथुरामंगुः के०) मथुरामंगु नामा आचार्य (भवं के०) संसार प्रत्यें (भ्रांतवान् के०) भमतो हवो (यत् के०) जे कारण माटे (च के०) वली जुवो ते केवो ? (सन्मोदकक्षोद कः के०) सारा लाडुने चूर्ण करी परठवनार एवो (सुढंढणः के०) सुढंढ ण मुनि, ते (अघैःसमं के०) पाप सहित (तीर्णः के०) संसारथी तरी ग यो. अर्थात् मोक्षने प्राप्त थयो, एटले रसलोलुपतायें मथुरामंगु दीर्घ संसा री थयो, अने ढंढणमुनि रसलोलुप न होवाथी संसारथी तरी गयो, पाठां तरथी अत्यंत भोजनप्रिय पुरुषें तथा भोजनमां संतोष राखनारा एवा पु

रुपोयें योग्यायोग्यना विचारथकी वर्त्तवुं, रसलोलुपत्व गेडवुं ॥ १०२ ॥

आंहिं मथुरामंगु तथा ढंढणमुनिनी कथामां प्रथम मथुरामंगुनी कथा कहे ठे. मथुरानगरीने विषे मथुरामंगु नामा आचार्य पांचशे साधुयें युक्त रह्या हता, तेने पुरमां रहेतां रसलांपट्य वृद्धिंगत थयुं. ते आचार्य मरण पामीने ते पुरनी खाल पासें देवकुलमां यक्ष थयो. ते पठी जे अनुगमना दिकने माटे साधु आवे, तेने पोताना मुखें करी खेंचीने मोहोटी जीन काढी देखाडे ठे. ते यक्षें प्रतिदिन एम करवा मांमधुं, एक दिवस साहसि क कोइ साधु हतो, तेणे पूठ्युं, के तुं कोण ठो? अने शामाटे जीन नित्य देखाडे ठे, तेनुं कारण अने तारुं स्वरूप कहे? त्यारें यक्ष कहेवा लाग्यो के, हुं तमो सर्व साधुउनो गुरु मथुरामंगु नामा आचार्य हुं. रसलांपट्यें करी मरण पामीने पुरनिर्धमणने विषे यक्ष थयो हुं, तमोयें पण रसलांप ट्यनो त्याग करवो, जिव्हादि इंद्रियोनो जय करवो. एम उपदेश कर्यो.

हवे ढंढणमुनिनी कथा कहे ठे. द्वारकाने विषे श्रीकृष्णनी ढंढणा ना मा राणी हती, तेनी कुक्षिरूप सरोवरमांथी हंसनी पेरें ढंढण नामा पुत्र उत्पन्न थयो, तेणे एक दिवस श्रीनेमिनाथ पासेंथी देशना सांनलीने स्त्री त्यागीने स्वामीनी पासें दीक्षा लीधी. ए अवसरनेविषे पोताना क्षेत्रने वि षे पूर्वजन्में साधुने दान आपतां अंतराय करेलो हतो, ते कर्मनो उदय आववाथी ज्यां वोरवा जाय, त्यां साधुने कल्पे, एवी निक्षा मले नहिं, एम ठ मास पर्यंत तेणे उपवास कर्या, एकदिवस श्रीनेमीश्वर नगवानने श्रीकृष्णें पूठ्युं के महाराज! तमारा अढार हजार साधुउ ठे तेमां उत्कृ ष्ट तपस्वी कोण ठे? ते कहो. नगवानें कह्युं के ढंढणकुमार जेवो कोइ पण मुनि नथी. ते सांनली श्रीकृष्ण प्रसन्न थया अने हाथी उपर चढीने गा ममां आवे ठे त्यां सामा आवता ढंढणकुमारने जोइने हाथीथी उतरीने ढंढ णमुनिने वंदन कर्युं, ते कोइ गवाक्षमां बेठेला व्यवहारीयें जोयुं. तेणे श्री कृष्णें वंदन करवाथी ढंढणमुनिनुं माहात्म्य जाणीने त्यां आवी ढंढणमुनि ने घेर बोलावीने मोदक वोराव्या. ते मोदक नगवानने देखाडवाथी नग वानें कह्युं ए लब्धि श्रीकृष्णथी मली ठे एवुं सांनली ते मोदकनुं चूर्ण क री परठवी आव्या. पठी शुक्लध्यानमां रही केवलज्ञान पाम्या ॥ १०२ ॥

किं जेयो रसनेंद्रियेण स महान् यः सत्वरक्षारुचि,
र्यद्वद्धर्मरुचिः कुतुंबकमसौ पक्वाम्रवद्भक्षयेत् ॥ किं
वा विश्वहिताय नोदरगतं सिंधुर्दधौ वाडवं, सारग्रा
हि सुरास्तमाशु न विषं किं नीलकंठः पपौ ॥ १०३ ॥

अर्थः– (यः के०) जे (महान् के०) महोटो पुरुष इंद्रिय लोलुप ता रहित एवो ठे, (सः के०) ते पुरुष, (किं के०) शुं (रसनेंद्रियेण के०) रसना इंद्रियें करीने (जेयः के०) जितवायोग्य ठे ? ना नथीज. के नी पेठें ? तो के (सत्त्वरक्षारुचिः के०) जीव रक्षणमां ठे रुचि जेने एवो (असौ के०) आ प्रसिद्ध (धर्मरुचिः के०) धर्मरुचिनामा साधु तेण (कुतुंब कं के०) कडवा तुंबडाने (यद्वत् के०) जेवी रीतें (पक्वाम्रवत् के०) पा केला आम्रफलनी पेठें (नक्षयेत् के०) नक्षण कर्युं त्यां दृष्टांत कहे ठे (विश्वहिताय के०) विश्वना हितने माटे (सिंधुः के०) समुद्र (उदरग तं के०) उदरमां रहेला (तं वाडवं के०) ते वडवानलने (किंवा के०) शुं वली (नदधौ के०) न धारण करतो हवो अर्थात् वडवानलने धारण करतो हवो, तथा (सारग्राहिसुराः के०) समुद्रमंथन करती वखतें सारना ग्रहण करनारा देवताउ तो थया, परंतु प्रसिद्ध एवुं (विषं के०) विषने (आशु के०) जलदी (नीलकंठः के०) महादेव (किं के०) शुं (न प पौ के०) न पान करता हवा ? अर्थात् महादेव विषनुं पान करता हवा॥ माटे जीवरक्षणने माटे इंद्रियलोलुपत्वनो त्याग करी महोटा पुरुषो उग्र दुःख सहन करे ठे अने विष जेवा पदार्थनुं नक्षण करे ठे. जो रसनेंद्रिय लोलुप होय तो ते विषादि नक्षण करे नहिं ॥ १०३ ॥

आ श्लोकमां धर्मरुचि तथा वडवानल अने नीलकंठ ए त्रणना दृष्टां त ठे, तेमां प्रथम धर्मरुचि साधुनी कथा कहे ठे. उज्जयिनी नगरीने विषे सोमदेव, सोमनूति, अने सोमशर्म्मा नामें त्रण ब्राह्मण नाइयो हता, ते त्रणेने अनुक्रमें नागश्री नूतश्री अने यक्षश्री नामनी त्रण स्त्रीयो हती. ते त्रणे स्त्रीयो पोत पोताने वारे वारे रसोइ करे. एक दिवस नागश्रीनो रसोइनो वारो आव्यो त्यारें कडवुं तुंबडुं तैयार करी

ने धर्मरुचि नामा कोइ साधु वहोरवा जता हता, तेने ते पापणीयें वो होराव्युं, साधुयें ते तुंबडुं लइने पोताना गुरुने देखाडयुं ते जोइने गुरु बोल्या, के एने स्थंमिलमां परठवो, त्यारें साधु परठवा गयो, त्यां मक्षि का अने कीटकादिक जीवोनो घात थशे एम जाणी, ते तुंबडाने पोतें भ क्षण करी गयो,ते विष प्रयोगें मरण पामी सर्वार्थ सिद्ध विमानप्रत्यें गयो.

हवे बीजी वडवानलनी कथा कहे छे. पूर्वे ब्राह्मणनी जाति वडवा नलनामा एक नवीन असुर उत्पन्न थयो, ते प्रचंम एवा सर्व देवताउनो उपरोध करवाने तत्पर थयो ते समयें सर्व सुरपति प्रमुख देवताउयें एक ठा थइने ब्रह्मपुत्री सरस्वतीनी प्रार्थना करीने, ते वडवानलने समुद्रमां ना खी दीधो. पछी तेने कोइ बाहेर काढवा शक्तिमान् थयुं नहिं, पछी शारदा देवी घटनीवच्चें तेने प्रक्षेपण करीने ते वडवानलने देखतां हतां. कहेलुं छे के ॥ श्री भारतीसुरपतिप्रमुखैः सुरौघै, रभ्यर्थिता जलनिधिं ज्वलयांचका र ॥ तन्नंदनेषु सतत वैरमनुस्मरंती तन्नंदनेषु विबुधेषु पक्षुराखी सा ॥ १०३ ॥

हवे नीलकंठनी कथा कहे छे, एकदिवस सर्व देवताउ सुरपति प्रमुख ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, सुरपति, ग्रहपति, निशापति, दैताउयें एकठा थइने मेरुनो मंथानक करीने शेषनागनुं नेत्रुं बनावी, समुद्रनुं मंथन करवा मां मयुं, ते समय चउद रत्न उत्पन्न थयां, तेमां लक्ष्मीनामनुं रत्न निकल्युं तेने विष्णुयें ग्रहण कर्युं. एम चतुर्दश रत्नो सर्व देवोयें वेंची लीधां. तेमां देवताउयें रंभा अप्सरा मेलवी, तथा शंकरना भागमां काहिं पण आव्युं नहिं. त्यारें शंकरें कह्युं हवे हुं समुद्र मंथन करीश ने प्रमाणे मंथन कर वा मांमयुं त्यारें विष्णु प्रमुखें कह्युं बहु मंथन करवाथी कालकूट विष उ त्पन्न थशे, पण ते न मानतां मंथन कर्युं, तेवारें कालकूट विष समुद्रमां थी उत्पन्न थयुं, ते विषने सर्व जगत्ना कल्याण माटे शंकर. पोतें पान करी गया अने कंठमां राख्युं, तेथी नीलकंठ एवुं शंकरनुं नाम पड्युं.

सप्तापि व्यसनानि पापसदनान्येतानि वर्ज्यानि यत्.
सत्कर्मापि न शस्यते व्यसनमत्यासेवचाम्या यथा ॥

स्नेहोऽर्हत्यपि गौतमस्य गणनाऽकाले च कोशागुरोः,
ग्लानिःपारदभाविते हि कनकेऽरिष्टं फलेऽनार्त्तवे॥१०४॥

अर्थः—(एतानि के०) ए (सप्तापि के०) सात एवां पण (व्यसनानि के०) व्यसनो जे छे, ते (पापसदनानि के०) पापनां घर छे, माटे (वर्ज्यानि के०) वर्जवा योग्य छे, (यत् के०) जे कारण माटे ते व्यसन सेवनारो प्राणी (सत्कर्मापि के०) सारा कर्मने करनारो होय तो पण (नशस्यते के०) वखणातो नथी. ते व्यसनोनी (अत्यासेवया के०) अति सेवनायें (व्यसनं के०) दुःख (स्यात् के०) होय. केनी पेठें ? तो के (यथा के०) जेम (गौतमस्य के०) गौतमने (अर्हति के०) अरिहंत भगवानने विषे (स्नेहोपि के०) स्नेह पण जे छे, तेने लोको व्यसनज कहे छे. (च के०) तथा (कोशागुरोः के०) स्थूलिभद्रने (अकाले के०) अकालने विषे (गणना के०) पूर्वनी गणना ते पण (ग्लानिः के०) व्यसन रूप थाय छे. तथा (पारदभाविते के०) पारासाथें अत्यंत भावना करेला एवा (कनके के०) सुवर्णने विषे श्यामता थाय छे. तथा (अनार्त्तवे के०) ऋतु विनाना समयमां उत्पन्न थयेला (फले के०) फलने विषे (हि के०) निश्चें (अरिष्टं के०) अरिष्ट थाय छे. एम लोकोक्ति छे, तेमाटे अति सर्वत्र वर्जयेत्, एम जाणवुं ॥ १०४ ॥

आ श्लोकमां गौतम तथा स्थूलिभद्रनो दृष्टांत होवाथी प्रथम गौतम गणधरनी कथा कहे छे. श्रीवर्द्धमानस्वामीना शिष्य प्रथम गणधर श्रीगौतमस्वामी हता,हवे जेने वीरभगवानें पोताने हाथें दीक्षा आपे तेने तरत केवलज्ञान उत्पन्न थाय, परंतु गौतमगणधरने श्रीवीरभगवाननी उपर अत्यंत स्नेह होवाथी स्नेहांतरायथी केवलज्ञान उत्पन्न थयुं नहिं,पछी वीरभगवाने पोताना निर्वाण समयने विषे देवशर्माने प्रतिबोध करवा माटे गौतमने आसन्नग्रामें मोकल्या, श्रीवीरभगवान अपापा नगरीने विषे हस्तीपाल राजानी जीर्ण रज्जुक सभाने विषे रह्या, शोल प्रहर पर्यंत देशना देवा पछी कार्त्तिक वदि अमावास्याने दिवसें परमपदने प्राप्त थया, हवे देवशर्माने प्रतिबोधीने पाछा आवता देवताउना मुखथकी वीरभगवान् निर्वाणपदने प्राप्त थया, एवुं सांभलीने गौतमस्वामी अत्यंतशोक करीने पछी प्रभु वैराग्य आणी स्नेहपाशनो बंध त्रोडीने केवलज्ञान पाम्या.

हवे स्थूलिभद्रनी कथा पूर्वे कहेली पूर्वे छे,तथापि प्रकारांतरथी वली कहे छे. एक दिवस श्रीभद्रबाहुस्वामीनी पासें स्थूलिभद्रनी बेहेनो यक्षादि आर्यायें कह्युं के हे भगवन ! स्थूलिभद्र हाल क्यां छे? त्यारें गुरुयें कह्युं के, अशोकवनने विषे पूर्वोनी गणना करतो छतो रह्यो छे,त्यारें सर्वे साध्वीयो तेने वांदवा माटे अशोकवनमां गइ, त्यां पोतानी बेनोने आवती जोइने स्थूलिभद्र पोतानी विद्यानी परीक्षा करवा माटे सिंहनुं रूप विकुर्वीने सन्मुख आव्यो तेने जोइने सर्वे साध्वीउ त्यांथी नाशीने गुरुनी पासें आवी कहेवा लागी के हे भगवन् ! स्थूलिभद्रने तो सिंह भक्षण करी गयो. ते सांभली गुरुयें कह्युं के हजी त्यांज स्थूलिभद्रजी छे. बीजी वार तेनी बेनोयें जइने वंदन कर्युं पछी गुरुयें जाण्युं एनाथी विद्या जीरवाती नथी माटे हवे पूर्व भणाववां नही तो पण श्री संघना उपरोधथकी चार पूर्व मूलपाठें गुरुयें भणाव्यां, परंतु अर्थथकी भणाव्यां नहिं ए. स्थूलिभद्रनी कथा कही.

द्यूतेनार्थयशः कुलक्रमकलासौंदर्यतेजःसुहृत्, सा
धूपासनधर्मचिंतनगुणा नश्यंति संतोपि हि ॥ यद्व
त्पांडुसुतेषु तद्च्युतसुधीष्वादित्यभावर्जिते, विश्वे किं
तमसा स्फुटं घटपटस्तंभादि वा लक्ष्यते ॥ १०५॥

अर्थः—(संतःअपि के०) विद्यमान एवा पण (अर्थ के०) धन अथवा शास्त्रना अर्थ (यशः के०) यश (कुलक्रमः के०) कुलाचार, (कला के०) लिखित, पठित, गीत, वाद्यादिक बहोंतेर कला. (सौंदर्य के०) सुंदरपणुं (तेजः के०) तेज, (सुहृत् के०) सुमित्र. (साधूपासन के०) गुरुपर्युपास्ति, (धर्मचिंतन के०) दानशीलादि धर्मचिंता, एवा (गुणाः के०) गुणो (द्यूतेन के०) द्यूतें करी (हि के०) निश्चें (नश्यंति के०) नाश पामे छे. कोनी पेठें ? तो के (यद्वत् के०) जेम (पांडुसुतेषु के०) पांच पांडवोने विषे. ते केवा पांडवो छे ? तो के (तच्युतसुधीषु के०) ते द्यूतथकी भ्रष्ट थइ छे बुद्धि जेनी एवा छे. वलि कहे छे के (आदित्यभावर्जित के०) आदित्यनी कांतिथी रहित एवा (विश्वे के०) विश्वने विषे (तमसा के०) अंधकारें करी (स्फुटं के०) प्रगट पणे (किंवा के०) शुं थाय. (घटपट स्तंभादि के०) घट, पट, स्तंभादिक (लक्ष्यते के०) लक्ष्य थाय छे. ना थ

ता नथी. तेम द्यूतमां पण पूर्वोक्त गुणो दृश्यमान थता नथी, ए नावार्थ ले.

आंहिं पांच पांमवोनी कथा कहे ले. कुरुदेशमां हस्तिनापुर नगरने विषे युधिष्ठिर राजा, नीम, अर्जुन, सहदेव अने नकुल ते चार नाइयें सह वर्त्तमान पोतें साम्राज्यश्रीने नोगवता हता. एक दिवस पोताना नवीन करावेला श्रीशांतिनाथजीना देरासरनी प्रतिष्ठा करवाना महोत्सवने अर्थें पत्रद्वारायें हस्तिनापुरथकी डुर्योधनादिकने तेडाव्या, त्यां प्रतिष्ठाना नवन वा महोत्सव थइ रह्या नंतर मणिचूड विद्याधरें सहस्र स्तंनयुक्त निर्माण करेली सनाने विषे कौरवो तथा पांमवो मलीने द्यूत रमवा लाग्या, तेने तेमना काका विडुरजीयें घणी रीतें रमवानो निषेध कस्यो, तो पण पांमवो तथा कौरवो द्यूत रमवाथी विराम पाम्या नहिं, पली शकुनियें नाखेला दे वाधिष्ठित पाशायें करी डुर्योधन पांमवना राज्यने हरण करतो हवो. अनु क्रमें डौपदीने पण हारी गया. तेवारें नीष्मादिकें लेराव्युं के पांमवो बार वरस वनमां रहे तथा, एक वरस लाना कोइ जाणे नहिं एवी रीतें रहे, ते प्रमाणे पांमवो बार वर्ष वनवासमां रह्या अने एक वरस रूपांतर करीनें वैराट नगरमां लाना रह्या. पली कौरवो साथें युद्ध करी कौरवोनो पराज य करी राज्यने प्राप्त थया. ए प्रमाणे द्यूतमां डुःख ले एम जाणवुं ॥१०५॥

द्यूतं न किं त्यजत किं दहत स्वदेहं, लागं च मूत्रयसि
किं वदने स्वकीये ॥ तत्तादृशी प्रियतमासहितोनलोपि,
जानीत रोरइव राज्यसुखान्निरस्तः॥१०६॥ द्यूतप्रकरणम् ॥

अर्थः– हे मूढजनो ! (द्यूतं के०) द्यूतने (किं के०) केम (नत्यजत के०) त्याग करता नथी तथा (किं के०) शामाटे (स्वदेहं के०) पोताना देहने (दहत के०) द्यूताग्नियें करीने बालो लो. (च के०) वली (लागं के०) बकराने (स्वकीये वदने के०) पोताना मुखने विषे (किं के०) शामाटे (मूत्रयसि के०) मूत्रावो लो जुवो (तत् के०) ते माटे (तादृशी के०) तेवी (प्रियतमा के०) वल्लन एवी पोतानी स्त्री दमयंतीये (सहितः के०) सहित एवो (नलः अपि के०) नलराजा पण (राज्यसुखात् के०) राज्यसुखथकी द्यूतें करी (निरस्तः के०) भ्रष्ट थयो लतो (रोरइव के०) जेम दरिद्री होय तेनी पेठे थयो. एम (जानीत के०) हे जनो तमो जाणो ॥१०६॥

आहिं नलराजानी कथा कहे छे. नलराजा त्रणखंडनो अधिपति हतो एकदिवस राजने विषे लोभ पामेला कुबर नामा पोताना भाइ साथें नलरा द्यूत रमतां दैववशें राज्य हारी गयो. पछी दमयंती सहित वनमां गयो, मार्गमां विचार्युं जे हुं शुं आवा हालें सासराने घेर जाउं, एम विचारीने दमयंतीने वनमां सूतेली मूकीने जातो रह्यो, पाछलथी जेवारें दमयंती जागी तेवारें बहुविलाप कर्यो, मार्गमां सार्थवाहनुं धाडीथी रक्षण कर्युं, पछी पर्वतनी गुफामां रहिने पांचशे तापसने बोध कर्यो, सात वरस त्यां रहि. पछी पोतानी मासीनी दीकरीने घेर गइ, नलराजा पण देवप्रयोगें करी विरूपांग कुब्ज थयो, सुसमार पुरमां दधीपर्ण राजानी पासें रसोयो थइने दस वरस पर्यंत रह्यो. अने दमयंती पण पोतानी फइने त्यां छठ अठ्ठम तप करती रही पछी पोताना बापने घेर गइ. नलराजा पण त्यां ते दमयंती साथें मल्या, वली पण द्यूत रमाडीने पाछुं पोतानुं राज्य कुबर पासेंथी लइ लीधुं, माटे सर्वथा द्यूत रमवुं नहिं ॥ १०६ ॥

मांसाशनान्नरकएव ततः सदैव, स्तल्लोलुपं हरि
नृपं कृतवान्सरोपः ॥ किंपाकपेशलतराशनदत्तत
र्णो, किंपाकभोजिनि मृतेरपि संशयोस्ति ॥ १०७॥

अर्थः—(मांसाशनात् के०) मांसाशन थकी (नरकएव के०) नरकज होय, (ततः के०) तेमाटे (सरोपः के०) रोषयुक्त एवो (सः के०) ते (देवः के०) देव (हरिनृपं के०) हरिनामना राजाने (तल्लोलुपं के०) ते मांसनाअशनमां लोलुप एवो (कृतवान् के०) करतो हवो, (पाकपेशलतराशनदत्ततृष्णो के०) पाकें करीने अत्यंत मनोहर एवुं जे अशन जेनुं एवा पदार्थने विषे दीधी छे तृष्णा जेणे एवा ते (किंपाकभोजिनि के०) विष वृक्षना फलनुं भोजन करनारने विषे (मृतेरपि के०) मरणनो पण (संशयः के०) संदेह (किं के०) शुं (अस्ति के०) छे. ना नथीज. एटले फर खानारने विषे मरण संदेह होयज नहिं एम जाणवुं ॥ १०७ ॥

आहिं हरिनृपनी कथा कहे छे. मधुपिंगलनो जीव अने बीजो हरिनृपनो जीव ए बेहु पूर्वभवना वेरें करी मरण पामी, एक हरिवर्ष क्षेत्रमां युगलीक थयो, अने एक देवता थयो. परंतु ते बेनो वेरी जीव युगलीक

होवाथी तेने मरणादिक कष्ट करवामां कोइ रीतथी देवता समर्थ थयो नहिं तेवारें ते युगलियाने ते पूर्वजन्मनो वैरी देव उपाडीने भरतखंडमां लावी राज्य दइने ते युगलीयाने मांस लोलुप करतो हवो थोडे थोडे मद्य पान पण करावतो हवो, तेथी ते युगलीयो मरीने मांसाशनना पापथी नरकमां गयो. एवीरीतें ते देवें खरेखरुं पोतानुं वैर लीधुं ॥ १०७ ॥

स्नेहोदयापि हृदि कामिषलोलुपानां, किंचिल्लणापि पति मांसदलानि नैछत् ॥ नाश्नाति किं निजकुटुंबमपि द्विजि व्हीं,स्थानं स्वमन्यदपि किं दहतीह नाग्निः ॥ १०८ ॥

अर्थः-(आमिषलोलुपानां के०) आमिषने विषे लोलुप एवा प्राणी योना (हृदि के०) हृदयने विषे (स्नेहः के०) स्नेह श्यो ? तथा (दया पि के०) दया पण (का के०) शी ? अर्थात् आमिषलोलुपने हृदयमां दया तथा स्नेह होतो नथी. जुवो (चिल्लणापि के०) चिल्लणा नामनी स्त्री पण पोताने पुत्रनो गर्भ रहेवाथी (पतिमांसदलानि के०) पति श्रेणि कराजाना मांसना कटकाने (किं के०) शुं (नैछत् के०) न इछती हवी ? अर्थात् मांसलोलुपा चिल्लणा थइ,त्यारें तेणे पोताना पतिनुं पण मांस खा वानो विचार कस्यो, वली (द्विजिव्ही के०) सर्पिणी (निजकुटुंबमपि के०) पोताना कुटुंबने (नाश्नातिकिं के०) शुं नथी खाती ? ना खायछेज, अ ने (अग्निः के०) अग्नि जे छे, ते (इह के०) आहिं (स्वं के०) पोतानुं तथा (अन्यत्अपि के०) बीजा स्थानने पण (किं के०) शुं (न दहति के०) बालतो नथी ? ना बालेछेज ॥ १०८ ॥

आंहिं चिल्लणा राणीनी कथा कहेछे. राजगृही नगरीने विषे कोइ तापस मास क्षपण करतो हतो, तेने सर्व लोक निमंत्रण करीने पारणुं करावतां हतां, एक दिवस ते तापसनुं लगभग मासोपवास व्रत पूर्णथवा आव्युं ते वखत तेने श्रेणिकराजायें आवीने विनंति करी पोताने घेर पारणुं कराव वा माटे आमंत्रण कर्युं पछी मध्याह्न समये पारणुं करवा तापस आव्यो त्यारे राजाने विस्मरण थइगयुं तेथी ऋषि आवे तो तेने पारणुं करावजो एवुं कोइने कह्युं नही. ऋषि पण बोल्या विनाज पोताना स्थानक प्रत्यें जइने बीजा मासक्षपण तप करवानो प्रारंभ कस्यो, वली राजायें जाण्युं जे में

आमंत्रण करीने ऋषिने पारणुं कराव्युं नही एम विचारी श्रेणिक राजायें पाछुं ऋषिने पारणामाटे आमंत्रण कर्युं वली पण पारणाने दिवसें ते वात राजाने वीसरी गइ अने घरमां कोइने कह्युं नहिं. तेथी फरी पण ऋषि पाछा गया, अने त्रीजा मासक्षपणनो आरंभ कर्यो. एम त्रीजी वार पण श्रेणिक राजायें कर्युं ते पछी तपस्वी क्रोधायमान थइने कहेवा लाग्या के आवता नवमां अवतार लइने आ राजानो हुं अनर्थकारक थाउं एम नियाणुं करी ते तापसनो जीव मरीने चिल्लणाना उदरमां आवी उपन्यो ते पेटमां रहेवाथी गर्भप्रभावथी तथा पूर्वजन्मना वैरथी चिल्लणा राणीने दोहलो थयो, जे हुं मारा पतिना मांसनुं भक्षण करुं? ए विचार थाय पण कहेवाय नहिं. अने तेनी चिंतामां राणी डुबली थइ गइ, त्यारें श्रेणिकें एक दिवस राणीने पूछ्युं के हे राणी! तुं दिवसे दिवसें डुर्बल केम थती जाय छे? राणीयें जे पोतानो विचार हतो, ते यथास्थित राजापासें निवेदन कर्यो, पछी अभयकुमारें श्रेणिक राजाने अंधकारमां राख्यो, तेना पेट उपर मृगनुं मांस बांध्युं, अने तेमांथी प्रतिदिन कातरीने चिल्लणाने जेम जेम आपे, तेम तेम राजा खोटी रीतें रुदन करे, जेम कोइनुं पेट कापे, ने रुवे तेम ते रोवे, तेवारें चिल्लणा हर्ष पामे, एम ते चिल्लणा राणीनो दोहलो संपूर्ण कर्यो, पछी पोताथी उत्पन्न थयेला बालकने चिल्लणा राणीयें उकरडे नाखी दीधो, तेनी मालम पडवाथी श्रेणिक राजायें त्यांथी ग्रहण करी लीधो. त्यां उकरडामां कुकडे ते बालकनी अंगुलि वगेरेनुं भक्षण कर्युं तेथी तेनुं नाम कोणिक पाड्युं, अने बीजुं नाम अशोकचंद एवुं पाड्युं, अनुक्रमें करी ते त्रण खंडनो अधिपति थयो ॥ १०८ ॥

नाकृत्यकृत्यविदलं मधुपानमत्तो, भूतादिभूतइव शून्यमनोवचोंगः ॥ किं देवकीपरिणये मदपारवश्या न्नाग्जेपि जीवयशसाऽप्यतिमुक्तकर्षिः ॥ १०९ ॥

अर्थः-(मधुपानमत्तः के०) मधुपान थकी मदोन्मत्त थयेलो तथा (शून्यमनोवचोंगः के०) शून्य छे मन, वचन अने काया जेनो एवो हतो (भूतादिभूतइव के०) भूतप्रेतादिकें पराभव पमाडेलो शुं नहिं? एवो, ते प्राणी (अलं के०) पूरी रीतें (अकृत्यकृत्यविद् के०) अ

कृत्य अने कृत्यने जाणनारो (न के०) थातो नथी. (देवकीपरिणये के०) देवकीना परिणयने विषे (मदपारवश्यात् के०) मदना परवश पणाथी (जीवयशसा के०) कंसनी स्त्री जीवयशायें (अतिमुक्तकर्षिः अपि के०) अतिमुक्त नामा ऋषिने पण (किं के०) शुं (न आश्लेषि के०) न आलिंगन कर्खा. अर्थात् मदिराना परवशपणाथकी कंसनी स्त्री जीवयशा यें अतिमुक्त ऋषिने आलिंगन कर्खाज ॥ १०९ ॥

आहिं जीवयशानी कथा कहे छे. मथुरापुरीनेविषे कंस राजा राज्य करतो हतो, तेनी जीवयशा राणी हती ते कंसराजायें देवकराजानी दी करी देवकीजीने पोतें अग्रेसर थइने तेना स्वामी वसुदेवजीने आपी, देवकीने परणवाने ते वसुदेव आव्या, अने मंमपमां नवनवा उत्सवो थवा मांमथा, तेवा समयमां कंसनो भाइ अतिमुक्त ऋषि भिक्षाने माटे त्यां आव्यो, तेवामां मद्यपानेकरी परवश थयेली एवी जीवयशा पोताना देवरने कंठने विषे वलगीपडी, अने कहेवा लागी कें तमो गीत गान करो, हुं नृत्य करीश ? तेवारें साधुये तेना हाथमांथी बुटवानो घणो उपाय कर्खो तो पण तेणीये ते साधुने छोड्यो नही. त्यारें मुनियें कह्युं के एटलो बधो हर्ष तुंने केम उत्पन्न थयो छे ? एज देवकीनो सातमो गर्भ थाशे ते तारा बापनें, तथा तारा पतिने मारशे आ वात सांभलतांज जीवयशाने मद्यनो निशो उतरी गयो अने कांइक ऋषिने छोड्या अवसरजोइने ऋषि निकली गया,कालेंकरीने श्रीकृष्णना हाथथी कंस तथा जरासंध मरण पाम्या ॥१०९॥

मधु मधुरवचोभिः प्रेयसीप्रेरितोयः, पिबति निजकुलोच्चा
चारचिंतां विमुच्य ॥ वररुचिवदिहापि प्रेक्षते डुर्गतिं
सः, क च तनुदृढता स्याभोगिभुक्ताज्यभोगेः ॥ ११० ॥

अर्थः–(मधुरवचोभिः के०) मधुर एवा वचनोयें करी (प्रेयसीप्रेरितः के०) प्रियायें प्रेर्खो एवो (यः के०) जे पुरुष (निजकुलोच्चाचारचिंतां के०) पोताना कुलना उंचा आचारनी चिंताने (विमुच्य के०) मूकीने (मधु के०) मद्यने (पिबति के०) पान करे (सः के०) ते पुरुष (इहापि के०) आ लोकनेविषे पण (डुर्गतिं के०) डुर्गतिने (प्रेक्षते के०) जोवे छे. कोनी पेठें ? तो के (वररुचिवत् के०) वररुचिनी पेठें ? जेम वर

रुचि पंमितना कानमां मद्यपान करवाथी त्रकालेखुं शीशुं रेडयुं ते वात घटे वे केम के (च के०) अने (नोगिलुकाज्यजोगः के०) सर्पे चोटेला घृतथी (तनुद्दढता के०) शरीरनी द्दढता (कस्मात् के०) क्यांथी होय ॥ ११०॥

आहिं वररुचिनी कथा कहे ले. पाडलीपुरने विषे वररुचिनामा पंमित रहेतो हतो, ते पंमित नित्य पांचसे नवीन काव्योयें करी नंदराजानी प्रातःकालमां स्तुति करतो हतो, ते काव्यो सांजलीने तरत राजा, पोताना शकमाल मंत्रीनी सामुं जूवे,जे आ मंत्री काव्योना अर्थ सारी रीतें करे, तो हुं कांहिंक पंमितने दान आपुं ? शकमाल मंत्री तेनुं पांमित्य यथास्थित वर्णुंज सारुं ले एम जाणे खरो, परंतु सम्यक्त्व मलीनतायें करी तेना काव्यनी काहिं प्रशंसा करे नहिं. पली शकमाल मंत्रीनी स्त्रीयें कह्युं जे तमो ते वररुचि पंमितना काव्यनी प्रशंसा करता नथी ते कांही ठीक नहिं एवां स्त्रीना वचन सांजली एकदिवस एकश्लोकनुं व्याख्यान शकमाल मंत्रीयें कर्युं. तेवारें तरत राजायें तेने दान आप्युं, एकदिवस ते वररुचि पंमितनुं अजिमान उतारवा माटे शकमाल मंत्रीयें राजाने कह्युं के जे वररुचियें काव्यो कर्यां. ते सर्व मारी दीकरीयोने आवडे ले त्यारें राजायें कह्युं के तमारी दीकरीने केवरावो, तेवारें पडदो आडो नाखीने कन्याउयें वररुचिनां कहेलां सर्व काव्य कह्यां. पली वररुचि, प्रागमां गंगानी पांचसें काव्योयें करी स्तुति करे तिहां यंत्रप्रयोगें करी पांचसो दिनार धारण करनारी, कोशस्थली उडीने हाथमां पडवा लागी, तेवारें वररुचि कहेवा लाग्यो. के गंगाजी स्तुतिथी मने प्रसन्न थइने ड्व्य आपे ले. पली शकमालें तेवा न जाणीने संध्याकाले कोशस्थली ठनी तेमां यंत्रप्रयोगें करी पाषाणो मूक्या. अने नंदराजा पासें वररुचिनी लज्जा खोवरावी. वलकोपाय्यो, तेवारें वररुचियें पोतानी पासें नणनारा ठोकराउने आ प्रमाणे गाथा शीखवी. जे ॥ नंदराय जाणे नहि, जं शकमाल करेसि ॥ नंदराय मारी करी, सिरियं रज्जवेसि ॥ १ ॥ ए गाथा सांजली राजाने शकमाल उपर क्रोध चड्यो तेवारें शकमालें विषजक्षण करी पोताना ठोकराने शीखव्युं तेनी शीखामणथी राजानी समक्ष नमिने पोताना बापने तरवारथी मार्यो तारथी राजायें सिरीयाने प्रधान व्यापारमुद्रा आपी. श्रीयकें वररुचिनी वेरलेवा माटे कोशावेश्याने कयुं के जेवी तेवी रीतें वररुचिने

पाडवो, एकदिवस तेणे रात्रिनेविषे चंद्रहास मद्यपान कराव्युं प्रातः कालमां राजानी सभाने विषे कमल सुंघवाथी मद्यनी वांति करी, त्यां भरी सभामां तेनी लज्जा गइ खष्ट थयो,ते मद्यपानना प्रायश्चित्तमां ते वररुचिने शीशुं उकालीने तेनुं पान कराव्युं तेथी मरण शरण थयो॥११०॥सुराप्रकरणं.

वेश्याविश्वकलत्रमत्र तदहो पानीयशालाजले,यद्वत्कांदविकाशने च शुचिता का प्रायशस्तादृशी ॥ तस्मात् साकृतपुण्यवत् कृतकमुद्शोकोदया किं प्रिया, पूर्णे लं विशदा स्वभावकलुषा, दोपापि नेंदौ कृशे ॥ १११ ॥

अर्थः-(वेश्या के०) वेश्या जे छे, ते (अत्र के०) आ संसारने विषे (विश्वकलत्रं के०) आखा विश्वनी स्त्री छे (तत् के०) ते कारण माटे (सा के०) ते (किं के०)शुं (प्रिया के०) मनो, भीष्ट थाय, ना नज थाय. (अहो के०) आश्चर्ये (यद्वत् के०) जेम (पानीयशालाजले के०) पाणीना परबना जलने विषे (च के०) वली (कांदविकाशने के०) कंदोइना भोजनगृहने विषे (शुचिता के०) पवित्रता (का के०) शी ? तेम (प्रायशः के०) प्रायें बहुप्रकारे करी वेश्या पण (तादृशी के०) तेवीज जाणवी अर्थात् जेम पाणीना परबमां तथा कंदोइना भोजनघरमां पवित्रता होती नथी तेम वेश्यामां पण पवित्रता होयज नहिं. (तस्मात् के०) ते कारण माटे (सा के०) ते (कृतपुण्यवत् के०) कृतपुण्य नामा शेठनी पेठे (कृतकमुद्शोकोदया के०) पहेलां कर्यो छे मोद एटले हर्ष आनंद जेणे अने पछी कर्यो छे शोकनो उदय जेणे एवी वेश्या जाणवी. जुवो (दोपापि के०) रात्रि पण (अलं के०) अत्यंत (पूर्णे के०) पूर्ण (इंदौ के०) चंद्र छते (विशदा के०) निर्मल (न के०) शुं नथी थातीना थायज छे अने चंद्रमा (कृशे के०) क्षीण थये छते, (स्वभावकलुषा के०) रात्रि स्वभावथीज मेली थाति नथी शुं ? अर्थात् स्वभावे करीने कलुष एवी रात्रि छे ते चंद्रमा रूप पोतानो स्वामी कलाथी पूर्ण होय त्यारें निर्मल देखाय छे, अने ज्यारें चंद्रमानी कला नष्ट थाय, त्यारे रात्रि काली भासे छे तेम वेश्या पण स्वभावकलुष छे ते परपुरुषोनुं धन मले तेथी निर्मल लागे छे अने पुरुष निर्धन थाय त्यारे पोतें पोताना स्वभावने पामे॥१११॥

आ श्लोकमां कृतपुण्यनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. राजगृहिने विषे कोइक धनदत्तनामा श्रेष्ठी रहे छे, तेने कृतपुण्यकनामा पुत्र हतो, तेना पिता धनदत्ते चातुर्यने माटे कृतपुण्यकने योवनमां वेश्याने घेर शिक्षा माटे मोकल्यो, ते वेश्यानुं नाम वसंतमंजरी करी हतुं. त्यां रहिने ते कृतपुण्यकें पोताना बापनुं चार कोटिधन हतुं ते सर्व उडाडी दीधुं. कालें करी तेनां माता पिता नष्ट थइ गयां, हलवे हलवे द्रव्यनो नाश थइ गयो, पछी ते ज्यारे निर्धन थयो त्यारे वेश्यायें तेने अपमान करीने काढी मूक्यो, कृतपुण्यकनी भार्यायें ककलाट करवा मांड्यो तेवारे घरमां निर्धन पणुं जोइने परदेश जवानो विचार धार्यो, ते विदेशीनी साथें गाम बाहेर निकल्यो, त्यां सूतो हतो. तेवामां रात्रिनेविषे चार स्त्रियोयें आवीने सुतोने सूतो त्यांथी उपाडीने तेने पोताना भवनमां राख्यो, त्यां ते चारे स्त्रियोनी साथें भोग भोगवतो छतो रह्यो, ते स्त्रियोथकी चार पुत्रो उत्पन्न थया, केटलोक काल गया पछी एकदा ते कृतपुण्यक सूतो हतो तेने तेमज पाछो ज्यांथी उपाड्यो हतो. त्यां लावी सार्थमां मूक्यो, तेनी साथें एक भातानो लाडु आप्यो हतो. तेने कयवन्नायें पोताने घेर भांगीने जोयुं, तो अंदरथी चार रत्न निकल्यां. अनुक्रमे ते श्रेणिकराजानी पुत्रीने परण्यो, ते अभयकुमार मंत्रीनी बुद्धियेंकरी पाछी चारे स्त्रियो तथा पोताना चारे पुत्र तेने मल्या ॥ १११ ॥

लघुनि गणिकानां हृद्यनेके गवाक्षा, दधति यदनुवेलं ता रसं नव्यनव्यं ॥ तदजनि हतवृत्तः कूलवालोऽपि ताभि, र्गलति हिमगिरिर्वा भानुभाभिर्हठाभिः ॥ ११२ ॥ वेश्याद्वारं ॥

अर्थः-(गणिकानां के०) वेश्याओना (लघुनि के०) हलका एवा (हृदि के०) हृदयने विषे (अनेके के०) अनेक (गवाक्षाः के०) गोखना जेवां छिद्रो (क के०)श्रा माटे थतां हशे. (यत् के०) जे कारण माटे (ताः के०) ते वेश्याओ (नव्यनव्यं के०) नवीन नवीन एवा (रसं के०) रसने (अनुवेलं के०) प्रति समय (दधति के०) धारण करे छे, (तत् के०) तेमाटे (कूलवालोऽपि के०) कूलवाल नामा तपस्वी पण (ताभिः के०) ते वेश्याओयें (हतवृत्तः अजनि के०) हरण करी छे वृत्ति जेनी ए

वो चारित्रथी भ्रष्ट थयो ते वात घटे छे, केम के (हिमगिरिः के०) हेमाच लगिरि हिममय छे ते (वा के०) जेम (दृढाभिः के०) दृढ एवी (भा नुभाभिः के०) सूर्यना किरणोयें करी (गलति के०) गले छे.

आंहिं कूलवाल ऋषिनी कथा कहे छे. कोणिकराजायें पोतानी पट्टराणी पद्मावतीना वचनथकी पोताना पुत्र हल्ल विहल्लनी पासें सेचानक हस्ती, हार, अने कुंमलनी याचना करी ते बेहु जणायें ते वस्तु आपी नहिं. पछी ज्यारें घणीज मागणी करी त्यारें चेडा महाराजानी पासें गया, दूत मोकलीने चे टकराजाने जणाव्युं के कोणिक राजा आ प्रमाणे वस्तुउ मागे छे. पछी ते वस्तु न मलवाथी कोणिक राजा युद्ध करवा माटें समस्त सैन्य लइने वि शालानगरीने विषे गयो, त्यां युद्धमां प्रथम चेटकें एक बाणेंकरी काल कुमरने हण्यो, तदनंतर दश युद्धोये करी कोणिकना दश बांधवो मास्या, ते वारें कोणिकें चमरेंद्रनुं अने सौधर्मेंद्रनुं आराधन कर्युं, तेणें चेटकराजा ना बाणनुं स्खलन कराव्युं, तेवारें चेटक राजा अनशन लइ देवगतिने प्रा प्त थयो, पछी सेचनक हाथी उपर बेशीने हल्लविहल्लें रात्रिनेविषे घणा माणसोने मारी नाख्यां, पछी कोणिकना कूडकपटथी ज्यारे सेचनक ह स्ती संग्राममां मरण पाम्यो, त्यारें हल्ल तथा विहल्लें श्रीवीरभगवाननी पा सें दीक्षा ग्रहण करी, अने कोणिकें विशालानगरीने ग्रहण करवानो उपाय कस्यो, तो पण ते नगरी लेवाने समर्थ थयो नही. त्यारें कोइ राक्षसें कह्युं के कूलवालक ऋषि जो आवे, तो विशाला नगरी ग्रहण थइ शके ! ते काम मागधिका वेश्याथी थाय तेम छे. पछी कोणिकें मागधिकाने कहे वाथी तरत ते कपटश्राविका थइने जे वनमां कूलवालकऋषि हता, त्यां पोतानी साथें बीजी पांच छ वारांगना लइने गइ ते स्त्रियोयें लाडुमां ने पालानुं चूर्ण नाखीने ऋषिनें वहोराव्या तेथी ऋषिने जाडा थवा मांड्या त्यारें ते स्त्रियोयें ते मुनिनुं वैयावृत्य करवा मांड्युं, अने अंगस्पर्शनादिकें लोभित करी चारित्रथकी पतित करीने राजानी पासें आण्यो,राजायें पूछ्युं के हे मुनि ! ए विशालागनरी केवीरीतें लेवाय ? त्यारें ऋषियें कह्युं के पुर नी वच्चें श्रीमुनिसुव्रतस्वामीनो प्रासाद छे तेमां एक स्तुप छे, ते जो पाड्य, तो विशाला नगरी तने मले, पछी ऋषि पोतें ते पुरमां गया, अने के

हेवा लाग्या के जे तमें सर्व मलीने प्रासादना दंम कलशादिकने पाडो. तेवारें कटक तथा लोकोयें तेम कर्युं तेथी पृथ्वी ग्रहण करी. पछी त्यां हलनी साथें गर्दजने जोडीने क्षेत्रो खेडवा मांमयां, तेथी राजानी प्रतिज्ञा पूर्ण थइ ॥ ए कूलवालकऋपिनी कथा ॥ ११२ ॥

व्याधोनान्यहिताय सत्यमसकृद्विश्वस्तजंतूंस्तुदन्, न स्व
स्मिन्नपि तुष्टये च्युतशरक्रोडादितोऽतं व्रजन् ॥ मृत्यौ
र्दुर्गतिमाप्तवांश्च मृगयालोकव्यार्त्यै ततो, गांगेये
न सशांतनुक्षितिपतिस्तस्यानिषिद्धस्ततः ॥ ११३ ॥

अर्थः-(सत्यं के०) ते वात तो सत्य ले, के (अन्यहिताय के०) अन्यना हितने माटे (व्याधः के०) जे पाराधि जे हिंसक ते (न के०) नथी वली ते पाराधि केहेवो ले ? तो के (विश्वस्तजंतून के०) गायनेकरी विश्वास पमाडेला जे मृगादि जंतुउ तेने (असकृत् के०) वारंवार (तुदन् के०) दुःख देतो एवो तथा (च्युतशरक्रोडादितः के०) पोताना हाथथी छोडेलां एवां जे बाणो, ते शूकरादिकने लाग्यां, ते माटेज ते व्याधने मारया दीठा, एवा जे शूकरादिक तेथकी (अंतं के०) अंतने (व्रजन् के०) प्राप्त थयो एवो ते व्याध ले, ते (स्वस्मिन्नपि के०) पोताने विषे पण (तुष्टये के०) तुष्टिने माटे (न के०) थातो नथी. अने ते क्रोडादिक शूकरादिकोनुं (मृत्यौ के०) मरण थये छते, मारनार जे व्याध ले, ते (दुर्गतिं के०) दुर्गतिने (आप्तवान के०) पामतो हवो. (च के०) वली (मृगया के०) ते मृगादिक मारवानी जे हिंसा ते (लोकव्यार्त्यै के०) बेहु लोकनेविषे दुःख दायी ले अर्थात् हिंसा करवाथी आ लोकमां मरणादि जय अने परलोकमां दुर्गति ए बेहु प्राप्त थाय ले. (ततः के०) ते माटे (ततः के०) ते हिंसायकी (गांगेयेन के०) नीष्मपितामहे (सः के०) ते (शांतनुक्षितिपतिः के०) शांतनुराजाने (तस्याः के०) ते मृगयाथकी (निषिद्धः के०) निषेध कर्या अर्थात् मृगया करवाथकी विराम पमाड्यो.

हवे ते गांगेय शांतनुनी कथा कहे ले. हस्तिनापुरमां कुरुवंशनेविषे शांतनु राजा अत्यंत मृगयाना व्यसनी हता, ते शांतनुराजायें वनमांहि स्थान भूमिनी शोभ लेवीलीमां गंगानी जह निरापननी पुत्री गंगाबेनी जेम कहे ले

वी रीते राजायें वर्त्तवुं एवी प्रतिज्ञा करीने ते गंगासाथे लग्न कर्युं,परणीने घेर आव्या पढी गंगायें शांतनु राजाने उपदेश करी मृगया रमवानुं व्यसन मूकाव्युं एकदा गंगाने गर्भ रह्यो त्यारें तेने धनुष्टंकारव करवाना तथा खड्ग धाराना मुखदर्शन करवा वगेरेना दोहद उत्पन्न थया,तदनंतर गांगेय नामा पुत्रनो जन्म थयो, पढी फरी पण शांतनु राजा मृगया व्यसनमां आसक्त थयो, त्यारें गंगायें तेने घणुंए समजाव्यो तो पण तेणें मान्युं नही अने मृगया रमवा गयो, तेथी परणती वखतें करेली प्रतिज्ञानो नंग थयो जाणीने गंगा पोताना पुत्र गांगेयने लश्ने पोताना पिताने घेर जती रही त्यां गांगेयना मामायें शस्त्रास्त्र विद्या सारीरीतें गांगेयने शीखवी, तेथी गांगेय सर्व कलामां उत्कृष्ट थयो, पढी जगत्मां लोकोयें केहेवा मांड्युं जे गंगा पोताना स्वामीने त्यागीने पीयरमां रहे ढे तेवी निंदाना डुःखथी पोताना पुत्र गांगेयने लश्ने गंगा पाढी वनमां ते प्रासादनेंविषे जश्ने रही. पाढलथी शांतनु राजायें गंगा पोताने पियर तरफ जवाथी चोवीश वरस पर्यंत पोते शोक कर्यो, केटला एक दिवसें जे वनमां गंगा पोताना गांगेय पुत्रनी साथें रहे ढे तेज वननेविषे शांतनु राजा मृगया रमवा माटे आव्या, त्यां गांगेयें मृगया करता अटकाव्याथी गांगेयने अने शांतनु राजाने परस्पर महायुद्ध थयुं, ते युद्धमां गांगेयें शांतनुने जींत्या, पढी गंगाने युद्धनी खबर पडवाथी त्यां आवीने पोताना पति शांतनु राजाने कह्युं के आ तमारो पुत्र महाप्रतापी गांगेय ढे. तेनी साथें तमें युद्धमां पराजय पाम्या, आ वात सांनली शांतनु राजा अत्यंत प्रसन्न थया, पढी गांगेयें शांतनु राजाने मृगया रमवाना निषेधनी प्रतिज्ञा करावी जे हवेथी तमारे कोइ वखत मृगया रमवा जवुं नहिं ॥ ११३ ॥

पापर्द्धौं तनुमद्वधोज्झितघृणः पुत्रेपि दुष्टाशय, श्चंमः
स्वांमवपावकादपि मुधा कं कं न हन्याज्जडः ॥ किं
बाणेन जरासुतो वनगतो विव्याध नो बांधवं, प्रापो
च्चैर्मुनिघातपातकन्नरं किं नाजराजांगजः ॥ ११४ ॥

अर्थः—(पापर्द्धौं के०) हिंसाकर्म रूप ऋद्धिने विषे (तनुमद्वधोज्झितघृणः के०) शरीरधारी प्राणीना वधनेविषे त्याग करी ढे दया जेणे एवो

अने (चंमः के०) तीक्ष्ण ठे मन जेनुं एवो प्राणी (पुत्रेपि के०) पुत्रने विषे पण (डुष्टाशयः के०) डुष्ट ठे अंतः करण जेनुं एवो थाय ठे, अर्थात् तेने पुत्रनी पण दया आवती नथी. जुवो (जडः के०) जड एवो इंड्रे (खांमवपावकादपि के०) खांमववनने बालवा मुकेला अग्नि थकी पण (कंकं के०) कया कया प्राणीने (मुधा के०) विनापराध (न हन्यात् के०) नहण तो हवो अर्थात् घणा प्राणीने इंड्रे हण्या, वली (वनगतः के०) वनने विषे गयेलो एवो (जरासुतः के०) जरा पुत्र ते (बाणेन के०) बाणे करी (किं के०) शुं (बांधवं के०) पोताना श्रीकृष्ण बांधवने (नो विव्याध के०) न मारतो हवो ना मारतोज हवो, अने (अजराजांगजः के०) अजराजानो पुत्र दशरथराजा (उच्चैः के०) अत्यंत पणे (मुनिघातपातककरं के०) मुनिघातना पातकजारने (किं के०) न पामतो हवो ना मुनिघातना पापजारने प्राप्त थयोज माटे हिंसा सर्वथा करवी नहिं॥ ११४॥

आ श्लोकमां त्रण दृष्टांत ठे तेमां प्रथम खांमव वननी कथा कहे ठे. जनमेजय राजायें यज्ञविषे अत्यंत घृत होमवा थकी अग्निने एटली तृप्ति थइ के जेणे करी अग्निने अजीर्ण थयुं, पठी कोइना यज्ञमां घृतदाह थाय नहिं त्यारें सर्वेने विचार थयो जे हवे आपणे शुं करवुं? पठी इंड्रे वायुने सहाय करीने अग्निने खांमव वन हतुं तेमां मोकल्यो तेथी ते अग्नियें खांमव वन सजीव हतुं ते जस्मीजूत करी नाख्युं. अने अग्निनो अजीर्ण रोग हतो. तेनो नाश कर्यो. आ कथा लौकिक शास्त्रगत होवाथी असंबद्ध जेवी ठे. तो पण इहां दृष्टांतमां लीधी ठे एम जाणवुं.

वली बीजा जराकुमारनी कथा कहे ठे. एकदिवस श्रीकृष्णें नेमीश्वर जगवानने पूढ्युं के मारुं मृत्यु केवी रीतें थाशे? त्यारें जगवाने कह्युं के जराकुमारना हाथथी तमारुं मरण थशे? ए वचन सांजलीने जराकुमारें जाण्युं जे हुं ज्यांहिं रहीश तो महारे हाथें कदाच महाराजाइनो नाश थाशे एम पोताना जाइ श्रीकृष्णनी जक्तियें करी वनमां जतो रह्यो पठी द्वैपायन नामा ऋषियें द्वारिका जस्म करी नाखी तेवारें बलदेव अने श्रीकृष्ण जमता जमता ते वनमां गया, त्यां श्रीकृष्णने तृष लागवाथी पाणी जरवा सारु कोइ जलाशय प्रत्यें गया पाठल श्रीकृष्ण पीतांबर ओढी एक झाडतले सुइ गया, त्यां फरतो फरतो ते जराकुमार आव्यो. तेणे हु

टेथी पीतांबर उढेलुं तथा पादतलमां पद्मनुं चिन्ह जोवाथी जराकुमारने आ मृगलो ठे एवी भ्रांति थइ, तेथी तेनो शिकार करवा तेणें जोरथी बाण मूक्यो, जेथी श्रीकृष्ण मरण पाम्या ॥ २ ॥

हवे दशरथराजानी कथा कहे ठे. अयोध्या नगरीमां दशरथ राजा राज्य करे ठे. एकदिवस ते राजा वनमां क्रीडा करवा गयो, त्यां वारिली जायें करी विलास करतो एवो हस्तीनो शब्द सांभल्यो, त्यारे दशरथ राजायें तदनुसारें बाण माख्यो, ते बाणथी पाणीनो घटभरतो एक मुनिपुत्र मरण पाम्यो. तेवारें हातात एवो शब्द करी ते मुनि धरतीयें पड्यो, तेवामां ते दशरथराजा त्यां जुवे, तो बाणविद्ध थयेला मुनिपुत्रने जोयो, एटलामां ते मुनिपुत्रनां माता पिता पण त्यां आव्यां, तेणे शरविद्ध थइ मरण पामेला पोताना पुत्रने जोइने घणोज शोक कस्यो, राजा विलखो थइ ते वृद्ध माता पिताना पगमां पड्यो, त्यारे ते बेहु वृद्धें कह्युं जे अमो जेम पुत्रवियोगें मरण पामीयें ठैयें तेम तुं पण पुत्रवियोगें मरण पामीश ? एवो राजाने शाप दइ ते बेहु वृद्धमरण पाम्यां,अने तेमज दशरथराजानुंपण पुत्रवियोगें मरण थयुं माटे हिंसा थकी दुःख प्राप्त थया विना रहेतुं नथी ॥ ११४ ॥

चौरोदुःखमुपैतिनारकसमंसत्योपितत्सन्निधेः,शुष्के प्रज्ज्वलिते हि सार्द्रमपि किं नो वह्निना दह्यते ॥ संघोल्लुंटनसद्यदग्धचरटग्रामेऽग्नितप्तप्रजा,मध्योत्पत्तिभवे समं सगरजैः किं किं न लेभे तथा ॥ ११५॥

अर्थः—(चौरः के०) चोर (हि के०) निश्चें (नारकसमं के०) नारकीसमान, (दुःखं के०) दुःखने (उपैति के०) पामें ठे. ते चोर तो पामे परंतु (सत्योऽपि के०) चौर्यकर्म रहित एवो साचो पुरुष पण (तत्सन्निधेः के०) ते चोरना सहवास थकी दुःखने पामे ठे केनी पेठें ? तो के (शुष्के के०) सुकुं एवुं काष्ट (प्रज्ज्वलिते के०) सलगे ठते तेनी साथें रहेलुं एवुं (सार्द्रमपि के०) लीलुं काष्ट पण (किं के०) शुं (वह्निना के०) अग्नि जे ठे. तेणे करी (नोदह्यते के०) नथी बलतुं ना बलेज ठे. तेम चोरनी साथें रहेवाथी सारो मनुष्य पण दुःख पामे ठे. वली जुवो (संघोल्लुंटन के०) संघना लुंटवामां (सद्य के०) सज्जीभूत थया एटलामाटेज (दग्धचरट

ग्रामे के०) बालेला ने चोर जेमां एवा ग्राममां (अग्नितप्तप्रजामध्योत्प निनवे के०) ने चोरोनी मध्ये अग्नीथी तपीने प्रजा लोक पण बली गया ते शाठहजार चोरानी उत्पत्ति केटलाएक नवे (नगरजैः समं के०) सग रराजाना पुत्रे पणे सर्वेनी साथेंज थइ. माटे (तथा के०) ते प्रकारें (किं किं के०) शुं शुं (नलेने के०) जीव न पामे ॥ ११५ ॥

आंहिं सगरराजाना पुत्रोनी कथा कहे ने. महाडुर्गस्थपल्लीने विषे शा ठ हजार चोर रहेता अने जलाल्लोकपण रहेता हता एकदा त्यांथी श्रीन रतचक्रवर्त्तिनुं संघ चाल्यो जतो हतो तेने लूंटवाने चोर तयार थया तेवा त भरतराजायें जाणी तेवारें त्यां आवीने पल्लीनुं द्वार बंध कर्युं तेवारें ग वेचोरो अग्नीथी बली गया तेनी सायें त्यां रहेनारा साधुलोकोपण बली गया. शाठहजार चोर घणा भव भ्रमण करीने सगरचक्रवर्त्तिना पुत्र थया. एक दिवस ते रत्नदंभकें करी अष्टापदपर्वतने परिखा करवा तत्पर थया,तेने देवताउयें वार्या तो पण ते अष्टापद उपर गंगानदीना जलने लावता एवा ने साठे हजार पुत्रोने अग्निकुमार देवतायें बाली भस्मीभूत करी दीधा.

चौर्यं स्वेन च वर्णकेन च कृतं मूढाङ्करंतं भवे, राज्ञा मं
ण्डिकशालकोऽपि न हतः किं मूलदेवेन सः ॥ किं
चैत त्रिजगतप्रियोऽपि मदनस्तच्चित्तचौर्योद्यतः, शापं
प्राप न किं प्रजापतिगिरा दाहं च रौद्राग्निना ॥ ११६ ॥

अर्थः-(स्वेन के०) पोताना (वर्णकेन के०) पोतानी जाति वाला संबंधीए पण (चौर्यं के०) चौर्य. (कृतं के०) कर्युं (मूढाः के०) हे मूढ जनो ! (भवे के०) भवने विषे (मूलदेवेन के०) मूलदेव नामा (राज्ञा के०) राजायें (सः के०) ते प्रसिद्ध एवो (मंडिकशालकोपिके०) चोरी करनारो मंडिक नामा पोतानो शालक (किं के०) शुं (न हतः के०) न मार्यो. ना मार्योज (च के०) वली (एतत्रिजगतप्रियोऽपि के०) आ त्रण जग तने वहालो एवो पण (च के०) अने (तच्चित्तचौर्योद्यतः के०) तेना चित्तने चो रवामां उद्युक्त एवो (मदनः के०) कामदेव. (प्रजापतिगिरा के०) ब्रह्मा नी वाणीथी (दाहं के०) दहन एवा (शापं के०) शापने (किं के०) शुं (न प्राप के०) न पामतो हवो ? वली कामदेवें ब्रह्मानुं मन हरण क

टेथी पीतांबर ओढेलुं तथा पादतलमां पद्मनुं चिन्ह जोवाथी जराकुमारने आ मृगलो छे एवी भ्रांति थइ, तेथी तेनो शिकार करवा तेणें जोरथी बाण मूक्यो, जेथी श्रीकृष्ण मरण पाम्या ॥ १ ॥

हवे दशरथराजानी कथा कहे छे. अयोध्या नगरीमां दशरथ राजा राज्य करे छे. एकदिवस ते राजा वनमां क्रीडा करवा गयो, त्यां वारिली जायें करी विलास करतो एवो हस्तीनो शब्द सांभल्यो, त्यारे दशरथ राजायें तदनुसारें बाण माख्यो, ते बाणथी पाणीनो घट भरतो एक मुनिपुत्र मरण पाम्यो. तेवारें हातात एवो शब्द करी ते मुनि धरतीयें पड्यो, तेवामां ते दशरथराजा त्यां आवे, तो बाणविद्ध थयेला मुनिपुत्रने जोयो, एटलामां ते मुनिपुत्रनां माता पिता पण त्यां आव्यां, तेणे शरविद्ध थइ मरण पामेला पोताना पुत्रने जोइने घणोज शोक कस्यो, राजा विलखो थइ ते वृद्ध माता पिताना पगमां पड्यो, त्यारे ते बेहु वृद्धें कह्युं जे अमो जेम पुत्रवियोगें मरण पामीयें छैयें तेम तुं पण पुत्रवियोगें मरण पामीश ? एवो राजाने शाप दइ ते बेहु वृद्धमरण पाम्यां,अने तेमज दशरथराजानुंपण पुत्रवियोगें मरण थयुं माटे हिंसा थकी दुःख प्राप्त थया विना रहेतुं नथी ॥ ११४ ॥

चौरोदुःखमुपैतिनारकसमंसत्योपितत्सन्निधेः,शुष्के प्रज्ज्वलिते हि सार्द्रमपि किं नो वह्निना दह्यते ॥ संघोल्लुंटनसद्यदग्धचरटग्रामेऽग्नितप्तप्रजा,मध्योत्पत्तिभवे समं सगरजैः किं किं न लेभे तथा ॥११५॥

अर्थः—(चौरः के०) चोर (हि के०) निश्चें (नारकसमं के०) नारकीसमान, (दुःखं के०) दुःखने (उपैति के०) पामें छे, ते चोर तो पामे परंतु (सत्योऽपि के०) चोर्यकर्म रहित एवो साचो पुरुष पण (तत्सन्निधेः के०) ते चोरना सहवास थकी दुःखने पामे छे केनी पेरें ? तो के (शुष्के के०) सुकुं एवुं काष्ट (प्रज्ज्वलिते के०) सलगे छते तेनी साथें रहेलुं एवुं (सार्द्रमपि के०) लीलुं काष्ट पण (किं के०) शुं (वह्निना के०) अग्नि जे छे, तेणे करी (नोदह्यते के०) नथी बलतुं ना बलेज छे. तेम चोरनी साथे रहेवाथी सारो मनुष्य पण दुःख पामे छे. वली जुवो (संघोल्लुंटन के०) संघना लुंटवामां (सद्य के०) सद्यीभूत थया एटलामाटेज (दग्धचरट

ग्रामे के०) बालेला ने चोर जेमां एवा ग्राममां (अग्नितप्तप्रजामध्योत्प त्रिभवे के०) ते चोरोनी मध्ये अग्नीथी तपीने प्रजा लोक पण बली गया ते शाठहजार चोरानी उत्पत्ति केटलाएक भवें (सगरजैः समं के०) सग रराजाना पुत्रे पणे सर्वेनी सार्थेज थइ. माटे (तथा के०) ते प्रकारें (किं किं के०) शुं शुं (भलेभे के०) जीव न पामे ॥ ११५ ॥

आंहिं सगरराजाना पुत्रोनी कथा कहे छे. महादुर्गस्थपल्लीने विषे शा ठ हजार चोर रहेता अने भलालोकपण रहेता हता एकदा त्यांथी श्रीभ रतचक्रवर्त्तिनुं संघ चाल्यो जतो हतो तेने लूंटवाने चोर तयार थया तेवा त भरतराजायें जाणी तेवारें त्यां आवीने पल्लीनुं द्वार बंध कर्युं तेवारें स र्वचोरो अग्नीथी बली गया तेनी सार्थे त्यां रहेनारा साधुलोकोपण बली गया. शाठहजार चोर घणा भव भ्रमण करीने सगरचक्रवर्त्तिना पुत्र थया. एक दिवस ते रत्नदंडकें करी अष्टापदपर्वतने परिखा करवा तत्पर थया.तेने देवताउयें वार्या तो पण ते अष्टापद उपर गंगानदीना जलने लावता एवा ते साठे हजार पुत्रोने अग्निकुमार देवतायें बाली भस्मीभूत करी दीधा.

चौर्यं स्वेन च वर्णकेन च कृतं मूढाश्चरंतं भवे, राज्ञा मं त्रिकशालकोऽपि न हतः किं मूलदेवेन सः ॥ किं चैत त्रिजगत्प्रियोऽपि मदनस्तच्चित्तचौर्योद्यतः, शापं प्राप न किं प्रजापतिगिरा दाहं च रौद्राग्निना ॥ ११६ ॥

अर्थः—(स्वेन के०) पोताना (वर्णकेन के०) पोतानी जाति वाला संबंधीए पण (चौर्यं के०) चोर्य. (कृतं के०) कर्युं (मूढाः के०) हे मूढ जनो ! (भवे के०) भवने विषे (मूलदेवेन के०) मूलदेव नामा (राज्ञा के०) राजायें (सः के०) ते प्रसिद्ध एवो (मंत्रिकशालकोपि के०) चोरी करनारो मंत्रिक नामा पोतानो शालक (किं के०) शुं (न हतः के०) न मार्यो. ना मार्योज (च के०) वली (एतत्रिजगत्प्रियोऽपि के०) आ त्रण जग तने वहालो एवो पण (च के०) अने (तच्चित्तचौर्योद्यतः के०) तेना चित्तने चो रवामां उद्युक्त एवो (मदनः के०) कामदेव. (प्रजापतिगिरा के०) ब्रह्मा नी वाणीथी (भूतं के०) भूतं एवा (शापं के०) शापने (किं के०) शुं (न प्राप के०) न पामतो हवो ? वली कामदेवें ब्रह्मानुं मन हरण क

थुं तेथी ब्रह्माने पोतानी दीकरी सरस्वतीनी उपर कुदृष्टि थइ पछी कोइकें कह्युं कें आ शुं ? अकार्य करवा इछो छो ! त्यारें ब्रह्मायें जाण्युं जे आ सर्व अनंग एटले कामदेवनोज रंग छे. पछी कामने शाप आप्यो (च के०) वली (रौद्राग्निना के०) शंकरना त्रीजा लोचनमांथी निकलेला एवा अग्नियें करी (दाह्यं के०) दाहने शुं कामदेव न पाम्यो ? ना दाहने पण पाम्योज॥११६॥

आंहिं मूलदेव तथा कंदर्पनी कथामां प्रथम मूलदेवनी कथा कहे छे. रत्नपुर नगरने विषे मूलदेव राजा राज्य करे छे, तेनो मंमिक नामा शालो हतो,ते पोताना बनेवीना घरमांथी सर्व पदार्थो लइने सुख भोगवतो हतो, एम करतां पूर्वकृतकर्मोदयथी तेने जुगारना व्यसनमां मन थयुं, ते जुगार रमतां रमतां अनुक्रमें घर वगेरे सर्वस्व हारी गयो, पछी द्रव्यहीनताने लीधे अत्यंत दुःखी थवाथी नगरमां चोरी करवा लाग्यो, नगरनां लोकों यें मूलदेव राजानी पासे आवी फरीयादि करी, के आ तमारो सालो गाम मां चोरी बहुज करे छे, ते सांभली राजायें तेने वार्यो के हवेथी तारे आ काम करवुं नहिं. आ वखत आ तारो अन्याय हुं सहन करुं छुं अने तुं म्हारो संबंधी होवाथी कांही पण शिक्षा तेने देतो नथी. वली केटलाए क दिवसें ते शालायें पोतानी बेनना घरमांज खातर पाडयुं, त्यारे गृहर क्षक शिपाइउयें तेने नाशी जतो जोइ पकडीने राजानी पासें आण्यो, न्या यवंत राजायें तेने शूलीयें चडाव्यो ते मरण पामीने दुर्गतियें गयो ॥११६॥

हवे कंदर्पनी कथा कहे छे एक दिवस ब्रह्मा ध्यान करता हता, त्यां कामदेव तेना ध्यानने भंग करवानो विचार करी ब्रह्माना मनमां पेठो, के तरत पोतानी पासें रमती एवी पोतानी दीकरी सरस्वतीने जोइने तेनी उपरज ब्रह्मानी सरागता थइ, त्यारें सहुयें जोइने कह्युं के आ तो धर्मलोप थाय छे अने घणोज अनर्थ थाय छे ते वातनुं ब्रह्माने ज्ञान थवाथी मनमां विचार करवा लाग्या के आ ते शो गजब बन्यो ! जूउ आ कामदेवज आवा अधर्ममां मुने उतारवा तत्पर थाय छे एम जाणी पछवाडे जुवे छे तो त्यां कामदेवने नजरें जोयो त्यारें रोषयुक्त थइने ब्रह्मा बोल्या के हे पापी ! म हादेवना त्रीजा नेत्रना अग्निथकी तुं बलीने भस्मीभूत थइ जाइश ? एम ब्रह्मायें शाप आप्यो. के तरतज शंकरने काम उपर क्रोध आववाथी

पोतानुं भाललोचन उघाडयुं, तेमांथी अग्नि निकल्यो, तेणें करी कामदेव भस्मीभूत थइ गयो, ए सर्व चोरीनुं फल मल्युं माटे सर्वथा चोरी करवी नहिं ए तात्पर्यार्थ छे. ए लौकिकशास्त्रनो दृष्टांत छे.

पुण्यापुण्यचयेन बुद्धिरमला स्यात्कश्मलाऽप्यंगिनां, वा
तेनेव युगंधरी सदसता मुक्ताफलं गारभा ॥ लंकेशो
नलकूवरप्रियतमां नाम्नोपरंभां रता, मत्याक्षीदर
तां च रामवनितां सीतां जहाराशुवत् ॥ ११७ ॥

अर्थः–(पुण्यापुण्यचयेन के०) पुण्य तथा अपुण्यना समूहें करी (बुद्धिः के०) बुद्धि, (अमला के०) निर्मल तथा (कश्मलापि के०) पापिष्ट पण (अंगिनां के०) सर्व प्राणीयोनी (स्यात् के०) होय, (वातेन के०) वायुयें करी (युगंधरीव के०) युगंधरी जेम तेम (सदसता के०) सारा अने नरसा वायुयें करीने अनुक्रमें (मुक्ताफल के०) मुक्ताफलनी अने बीजा (अंगारभा के०) अंगारनी कांतिने प्राप्त थाय छे. जुवो (लंकेशः के०) रावण (रतां के०) आसक्त एवी (नलकूवरप्रियतमां के०) नलकूवरनी प्रिया (नाम्नाउपरंभां के०) उपरंभा नामें हती तेने (अत्याक्षीत् के०) त्याग करतो हवो, ते सत्कर्मना उदयनुं फल थयुं, (च के०) वली तेज रावण (अरतां के०) आसक्त नहि एवी (रामवनितां के०) दशरथना पुत्र राम तेनी स्त्री (सीतां के०) सीताने (आशुवत् के०) शीघ्रतानी पेठें (जहार के०) हरण करतो हवो, तेथी तेनो कुलक्षय थयो, ते पापकर्मना उदयनुं फल थयुं ॥ ११७ ॥

आंहिं रावणनी कथा कहे छे. कांचनपुरने विषे नलकूवर राजा राज्य करे छे. एकदा दिग्विजय करवा रावण त्यां आव्यो, नलकूवर राजा सैन्य लइने साहामो लडवा आव्यो, रावणें सैन्य भांग्युं. जोइने गढमां प्रवेश करीने रह्यो, नगरनी फरतो असाली विद्यायेंकरी अग्निमय प्राकार कर्यो, तेवारें रावण कोप्यो थको अग्निना भयेंकरी कोटनी नजीक रह्यो थको खेद पाम्यो, त्यारें नलकूवरनी पट्टराणी सखीसहित त्यां आवीने रावणने कहेवा लागी, के मने तुं अंगीकार कर, तो हुं तुने दुर्गग्रहण विद्या समर्पण करुं रावणें ते वात कबूल करीने पट्टराणी पासेंथी विद्या लइ अग्निना

कोटने भांगीने पछी नलकुवरनी पट्टराणीने रावण कहेवा लाग्यो के तुं मारी विद्या गुरु थइ माटे हे स्त्रि! हुं तुने इछतो नथी. एम कही पछी नलकूवर राजाने रावणे कह्युं के आ मारी विद्यागुरुस्थाने छे माटे म्हारी भगिनी थइ एने तुं पट्टराणी करी राख्य,वली कालेंकरी दशरथ राजाना पुत्र श्रीराम चंद्र वनवास गया त्यां दंमकाऽरण्यमां रह्या हता,तेवामां श्रीरामचंद्रनी सीताने माटे सिंहनादादि उपायो विकूर्वीने रावणें सीतानुं हरण कर्युं ॥११७॥

मूढः परस्त्रियमुपेत्य कुवाक्यबंध,घातापकीर्त्तिमृतिदुर्गति दुःखपात्रम् ॥ स्याद्ब्रह्मराजचुलणीरतदीर्घवत्किं, लक्ष्म क्षयादिव विधोर्गुरुतल्पगस्य ॥ परस्त्रीद्वारं ॥ ११८ ॥

अर्थः–(मूढः के०) मूढ पुरुष, (परस्त्रियं के०) परस्त्रीने (उपेत्य के०) प्राप्त थइने (कुवाक्य के०) दुर्यश, (बंध के०) रोधनादि, (घात के०) लकुटादिनुं ताडन, (अपकीर्त्ति के०) अपकीर्त्ति, (मृति के०) मरण (दुर्गति के०) दुर्गति, इत्यादि (दुःखपात्रं के०) दुखनुं पात्र, (स्यात् के०) होय, केनी पेठें (ब्रह्मराजचुलणीरतदीर्घवत् के०) ब्रह्मराजानी चूलणी नामा स्त्रीनेविषे आसक्त एवा दीर्घराजानी पेठे थाय छे, (गुरुतल्पगस्य के०) बृहस्पतिनी स्त्रीसाथे व्यभिचारने करता एवा (विधोः के०) चंद्रमाने (लक्ष्मक्षयादिव के०) कलानाक्षयथकी जेम दुःख (किं के०) शुं नहिं? थयुं ना थयुंज ॥ ११८ ॥

आ श्लोकमां दीर्घ नृपनो तथा चंद्रमानो दृष्टांत होवाथी प्रथम दीर्घ नृपनी कथा कहे छे. कांपिल्यपुरने विषे ब्रह्मराजा राज्य करे छे, तेनी चुल्लणी नामें स्त्री हती, ते ब्रह्मराजा मरण पाम्यो तेवारें तेनो पुत्र ब्रह्मदत्त चक्रीहतो ते घणोज नानो हतो,चुल्लणी दीर्घराजानी साथे विषय भोगववा लागी एकदिवस पुत्र अने माता बेहु बेठां छे तेवामां एक हंसी हती ते कागडानी साथें रति सुख करती नजरें पडी ते जोइने तेज वखतें ते ब्रह्मदत्तें पोतानी माताने देखतां ते हंसीने मारी नाखी, ते जोइ चिह्नणीयें जाण्युं जे आ पुत्रे मने शिक्षा आपवा माटे आ काम कर्युं जणाय छे अने मारुं चरित्र पण आ पुत्रे जाण्युं छे, तेथी लाखनुं घर करी उपर धोलाव्युं अने पुत्रनें कह्युं के हे पुत्र! आ घरमां तारी स्त्री सहित तुं र

हे. ए निश्च करवानुं एकांत स्थल घणुंज सारुं छे ते सांजली ब्रह्मदत्त ते मां रह्यो रात्रिये मातायें ते घरने अग्नियें सलगाव्युं तेमांथी ब्रह्मदत्त, मंत्रीनी शिक्षाथी सुरंगने मार्गें निकली गयो. ते पृथ्वीमां फरतां फरतां अनुक्रमे त्रणखंमनुं राज्य प्राप्त करी पाछो पोताने गाम आवतो सांजव्यो के तुरत तेनी माता चुलणी आर्या थइ गइ. अने दीर्घराजाने चक्रवर्त्ति ब्रह्मदत्तें अनेक कदर्थनाथी मारी नाख्यो ॥

हवे चंड्नी कथा कहे छे. एकदिवस बृहस्पतिनी जार्या तारानामे घणीज स्वरूपवती हती तेने जोइ चंड्मा तेना जोग माटे आव्यो, कह्युं छे के ॥ विकलयति कलाकुशलं, हसति शुचिं पंमितं विडंवयति ॥ अधीरयति धीरनरं, क्षणेन मकरध्वजोदेवः ॥ १ ॥ जावार्थः—कामदेव छे ते, एक क्षणमां कलाकुशल पुरुषने विकल करे छे, क्षणमां पवित्रने हसे छे, क्षणमां पंमितने विडंवन करे छे. क्षणमां धीर पुरुषने अधीर करे छे. एवो ए कामदेव छे. हवे पोतानीस्त्री तारा तेनी साथें असमंजस कर्म करता चंड्ने जोइने बृहस्पतिये शाप आप्यो, के हे पापी! तुं लांछन सहित था. तथा वली ताहरे कोइदिवस आहिं आववुं नहिं. एम तिरस्कार कस्यो ॥ ११८ ॥

सुजूमजमदग्निजप्रतिमपुंडुमाघर्षजे, कषायदवपावकेवि
षयवात्यया दीपिते ॥ महद्गुणवनं दहत्यहह पुण्य कल्प
डुम,स्ततोस्तियदिदैवतःशमघनाघनोवर्षति ॥ ११९ ॥

अर्थः—(सुजूमजमदग्निजप्रतिमपुंडुमाघर्षजे के०) सुजूम राजा अने जमदग्नि पुत्र परशुराम तेना सरखा पुरुषरूप काडना घसावायकी उत्पन्न थयेलो एवो अने (विषयवात्यया दीपिते के०) विषयरूप विंटोलीया वायुयेंकरी प्रदीप्त एवो (कषायदवपावके के०) कषायरूप दावाग्निनेविषे (महद्गुणवनं के०) मोटोटा गुणरूप वन (अहहदहति के०) अरेरे वली जाय छे. (ततः के०) त्यार पछी पुण्यकल्पडुमउपर दवाग्नि लागे छे त्यारें (पुण्यकल्पडुमः के०) पुण्यरूप कल्पडुम जे छे, ते (यदि के०) जो (दैवतः के०) जाग्यथकी (शमघनाघनः के०) शमरूप मेघ (वर्षति के०) वरसे छे, तो ते कल्पडुम (अस्ति के०) त्यां रहे छे, अर्थात् दाह घनो नथी एम जाणवुं ॥

आंहिं सुजूमचक्रवर्त्ति तथा परशुरामनी कथा कहे छे. एक वनने विषे

जमदग्नि ऋषि तप करता हता, त्यां तेणें एवुं सांभल्युं जे "अपुत्रस्य गतिर्नास्ति" आ वैदिक वाक्य सांभलीने ते जितशत्रु राजानी दीकरी रेणुकाने परण्या, तेने परशुराम नामा पुत्र थयो, रेणुका एकदिवस पोतानी बेनने मलवा गइ त्यां ते रेणुकाने तेना बनेवी कृतवीर्य राजायें जोगवी ते वातनी जमदग्नि ऋषिने खबर पडवाथी तेणे पोताना पुत्रने कह्युं के हे पुत्र! आ ताहारी दुष्टाचरणी माताने तुं मारी नाख, ते वात सांभलतांज परशुरामे तरत पोताना कुठारेंकरी पोतानी मातानुं शिर कापी नाख्युं आ वात जाणीने जमदग्निने कृतवीर्य राजायें मारी नाख्यो, वली परशुरामें पोताना बापने मारनार कृतवीर्यने मार्यो तेवारें कृतवीर्य राजानी स्त्री सगर्भा हती ते नाशिने तापसना आश्रममां गइ. त्यां तेने पुत्र थयो, तेनुं सुभूम एवुं नाम पाड्युं, ज्यारे ते यौवन वयने प्राप्त थयो त्यारे सर्व पोतानुं वृत्तांत माताना मुखथी सांभली सुभूमचक्री कांपिल्यपुरमां आव्यो. तेनी दृष्टिमां क्षत्रियोनी दाढाउ ते स्थलने विषे रहेली हती ते परम अन्नरूप थती हवी त्यां सुभूमने मारवाने माटें परशुराम आव्या,पछी सुभूमना भाग्ययोगें करी ते स्थलचक्ररूप थइ गयुं, ते चक्रें करी सुभूमें परशुरामनुं शिरछेदन करी नाख्युं, पूर्वें परशुरामें सात वार निःक्षत्री पृथ्वी करी हती तेवार पछी सुभूम राजा एकवीश वार निर्ब्राह्मणी पृथ्वी करी नरकें गयो माटे कषायनो त्याग करवो ए सर्व सुज्ञ संमत छे ॥ ११ए ॥

जीवाः कषायविवशान विचारयंति, चाणाक्यवत्कि
मपि कृत्यमकृत्यमत्र ॥ कल्पांतवात विततिक्षुभित
स्य पूर्ण,रोदोंऽतरस्य जलधेर्ननु कोविवेकः ॥१२०॥

अर्थः–(कषायविवशाः के०) कषायथी विवश एवा (जीवाः के०) जीवो, (चाणाक्यवत् के०) चाणाक्यनी पेठें (किमपि के०) कांही पण (अत्र के०) आहिं (कृत्यं के०) कृत्यने अने (अकृत्यं के०) अकृत्यने (न विचारयंति के०) विचार करता नथी. (कल्पांतवातविततिक्षुभितस्य के०) कल्पांत कालनो जे पवन तेनो जे विस्तार तेणें करी क्षुभित एवो अने (पूर्णरोदोंऽतरस्य के०) पूर्ण छे पृथ्वी आकाशनो अंतर जेनेविषे एवा (जलधेः के०) समुद्रने (किं के०) शुं (विवेकः के०) विवेक होय?

अर्थात् न होय तेम कषायविवश जीवने पण विवेक न होय ॥ १२० ॥
आंहिं चाणाक्यनी कथा कहे छे. चणकग्रामनने विषे चणीनामा विप्र तेनी चणेश्वरीनामें जार्या हती, तेने चतुरबुद्धि चाणाक्यनामा पुत्र थयो, एकदिवस कांइक प्रार्थना करवा माटे नंदराजाना दरबारमां ते चाणाक्य आव्यो, त्यां सनामां सोनानो सिंहासन जोइने तेनी उपर बेगो, एट लामां नंदराजा जमीने सनामां आव्यो, तेणे चाणाक्यने कह्युं जे हे चाणाक्य! तुं राज्यासन उपर केम बेगो? हवे तुं नीचें उतर एम सामवृत्तियें करी कह्युं, तो पण ते आसनथी उठ्यो नहिं, तेजोइ राजानी पासें रहेनारा जनोयें तेने सिंहासनथी गलोथो दइ नीचे पाडी नाख्यो, तेवारें क्रोधावेशित थयेला चाणाक्यें राजानी समक्ष प्रतिज्ञा करी के जो हुं तारुं उन्मूलन न करुं तो हुं ब्राह्मणज नहिं. एम कही माथा उपरनी शिखा बांधी त्यांथी मयूरग्राममां गयो, त्यां क्षत्रीनी पुत्रीनो चंद्रपानदोहद पूर्यो, तेने चंद्रगुप्त नामा पुत्र थयो, तेने राज्याभिषेक करावी कटक लइने चाणाक्य पाडलीपुरमां गयो, त्यां परस्पर युद्ध थयुं, तेमां चंद्रगुप्त तथा चाणाक्य पराजय पामी नाशि गया, पछी वृद्धबुद्धिवाला पर्वत राजाने सखा करीने देशने छोडीने पाडलीपुरनेविषे जइने पछी नंदराजानो धर्मद्वारेंकरी नाश करीने चंद्रगुप्तने अने पर्वतराजाने नंदराजानी गादीपर बेसाड्या, अने मंत्रीनुं काम पोतें चाणाक्यें करवा मांड्युं, पछी ॥ तुल्यार्थं तुल्यसामर्थ्यं, मर्मज्ञं व्यवसायिनं ॥ अर्द्धराज्यहरं मित्रं योन हन्यात्सहन्यते ॥ आ प्रकारनुं नीतिनुं वाक्य संजारी ते चाणाक्यें पर्वतने विषकन्यानुं पाणिग्रहण करावीने मारी नाख्यो. कह्युं छे केः—लुद्धा सकयतुरिया सुहिणो, विवि संवयंति कयकज्जा ॥ जह चंदगुत्तगुरुणा, पव्वइत्ते घाइउ राया ॥ १ ॥१२०॥

मिष्टान्नं भुंक्ष्व हृद्यं पिब जलमपि तान् षड्रसान् मा च रुं
न्धि, कायक्लेशं त्यजांगं विमलयसुकरः क्रूरकुम्नर्पिणोक्तः ॥
मोक्षोपायोऽस्ति कोपं जय भज शिवजं शर्म साधो निबोध,
शाकेक्षुक्षीरखंडप्रनृतिरसबलात्सन्निपातेऽप्यदुष्टम्॥१२१॥

अर्थः—(साधो के०) हे साधु! (निबोध के०) जाण ते शुं? जाणतो के (मिष्टान्नं के०) मिष्टान्न जोजनने (भुंक्ष्व के०) जम, तथा (हृ

र्थं के०) आनंद करनार एवा (जलमपि के०) जलने पण (पिब के०) पान कर, (च के०) वली (तान् के०) ते (षड्रसान् के०) छ रसोने (मा रुंधि के०) म रोक्य अर्थात् षट्रसनुं आस्वादन कर अने (कायक्लेशं के०) कायक्लेशने (त्यज के०) त्याग कर तथा (अंगं के०) अंगने (विमलय के०) निर्मल कर. कदाच तुं कहीश के एवा उपदेश करवाथी मोक्ष तो सर्वथा थाय नहिं परंतु नारकीनां दुःख उत्पन्न थाय छे. त्यां कहे छे के ना एम नहिं (कूरकुंन्नर्षिणा के०) कूरगडुऋषियें (मोक्षोपायः के०) मोक्षनो उपाय (सुकरः के०) रुडी रीते थाय एवो (उक्तः अस्ति के०) कहेलो छे. ते कयो उपाय? तो के (कोपं के०) क्रोधने (जय के०) जींत. जेथी (शिवजं के०) मोक्षथी थयेलां एवां (शर्म के०) सुखने (न्नज के०) न्नज. अर्थात् सर्व विषयसुख न्नोगव अथवा चाहे तो न न्नोगव, पण कोप करीश नही तेवारेंज मोक्षसुखनी प्राप्ति थशे परंतु जो कोप करीश अने बीजा विषयोनो न्नोग न करीश तो सुखी थाइश नहीं एम जाणजे. (द्राक्षेक्षुक्षीरखंमप्रन्नृतिरसवलात् के०) द्राक्षा, इक्षुरस दुध, खांम प्रमुख रसनां वल जे छे ते (सन्निपातेऽपि के०) सन्निपात थयो होय,तेने विषे पण (अदुष्टं के०) अदुष्ट थाय छे परंतु कोप जय ते महारसवल छे वास्ते सुबुद्धियें क्रोधनो त्याग करवो ॥ १२१ ॥

आंहिं कूरगडुनी कथा कहे छे. तुरमणिपुरीने विषे श्रीकुंन्नराजा राज्य करे छे. तेनो पुत्र ललितांग नामा हतो, एक दिवस गुरुनां वचन सांन्नलीने ललितांगें वेराग्य पामी दीक्षा ग्रहण करी. परंतु वेदनी कर्मना प्राबल्यथकी तेने क्षणेक्षणे न्नूख घणीज लागती हती,बहु कूर न्नोजन जमतो हतो तेथी तेनुं कूरगडु मुनि एवुं नाम सहुयें पाडयुं, एकदा पजोसणना दिवसें तेने न्नूख लागी, त्यारे जमवाने बेठो, तेने साथें रहेनारा साधुउयें कह्युं के हे पापी! आज पर्वने दिवसें पण तुं जमे छे ? तो पण क्षमामंदिरमां रह्यो छतो कांहीं पण बोल्या विना पोताना आत्मानी निंदा करवा लाग्यो के अरे पापी आत्मा तुं आजनो दिवस पण न्नूख सहन करी शक्यो नहिं. एम आत्माने धिक्कारता तेने न्नोजन करतांज केवलज्ञान उत्पन्न थयुं. त्यां देवताउयें आवीने केवलज्ञाननो महोत्सव कर्यो, ते जोइ चार जण

साधु जे कूरगडूने जमती वखतें धिक्कार देता हता तेणें आवो कूरगडूनो महिमा जाणीने नमस्कार करी मिथ्या दुःष्कृत देता एवा ते चार क्षपकोने पण केवलज्ञान उत्पन्न थयुं ॥ एम कोपजय करनारने पण मोक्षसुख मले छे.

यदि शिवगतिरिष्टा सार्यमेतार्यवत्त,ज्जयरुपमुपसर्गे
ऽपीप्सिता दुर्गतिश्चेत् ॥ करडकुरडवत्तक्रोधमुच्चैर्वि
धेयः, सुरतरुकनकद्रोर्योमतस्तं नजस्व ॥ १२१ ॥

अर्थः—(यदि के०) जो (सा के०) ते प्रसिद्ध एवी (शिवगतिः के०) मोक्षगति (इष्टा के०) इच्छित होय (तत् के०) तो (आर्यमेतार्यवत् के०) मेतार्य मुनिनी पेठे (उपसर्गेऽपि के०) उपसर्गमां पण (रुपं के०) रोषने (जय के०) जींत्य,अर्थात् मोक्षनी इच्छा करतो होय तो मेतार्यनी पेठें रोष जय कर अने जो (दुर्गतिः के०) दुर्गति (इप्सिता चेत् के०) इच्छित होय,तो (करडकुरडवत् के०) करडकुरडनी पेठें (तत्क्रोधं के०) ते क्रोधने (उच्चैः र्विधेयः के०) उंची रीते अर्थात् अतिशयपणें करवो, ए बेमांथी हे नव्य जीव ! तुने गमे तेने सेव. एटले (सुरतरुकनकद्रोः के०) कल्पवृक्ष अने धतुरो ए बेहुना वृक्ष छे, तेमध्यें (यः के०) जे (मतः के०) मनमां मा नेलो होय, (तं के०) तेने (नजस्व के०) सेव. अर्थात् सुरतरु अने धत्तु रवृक्ष ए बेहु छे तेमां तुने गमे तेने सेव्य. कल्पवृक्ष समान रोषविजय जा णवो अने धत्तुरवृक्ष समान रोषनो अविजय जाणवो ॥ १२१ ॥

आंहिं मेतार्यनी तथा करडकुरडनी कथामां प्रथम मेतार्यमुनीश्वरनी कथा कहे छे. मेतार्यक्षपिनी उपर सुवर्णकारें उपसर्ग कस्यो, तो पण तेने क्रोध चव्यो नही अने कुरड महाकुरड नामना बेमुनीश्वरो हता. तेमणे क्रोध कस्यो तेथी ते बेहुजण दुर्गतिने प्राप्त थया ते कहे छे. श्रीवत्सा नग रीनेविषे बंधुदत्त नामा श्रेष्ठी रहे छे, तेनो मित्र यज्ञदत्त ब्राह्मण हतो, ते पण बंधुदत्तना संसर्गेथी जैनधर्मी थइ गयो. ते बेहुजणायें गुरुनी वाणी सांजलीने दीक्षा ग्रहण करी. तेमां ब्राह्मणक्षपियें तो पोताना ब्राह्मणकुल नो मद करवा मांड्यो. साधुउने कहे के शूद्रना घरनुं जे अन्न तमे ल्योछो ? ते ठीक नथी करता तेमज पारकी निंदा पण करवा लाग्यो पछी ते बेहु मित्र मरीने स्वर्गमां देवता थया. तेमां यज्ञदत्तनो जीव देवगतिथी चवीने रा

जगृहने विषे चांमालकुलमां उत्पन्न थयो, तिहां धनश्रेष्ठीनी स्त्रीने पुत्र न होवाथी ते ज्यारें गर्नवती थइ त्यारे प्रसवती वखतें ते चांमालणी पासेंथी पुत्रलइने पोताने आवेली दीकरी तेने आपी दीधी पछी आ मारो पुत्र छे एम खोटी वात चलावीने तेनुं पोषण करवा मांमयुं,नगरमां ते वातने को इयें जाणी नही. ते पुत्रनुं नाम मेतार्य एवुं पाडयुं, ज्यारें ते पुत्र युवान थयो त्यारें पितायें तेने आव कन्याउ सारा घरनी परणावी. देवता प्रयोगें करी श्रेणिकराजानी दीकरी तिलकसुंदरीने पण परण्यो तेनी साथें घणां वर्षपर्यंत सुख जोगवीने पछी देवतायें प्रतिबोध करवाथी श्रीवीर पासें दीक्षा ग्रहण करी. एकदा निक्षाने माटे कोइ सुवर्णकारना घर प्रत्यें गया. ते सोनीना घरनेविषे सोनाना यव हता ते क्रौंचपक्षीयें नक्षण कर्या, पछी स्वर्णकार घरथी बाहेर आवी जुवे तो यव दीठा नहिं, त्यारें तेणे जाण्युं, माहरा यवो निश्चें आ साधुयें ग्रहण कर्या छे. एमां संदेह नहिं. पछी कोपाय मान थइ मुनिनें मस्तकें वाधरी वींटी गलापाश दइ मारी नाख्या, मेतार्य ऋषि केवल पामी मोक्षे गया क्रोधजयनुं फल सोनीने मल्युं ॥

हवे कुरड महा कुरडनी कथा कहे छे. कुणाला नगरीनेविषे खाला नी समीप कुरड अने महाकुरड नामना बेहु ऋषियो कायोत्सर्गमां उ ना हता, तेना महिमाथी ते साधुने जलोपसर्ग म थाउ एवा अनिप्राय थी त्यां मेघ वरसतो नथी. ते जोइ गाममा रहेनारा मिथ्यादृष्टि लोको आवी ऋषिने कहेवा लाग्या के तमारा बे जणना तपथी गाममां वृष्टि थाती नथी आ अरिष्ट तमारा बे जणथी सर्व लोकोने थाय छे एम कही कहीने उपसर्ग करवा लाग्या, तेथी ते बेहु मुनिनो कायोत्सर्ग नंग थयो, त्यारे बेहु मुनिने क्रोध उत्पन्न थयो, अने कष्टेंकरी तेणे आ श्लोक कह्यो, ते जेम के, वर्ष मेघ कुणालायां, दिनानि दश पंच च ॥ मुशलप्रमाणधाराभि, र्यथा रात्रौ तथा दिवा ॥१॥ एम कह्युं के तुरत मुशल धारायें मेघ वरसवा लाग्यो, जलें करी नगर सर्व पलाली नाख्युं आखा नगरने उपाडीने वरसादें समुद्रमां नाखी दीधुं, अने बेहु ऋषि वृष्टिये करी निंजाइ गया, पछी ते बेहुजण मरीने नरकने प्राप्त थया, ए क्रोध करवाथी तेने कायोत्सर्गनुं फ ल न मलतां नरक गमन थयुं माटे क्रोध सर्वथा करवो नहिं ॥ १२१ ॥

मानी तपःश्रुतशमव्रतधर्महीनः, स्यान्नंदिषेण इ
व पण्यवधूपहासे ॥ किं तारकः कमलभूवरदुर्द्धरो
ऽपि, नाकारि शंभुशिशुना हतसर्वगर्वः ॥१२३ ॥

अर्थः– (मानी के०) जे अभिमानी मनुष्य होय, ते (तपःश्रुतशम व्रतधर्महीनः के०) तप, शास्त्राध्ययन, समता, व्रत, अने धर्म, ते थकी हीन (स्यात् के०) थाय छे. केनी पेरें ? तो के (पण्यवधूपहासे के०) वेश्यायें करेला उपहासनने विषे (नंदिषेण इव के०) नंदिषेणमुनि जेम थयो तेम, एटले वेश्याये नंदिषेणमुनिनो उपहास कस्यो जे तमे धर्मलाभ कहो छो पण अमारे तो धनलाभ जोइयें आ सांभली रुषिने अभिमान आव्युं जे मारामां शुं धन आपी शकुं एवी शक्ति नथी? एम विचारी तृणखलाना भंजनेकरी बारकोटि सोनामोरनी वृष्टि करी. तेथी तप अने शास्त्राध्ययन, समता तथा व्रत अने धर्म ते थकी भ्रष्ट थयो. आ नंदिषेण मुनि श्रेणिक राजानो पुत्र हतो, वली (कमलभूवरदुर्द्धरोऽपि के०) ब्रह्माना वरदानथकी दुर्द्धर एवो पण (तारकः के०) तारकासुर दैत्य (हतसर्वगर्वः के०) हस्यो छे सर्वगर्व जेनो एवो (शंभुशिशुना के०) शिवपुत्र जे कार्त्तिक स्वामी तेणे (न अकारि किं के०) शुं अभिमानथी हीन न कस्यो॥१२३॥

आ श्लोकमां नंदिषेण तथा कार्त्तिक स्वामिनो दृष्टांत होवाथी तेमां प्रथम नंदिषेणनी कथा कहे छे. राजगृही नगरीमां श्रीश्रेणिकराजानो पुत्र नंदिषेण हतो, ते श्रीवीरभगवाननी वाणी सांभली वैराग्य पामीने दीक्षा लेवा उजमाल थयो तेने भगवानें कह्युं जे हजी तारें भोगावली कर्मनो उदय छे माटे तुं हाल दीक्षा लेवी रहेवा दे, तो पण रह्यो नही शूरपणायें करी तप तपतां तेने अनेक प्रकारनी लब्धिउ प्राप्त थइ, एम करतां बारवरसने अंते भोग्य कर्मनो उदय आव्यो, तेवारें ते मुनि विहार करतां अजाण्यां कोइ वेश्याने घेर गया. त्यां साधुनी रीत प्रमाणे धर्मलाभ दीधो. त्यारे वेश्यायें कह्युं के. आहिं अमारे तो धनलाभ जोइयें छियें, एम मशकरी करी. तेवारें मुनियें मनमां विचास्युं जे शुं मारे धननी खोट छे. एम अभिमान लावी. घासनी सली लइ तेना झीणा झीणा कटका करीने उपर उछाल्या. अने कहेवा लाग्यो जे आथी धनवृष्टि थाउ. एवुं बो

त्यांज तपना प्रन्नावथी जेने सर्व लब्धि प्राप्त थइ छे एवा ऋषिनां वाक्य थी आकाशमांथी बारकोटी सुवर्णनी वृष्टि थइ,वेश्याना घरना आंगण मां सोनामोरोनो मोह्होटो ढगलो थइ गयो, पछी मुनि ज्यारें चाल्या, त्यारें ते वेश्यायें तेनो छेडो पकडी लीधो, अने पोतानुं द्रव्य जे वृष्टिथी आव्युं हतुं ते, मोह उत्पन्न थवाथी वेश्याने घेर रहीनें त्यां न्नोगव्युं, प्रतिदिन दश पुरुषने प्रतिबोध करीने पछी न्नोजन करे एम बारवरस त्यां रहीने उदय आवेलां न्नोग्य कर्म न्नोगवीने बारवर्षने अंते नवजणने प्रतिबोध्या अने दशमो पुरुष कोइ न आव्यो तेवारें अंते वेश्यायें हास्यथी कह्युं के आजे दशमा तमेंज थाउ एवां वेश्यानां वचनथी प्रतिबोध पामीने फ रीने पाछी प्रव्रज्या ग्रहण करी, मोक्षें गया,

हवे कार्त्तिक स्वामीनी कथा कहे छे. पूर्वें पृथ्वीनेंविषे प्रचंम एवा पो ताना हाथेकरी अखंम वैरिमंमल जेणे जीत्युं छे एवो अने सर्व कलाथी पूर्ण तथा ब्रह्मानी करेली सृष्टिमांहेला कोइथी जीताय नहि एवो तारक नामनो दैत्य हतो, ते पापियें अनेक तीर्थोनो तथा देवनी प्रतिमानो विध्वंस करी नाख्यो, तथा घणा लोको अने घणा गामनो नाश कर्यो ए प्रकारे ज्यारें म होटो उपद्रव थयो, त्यारें सर्व देवताउ एकठा थइने ध्यानमां बेठेला शंकर देव पासें गया,त्यां तारकासुरनो सर्व जुलम शिवजीनी पासे निवेदन कर्यो, शिवजीयें कह्युं बधुं सारुं थशे, तमो चिंता करशो नहिं थोडा वखतमां त मारा दुःखनो पार आवशे आम कही, देवोने विसर्जन कर्या पछी हेमा चल पर्वतनेविषे शिवजीयें पार्वती साथें महामैथुन कर्युं, तेथी कार्त्तिकस्वा मी नामा पुत्र उत्पन्न थयो, ते जन्मथी ब्रह्मचारी रह्यो तेणे तारक दैत्यने मार्यो अने सर्व देवताउनुं दुःख निवृत्त कर्युं, माटे माननो त्याग करवो.

स्वस्यापरस्य च बलान्यविचिंत्यमानः, शक्तान्यमित्रचम
रेंद्रवदापदे स्यात् ॥ शुक्रः कदाचिदिह चेत्तनुते प्रकाश,ले
शं ततः स्थगयतींडमहो महत्किं ॥ १७४॥ मानप्रक्रमः॥

अर्थः–(स्वस्य के०) पोताना (च के०) वली (अपरस्य के०) पर नां (बलानि के०) शक्त्यादिकने (अविचिंत्यमानः के०) न चिंतन करतो एवो छतो अन्निमान करी महाबलवाननी साथे वैर करे, तो ते दुःखने

ाटे थाय बे, केनी पेरें तो के (शक्राऽन्यमित्रचमरेंद्रवत् के०) सौधर्म
ंद्रनी पासें गयेला एवा चमरेंद्रनी पेठे (आपदे के०) आपदने माटे
स्यात् के०) होय. जुवो (शुक्रः के०) शुक्रनुं,तारो, (इद् के०) आदिं (कदा
चित् के०) क्यारेंक (प्रकाशलेशं के०) लेशमात्र प्रकाशने (तनुतेचेत् के०)
विस्तारे बे खरो परंतु (ततः के०) तेथी (किं के०) शुं (महत् के०) मो
होटा एवा (इंडुमहः के०) चंद्रमाना तेजने (स्थगयति के०) ढांकी शके
? ना ढांकी शकतो नथी. अर्थात् महोटा साथे अभिमान करवुं नहिं.

आंहिं चमरेंद्रनी कथा कहे बे. गजपुरमां पूरण नामें तपस्वी बहु वर्ष
र्यंत डुस्तर तप करतो हतो, तेना महिमायें करीने मरण पामी पाताल
ां चमरचंचा राज्यधानीनेविषे नवीन चमरेंद्रपणे उपन्यो. तेणे एक दि
स अवधिज्ञानेंकरी पोताना मस्तक उपर सौधर्मेंद्रनुं सिंहासन जोयुं. ते
ी तेने प्रबल कोप उपन्यो तेवारे शक्रेंद्र साथे लडवा चाल्यो, तेने परिकर
वें वार्यो, तो पण मिथ्याभिमानना वशथकी स्वर्गमां गयो, त्यांजइ देवो
ांहे महाकोलाहल ---ो,इंद्रे अवधिज्ञान प्रयुंजी चमरेंद्रने आव्यो जाणी
ेनी उपर पोतानुं वज्र मूक्युं ते वज्रने जोइने भय पामतो थको ते च
मरेंद्र भ्रमरनुं रूप विकुर्वीने श्रीवीरभगवान काउसग्गे रह्या हता तेना प
ानी नीचें पेसी गयो, वज्र पण भगवानने प्रदक्षिणा करीने पाबुं देवेंद्रना
हाथमां आवी रह्युं, पढी परस्पर शक्रेंद्रें तथा चमरेंद्रें मिथ्या डुःकृत दीधुं
अने क्लेश मट्यो. आमां पातालवासी देवो उपरला स्वर्गमां जाय नहिं
अने चमरेंद्र गयो माटे ए अछेरुं थयुं ॥ इति मानप्रक्रमः ॥ १२४ ॥

माया डुर्गतये परत्र विपदे चास्मिन् भवे संभवेत्, श्री
वीरेण सुरोऽपि कैतवसखा कुब्जीकृतोमुष्टिना ॥ किं कर्ण
स्य न निष्फला युधि कला विप्रछलात्ताऽभवत, किं श्री
शोभजगाम वामनतनुर्दैन्यं बलेर्बंधनम् ॥ १२५ ॥

अर्थः-(माया के०) माया जे ते (अस्मिन के०) आ (भवे के०)
भवने विषे (डुर्गतये के०) डुर्गतिने माटे (संभवेत् के०) संभवे, (च के०)
तथा (परत्र के०) परलोकने विषे (विपदे के०) विपत्तिने माटे थाय बे.
जुवो (श्रीवीरेण के०) श्रीवीरभगवाने (कैतवसखा के०) कपटथी थये

लो सखा एवो (सुरःअपि के०) देव पण (मुष्टिना के०) मुठियें करी (कु ब्जीकृतः के०) कुब्ज करी नाख्यो. वली (कर्णस्य के०) कर्णराजानी (वि प्रव्रलात्ता के०) ब्राह्मणनो वेश लइने बल करवाथी लीधेली (युधि कला के०) परशुरामनी पासेथी शीखेली युद्ध कला (किं के०) शुं (निष्फला के०) निष्फल (नअनवत् के०) न थइ ना थइज. अने (वामनतनुः के०) वामनरूप धारण करनारा एवा (श्रीशः के०) लक्ष्मीपति जे विष्णु ते, (वलेः के०) वलिराजाना (वंधनं के०) वंधनने अने (दैन्यं के०) दीनपणाने एटले निक्षावृत्तिने (किं के०) शुं (न जगाम के०) न पामता हवा ॥ १२५ ॥

आ श्लोकमां वीर नगवाननो तथा कर्णराजानो तथा विष्णुनो दृष्टांत होवाथी प्रथम वीरनगवाननी कथा कहे ठे. एक दिवस सौधर्मना अधिपति यें श्रीवीरकुमारना पराक्रमनुं आधिक्य वर्णव्युं,ते सांनलीने कोइक देव हतो ते इंद्रना वचनने न सहन करतो ठतो मायायें करी बालकनुं रूप विकुर्वी ने ठोकरानी साथे क्रीडा करवा माटे आव्यो, तेमां एवी सरत करी के जे कोइ हारे, तो ते हारेलो जींतेलाने पोतानी पीठपर उचकीनें अमुक स्थान पर्यंत लइ जाय. एम करवाथी श्रीवीरथी देवता हार्यो तेवारें ते वां को थइने वे हाथ तथा वेहु पग नोंय उपर राखीने रह्यो श्रीवीरनगवान् तेनी पीठपर चडती वेलाज ते देव सात ताड जेटलुं उंचुं रूप विकूर्वीने उंचो थयो तेने श्रीवीरनगवाने एक मुष्टि मारीने कुबडो करी दीधो, ते व खत श्रीवीरनगवाननुं नाम महावीर पाडयुं.

हवे कर्णनी कथा कहे ठे. एक दिवस कर्णराजा कपटथी ब्राह्मणनुं रूप लइने परशुराम पासें युद्धविद्या शिखवा गयो कारण के परशुराम एक मा त्र ब्राह्मण शिवाय बीजा कोइने शिखवता नहिं हता. पठी एक दिवस पर शुराम कर्णराजाना उत्संगमां मस्तक मूकी सुइ गया, तेटलामां एक सर्प आव्यो ते कर्णनी जंघामां करड्यो तो पण जंघा उंची करी नहिं अने लोइनी नीक चाली त्यारें परशुराम जाग्या अने पूठ्युं के ए आंहिं रुधिर क्यांथी चाल्युं. त्यारे कर्णराजायें सर्व वृत्तांत परशुरामने कह्युं ते सांनली परशु रामें जाण्युं जे आ कांही ब्राह्मण नथी परंतु क्षत्रियज ठे कारण के क्षत्रिय विना एटलुं सहनशीलपणुं ब्राह्मणनुं होय नहिं के जेने सर्पदंश थवाथी लोइ चाल्युं परंतु जरा पण मनमां नय आव्युं नहिं माटे जरूर आ क्षत्रि

थत्त छे. एम जाणीने क्रोधायमान थइ शाप आप्यो के तुं क्षत्रिय छतां कपटथी ब्राह्मणनो वेश लइने विद्या शीख्यो तो जा तारी शिखेली विद्या सर्व व्यर्थ थाशे? पछी ते कर्णराजाने तेमज थयुं ॥

हवे श्रीपति विष्णुनी कथा कहे छे. बलीराजा करीने दैत्यपति महा दानशूर राजा हतो ते जे याचना करवा आवे तेने जे मागे ते आपे,एवो हतो, एक दिवस कपटथी विष्णुयें वामनरूप धारण करी बलि पासें जइ त्रण पगलां पृथ्वीनी याचना करी, त्यारें सत्यवादी दानशूर एवा बलिरा जायें ते आपवुं कबूल कर्युं पछी तुरत विष्णुयें बे पगलायेंकरी आखी पृथ्वी उल्लंघन करीने फरीथी श्रीहरियें कह्युं के त्रीजा पगलामां शुं लहुं? त्यारें बलिराजा बोल्यो के माहरी पीठपर त्रीजो पग मूको,तेवारें त्रीजा पगलायें करी हरियें बलिराजाने पातालमां चांप्यो, पछी विष्णुयें प्रसन्न थइने कह्युं जे हे बलि! तुं घणोज सत्यवादी छो माटे कांही मारी पासें माग्य, त्यारे बलिराजा बोल्यो के मारा दरवाजामां द्वारपाल थइने तमो रहो, ते वात हरियें कबूल करी एम कपटरहित काम करवाथी बलिराजा सुखी थयो.

सर्वेऽप्येते कषायाः सदृशबलभृतः किंतु तीव्रैव माया,
जित्वा याऽऽषाढभूतिं नटमिव नटयामास गौरीव रुद्रम् ॥
स्त्रीत्वं स्त्रीलिंगभावादिव नृषु न ददौ मल्लिमुख्येषु या किं,
सत्यं इर्द्दानदैत्यं कपटसुरमणीरूपविष्णुर्जघान ॥ १७६ ॥

अर्थः—(एते के०) ए (सर्वे कषायाः अपि के०) चारे कषाय पण (सदृशबलभृतः के०) समान बलवाला छे, (किंतु के०) तो पण तेमां (ती व्रैव के०) तीव्र एवी (माया के०) माया छे. (या के०) जे माया (आषा ढभूतिं के०) आषाढभूति मुनिने (जित्वा के०) जिंतीने (गौरी के०) पार्वतीपोतानी आगल (रुद्रइव के०) रुद्रने जेम नचावती हती, तेम (नट मिव के०) नटनी पेरें (नटयामास के०) नचावती हवी. त्यां कवि उत्प्रेक्षा करे छे, के (स्त्रीलिंगभावात् के०) स्त्रीलिंगना भावथकी (नृषु के०) पुरु षोने विषे (स्त्रीत्वं के०) स्त्रीपणुं करवाने (इव के०) जाणे इच्छती होय नहिं? शुं ते उत्प्रेक्षा सत्य छे ते जेम के (मल्लिमुख्येषु के०) मल्लिना थ तीर्थंकर प्रमुखने विषे (या के०) जे माया स्त्रीपणाने (किं के०) शुं

(न ददौ के०) न देतीहवी ना देतीहवी वली (सत्यं के०) सत्यवात ले जुवो (कपटसुरमणीरूपविष्णुः के०) कपटें करी रमणीय स्त्रीनुं रूप ले नारा विष्णु, (डुर्दांतदैत्यं के०) डुर्दांतनाम दैत्यने (जघान के०) मारता हवा, अर्थात् ज्यारें विष्णुयें कपटथी रमणिय स्त्रीनुं रूप ग्रहण कर्युं, त्यारे डुर्दांत दैत्यनो नाश थयो ॥ १२६ ॥

हवे आ श्लोकमां आषाढजूतिनो, मल्लिनाथनो, महेशनो तथा विष्णु नो, ए चार दृष्टांत होवाथी प्रथम आषाढजूति मुनिनि कथा कहे ले. एक गलमां आषाढजूतिनामा साधु नानाप्रकारनी लब्धिनुं पात्र हता, ते पुरु षमां शिरोमणि एवा कोइनटने घेर जिक्षामाटे गया, ते नटनी एवी रीत ले के जे कोइ नवो जिक्षुक आवे ले, तेने एक लाडु आपे ले, तेथी तेणे आषाढजूतिने एकलाडु आप्यो, पली मुनि पाला वली चिंतवे ले, के आ लाडु तो मारा गुरुनेज पूर्ण थाशे, एम समजीने लब्धियें करी बीजुं रूप करीने वली याचना करवा गया, त्यारे बीजो मोदक मल्यो, आ प्रमाणे वली कपट करी ते त्रीजुं वृद्ध साधुनुं रूप कर्युं ते उपर बारीमां उन्नेला नटें जोयुं त्यारे नटें जाण्युं जे आ नानाप्रकारनां रूप करवां आ मुनिने आवडे ले,माटे जो आपणीपासें ए होयतो आपणो नटनो धंधो सारो चाले, अने ड्व्य घणुंज मले,पली घरमां आवीने पोताना घरना माणसोने कह्युं के आ साधुने तमे लाडु आपशो नहिं अने पोतानी दीकरीने कह्युं के ए साधु आहिं आवे के तुरत तेने हाव,जाव, कटाक्षें करी संयमथी ज्रष्ट करवो. ते वात कन्यायें कबूल करी, पली ते साधु ज्यारें वोहोरवा आव्यो, त्यारें तेनें हावजाव कटाक्षें करी कन्यायें फसावी दीधो तेथी ते मुनियें चारित्र लो डीने गृहस्थाश्रम अंगीकार कर्यो. अने नटनी सायें रह्यो, ते नटने आ षाढजूतियें कह्युं के जो तारे घेर मांस, मदिरा जोवामां आवशे, तो हुं र हीश नहिं. ते नटे कबूल करी पली तेना सहायथी अनेक प्रकारना नाट क करी थोडा दाहाडामां ते नटें घणुंज ड्व्य उपार्जन कर्युं,एकदिवस पो तानी स्त्रीने मद्यें करी मदोन्मत्त जोइनें उत्पन्न थयो ले वैराग्य जेने एवो लतो जरत राजानुं नाटक करतां करतां तेने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं.

हवे बीजी मल्लीनाथनी कथा कहे ले. ज्यारें मल्लीनाथें पूर्वजवमां दी क्षाग्रहण करी, त्यारे पोताना ल मित्रोने कहेवा लाग्या के माहरी सायें

सर्वेयें समान तप करवुं पण कोयें वधारे ओछुं करवुं नहिं ते सहुयें कबू
ल कर्युं परंतु मल्लिनाथनो जीव कपट करी ज्यारें मासक्षपण व्रतनुं पा
रणुं आवे त्यारे बीजा मित्रोने कहे, माहरा पेटमां दुःखे छे माटे हुं सर्वे
था पारणुं करीश नहीं. एम कही वली बीजा मासक्षपण व्रतनो आरंभ
करे, एम पारणे पारणे कपटथी बीजा छ साधु थकी अधिक तप करतां
तेणें तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन कर्युं,परंतु कपटे तप करवाथी मल्लीनाथना
भवमां तेमने स्त्रीपणुं प्राप्त थयुं. त्यां तीर्थंकर थया तो पण स्त्रीपणुं तेमने
हतुं, पाणिग्रहणने अर्थें आवेला पोताना पूर्वभवना छ मित्र जे राजाउ थ
या हता तेमने अशुचियें भरेली शालिभंजिका एटले मूर्त्तिमां भरेला अन्नना
दर्शनथी प्रतिबोध पमाड्या एम श्रीमल्लीनाथने कपटे करी स्त्रीपणुं प्राप्त थयुं॥

हवे महेशनी कथा कहे छे. एकदिवस महादेवजी पोतानी स्त्री गंगा
अने पार्वतीनी पासें कहेवा लाग्या के हुं संसारमार्गथी उद्विग्न थइ गये
लो छुं. माटे हवेथी माहारे तमारी बेहुनी साथे कांइ काम नथी. हुं तो
हवे तपज करीश. एम कहीने शंकर कैलास प्रत्यें गया, त्यां ते पर्वत
नी गुफामां पद्मासन वालीने ध्यानमां बेठा, पार्वतीयें जाण्युं जे शिवजी
तपस्यामां बेठा भे पण ते संसार उद्विग्न हुं छुं एम कही गया छे, माटे
तेना तपनो हुं भंग करुं. एम धारीने पोतें भिलडीनो वेश धरीने त्यां जइ
शंकर पासें रहीने नाना प्रकारना हावभाव कटाक्ष करवा मांड्या, तेवारे
ध्यान मूकीने शिवजी ते भिलडीनी प्रार्थना करवा लाग्या के हे भद्रे! तुं
माहरी स्त्री था. त्यारे भिलडी बोली के माहरो स्वामी तो भिल भे ते प
छवाडे चाल्यो आवे भे. माटे जो तेम हुं करुं तो ते भिल्ल, मने अने तम
ने बेहुने शिक्षा आपे, त्यारें शिवजी कहेवा लाग्या के हे सुंदरि! में त्रिपु
रासुर जेवा लक्ष दैत्योने मारी नाख्या तो ताहरो स्वामी बीचारो शी
गणतीमां छे? त्यारें भिलडी कहे भे. जो एम होय तो तमो माहरी पा
में नृत्य करो तो हुं तमारी स्त्री थाउं त्यारें ते भिलडीने वश पडेला महा
देवें नृत्य करवा मांड्युं ते जोइ पार्वतीने हास्य आव्युं त्यारें शिवजी स
मजी गया के आ तो पार्वती भे एम जाणीने लज्जित थइ मनमां खेद पा
म्या जे अरे! आ शुं थयुं! हुं कहेतो हतो के हुं संसारथी विरक्त छुं अ
ने मने कपटें करी एणे छल्यो तेथी हुं परवश थइ गयो एम समजी ल

ज्ञा पाम्या. एम मायाथी शंकर पण ठगाया माटे मायानो त्याग करवो.

हवे डुर्दांतदैत्यने विष्णुयें स्त्रीपणायें करी मोह कस्यो तेनी कथा कहे ठे. डुर्दांत दैत्य हतो तेणे ब्रह्मानुं आराधन कस्युं, तेनी घणी नक्तियें ब्रह्मा संतुष्ट थया, अने ब्रह्मायें कह्युं के तुं वरदान माग्य. त्यारे दैत्यें कह्युं के मने अजेय करो. तेने ब्रह्मायें कह्युं के जेने माथे तुं हाथ मूकीश ते नस्मीनूत थइ जाशे तेवा वरदानथी प्रसन्न थयेलो एवो ते दैत्य जगतमां अन्याय करवाने तत्पर थयो, एक दिवस तेणे पार्वतीना ग्रहण माटे शिवजीनी प्रार्थना करी के मने तमारी स्त्री पार्वती आपो तेनें शंकरें ना पाडी त्यारें ते शिवजीना मस्तक उपर हाथ मूकवा तैयार थयो तेजोइ शिवजी त्यांथी नाशिने विष्णुनी पासें आव्या, अने कहेवा लाग्या के हे प्रनु ! माहरी रक्षा करो तेने विष्णुयें कह्युं के तमे स्वस्थ थाउ नय राखोमां हुं तेने शिक्षा आपुं बुं. पठी विष्णु पोते पार्वतीनुं स्वरूप लइने दैत्यनी सन्मुख गया, दैत्य बोल्यो के तुं मारी नार्या थो मने तुं सुखी कर. त्यारे उमानुं रूप धारण करनारा विष्णु कहेवा लाग्या के माहरी पासें तहारा माथा उपर हाथ मूकी तुं नृत्य कर. तो हुं ताहरी स्त्री थाउं त्यारे ते माथा उपर हाथ मूकीने नृत्य करवा लाग्यो तेने श्रीकृष्णे कह्युं के तुं नस्म था तेथी तरत ते देत्य नस्मीनूत थइ मरण पाम्यो ॥ १२६ ॥

लोनी तृप्यति नो घनैरपि धनैरिच्छन्नवं स्वं नवा, दप्याद्यः पितृकल्पितानुजपदं किंवार्षन्निर्नाच्छिदत् ॥ अश्रांतं सरितां शतैरपिनृतः किं वांबुधिः पूर्यते, किंवा शाम्यति काष्टकोटिन्निरपि ज्वालाकरालोऽनलः ॥ १७७ ॥

अर्थः-(लोनो के०) लोनी प्राणी (घनैरपि के०) घणा एवा पण (धनैः के०) धनें करी (नो तृप्यति के०) तृप्ति पामतो न ते केवो लोनी ठे ? तो के (नवादपि के०) नवा एवा ड्व्य आववाथी पण वली (नवं स्वं के०) नवा धननी (इछन् के०) इछा करतो एवो ठे. जुवो (आद्यः के०) आद्य (आर्षन्निः के०) रुषनदेवजीनो पुत्र नरतचक्रवर्त्ती,(पितृकल्पितानुजपदं के०) पोताना पितायें आपेला एवा पोताना न्हाना नाइउनां पदने (किंवा के०) शुं (नाछिदत् के०) नहिं ठिनवी लेतो हवो ?

ते वात घटे छे जुवो (अश्रांतं के०) निरंतर (सरितां शतैः के०) नदिउ ना सेंकडाउयें करी (नृतःअपि के०) पूरायो हतो पण (अंबुधिः के०) समुड़ (किं के०) शुं (पूर्यते के०) पूराय छे ? ना पूरातो नथी. वली (का ष्ठकोटिन्निरपि के०) करोडो काष्ठोयें करीने पण (ज्वालाकरालः के०) ज्वालाए विकराल एवो (अनलः के०) अग्नि जे छे, ते (किंवा के०) शुं (शाम्यति के०) शांत थाय छे. ना शांत थातो नथीज ॥ १२७ ॥

आंहिं जरतचक्रवर्त्तिनी कथा कहे छे. विनितापुरीने विषे जरतचक्रवर्त्ति राजा राज्य करता हता, अनुक्रमें छये खंम तेणे स्वहस्तगत कस्या, पछी पोताना अछाणुं नाना जाइउने बोलाववा माटे दूतोने मोकल्या, दूतोयें जइने कुरुप्रमुख जाइयोने कह्युं के हे राजकुमारो ! षट्खंमने साधनारा एवा तमारा जाइ जरतजी चक्रवर्त्तीने तमे प्रणाम करो के जेथी तमारा सर्वेनो विनय थयो गणाय ? कारण के वृद्ध जाइ ते पिता समान तथा गुरु समान मानवा योग्य छे. माटे तमो जरतचक्रवर्त्तीनो विनयादि कर शो तो तमोने देश, ग्राम, नगरना राज्यनो लाज थशे ? अने जो तेम न हिं करो तो तमारुं राज मूलथकी लइ लेशे ते सांजलीने पछी अछाणुं जा इउ एकठा थइने अन्योन्य कहेवा लाग्या के आपणुं जरतराजापासें शुं चालशे ? एतो आपणी साथे युद्ध करी पराजय पमाडीने आपणुं स र्वेनुं राज्य ग्रहण करशे ? माटे आपणे श्रीरुषजदेवजीनी पासें जइने आ वात निवेदन करीयें अने जेम ते कहे, तेम करीयें ? आ प्रमाणें सर्वे जाइउ विचार करीने श्रीरुषजदेवजी पासें गया, तेमनी प्रदक्षिणा करी नमन करीने वेगा अने जरतजीनुं वृत्तांत जे दूतद्वारायें बन्युं ते सर्वे कह्युं ते वखत रुषजदेवजी देशना देता हता, तेमां आ गाथा कहेता हता जे " सुलहा सुरलोअ सिरि, एगछत्ताविं मेइणी सुलहा ॥ ङुलहा पुणसंसारे, जिणंदयर देसिउ धम्मो ॥ १ ॥ आवी उपदेश गाथा सांजलीने तेमने बोध थयो, तेथी सर्वे जाइउयें राज्य छोडीने प्रजुनी पासें दीक्षा ग्रहण करी. पछी ते अछाणुं जाइउनुं राज्य जरतचक्रवर्त्ती ग्रहण करता हवा ॥ १२७ ॥

चित्तावन्यां जनानां कपिलसमधियां वित्तलेशासमूलः,
प्रत्याशावारिसिक्तोधनिविविधधनप्रार्थनाजोगवल्गुः ॥

नूपेंद्रत्वादिसंपन्मतिकुसुमततिर्भोगचिंताफलर्द्धि, र्लोभो
वृत्त्या श्रवंत्या व्रजतु कलितरुर्वस्तुरप्यार्त्तिहेतुः ॥ १९८ ॥
इति लोभप्रक्रमः ॥ इति कर्पूरप्रकरग्रंथः समाप्तोयम् ॥

अर्थः–(लोभः के०) लोभरूप (कलितरुः के०) भयंकर वृक्ष, ते (वृत्त्या के०) संतोषरूप (श्रवंत्या के०) नदीयें करी (व्रजतु के०) तणाइ जाउ एटले जेम नदीना जोरथी वृक्ष तणाइ जाय तेम आ लोभरूप वृक्ष पण संतोष नदीथी तणाइ जाउ. हवे ते लोभरूप वृक्ष केवो छे ! तो के (कपिलसमधियां के०) कपिल ब्राह्मण समान बुद्धिवाला (जनानां के०) जनोनी (चित्तावन्यां के०) चित्तरूप अवनीने विषे (वित्तलेशाप्तमूलः के०) प्राप्त छे वित्तना लेशरूप मूल जेनां एवो छे तथा (प्रत्याशावारिसिक्तः के०) आशा अने प्रत्याशा ते रूप जे जल तेणें करी सिंचायेलो एवो छे. तथा (धनिविविधधनप्रार्थनाभोगवल्गुः के०) अनेक धनवाननी विविध प्रकारनी प्रार्थनानो जे विस्तार, तेणें करी मनोहर अने वली (नूपेंद्रत्वादिसंपन्मतिकुसुमततिः के०) मोह्योटा मोह्योटा राजादिकनी जे संपत्ति तेने विषे मतिरूप छे कुसुमनो विस्तार जेमां एवो छे. वली (भोगचिंताफलर्द्धिः के०) भोगनी जे चिंता ते रूप जे फल तेनी छे संपत्ति जेने विषे एवो छे. माटे कवि कहे छे संतोष नदीयें करी लोभवृक्ष तणाइ जाउ. एवी इछा सर्वे जन राखो ॥

आंहिं कपिलब्राह्मणनी कथा कहे छे. चंपापुरीने विषे कपिलदेव नामा ब्राह्मण रहेतो हतो,ते भाग्ययोगथी दासीमां आसक्त थयो,तेथी थोडे थोडे ते निर्द्रव्य थइ गयो. एक दिवस ते दासीयें तेने अर्द्धरात्रियें राजा पासें बे मासा सुवर्ण लेवा माटे मोकल्यो, त्यां तेने राजाना माणसोयें पकडी बांधीने राजानी पासें आण्यो. राजायें तेना आकारथी जाण्युं जे आ चोर नथी, राजायें पूछ्युं के अरे तुं कोण छो ? त्यारें ते ब्राह्मण बोल्यो के एक दासी मारी राखेली स्त्री छे तेणे मने मोकल्यो छे आ खरी वात सांभलवाथी राजा संतुष्ट थइ कहेवा लाग्यो के जे तारे इछा होय ते माग्य. त्यारे ब्राह्मणे कह्युं के हुं तमारा अशोक वनमां जइ एकांतमां थोडी वार विचार करीने पछी मागीश ? राजायें तेमकबूल कर्युं पछी ते त्यां वनमां जइ विचारवा लाग्य के हुं ते शुं मागुं सो मागुं ? के सहस्र मागुं ? के लक्ष मागुं ? के करोड

मागुं? के दश करोड मागुं? एम आशानो तो कांइ अंत आवतोज नथी. माटे आ लोजने धिक्कार हजो जेनो हजी सुधी अंतज आवतो नथी. हुं तो मात्र बे मासा सोनुं लेवा आव्यो हतो पण राजायें कह्युं जे माग्य ते आपुं पण मने कोट्यावधि धनथी पण तृप्ति थती नथी कह्युं ठे के "जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवड्ढइ ॥ दो मास कणय कज्जं, कोडिएविन निठियं ॥" एम चिंतवन करतां ते ब्राह्मणने वैराग्य उत्पन्न थयो. त्यारें तेणें आलोचनाने स्थानकें केश लोचन करी नाख्युं. पठी प्रव्रज्याग्रहण करीने मार्गमां पांचशें चोरने तेणे प्रतिबोध पमाड्या, माटे लोन्न विस्तार करवो नहिं लोन्न ठे ते पापनुं मूल ठे ॥ १४७ ॥

इति कर्पूरप्रकरांतर्गताः सर्वाः कथाः समाप्ताः ॥ समाप्तोयं ग्रंथः ॥

॥ सप्तपंचाशदधिक शतसंख्यासमन्वितः ॥ कथामहोदधिर्ग्रंथो हृद्यपर्यैर्विनिर्ममे ॥ १ ॥ अर्थः—एकसो सतावन कथाउना महासागर रूप आ ग्रंथ मनोहर पर्यायेंकरी युक्त रचायेलो ठे ॥ अस्मिन् ग्रंथे सहस्रे द्वे, द्वे शते पंचसंयुते ॥ अनुष्टुपां सर्वसंख्या, प्रत्यक्षरनिरीक्षणात् ॥ २ ॥ प्रत्येक अक्षरनी गणना करतां सर्व मलीने आ ग्रंथनी अंदर बे हजार बसोने सात अनुष्टुप् श्लोकनी संख्या ठे ए संख्या अवचुरीकारें लखी ठे ॥ २ ॥

॥ वर्षे वार्द्धिखशरसुधारश्मिसंख्ये बनूव, श्रीमान् ग्रंथः सकलसुमनश्चित्तहर्षप्रदायी ॥ यावत्क्रीडां गगनकमले राजहंसौ विशाले, तन्वानौ स्तस्तिमिरनिकरौ तावदेषोऽपि जीयात् ॥ १५०४ नी सालमां सघला विद्वानोना चित्तने विषे हर्षनुं अर्पण करनार आ श्रेष्ट ग्रंथ निर्माण थयेलो ने माटे ज्यांसुधी विशाल एवा आकाशरूप कमलनेविषे विहार करता अंधाराने नेदनार राजहंस सरखा एवा सूर्य चंद्र ठे त्यांसुधी आग्रंथ जगतनेविषे जय पामतो रहो १

त्रैविद्योपनिषद्विलासवसतेश्चातुर्यलक्ष्मीपतेः, श्रीसूरीश्वरलशेखरगुरोः प्रामाणिकस्य प्रभोः ॥ शिष्यः पंडितसोमचंद्रइत्यधीमाधुर्यधुर्योव्यधात्, कर्पूरप्रकरादिकाव्यकथिना एताः कथाः सत्प्रथाः ॥ २ ॥ अर्थः—त्रैविद्य अने उपनिषद्ना विलास करवाना मंदिर रूप तथा चातुर्यरूप लक्ष्मीना स्वामी अर्थात् चातुर्यरूप संपत्तिना पति तथा प्रमाणिक अने समर्थ श्रीसूरीश्वर रत्नशेखरनामना जे गुरु तेमना शिष्य पंडित सोमचंद्र के जे अतिचतुरबुद्धिवाला माधुर्यवाली सुंदर कवितानां रचनारनेविषे मुख्य ते तेमणे आ मुं

दर रचनावाली, अतिप्रसिद्ध कर्पूर प्रकरनामे महाकाव्यनी कथाउं कही.
॥ इति श्रीवालावबोधसहितः कर्पूरप्रकरग्रंथः संपूर्णः ॥

॥ अथ कर्पूरप्रकर अवचूरिकृत तपउपक्रमः ॥

॥ प्रतिदिनमपि दानं पुण्यसंपन्निदानं,पुनरधिकफलं स्यात्पारणाद्योत्तराह्ने ॥ दिशति जलभृदन्नं कृत्तिकादौ सुवृष्टः, पुनरमलमनर्घ्यं मौक्तिकं स्वातियोगे ॥ १ ॥ अर्थः—प्रतिदिन जे दान आपवुं ते पण पुण्यरूप संपत्तिनुं आदिकारण ठे वली तेज दान, जो पारणाने दिवसें तथा उत्तर पारणाने दिवसें देवाय तो अधिक फलने आपनार थाय ठे. कृत्तिकाना आरंभमां सारी रीतें वर्षेलो वरसाद धान्यनी उत्पत्ति सारी करे ठे. वली ते वरसाद जो स्वातिनेविषे वरस्यो होय तो निर्मल एवा अमूल्य मोतिने उत्पन्न करे ठे. ॥ १ ॥ जितभवदकषायः पाक्षिकादेर्दिनोऽग्र्यो, वितरणकरणैः प्राक्पश्चिमावप्युदारौ ॥ विहितभुवनमुत्किं पार्वणश्चंद्रएक, स्तदितरशशिनौ किं नो मुहूर्त्ताऽप्रकाशौ ॥ २ ॥ अर्थः—संसारने वधारनारा चार कषाय तेने जीतनारो एवो पाक्षिकनो (पांखीनो) आगलो दिवस ठे तेमज दान विगेरेना आपवाथी पांखीनो पहेलो ठेलो बंने दिवस उदार उत्कृष्ठ फलदायक गणाय ठे. ते जेम के सघला भुवनने जेणे हर्ष आपेलो ठे एवो एक पुनमनो चंद्रमा नथी शुं ? ना ठेज. ते शिवायना बीजा दिवसना चंद्र ते, मात्र बे चार घडी प्रकाश अने अप्रकाश करनारा नथी शुं ? ना तेवाज ठे. अर्थात् सर्व दिवसो करतां पांखीनो दिवस ते दान विगेरे कर्मनो अति फलदायक ठे बीजा सर्व दिवस सामान्य फलदायक ठे. वली पारणानेविषे कहे ठे. ॥ शुद्धं तपः केवलमप्युदारं, सोद्यापनस्यास्य पुनः स्तुमः किं ॥ हृद्यं पयोधेनुगुणेन तत्तु, द्राक्षासिताक्षोदयुतं सुधैव ॥ ३ ॥ अर्थः— केवल शुद्ध तप ठे ते पण अति श्रेष्ठज ठे तेमां वली ज्यारे ते तप उद्यापन सहित होय तो तेमां शुंज कहेवुं. अर्थात् तेनां वली शुं वखाण करवां ? जेम के जे गायनुं दुध गायना गुणथीज मधुर ठे, परंतु तेमां वली द्राख अने साकरनो भुको नाख्यो होय त्यारे मधुर अमृत जेवुं थाय तेमां शुंज कहेवुं ॥३॥ वृक्षोयथा दोहदपूरणेन, कायोयथा सद्रसभोजनेन ॥ विशेषशोभां लभते यथोक्त, सोद्यापनेनैव तथा तपोऽपि ॥ ४ ॥ इति उद्यापनप्रक्रमः ॥ अर्थः— जेम खातर विगेरेनी पूरणी करवाथी वृक्ष, विशेष शोभाने पामे

छे. जेम शरीर, सारा रसवाला सुंदर पदार्थोना भोजनेंकरीने विशेष शोभाने धारण करे छे; तेम यथाविधि अर्थात् शास्त्रमां कहेला विधिप्रमाणें उद्यापन करवाथी तप पण अधिक उत्तमोत्तम शोभाने आपेछे ॥ ४ ॥ इति उद्यापनप्रक्रमः समाप्तः श्रीरस्तु शुभमस्तु.

स्वर्भूमेर्मातृगर्भेऽगमदुदयमहो यः सुरैर्मेरुशैलोत्सिक्तस्तातालयेऽगादुपचयमनिशं छाययाऽक्रांतविश्वः ॥ पादोपांताऽवनम्रत्रिभुवनजनतास्वीकृतोच्चैःफलर्द्धिः श्रीवीरोवोऽस्तु चिंताऽधिकतरवरदः कल्पशाखी नवीनः ॥ १ ॥

अर्थः—जे स्वर्गभूमिथी पोतानी माताना गर्भरूप क्यारानेविषे उत्पन्नथयेला अने जे देवताउयें मेरुपर्वतउपर नवरावेला अर्थात्सिंचन करेला, तथा पोताना पिताना घरनेविषे निरंतर वृद्धिपामेला अने जेणे पोतानी छायायें करी आखाविश्वने विश्रांति आपेली छे, तथा जेणें पोताना चरणमां नमेली त्रण भुवननी जनतारूप फलसमृद्धि स्वीकार करी छे अर्थात् सर्वजगतने नमन करवारूपजछे फल जेने एवा अपूर्व कल्पवृक्ष जे श्रीवीरभगवान् ते, तमारा अधिकमनोवांछित वरने देनार थाउ. आहिं वीरभगवाननेविषे कल्पवृक्षनी उत्प्रेक्षा कवियें करेली छे, जेवा झाडमां उत्पन्नथवाथी फलप्राप्ति पर्यंत गुणो छे, तेम आहिं श्रीवीरभगवानरूप कल्पवृक्षमां सर्वे घटाव्याछे.

स्युर्द्वात्रिंशत्सहस्रा भरतजनपदाः सार्द्धपंचाग्रविंश,त्यार्येष्वर्हत्प्रबोधः सुगुरुभिरधुना पंचषेष्वस्ति धर्मः ॥ सत्क्षेत्रं तत्र चाल्पं भवनभुवि यथा पल्वले ग्रीष्मतुच्छे, पद्मं हंसस्य तुष्ट्यै तदिव समभवत्सच्चतुर्मासिकन्नः ॥ २ ॥

अर्थः—सर्व मली बत्रीश हजार भरतखंममां देशो छे तेमां पण साडीपच्चीश आर्यदेश छे तेनेविषेज श्रीअर्हत्प्रभुनो प्रबोध प्रचार पामेलो छे तेनी अंदर हाल पांच के छ देशनेविषे सारा गुरु धर्मनुं श्रवण करावे छे वली ते भरतखंमनी भवनभूमिनेविषे सारां क्षेत्र अति थोडां छे, उनालामां सुकाइ गयेला अल्प जलाशयनेविषे रहेलुं कमल जेम हंसने संतोषने माटे थाय छे तेम आ अल्पक्षेत्रनी अंदर अमारे चातुर्मास्य संतोषदायक थाउ ॥ १२० ॥ आ बे श्लोक बीजी प्रतिमांथी मल्या छे. तेम बीजा पण ४८ श्लोक ते प्रतमां छे परंतु तेनी अवचूरी पण न होवाथी तथा ते प्रक्षेप काव्य जेवा जाणवामां आव्याथी इहां मूलपाठ नीचें दाखल करीयें येयें. तपःक्षमा श्रमणे ॥ ६३ ॥

यन्नश्चिरं विहाराज्जिननतिपुण्यं तदाशु वोऽत्राभूत् ॥ कर्णुकशाले यत्ताद्द्ग्किशालेभुतं तु फलं ॥ १ ॥ कृतिकर्म कर्मसमर्मभिदे भवेद्भावतोऽन्यथा भ्रांत्यै ॥ पुण्याधिकनिष्पुण्यककृतकासदमंत्रसाधनवत् ॥ २ ॥ प्राघूर्णकवंदनके ॥ ६४ ॥ राजा विश्वहितो जिनो नयपरा व्यापारिणः श्रावकाः, स्थाने सर्वगुणोज्वलेऽत्र शमिनः कौटुंबिकास्ते वयम् ॥ जैनाज्ञागुणपत्रदत्तविधिना वर्षासु तेन स्थिता, ज्ञानक्षेत्रमुपास्महे बहु मिथः स्याद्येन पुण्यं धनं ॥ ३ ॥ फुल्लक्रोधविपडुमं बहुरजो मानप्रचंडानिलं, मायोद्यन्मृगतृष्णिकं परिलसल्लोभास्थिमापन्निधिं ॥ भिंदन्मोहनिदाघकालमभितः सद्ध्यानवृष्ट्या भवभ्रांतिश्रांतिभिदेऽस्तु वोनवघनश्रीमच्चतुर्मासकं ॥ ४ ॥ पारणके ॥ ६६ ॥ व्याख्यानश्रवणं सदैव हि मुदा पीयूषपानं यथा, वर्षास्वस्य पुनर्विशेषमहिमा यद्दन्मयूरध्वनेः ॥ तद्भव्याइह तु त्रिकापणनिभे पूज्यप्रसादोदयात्, दानाद्यंगणिमादिवस्तुवदलं गृह्णंतु पुण्यर्द्धये ॥ ५ ॥ वर्षांतर्बहुवर्द्धिनो भवरसैर्जाड्यक्रुधोर्वेभिदः, शश्वत् श्रीजिनसन्निधेरभिनवाह्व्याख्यानरत्नाकरात् ॥ माद्दग्वाग्लहरी स्फुटं शमसुधासम्यक्त्वचिंतामणिः, श्रेयःस्वस्तरुमुख्यरत्ननिवहं गृह्णंत्वनायासतः ॥ ६ ॥ व्याख्यारंभे ॥ साष्टमी व्यभिचाराय श्रेयःकर्मणि किंयया ॥ तुल्यः पक्षद्वयेऽपींडर्धृतः पक्षांतरस्थया ॥ ७ ॥ एकैकाऽपि हि पुण्याय भूतेष्टापि तदंतिके ॥ योगे किं त्वविधवेलायां गंगायमुनयोरिव ॥ ७ ॥ पुण्यतिथौ ॥ ६७ ॥ अर्हंश्चिंतामणित्वं कनककुसुमतां पंच यद्भूपणानि, यस्याः सत्कंकणत्वं दधति च सततं पंच यल्लक्षणानि ॥ धर्मः सिद्धार्थसार्थः सुगुरुपदरजोदोरकस्तद्गुणाली, धार्या सम्यक्त्वरक्षा कुगतिभयभिदे सद्गतिश्रेयसे च ॥ ए ॥ रक्षायां ॥ ६ए ॥ कल्पाख्यानकपंचदिव्यविहितः कल्पाभिषेकोत्सवे, भव्यैः पर्युपणामहः क्षितिपतिर्मिथ्यात्वकोपादिकं ॥ हृष्ट्वा पंच कुलं जनेऽतिविषमं भव्यं नवं स्थापयन्, सम्यक्त्वं शममार्दवार्जवनिरीहत्वं शमायाऽस्तु वः ॥ १० ॥ चेतःस्थालं विशालं कलमकणगणः श्रावकाणां गुणाली, सम्यक्त्वं सद्दुकूलत्रितयमनुपमं नालिकेरं विवेकः ॥ जैनाज्ञा मूर्ध्नि डुर्वामलयजघुसृणे भावलोकानुरागौ, सत्कीर्त्तिः पुण्यवर्द्धापनमिति भवतादांतरद्विड्जये वः ॥ ११ ॥ पर्युपणापर्वणि ॥ ४२ ॥ सौख्यं शाश्वतमेकएव हि जिनः कुर्यात्तु शेपैः सुरैः, स्याद्दैहिकमेव किंचन ततोयद्वा सवित्रा यथा ॥ तद्वत्किंशशिदीपतारमणिभि

विश्वप्रकाशो नवे, देवं मंगलदीपकोच्चशिखयाऽव्याष्टाह्निका शंसति ॥ १२ ॥
रागद्वेषजितोऽर्हतोऽग्रियुगलं पाणिद्वयेनार्चयन, साधुश्रावकधर्मनाक् परन
वेस्वर्गापवर्गौ व्रजेत् ॥ द्वक्कर्णद्वितयेन रूपगुणनृत्तेहापि तोषं परं, घंटाचाम
रचेष्टितेन विवृणोत्यष्टाह्निकेकोत्तरा ॥ १३ ॥ त्रैलोक्यं त्रिपदीतनुस्त्रिपथ
गा तोषाय यस्यान्वहं, कालेषु त्रिषु तं त्रिकालविदुरं देवं त्रिशुध्ध्या महः ॥
स्वत्नत्रयसंपदं दिशति वोयेनेष रत्नत्रयं, त्रिःपुष्पांजलिसंज्ञया ज्ञपयतीत्य
ष्टाह्निकाद्युत्तरः ॥ १४ ॥ व्याख्या सप्तचतुर्विधामरकृतं प्राप्यावदद्यं चतु,
र्मूर्त्तस्तीर्थपतिश्चतुर्गतिहितं धर्मं चतुर्द्धा बुधाः ॥ तं कुर्वंतु चतुःकषायरहिता
स्तुर्यं पुमर्थेरता, ब्रूते संघकृतस्तुतिप्रतिरवे स्तुर्येयमष्टाह्निका ॥ १५ ॥
किं पंचेंद्रियशर्म पंचविषयै मूढामितं वांछतो, दंचत्पंचसु नावनानि दधतां
पंचव्रतान्युच्चकैः ॥ पंचज्ञानवतां यथा बहुसुखावः स्याग्नतिः पंचमी, स्प
ष्टं जल्पति पंचशब्दनिनदैरष्टाह्निका पंचमी ॥ १६ ॥ जित्वा षड्विकृति
स्पृहां षडपि तान् मुक्त्वा रसान शक्तितः, षड्जीवावनतस्तपः कुरुत षड्
नेदं वह्निश्चावहिः ॥ छिद्रषड्वर्गजयोमतः षड्तुजा पूजा च चेन्मानसे, नष्टो
न्नादितषट्पदध्वनिरुवाचाष्टाह्निका षष्ठिका ॥ १७ ॥ सप्तापि व्यसना
नि सप्त नरकद्वाराण्यहो सप्तनी, हेतूनित्यजताशु पुण्यनृपतेः क्षेत्राणि रा
ज्यांगवत् ॥ सप्ताप्याशुत सप्तनूमिकगृहे तत्वे वसंतु स्वयं, सत्सप्तस्वरगीत
कैतवमुवाचाष्टाह्निका सप्तमी ॥ १८ ॥ मुक्त्वाऽष्टौ मदकारणान्यविरतं स
त्प्रातिहार्याष्टकं, देवं पूजय पूजयाष्टविधया येनैषतुष्टः पदं ॥ तद्यच्छतु यत्र
नास्ति पतनं दुष्टाष्टकर्मापदां. चष्टे मांगलिकाष्टदीपकमिषादष्टाह्निका चाष्टमी
॥ १९ ॥ नेतेप्येतश्वोपमानविगमादष्टाह्निकावासरा, एकैकोच्चकलाऽन्नीं
ङ्गसदृशाः किंचित्स्वनूवन्निमे ॥ आरुस्यांतपयोधिनेत्रकुमुद श्रेणीचकोरेक्षणो
ल्लासाय स्मर तापमोहतिमिरोच्छित्त्यै यतोर्हर्निशं ॥ २० ॥ अष्टाह्निकासु ॥
कल्याणिकं नगवतां धुरि यत्र चानूत्, श्रेष्ठः सएव दिवसः पुनरागतोयः ॥
श्रीवीर मोक्षदिनसोन्नवदीपपर्व, यद्वत्ततः सुकृतिनोत्र महोऽनुवर्षं ॥ २१ ॥
रम्यालोज्ज्वलदीपकप्रविलसत्स्वाध्यायमेगत्रिकः, शुद्धाचार सुनोजनः सुगु
णवाक् तांबूलशोनाशुनः ॥ श्रीनिर्गमलक्ष्म्युपागमजयज्येष्टावनामोत्तरः,
श्रीज्ञानैकनिधान मुदं नवतु वोऽर्हद्धर्मदीपोत्सवः ॥ २२ ॥ दीपोत्सवे ॥
॥ २३ ॥ व्याख्यानं श्रुतदुग्धसारमधुरं स्निग्धं निपीयादरा, न्मान्याद्दू र

सिका सुधा शमदधि श्रेयो घृतोद्भायकृत् ॥ अस्मात्तस्य समर्थनायतदिदं कालेन न्नव्यैः पुनः, सम्यक्त्वांगविवृद्धिकृद् बहु तृषा पेयं तमस्तापन्नित् ॥ २३ ॥ सिद्धांतांबुधिसंन्नवेऽद्य विरते व्याख्याघने सद्रसै, दृष्टांतैः स कषायतापजनद्भूमिं शमित्वाऽन्नितः ॥ सप्तक्षेत्रधरासु वित्तवपनं कुर्वंतु वः पुण्यतो, निःसत्पव्यसनेतिन्नीतिविविधं शस्यं यथा सज्जनाः ॥ २४ ॥ व्याख्यासमर्थने ॥ व्याख्यानांबुधरोपदेशसलिलैः सुश्राद्धचेतः सरः, पूर्त्तिः कीर्त्तिनदीतनिर्मलरजश्चित्तिश्च यत्रान्नवत् ॥ बालश्रावकन्नेककेकिपठनस्वाध्यायकोलाहलं, सत्कृत्यान्नफलाय वो न्नवतु तद्वर्षाचतुर्मासिकं ॥ २५ ॥ व्याख्यासमर्थने ॥ वृष्टे धर्मकथोपदेशसलिलैर्न्नव्योर्वरायां गुरा, वद्दे संयमधन्यसप्तदशकं रूढक्रिया मारुतैः ॥ हृष्टैः स्पष्टगुणं विशोधितमनः स्वल्पार्थशस्योत्तमं, स्यादेवोद्यमरक्षपालदलितापायं फलस्फातिमत् ॥ २६ ॥ कार्त्तिक्यां चतुर्मास्यां ॥ घस्रे शीतोष्णकाले प्रथमवयसि तत्कर्म कुर्वीत विद्वान्, येनांते स्यात्सुखीतोवयमपि तदहोवेत्य कुर्मोविहारं ॥ नानार्हत्तीर्थयात्राश्रुतधरनमनं संशयांतः श्रुतायः, शुद्धान्नोपध्यवाप्तिः प्रवचनमहिमा मूढबोधोद्यता यत् ॥ २७ ॥ विहारे ॥ ७६ ॥ चातुर्मासिकमेकपारणदिनं नूनं फलं प्राप्नुया, न्नेतुर्वार्षिकमप्यवाप न कथं श्रेयांसएकाह्नयपि ॥ स्थानस्थाननिखातकोटिविन्नवः कोटीश्वरः किं न्नवे, त्कोटीमूल्यमहामणिं करतले किं खेलयन्नापरः ॥ २८ ॥ कार्त्तिक्यां ॥ ७४ ॥ तीर्थेशैर्व्रतधर्मन्नापणपुरस्कारात्परामुन्नतिं, नीतं यच्च ददाति न्नूतिमतुलां श्रीशालिन्नद्रादिवत् ॥ तन्नः सत्वतिरस्क्रिया लघुकलौ दानं त्वयोल्लासितं, कैः कैर्न्नद्र पुनः फलिष्यति फलैस्तत्ते जिनोवेत्ति तत् ॥ २९ ॥ मान्यस्तीर्थपतेः परिग्रह इवक्ष्मापस्य संघोध्रुवं, धन्योयस्य गृहांगणं सचरणांन्नोजैः पुनीतेतराम् ॥ किं ब्रूमः फलमस्य तद्भरतवद्योवेत्त्यमुं संमदात्, श्रीरप्यस्य गृहे स्थिराः प्रतिन्नुवः श्रीजैनपादाइमे ॥ ३० ॥ नीत्वा स्थानेऽन्निरामे घनसमयममी संयताः श्वेतपक्षा, स्तत्तत्स्थाने विजह्रुः सुकृतिन्निरनिशं जाड्यशीतं च न्निन्नं ॥ शीतक्षौमैस्तपोऽग्निव्रतनियमगृहैर्न्नावमार्गंधतैलै, र्यत्राऽचार्यार्कगोन्निर्हिमसमयचतुर्मासकं तन्मुदे स्तात् ॥ ३१ ॥ चातुर्मासिकपर्वसंन्नवतपोवह्निस्तदावश्यक, त्रिश्यत्कर्मदलोह्रितस्यगणकस्तोमेऽत्र न्नस्मीकृते ॥ प्रातर्वंदनके सुखांशुकविधिव्याजाद्विकीर्णेऽन्नितः, धन्योऽर्हद्गुणफाल्गुनोऽमलरजाः स्यादागमांन्नःप्लवैः

॥ ३१ ॥ रजःपर्वणि ॥ ७४ ॥ स्पर्द्धी महत्सु नरवाक् शुकवत् क्रमाच, सत्यं पुनः पदमुपैति जनः कृतार्थः ॥ मर्त्यो हि पंचमगुणस्थितिमुक्तियोग्याः, श्राद्धेषु तज्जिनमहेऽनुचितेंऽङ्गताऽपि ॥ ३२ ॥ देवैर्जिनस्य यदि जन्ममहादि चक्रे, न श्रावकैरनुकृतिः क्रियतां तदेषा ॥ स्वःशक्रदंतिमदतुंबरुगानरंभा, नृत्यादि चेद्भुवि नकोऽपि ततः करोतु ॥ ३४ ॥ कल्याणके ॥ ७३ ॥ जैनार्चयाऽपि नवभिः कुसुमैरशोक, उच्चोच्चसंपदभवन्नवशोवधीशः ॥ लङ्कार्चनेन तु फलं जिनएव वेत्ति, सद्भूस्थकालघनसिक्तसुबीजवत्तत् ॥ ३५ ॥ आश्चर्यकारि फलमप्यतुलं प्रदास्य, त्याश्चर्यभंगिभिरियं विहिता जिनार्चा ॥ कार्यं हि कारणगुणेन भवेत्तु चित्रं, पुष्पैरिमैस्त्रिदशवृक्षफलप्रसूतिः ॥ ३६ ॥ महापूजायां ॥ ७४ ॥ अप्येकजैनभवनस्नपनादिनाथ, भावाडुपार्जि सुकृतं शिवकृद्भवद्भिः, स्थानं क्वचेत्युपरिपाटिकयार्जि तस्य, ज्ञातं महत्स्तुतिकृतां हृदयानि संति ॥ ३७ ॥ अथोदियाय सुदिनोभवतां कला वा, जज्ञे य दल्पवसुनाऽपि हि भूरिलाभः ॥ चैत्यावलीषु यडुपार्जि शिवाय पुण्यं, भक्त्या सुखंभदलपुष्पफलोपहारैः ॥ ३८ ॥ चैत्यपरिपाट्यां ॥ ७१ ॥ शुद्धं तपः केवलमप्युदारं, सोद्यापनस्यास्य पुनः स्तुमः किं ॥ हव्यं पयोधेनुगुणेन तत्तु, द्राक्षासिताक्षोदयुतं सुधेव ॥ ३९ ॥ वृक्षोयथा दोहदपूरणेन, कायोयथा सद्रसभोजनेन ॥ विशेषशोभां लभते यथोक्ते, नोद्यापनेनेव तथा तपोऽपि ॥ ४० ॥ उद्यापने ॥ भूपाश्छत्रगुरूदरावृतिरथार्थेषूपयोगान्मया, वंशत्वे कटसुंभकादिषु जनाश्चाराधिताभूरिशः ॥ नेतत्काऽपि महत्त्वमापि सुलभे केत्व ग्रहस्तोरणे, घंटावाग्भिरिति ध्वजस्त्वरयतेवोदेवताऽराधने ॥ ४१ ॥ सिंहस्त पःप्रक्रमएव तावत्, डुष्कर्मदंतावलमंमलीनां ॥ तदद्य तस्मिन् प्रखरानिवेशो, यद्द्यडुद्यापनविस्तरोऽयं ॥ ४२ ॥ नैवेद्योः सफलैः शिवाध्वसुखदं स्पष्टं समं शंबलं, धूपेनोर्ध्वगतिः सुगंधि तदिदं वासेन शुभ्रं यशः ॥ न स्वर्गादिफलं फलैश्च कलमैर्जैनाटकाचात्मनः ॥ पुष्पैर्लोकशिरः स्थितिः शिवतनुर्दीपे र्जिनार्चाफलं ॥ ४३ ॥ अष्टविधपूजायां ॥ ७७ ॥ आदर्शादितकेवलाद्विरस मैश्वर्यश्च भद्रासनाद्, व्रह्मांमस्य शरावसंपुटतनोर्यः कामकुंभंपुरः ॥ श्रीवत्सांगमिति स्फुटश्च तनुते नित्योत्सवः स्वस्तिका,नंद्यावर्त्तवदद्भुताकृतिकृतानंदः सदोऽव्याज्जिनः ॥ ४४ ॥ अष्टमंगले ॥ ७९ ॥ मुक्तेः सौख्यप्रमाणं भवति सुरगिरिः सोऽस्ति वा योजनानां, लक्षं वार्द्धिः स्वयंभूरमणऽनि पुनः सो

ऽस्ति रज्जुप्रमाणः ॥ लोकातीतं तदेतज्जिनपतिरपि वा नोपमातुं प्रगल्भो, भू भृद्भोगानुभूतिं स्वजनमनुवदन् यद्वदज्ञः पुलिंदः ॥ ४५ ॥ यत्पादांबुजभृंगतामविरतं भेजुस्त्रिलोकीजना, यश्चिंतामणिवत्तदीयहृदयाभीष्टार्थसंपादकः॥ सोप्यर्हन्महितोयदर्थमनिशं तत्तत्तपस्तप्तवान्, नाभीष्टं हृदि कस्य कस्य तद हो नैःश्रेयसं मंगलं ॥ ४६ ॥ मुक्तिद्वारं समाप्तं ॥ ८२ ॥ व्रीहिर्यवोमसूरो, गोधूमोमापमुद्गतिलकाः ॥ अणवः प्रियंगुकोद्रव, मयुष्ठकाशालिराढक्यः ॥ किं च पलायकुलत्थौ शणसप्तदशेति धान्यानि ॥ ४७ ॥ श्रीवज्रसेनस्य गुरो स्त्रिपष्टि, सारप्रबंधस्फुटसद्गुणस्य ॥ शिष्येण चक्रे हरिणेयमिष्टा, सूक्तावली नेमिचरित्रकर्त्रा ॥४८॥ इति श्रीकर्पूरप्रकराभिधः सुभाषितकोपः समाप्तः ॥ ग्रंथांते वैराग्यदर्शीकोऽयं श्लोकः क्षिप्तोस्ति सयथा ॥

॥ येषां वित्तैः प्रतिपदमियं पूरिता भूतधात्री, यैरप्येतद्भुवनवलयं निर्जितं लीलयैव ॥ तेऽप्येतस्मिन् भवपुरुहृदे बुद्बुदस्तंबलीनां धृत्वा धृत्वा सपदि विलयं भूभुजः संप्रयाताः ॥ श्रीरस्तु. इति श्रीकर्पूरप्रकर ग्रंथ मूल तथा बालावबोध अने कथाउसहित समाप्त ॥

॥ मतलबविषे प्रस्ताविक दोहा ॥

॥ मतलबके सब आदमी, मतलब विना न कोइ ॥ जब जाकी मतलब हुवे, तबहि दूर व्हे सोइ ॥ १ ॥ मतलबसम या जगतमें, कोउ न और पदार्थ ॥ यातें सब व्यवहार है, याबिन है सब व्यर्थ ॥ २ ॥ मतलब नां ही सुजनकों, जाको अंग स्वभाव ॥ ताकोंही सज्जन कहत, जिहिं सब स रखो भाव ॥ ३ ॥ मतलब विना सुनारिहू, रहै न पतिके गेह ॥ पतिहू नारी ना रखै, जो सुत चाहन रेह ॥ ४ ॥ मतलबके सबही सगे, मतलब जौं लगि जांहि ॥ जो मतलबि जगमें नहीं, उत्तम मनुप कहांहि ॥ ५ ॥ मतलब ताको राखिये. जातें कारज होत ॥ शूके तरुवरपें गये, फल ग या न मिलोत ॥ ६ ॥ मतलब तबलग होतहै, जबलग कर में दाम ॥ पीछे कोइ न आवहीं, ज्यूं शूके सर गाम ॥ ७ ॥ मतलब धनसम और नहिं; मित्रहु वैरी होय ॥ मतलब पायें होत पुनि, शत्रु मित्रहू सोय ॥ ८ ॥

अथ

॥ श्रीउदयरत्नजी महाराजकृत भुवनभानु केवलीनो रास प्रारंभः ॥

॥ दोहा ॥

॥ सकल सिद्धिदायक सदा, अकल अरूप अनंत ॥ सिद्ध नमुं हुं ते सदा, आपे जे भव अंत ॥ १ ॥ वलि वंदूं वारू विधें, ऋषभादिक जिन राय ॥ भेटुं दुर्मति भंजणा, भावी भारति पाय ॥ २ ॥ गुरु गणधर गुण आगला, जे जे नर जगमांहि ॥ शासन देवादिक सहु, प्रणमुं परम उत्साहि ॥ ३ ॥ जनक शाह् वशवीर जस, जननि खिमादे जास ॥ श्रीहीर रत्नसूरी नमुं, असारु पूरे आस ॥ ४ ॥ जे जग रमणिक जाणियें, ते ते वस्तु अनित्य ॥ वलि राजा परें बूझिने, धर्म करो दृढ चित्त ॥ ५ ॥ भुव नभानु जे भूतलें, केवलि करुणा धाम ॥ प्रगट थया ते पूरवे, गाउं तस गुण ग्राम ॥ ६ ॥ वलि राजा पहेलां हुतां, नाम जेहनुं अभिराम ॥ भु वनभानु वलतो थयो, गुणनिष्पन्न सुनाम ॥ ७ ॥ त्रिविधेंसुं हूं तेहनो, रास रचुं रसरूप ॥ श्रोता जन सुणजो तमे, आणी भाव अनूप ॥ ८ ॥ चरित्र ए चोखे चित्तें, सुणसे जेह सुजाण ॥ मारी मोह नरेंद्रने, लेशे परम कल्याण ॥ ९ ॥

॥ ढाल पहेली ॥

॥ पहिलांने पालो ॥ ए देशी ॥ ए जंबुद्वीपें होजी मेरुथी पश्चिम दिशें, गंधिलावती विजय वखाणियें जी ॥ विजयपुर नामें होजी नगर वसे तिहां, सर्व संपदनुं सदन ते जाणीयें जी ॥ १ ॥ धर्मनुं धाम होजी वेस्म विलासनुं, शुद्ध व्यवहारनुं लोय सोहे घणुं जी ॥ अयनो अनाश्रम हो जी आश्रम न्यायनो, अमरपुरीथी अधिक सोहामणुं जी ॥ २ ॥ वेष्टित चर्में होजी खाइयें दुर्गम, अनेक कौतुकनो आस्पद दीपतो जी ॥ तिलक सरिखुं होजी भूरमणी भालें, अलकालंकानी शोभा लोपतो जी ॥ ३ ॥ राजे तिहां राजा होजी चंद्रमौलि नामें, नमे ते जेहने अनेक नरेसरू जी ॥ बल रुल बुद्धिनो होजी जे जलधि अछे, अभिहि सुरगमां ते अये सरू जी ॥ ४ ॥ नामचंद्रवतो होजी विस्मयकारी वली, महामंत्रीनी म तिने वलें सदा जी ॥ कामीना मननी होजी पुरवा कामना, काम सरि

खो जेह जाणो सदा जी ॥ ५ ॥ करि कुंभस्थल होजी दलन कठिन क रें, रिपु रमणीना केशनें खींचतो जी ॥ ते तरुणीने होजी नेत्रजलेंकरी, कुल कीरतिना कंदने सींचतो जी ॥ ६ ॥ वज्रथी विरुठ होजी पर दल पाटने, लागे ठे ते धरनो लोभिउ जी ॥ कीरति जेहनी होजी व्यापी दि गंतरे. जेह न जाए केंणें खोभिउ जी ॥ ७ ॥ अंतेउरने होजी पूरें पर वस्यो, विचरे ठे ते अनंगने गंजतो जी ॥ सुरपति सरिखो होजी अखं म आणें करी, भूमि पतिना माननें भंजतो जी ॥ ८ ॥ पहिली ढालें हो जी उदयरतन कहे, भवियण भावें सहुको सांभलो जी ॥ कौतुककारी हो जी रास ए ठे रूडो, भणतां भाजे भवनो आमलो जी ॥ ए ॥ सर्वगाथा ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ रतन जडित सिंहासनें, ठत्र धरावतो श्वेत ॥ बेठो ठे नृप एकदा, सुभटनी कोडी समेत ॥ १ ॥ पूरव दिशि प्रगट्यो तुरत, तेज अतुल तिणि वार ॥ रवि मंमलथी रम्य ते, पसर्यो सभा मकार ॥ २ ॥ अकस्मात तव ऊठल्यो, सुरभि पवन समकाल ॥ पसर्यो ते सघले पुरें, परिमल जास रसाल ॥ ३ ॥ सहसा तव सहु सांभली, गगनें किन्नर गान ॥ सुरवधुने समुहें करी, नभ उंपे तिणि थान ॥ ४ ॥ गगनमंमल गाजी रह्यो, नूपुर हंदे नाद ॥ भानु मंमलसुं भूपणें, जाणे के लीधो वाद ॥ ५ ॥ सुर गाय न कोलाहलें, डुंडुभि नाद अपार ॥ अंबर तव बहिरो थयो, तुमुल स्वरें ते वार ॥ ६ ॥ तव नृप ते सहसा तिहां, ससंभ्रम सस्नेह ॥ परपद जनसुं प्रेम सुं, अचरज लही अठेह ॥ ७ ॥ आसनथी उंचो थइ, मावो कर धरि भाल ॥ वीजो कर ठवि वेठकें, जूवे नयण निहाल ॥ ८ ॥ अहो अहो ए अचरज कि श्युं, इम अवलोके सोय ॥ तेमज पेखे तिहां वली, सभा लोक सहु कोय ॥ ए ॥

॥ ढाल बीजी ॥

॥ सोरठी रागना चालनी देशी ॥ तव श्रीखंमतिलक निलाडे, करे जे केसर आडे ॥ करें कनक ठडी जे धारे, सोहे पीन पयोधर भारें ॥ १ ॥ हिये मुक्ताफल हार, धारणी प्रतिहारी उदार ॥ प्रणमी भूपतिना पाय, वेसी ते वोली तिणे ठाय ॥ २ ॥ पूरव दिशिनो वनपाल, इहां आव्यो ठे उजमाल ॥ जो आपो प्रभु आदेश, तो परपर्दे करे प्रवेश ॥ ३ ॥ आवे ते नृप आणायें, वनपाल सभामां त्यांयें ॥ प्रणमी पृथिवीपति पाय, सुखें

बोले ते महा राय ॥ ४ ॥ किन्नर नर सुरनी कोडि, जेहने नमे कर जोडी ॥ भुवनभानु जस नाम, केवली करुणा रसधाम ॥ ५ ॥ अवनिपति सु णिने एम, पूरण ते पाम्यो प्रेम ॥ ऐन अमृतने रसें अरच्युं, जाणे चंदन सुं तन चरच्युं ॥ ६ ॥ जाणे त्रिभुवन लीला लाधी, सुख सागरनी लहेर वाधी ॥ दीधुं तेहने प्रीतिदान, जेहनुं नवि थाय मान ॥ ७ ॥ एक आं ख पलकारामांहि, सामग्री सजी उछांहि ॥ श्वेत नइ गजेंइ समारी, ऊ पर करे असवारी ॥ ८ ॥ श्वेत छत्र शिर ऊपर छाजे, जे भानु प्रतापने भाजे ॥ शशिकिरण समूह समाने, ढले चामर उज्ज्वल वाने ॥ ए ॥ हय गय रथ पायक पूरें, वींट्यो चोफेर सनूरे ॥ परिकर श्रेणें परवरिउ, अव निपति उलट भरिउं ॥ १० ॥ पुरव दिशिने उद्यानें, पहोतो पावन थावा ने ॥ दुरथी देखिउ मुनि राय, तजी असवारी तिणे ठाय ॥ ११ ॥ शस्त्र चामर मुकुट ने छत्र, तजी तंबोलादिक तत्र ॥ कर चरण वदन जल शुद्धि, परखाली परम शुद्ध बुद्धि ॥ १२ ॥ तजी पाडुका विनयसुं त्रिविधें, करक मल जोडीने सुविधें ॥ परषदमां पेसी प्रीतें, मुनिनें वंदे मन हीतें ॥ १३ ॥ देइ प्रदक्षिणा त्रण तेह, शिर भुमीसुं फरसी स्नेह ॥ भावें वंदी भगवान, सपरिवारें राजान ॥ १४ ॥ उदयरत्न कहे ए ढाल, बीजी में बोली रसा ल ॥ नेहें जे मुनिने नमशे, ते भवनी भावठ गमशे ॥ १५ ॥ सर्वगाथा ४२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ कर जोडी स्तवना करे, निरवद्य भूमि निहालि ॥ बेठो बे कर जोडी ने, वारु सभा विचालि ॥ १ ॥ दीधी मुनिवर देशना, शांभलि ने नृप सो य ॥ अरज करी वलती इसी, उत्तम अवसर जोय ॥ २ ॥ रांक रीजे जि म रत्ननी, वृष्टि देखिने वेग ॥ तुम आगमने तेम हूं, निज मन पाम्यो ने ग ॥ ३ ॥ भव सागर भूंमो घणो, ऊंडो जेह अथाग ॥ दरश आज तुम देखतां, तेहनो पाम्यो ताग ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ४८ ॥

॥ ढाल त्रीजी ॥

॥ थां पर वारि मारा साहेबा ॥ ए देशी ॥ भगवन मुज बाल भावमां, मुनिवर एक मलिउ ॥ बोध आपीने बहु परें, दुःख नीर दलिउ ॥ १ ॥ पण समकित नवि सद्दह्यो, बाल बुद्धिपणाथी ॥ उपदेश ते अणगारनो, जे ह मुक्तिनो साथी ॥ २ ॥ संस्कारमात्र ते साधुनी, देशना दिल धारी ॥

यौवनने जोरें करी, ते पण में वीसारी ॥ ३ ॥ राज्य धुरा भारें वली, मद तिमिरें भंज्यो ॥ उपदेशरूप उद्योत ते, मोहें मन रंज्यो ॥ ४ ॥ वलतो विषय विलासमां, काल गयो केतो ॥ जातो पण जाण्यो नही, तृष्णावश तेतो ॥ ५ तेवार पछि में आजनी, रजनी विरमंती ॥ जागीने जोयूं मनें, आलोची एकांती ॥ ६ ॥ अहो महारंभ तिणे भरें, डुरित दल मेल्यो, विपाक समे अहो केम ते, जासे अवहेल्यो ॥ ७ ॥ डुःख देशे मुने डुष्ट ते, परभवमहापाप ॥ आडो तव कोण आवशे, एम चिंतु आप ॥ ८ ॥ गुरु ज्ञानी कोइ जो मिले, तो पुछुं तेहने, कोण रक्षा करशे कहो, आविउदयें एहने ॥ ए ॥ नाव समो निर्ग्रंथनो, संग जे थयो पहेलो ॥ भ्रष्ट थयो हूं तेहथी, मंद बुद्धि महेलो ॥ १० ॥ जन्म समुद्रमांहें पडयो, प्रेर्यो अघ पवनें ॥ आरो अहो कोण आपशे, उल्हवी भव दवने ॥ ११ ॥ खेदें इम करतां खरखरो, डुर्घट ए वातें ॥ प्रगट प्रभात समय थयो, यामनि शेष जातें ॥ १२ ॥ कृत्य करी प्रभातनां, सभायें जेहवे ॥ मजलस मेली आसने, वेगेवुं तेहवे ॥ १३ ॥ वनपालें वधामणी, दीधी मन खांते ॥ ताजी तुम आव्या तणी, सुणी हरख्यो ए भांते ॥ १४ ॥ जिम हरषे मरु देशमां, पंथी सर पेखी ॥ जिम चातक ग्रीषम ऋतें, रीजे घन देखी ॥ ॥ १५ ॥ जिम वनवासी घाममां, अंबनी घन छाया ॥ पामी रति पामे मने, उल्हसी अति काया ॥ १६ ॥ सुधारसनी लहि कूपिका, रोगी जिम रीजे ॥ तिमहूं रीज्यो ते समे, घणुं शुं कहीजे ॥ १७ ॥ तरशे त्रीजी ढालमां, जेह मुनिने नमवा ॥ तरशे भव जल ते वदे, उदय अघ गमवा ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जिम कायर युद्धे जुडयो, पडियो अरीगणमांहें ॥ शरण चाहे जिम शूरनुं, पीडयो शस्त्र प्रवाहें ॥ १ ॥ तिम भीडयो पातक भरें, भव वेरीथी भाग ॥ तुम शरणे हूं आविउ, लही अपूरव लाग ॥ २ ॥ महेर करी मुज ऊपरें, ते माटे कहो स्वाम ॥ शरण होशे मुने केहनुं, पर भव पीडाठाम ॥ ३ ॥

॥ ढाल चोथी ॥

॥ वृषभानु भुवन गई दूति ॥ ए देशी ॥ तव दसनयोति तम भरने, दलतोमुनि कहे नरवरने ॥ त्यारे शरण होशे तुज तेह, महापुरुषें अंगीकर्यो जेह ॥ १ ॥ तुम सरिखे वीजे पण भजियुं, विशेषे अमे पडिवजियुं ॥ ते

होशे तुजने त्राता, परभव जाता गुण ज्ञाता ॥ २ ॥ इम सांभलि ते न रनाथ, महा कौतुक लही मन साथ ॥ मरकलडुं दइ मुखें बोले, रूडां वयण अमीरस तोले ॥ ३ ॥ त्रिभुवन त्राता प्रभु तुमने, कुण शरण बीजुं कहो अमने ॥ ए अचरज कारी उदंत ॥ भाषो विवरी भगवंत ॥ ४ ॥ त व मुनि कहे कथा ए मोटी ॥ भवनी ज्यां कोटा कोटी ॥ राज काज वशें वहिचार ॥ मन न रहे तुमारूं ठार ॥ ५ ॥ अधिकार असंख्य छे एतो ॥ ते माटे कहिये केतो ॥ मनने घेरवा लहो मर्म ॥ धर्मथी जोरावर कर्म ॥ ६ ॥ भाषो मां एहवुं भगवान ॥ सुधापान तजी असमान ॥ जड पण करवा विषपा न ॥ किम चाहे कहे राजान ॥ ७ ॥ मेघने जिम इच्छे मोर, चंदने जिम चाहे चकोर ॥ तिम वाट जोतां मुनिराज, पुण्यें पाउधार्या आज ॥ ८ ॥ अवर तज्या आक्षेप, हवे लागे नहीं अन्य लेप ॥ ते माटे कथा तुमारी, विगतें तमें कहो विस्तारी ॥ ९ ॥ तुम वचन सुधारस पान, करवा चाहे मुज कान ॥ सफली करीने ए प्रज्ञा, पूरो प्रभु तेहनी इच्छा ॥ १० ॥ चोथी ढालें चित चाहें, उदय रत्न वदे ऊमाहे ॥ जग जन तारक जिन वाणी, भावें सुणजो भवि प्राणी ॥ ११ ॥ सर्वगाथा ॥ ७८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव ज्ञानी गुरु बोलिया, सांभल थइ सावधान ॥ एक ध्यानें एक आसनें, रंगें तूं राजान ॥ १ ॥ कांइक कहुं तुज आगलें, मुज वीतक म हाभाग ॥ सांभलतां सूधे मनें, थशे मन वैराग ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥ ८० ॥

॥ ढाल पांचमी ॥

॥ नदियाणीनी देशी ॥ भा लोकोदर इण नामें, नगर विराजे हो वसे लोक अनंत जिहां ॥ नहिं जस आदि न अंत, अपर पर वस्ती हो पुण्य नहिं खाली किहां ॥ १ ॥ सर्व संपदनुं गेह, पुरुषोत्तमने मसुहे हो सेवित से लागो सदा ॥ अचलजनो आश्रम, कोडा कोडी कल्पांतें हो जेहनो भंग नहिं कदा ॥ २ ॥ नहिं ते योनि ने जाति, गोत्र ने कुल वर्ण हो नहिं सा विधाने कला ॥ नहिं ते दिग्गजने हाट, नाटकने नहिं नीति हो, नहिं ने आगम आमला ॥ ३ ॥ धर्म कर्म नहिं तेह, वैभव ने विलास हो नहिं ते दर्शनने क्रिया ॥ नहिं गति ने व्यवहार, स्थाने रंगादिक हो नहिं ने सुर

पतिनी श्रिया ॥ ४ ॥ केतां कहियें नाम, बीजो पण पदार्थ हो जोतां को न जडे तिश्यो ॥ जे नवि दीशे त्यांहि, सर्व वस्तुमां हो रम्य ते पुर राजे इश्यो ॥ ५ ॥ कटक सदा इहां होय, मांहोमांहें जूंफे हो अंत न आवे तेहनो ॥ एक धर्म ने बीजुं पाप, अन्योअन्य दुःख दाई हो दल ए बल बहु वेहनो ॥६॥ पाप सेनानो नाथ, मोह राजा महा बलिउ हो त्रिजुवन वश कीधुं तिणे ॥ अहितकारी अत्यंत, संसारी सहु जीवने हो जाय नहीं जीत्यो किणे ॥७॥ इंडनी पण ए आण, मनावि पोतानी हो महीमा रूप पालां धरी ॥ चक्रीनें पण तेम, बाणुं लाख पायकनें हो पेखि वशवर्त्ति करी ॥ ॥ ८ ॥ राजाने करे रंक, सेवने सेनापति हो सारथवाह सचीवने ॥ दासना जे करे दास, कुवासनायें वासे हो जे सहु पामर जीवने ॥ ए ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म, थिर करीने थापे हो तजावी तत्वनी वासना ॥ अतत्वनो करी अनुकूल, अवस्तुनो आसंगो हो करावी राखे आसना ॥ १० ॥ तजावि पुण्यनो पक्ष, पातकसुं पोसीने हो करावे जे निज चाकरी ॥ हिंसा अदत्त अलीक, मैथुन ने परिग्रहनी हो लगन लगावी आकरी ॥११॥ निशि जोजनसूं नेह, जोडावी जोरेसुं हो क्रोधानलें नाखी वली ॥ जारी मान शिलाएं, मायारूप भुजंगी हो मुखे मसावे रली ॥ १२ ॥ पाडे लोज समुड, पुत्रादिक संबंधें हो प्रेम तणे जरें ॥ यंत्री युवति रागे, घणनेहें घेरीने हो पीडे पग पग बहु परें ॥ १३ ॥ दोलतथी करे दूर, महत्व घटाडी हो देखाडी महादीनता ॥ आरति अरति अपार, उपाइने आपे हो डुर्गति नरकनी हीनता ॥ १४ ॥ अवतारे तिरयंच, कुत्सित नर योनिमां हो घालीने पीडे घणुं ॥ दुःख दारिड डुर्जाग्य, विडंबिने देखाडे हो वली कुगतिनुं बारणुं ॥ ॥ १५ ॥ एम अनंती वार, जमाडे जवमांहे हो प्राणीने पीडे दुःखें ॥ अहित तिणें कहेवाय, आचरणा वलि एहनी हो केती कहेवाये मुखें ॥१६॥ उदय रतन कहे एम, पांचमी ढालें हो परमारथ तुमें प्रीबजो ॥ मेली मोहनो पास, आगम निसुणीने हो उत्तम गतिने ईबजो ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अहंकार कोप आदि दे, अद्भुत कटक अनंत ॥ आणकारि तेहने अबे, अति उद्धत बलवंत ॥ १ ॥ पीडे ते सहु प्राणिने, अहितकारी अपार ॥ जेवो नृप तेवी प्रजा, अंतर नहीं लगार ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥एए॥

॥ ढाल ७मी ॥

॥ ईमर आंबा आंबली रे ॥ ए देशी ॥ चारित्र धर्म नामें लह्यो रे, धर्म सेनानो नाथ ॥ शम दम आदें शोभतो रे, सबलो जेहनो साथ ॥ राजेसर, सुण मन राखी ठाय ॥ १ ॥ समकेत सत्य सुवासना रे, सदागम ने सद बोध ॥ अज्ञव मद्दव उपता रे, जालम जेहने योध ॥ राजे० ॥ २ ॥ गंभीर धीर शौचादिकें रे, सुभट अनंतें सोय ॥ सोति ए सहु जीवने रे, हितवंछक ते होय ॥ राजे० ॥ ३ ॥ देव धर्म गुरुनेविषे रे, जे उपजावे राग ॥ अत त्वने अवस्तुनो रे, जेह करावे त्याग ॥ राजे० ॥ ४ ॥ सत्क्रिया जे शीखवे रे, दया धरी दिल मध्य ॥ अलिक अदत्त वढ्ढापिने रे, शील पलावे शुद्ध ॥ राजे० ॥ ५ ॥ परिग्रहना महा पासथी रे, तुरत छोडावे तेह ॥ निशि भोजन मूकावीने रे, शमें शोभावे देह ॥ राजे० ॥ ६ ॥ सरल मृदु गुण सोंपिने रे, स्नेहनि सांकल त्रोडि ॥ भांजी बेडी रागनी रे, अरथनी आपे कोडि ॥ राजे० ॥ ७ ॥ गुरुता गुणने उपिने रे, लेणी लघुता अतीव ॥ सुजस व धारे जे सदा रे, सुमति आपे सदीव ॥ राजे० ॥ ८ ॥ नरक तिर्यंच गति रोकीने रे, आपे सुर अवतार ॥ नरभव दइ वलि निर्मलो रे, धर्म धरावे प्यार ॥ राजे० ॥ ९ ॥ परमैश्वर्य पमाडिने रे, शुद्ध सधावे योग ॥ देवप णुं वलि देइने रे, भला विलसावे भोग ॥ राजे० ॥ १० ॥ एम सहु संसा रिने रे, सुख आपे संसार ॥ अंतें आपे शिवपुरी रे, तिणे जाणो हितका र ॥ राजे० ॥ ११ ॥ ७मी ढालें चाहीने रे, कहे कवि उदयरतन्न ॥ धर्म भणी जे ध्यायसे रे, जय लहेसे ते जन्न ॥ राजे० ॥ १२ ॥ सर्वगाथा ॥ १११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ एम ए दल जूंके बने, सुख दुःख देवा काज ॥ सदा काल सहु जी वने, वढतां नावे वाज ॥ १ ॥ काल अनंतो अतिक्रम्यो, दल ते जुंके दो य ॥ हार क्यारे केनी हुवे, क्यारे जीते कोय ॥ २ ॥ वलिते ए बेहुयकी, त्रीजो त्रिभुवन राण ॥ कर्म परिणाम नामें प्रभु, मोटुं जग मंडाण ॥ ३ ॥ शुभ अशुभ रूपेंकरी, चरित्र विचित्र ते नाल ॥ स्थूल मती नवि उलखे, योगी लहे गति जास ॥ ४ ॥ वडो भाइ ए मोहनो, काल परिणती कंत ॥ नाटक बत्रम जेहने, त्रिभुवन व्यापक तंत ॥ ५ ॥ लोकस्थिति भगिनी वडी, जेहने जाणे सहु कोय ॥ थाकी बल नहि केहनुं, तेह करे ते होय ॥ ६ ॥

॥ ढाल सातमी ॥

॥ दोणा दे रे मोड्या दोणा ॥ ए देशी ॥ कुदरत जो जो कर्मनी, वि ध विधना बनावे वेष रे ॥ नाच नचावे नवनवा, दिलमां रीजे नृप देख रे ॥ ठे एहवो रे ते तो ठे एहवो ॥ १ ॥ रासजरूपें करे देवनें, रासजने करें देवरूप रे ॥ तिर्यंचने करे नारकी, नारकीने तिरिय सरूप रे ॥ ठे एहवो० ॥ २ ॥ कुंथुरूपें करिने करे, कुंथुने करे गजराज रे ॥ रंक करे जे रायने, रं कने करे महाराज रे ॥ ठे एहवो० ॥ ३ ॥ धनवंतने निर्धन करे, निर्धनने करे धनवान रे ॥ रोगरहित करे रोगिने, निरोगीने करे ग्लान रे ॥ ठे एह वो० ॥ ४ ॥ शोकरहित शोकवानने, शोकरहितने करे शोकवंत रे ॥ सुखि याने डुखिया करे, डुखियाने करि सुखिया अनंत रे ॥ ठे एहवो० ॥ ५ ॥ ए हवी शक्ती एहनी, नापी ठे जगवान रे ॥ विचित्ररूपी कह्यो ते वती, नहिं कोइ एह समान रे ॥ ठे एहवो० ॥ ६ ॥ देव मानव तिरिय नारकी, अनं त पात्रें मोह एम रे ॥ नृत्य देखाडे नित नवां, ए देखी रीजे जेम रे ॥ ठे एहवो० ॥७॥ चारित्र धर्म तणे पखें, थाय शुजरूपें ए सखाय रे ॥ अन्य दा मोहना पक्षने, पोषंतो रहे सदाय रे ॥ ठे एहवो० ॥ ८ ॥ ज्यारें पासुं करे जेहनुं, त्यारे तेहनी थाय जीत रे ॥ साधारण समजो तिणे, एहवी क ही एहनी रीत रे ॥ ठे एहवो० ॥ए॥ उदयरतन कहे आतमा, बीजो मेली बनाव रे ॥ सूधो सातमी ढालमां, समज जे कर्म सन्नावरे ॥ ठे एहवो० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

॥ बे गोलीनो चरडुउ, ज्येष्ठ बंधुने जाण ॥ रूठो मोह राजा मनें, व दे ते एवी वाण ॥ १ ॥ बंधव तुज आगल बहू, नेह धरी अमे नित्य ॥ नृत्य कला दाखूं नवी, जिम रीजे तुज चित्त ॥ २ ॥ सदागम योगें ते सदा, नाटकनो करे नंग ॥ पात्र पहोचाडे शिवपुरी, वेरी करे विरंग ॥ ३ ॥

॥ ढाल आठमी ॥

॥ रसीयानी देशी ॥ तो पण तुं तेहनुं पासुं करी, अमने मनावे रे हा र ॥ सहोदर ॥ ए लक्षण ताहरुं हुं लहेतो नथी, एहव्यो ताहरो रे आ चार ॥ सहोदर ॥१॥ इम नवि कीजें हो सुगुण सहोदरु, मूक तुं मननी रे गाढ ॥ सहोदर ॥ जाते दाडे हो पर नहि आपणा, हसतां न जश्यें रे हा म ॥ सहोदर ॥ २ ॥ खांतें कहो किम ते खेल खेलियें, जेणे थाए घरमां

रे ढांग ॥ सहोदर ॥ पुत्र पीयारे हो निज घर नवि वसे, ए शीख तूं मनमां रे आण ॥ सहोदर ॥३॥ आचरण तारां कहो कोण ओलखे, नानाविध ताग रे ढंग ॥ सहोदर ॥ कुलनो बोलु वेरु तुं सही, जे शत्रुशुं करे रे संग ॥ सहोदर ॥ ४ ॥ तव हसी शिर चुंबो देइने, भुजशुं भरावी रे बाथ ॥ सहोदर ॥ इम बोले ते आंसुं वरसतो, करम संचय नर नाथ ॥ सहोदर ॥ ५ ॥ वत्स हूं जाणुं तुं चेष्टा एहनी, जिम तुं भाखेने रे तेम ॥ बंधवजी ॥ मूल कापे छे ए सही आपणां. तो पण करिये रे केम ॥ बं० ॥ ६ ॥ स्वभाव माहरो ने ए रीतनो, तज्यो न जाय रे तेह ॥ बं० ॥ अनंत कालनो एह शुं माहरे, चाल्यो आव्यो रे सनेह ॥ बं० ॥ ७ ॥ महोबत मेली न जाय तेहनी. जीव जो जाय तो जाओ ॥ बं० ॥ कांइक क्यारे समारुं तेहनो. दिल धरी तेणें रे दाओ ॥ बं० ॥ ८ ॥ काज तुमारां साधुं हुं सर्वदा, तुमे जो सारी रे पांख ॥ बं० ॥ त्रिभुवनमां हूं गाजुं तुम वडे, जे कहो ते सधारुं रे धांख ॥ बं० ॥ ९ ॥ तव त्यां मोह महिपति बोलिओ, निज अव्यय पुरथी रे घेर ॥ बं० ॥ सहाय संसारी जीव आपो मुने, जिम करुं शत्रुने रे जेर ॥ बं० ॥ १० ॥ असंव्यवहार नामें निजपुरयकी, कर्मनृपालें रे ताम ॥ बं० ॥ दुर्भव्य ने अभव्य बहु आपिया. अनुज ने सखाइ उद्दाम ॥ बं० ॥ ११ ॥ मोहनृपनुं महत्व ओपिउं तिणे, खलकमां वधारी रे ख्यात ॥ श्रोता जी ॥ उदयरतन कहे आठमी ढालमां, मोहनी मोटी रे वात ॥श्रो०॥१२॥

॥ दोहा ॥

॥ चारित्र धर्मना सैन्यमां. वेगें गइ ते वात ॥ निरानंद सघलुं थयुं. सैन्य तणी महसात ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ १४३ ॥

॥ ढाल नवमी ॥

॥ सखियां माहरां नयण समारां ॥ ए देशी ॥ तेहवुं ते देखी ने मंत्री, सद्बोध कहे नृपने रंगी जी ॥ स्वामी एम शुं गलि जाओ तो, कायरनी परें फसाणी जी ॥ १ ॥ आपद पडे उपाय तेहनो. उत्तम आलोचें मुदा जी ॥ पग पसारी वेसवुं शांने, झीवके कामनीने सदा जी ॥ २ ॥ उद्यम पांखे आवास सरि, वृद्धि विना न वेगी रहे जी ॥ लक्षण नेहनुं सर्वेसरे, लाख किम्यों फरी न लहे जी ॥ ३ ॥ दिन स्वामी जानीमद येथां, निज पराक्रम मूके नही जी ॥ जो ने फरी उदयने पामे, आयवने अंते सही

जी ॥४॥ धीरपणुं धरिने ते माटे, उपाय एहवो कीजियें जी ॥ जिम एहनुं समाधान थाये, अरियणनो अंत लीजियें जी ॥ ५ ॥ तव मंत्रीने कहे महाराजा, युक्ति ए तूं जाणे सवेजी ॥ ते माटे जे तुजने गमे ते, हुकमत ते कीजें हवे जी ॥ ६ ॥ निज स्वामीना पाय नमिने, सदबोध वलतो एम वदे जी ॥ मनमांहिंथी आरति मेली, वात एक धरजो हदे जी ॥ ७ ॥ अवश्य आपणने जावुं घटे छे, कर्म परिणाम कने वही जी ॥ जिम पावकें दाधा प्राणीनी, पावक पाडे समे सही जी ॥ ८ ॥ शत्रुनी पण समय लही ने, मरजी माफक चालियें जी ॥ जिम सघलुं वाल्युं जे अग्नें, घरमां तेहने फिरि घालियें जी ॥ ए ॥ पोखिएं छैएं आपण एहना, शुन्न पक्षने सर्वदा जी ॥ आपण वली आदेश एहनो, फेरवता नथी कदा जी ॥ १० ॥ चाकरी ए चित धरीने, दिलासो देशे किश्यो जी ॥ आखर एहवो उष्ट नथी ए, जोतां मोहराजा जिश्यो जी ॥ ११ ॥ नवमी ढालें नेह धरी ने, उदयरत्न इम उचरे जी ॥ जाण अछे जे जिन वाणीना, फेरव्या ते नवि फरे जी ॥१२॥

॥ दोहा ॥

॥ सदबोधनुं कह्युं सांजलि, इत्यादिक अवदात ॥ चारित्रधर्म ते चित्तमां, राजा थयो रलियात ॥ १ ॥ आगल करि मंत्रीशने, थोडे से परिवार ॥ धर्म राजा तव धाइने, पोहोतो तसु दरबार ॥ २ ॥ सर्व गाथा ॥ १५७ ॥

॥ ढाल दशमी ॥

॥ निज गुरु चरण पसाय ॥ ए देशी ॥ सदबोध मंत्री ताम, अवसर जोईरे, कर्म राजाप्रति बोलिउरे ॥ पडि वेलामां आज, प्रज्ञु अम साथेरे, तुमें पण अंतर कियोरे ॥ १ ॥ न घटे ए तुमने नीति, काल प्रमाणें रे, अधिके उछे जे त्रेवडो रे ॥ स्वन्नावे तुमें स्वामी, अमश्यूं तेणे रे, आंटो न राखो ए वडो रे ॥ २ ॥ जुनी स्थितिने जोय, केहनुं कह्युं रे, लेखे तुमें मत लेखवो रे ॥ पालो पूरव प्रीत, न करो एक परखो रे, इम न घटे कवेखवो रे ॥ ३ ॥ मौन रही वडी वार, तव ते नृप रे, मनमांहि विचारिने रे॥ अव्ययपुरथी एक, एहुने काजें रे, सहायक आण्यो धारिने रे ॥ ४ ॥ सदबोधने ते देखाडे, प्रछन्नपणे रे, कानमांहि कह्युं तदा रे ॥ तमने पण एक एह, सहाय थाशे रे, अनुक्रमें सजो मुदा रे ॥ ५ ॥ हवणां तो एहनां तेह, वेरी थासे रे, अनुमति महारी छे इशी रे ॥ नहिंतो कुटंब विरोध, थाय अमारी रे, करशोमां

चिंता किशी रे ॥ ६ ॥ आखरें तुमने एह, जिम तिम करी रे, आणी मेल वछुं अमे रे ॥ ए वातनो संदेह, रखे हृदयमां रे, रेख मात्र राखो तुमे रे ॥ ७ ॥ इम सुणी धर्म नरिंद. परिकर लेई रे, पहोंतो पोताने घरें रे ॥ मंत्रीने कहे एम, ए शुं कीधुं रे, कर्म नृपें कपटजरें रे ॥ ० ॥ मोह राजाने स साय, बंधव जाणी रे, बहु आप्यों मननी हरे रे ॥ आपणने दिउ एक, तो पण जुउ रे, देखाडशे कालांतरे रे ॥ ए ॥ तव मंत्री सद्बोध, हसीने कहे रे, स्वामी शुं सुएयो नथी रे ॥ धेनु अज गविठाण, लहियें ते वारू रे, मन साथें जुउ मथी रे ॥ १० ॥ मोह बंधु हितवंत, आदेश कारी रे, सुजट सहु ठे तेहना रे ॥ अंत तणा करनार, जग जाणीता रे, आपण वेरी एहना रे ॥ ११ ॥ वहिन वडी बलवंत, लोकस्थिति नामें रे, कर्म राजानी जे कही रे ॥ ते मोहनी बांहे जीत, अनंतमे जागें रे, आपणो जय बांहे सही रे ॥ १२ ॥ शत्रु अनेक हुं एक, ए पण इहां रे, खेद रखे राखो हृदे रे ॥ ए कलो जिम आदित्य. तमजर दले रे, फेरि जिम पामें उदे रे ॥ १३ ॥ व हु कालें ने सहाय, मिलसे तेहनो रे, खरखरो न करो विजु रे ॥ पंखा जू ख्या माट, काची फूनें रे, उंबर किम पाके प्रजु रे ॥ १४ ॥ शीघ्र न थइयें स्वामि, धीरां धीरां रे, कारज सवलां नीपजे रे ॥ दशमी ढालें एम, उदय पयंपे रे. धर्मे धन सुख संपजे रे ॥ १५ ॥ सर्वगाथा ॥ १७२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ एक चित्तें सव ए सुणो. चंद मौलि नृकंत ॥ अचरज लहि इम चिंतवे. अहो मंत्रि बुद्धिवंत ॥ १ ॥ यथार्थ नामें ए सही, धन्य मंत्रि सदबोध ॥ बीजाने इम बोलतां, किम आवे अविरोध ॥ २ ॥ केवल इम अनुग्रह करो. इहां आवि मुनिराज ॥ आख्यानक कहि आपणुं. साधो आतम काज ॥ ३ ॥ क्षणेक इम आलोचिने, मिलित लोचन महिपाल ॥ बोल्यो वे कर जोडिने, मन लहि मोद रसाल ॥ ४ ॥ जगवन चारित्र धर्मने, सोंप्यो जेम सहाय ॥ शुं शुं तेहने शंजव्युं, आगल कहो उपाय ॥ ५ ॥ अति उत्सुक मन मारुं. सुणवा एह संबंध ॥ कहो जगवन सुपसायकर, प्रेमें सहु प्रबंध ॥ ६ ॥ सर्वगाथा ॥ १७७ ॥

॥ ढाल अग्यारमी ॥

॥ वरखालो चामुंमा रण चढे ॥ ए देशी ॥ मुनिवर कहे महाराजनें,

तव कर्म परिणामें मोहें रे ॥ असंव्यवहारथी उद्धरी, धर्यो तेह व्यवहार निगोदें रे ॥ मुनि० ॥ १ ॥ तेह समीपें रह्यो तिहां, पोतें प्रछन्नरूपें सोई रे ॥ मोहादिक तव चिंतवे, जुगति तेहनी सर्व जोई रे ॥मुनि०॥२॥ अहो ए नायक आपणो, नारदरूप निहाळो रे॥ गारना खीलानी परें, अस्थिर माया घालो रे ॥ मुनि० ॥३॥ वणकरनी जेहवी नली, जेहवी घंटनी ला ली रे ॥ मृदंग जेहवुं मातंगनुं, एहवी एहनी गति भाली रे ॥ मुनि०॥४॥ मध्य मणी जिम हारनो, तिम ए उन्नय पक्षगामी रे ॥ शीखामण पण देतां सही, हठ नवि मेले हरामी रे ॥ मुनि० ॥५॥ अंगी जे एणें कह्युं,ते हृदयमांहि नवि रह्युं रे॥ घृत घट ऊपर जल यथा, चिहुंपासे जाए वह्युं रे ॥ मुनि०॥ ६ ॥ जल जिम जलणे तापव्युं, वलि शीतल थाय विशेषो रे॥ शीखामण शी सहेजनें, जिहां अफल थाय उपदेशो रे ॥मुनि०॥७॥ जोए थयो छे बेरडो,तो जाशे एहनी लाजो रे॥ समय जोइ निज भुजबलें, आ पण साधशुं काजो रे ॥ मुनि० ॥ ८ ॥ इम चिंतीने आवियो, ते संसारी जीव पासें रे ॥ मोहादिक मलि एकठा,दुःख देवा उल्लासें रे ॥मुनि०॥९॥ भावी धर्म नृपालनो,भीरु जाणी टोक्यो रे ॥ अनंत उत्सर्पणी लगें,व्यवहार निगोदमां रोक्यो रे ॥ मुनि० ॥ १० ॥ दुख दीधां कोडो गमें, जे संसारिनें तेणें रे ॥ अग्यारमी ढालें उदय वदे,ते कह्युं न जाए केणें रे ॥मुनि०॥११॥

॥ दोहा ॥

॥ कालांतरे कोइक समे, लाग लहिनें तेह ॥ कर्मे पृथिवी कायमां, वास्यो तिहांथी लेह ॥ १ ॥ मोहादिक दुष्टें मली, त्यां पण तेने निशंक ॥ घेरी राख्यो घण दुःखमां, उत्सर्पणी असंख्य ॥२॥ इम अप तेउ वाउमां, तेमज रोकी तास ॥ दुःख दीधां लाखो गमे, कर्मनुं उपर जास ॥ ३ ॥ प्र त्येक तरुमांहे पडी, शितेर कोडाकोडि ॥ सागरोपम राख्यो सही, दुःख दइ लख कोडि ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ १९३ ॥

॥ ढाल बारमी ॥

॥ गौतम समुद्र कुमार ॥ ए देशी ॥ इम ते संसारी जीव, वलि मोहा दिकें, वलि वलि पाछो वालिने ए ॥ वास्यो व्यवहार निगोदें, पृथिव्यादिक मां, फरि राख्यो तिहां घालिने ए ॥ १ ॥ इम एकेंद्रिमांहि, अनंत उत्सर पणी, फेरव्यो ते फरि फरी ए ॥ पुद्गल तिहां असंख्य, परावर्त्त्यां तिणें,

नव बहुला करि करी ए ॥ २ ॥ वलि पामी विचालु.कर्मे ते तिहांथी, वि गलेंडिमां वासिउ ए ॥ ते जाणीने डुष्ट, पूठे आवीने, परानव पामें पासि उ ए ॥ ३ ॥ वरष संख्याता सहस्रें रे, तिहां वलि रोकीने, निगोदादिक मांहे थयो ए ॥ असंख्याता पुजल, परावर्त्तावीने, विगलेंडी रूपें कस्यो ए ॥ ४ ॥ संख्यातो तिहां काल रे. वासी ने वलि, एकेंडिमां आणिउ ए ॥ वलि विगलेंडिमांहे. वलि एकेंडीमां, तेहने इम बहु ताणिउ ए ॥ ५ ॥ इम अवनगी वार अनेक, पुजल अनंता. परावर्त्त तिहां डुःख घणे ए ॥ वलि कर्में लहिय विचालुं रे, अवतास्यो तेहने. समुर्छिम पंचेंडियपणे ए ॥ ६ ॥ तिहां पण थायां पूंठे रे, मोहादिक मली, अष्ट नव तिहां रोकीने ए ॥ पूर्व कोडि प्रत्येक, डुःख दीधां बहु, दया न आवी कोपीने ए ॥ ७ ॥ अरि ने लहि आसन्न रे, वलि वाली पाठो, एकेंडी अवतारीउ ए ॥ वलि विगलें डिमांहि रे, समुर्छिम पंचेंडी,अवतारी डुःख नारीउ ए ॥८॥ इम पुजल अ नंतरे. परावर्त्ताविया, ते संसारी जीवने ए ॥ मोह राजानी साथे रे, डुःख मां रोकीने, राख्यो करतो रीवने ए ॥ ए ॥ बोल्यो बारमी ढालें रे, सहा राजा मोहनो. जोरो जो जो नविजना ए ॥ सांजलि एह संबंध रे, चित्त मां चेतजो, उदय वदे थइ एकमना ए ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवसर लहि तव अन्यदा, निरिय पंचेंडि मांहि ॥ कर्मे ते अवतारि उ, अंगीकृत उमांहि ॥ १ ॥ त्यां पण अरि आवी तिणें, पूर्व कोडि प्रत्ये क ॥ अष्ट नवां तस रोकिने. दीधां डुःख अनेक ॥ २ ॥ वली कोधें वाली त्यां थकी. अवनाग्यो ते जंत ॥ एकेंडीथी आदिदे, गर्भज तिरय पर्यंत ॥३॥ पुजल परावर्त्यां तिहां, आपदमांहि अनंत ॥ वलि सन पंचेंडी कस्यो, लक लहि कर्म तंत ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ २०ए ॥

॥ ढाल तेरमी ॥

॥ किस्ती अरजे जेम वागी ॥ ए देशी ॥ मोह राजादिक लहि ने मर्म, दिने जोजो वेंधुनां कर्म ॥ आवो आवो चलवे ने एहने. जाणिये ने मेल पणो तेहने ॥ १ ॥ इम आलोची ने संसारी. मोहें दीधो मांस अहारी ॥ घणुं करावीने जीवघात. नरकमांहे ते नाख्यो अनाथ ॥ २ ॥ असंख्य काल त्यां डुःखमां थरीउ, वली कर्मे तिहांथी उधरीउ ॥ तिरंगम जातिमें

वाश्यो लेइ, वली मोहादिक क्रोध धरेइ ॥ ३ ॥ एकेंड्रिआदि नरक पर्यंत, तेमांहे रूंध्यो जंत ॥ पुजल परावर्त अनंत, ङुःख तेहनुं जाणे न्नगवंत ॥४॥ संमुर्छिम मनुष्यमाहें वलि सोई ॥ कर्मे सरजाव्यो तक जोई ॥ तिहां पण मोहादिकें न्नव अष्ट ॥ रोकीने दीधुं महाकष्ट ॥ ५ ॥ अष्ट अंतर मुहूर्त तिहां राखी ॥ वली तिमज ङुर्गति ते दाखी ॥ संमुर्छिम अंते एकेंडी आदें ॥ न्नव बहुला कीधा प्रमादें ॥६॥ अनंत पुद्गल परावर्त्तन कीधां ॥ मोहादिकें रोकी ङुख दीधां ॥ गतागतें लही बाधा जेह ॥ ज्ञानी विना कुण जाणे तेह ॥ ७ ॥ वली कर्मे कांइक तक साधी ॥ गर्न्नज मनुज तणी गति वाधी ॥ अनारजदेशें लहि अवतार्यो ॥ तव मोहादिकें एम विचार्यो ॥ ८ ॥ हा हा इणे अहो सहि हणिया ॥ आपणने लेखे नवि गणिआ ॥ अहो अहो कर्म परिणामें उदेरी ॥ घणी न्नूमि आण्यो ए वेरी ॥ ए ॥ तव रसगृद्धि प्रवृत्ति ए नामें ॥ मुख मरडी बोली ते गामें ॥ अम अबलानुं न्नुउं बल सामी, सबलाने पण नाखुं दामी ॥ १० ॥ तो प्रन्नु आगल कहो ए शे ले खे ॥ आण तुमारी कुण उवेखे ॥ आदेश जो अमने आपे देव ॥ तो गले झाली एहने ततखेव ॥ ११ ॥ तुमचरणे लावुं तहकीक ॥ वचन अमारां ए मानजो ठीक ॥ उदय रत्न कहे तेरमी ढालें ॥ धन्य जे न पडे मोहनी जालें ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव मोह नृप मुखें बोलिउ, कलट आणी कर ॥ अहो अमारा सैन्यमां, स्त्री पण एहवी शूर ॥ १ ॥ इम कहि आपी आगना, वेगें घेरो जइ तेह ॥ हुं पण तुम पूंठें लगो, आवुं छुं दल लेह ॥ २ ॥ प्रन्नु आणायें त्यां जई, रस गृद्धियें दीन ॥ रसनो ते रागी कर्यो ॥ मदिरामांस तल्लीन ॥ ३ ॥ प्रवृत्तियें जई प्रेरिउ ॥ जननी न्नगिनी साथ ॥ अगम्यगमन उलट न्नरे, कराव्युं दिन रात ॥ ४ ॥ नरक गतें वली नाखीउ, तरत लेइने तेह ॥ मठ एकेंडीमां फरी, रोक्यो काल अठेह ॥ ५ ॥ पुद्गल परावर्त्यां तिहां, आपद न्नरे अनंत ॥ विपदा वेरी जे वली, ते लहे तेहज जंत ॥६॥

॥ ढाल चौदमी ॥

॥ नदी यमुनाके तीर उडे दो पंखियां ॥ ए देशी ॥ अनारज देश मझार ते, कर्मे आणिउ ॥ मातंगना कुलमांहि, ते मोहें जाणिउ ॥ १ ॥ घाल्यो नरक मझार, वलि नरन्नव दीउ ॥ तव महालड जात्यंध, ते मोह नृपें

कीधो ॥ २ ॥ किहां एक पाषाणरूप, विरूप वली कस्यो ॥ एकेंडियादिकमां हे के. भवभव ले भम्यो ॥ ३ ॥ रोक्यो केतो काल, वलि कर्मे रली ॥ आप्यो नर अवतार के, अवसर अटकली ॥ ४ ॥ दरसनावर्णे ताम के, जाति बधिर पणुं ॥ आपी कस्यो पत्थररूप के. डुःख देवा घणुं ॥ ५ ॥ तिमज फेरव्यो तेह के, पहेलो जिम कह्यो ॥ क्यां एक पंगु मूक के, कुब्जपणो लह्यो ॥ ६ ॥ क्लीब कांणो कुरूप के, दासपणो धरी ॥ वसक रि वार अनंत के. फेरव्यो फरि फरी ॥ ७ ॥ अनंता पुजल एम, परावर्त्तन कस्या ॥ गण्या ते न गणायके, फेरा जे फस्या ॥ ८ ॥ कर्म परिणामें ते व ली, मनुजगतें तस्यो ॥ निजचर मोकली मोहें, तिहां पण परजल्यो ॥ ए ॥ डुष्ट चरें ते किहां एक, कुष्टी महोदरी ॥ वायुरोगी पित्तवानके, गु ल्मी जगंदरी ॥ १० ॥ कंठ ने कर्ण कपाल, तालु आदे घणा ॥ उपाया महा रोग, जिहां डुःखनी नहिं मणा ॥ ११ ॥ ताव पीहो अतिसार, द सन रसना गदें ॥ अधर ग्रीवा आंख रोगें ते, पीड्यो [illegible] दें ॥ १२ ॥ कपोल रोगी वंध कुष्टीके, शिर रोगी कस्यो ॥ [illegible] शूल सूलके, श्वा स रोगें नस्यो ॥ १३ ॥ अरुचि प्रमेह खीन रो[illegible], [illegible]दे महा गद नरें ॥ पीड्यो पाडे मुख रीवके, विलवे बहु परें ॥ १४ ॥ चौदमी ढालें तेह, ज णयो मोहने जणें ॥ उदय वदे महा दीन ते, वेख्यो गद घणें ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जाण्यां अजाण्यां आचरे, औषध अनेक उपाय ॥ जिम तिम जे ते ना कह्या, चूकी काय बनाय ॥ १ ॥ अनक्ष अपेय ते आदस्यां, मंत्र तंत्र बलिदान ॥ शरीर काज शंका तजी, पाप कस्यां असमान ॥ २ ॥ पाप ज नें पामी प्रगट, नरक नरहारी जंत ॥ एकेंडियादिकमां कपनो. इम ते वा र अनंत ॥ ३ ॥ मानव नव वलि एकदा. पाम्यो कर्म पसाय ॥ नव मन मांहे कोपिउं, मोहराय तिण ठाय ॥ ४ ॥ सर्व गाथा ॥ २४८ ॥

॥ ढाल पंदरमी ॥

॥ सोनारी नणी ॥ ए देशी ॥ राजा किहां एक मोह नरिंदें. दंभ नाच न[illegible] करयो ॥ सांई साधु जणि ॥ किहां रे आहेडी अति क्रूर, किहां रे कसाय [illegible] भयो ॥ सां० ॥ १ ॥ किहां रे धीवर किहां रे चंमाल. किहां रे मांसाहारी घणां ॥ सां० ॥ किहां एक मद्यपानी मतवाल. किहां एक

मंसा हिंसकपणुं ॥ सो० ॥ २ ॥ किहां खात्रपाडो खरो डुष्ट, किहां एक साधु घाती किउं ॥ सो० ॥ किहांएक कान त्रोडो कुलहीण, किहांएक दासपणो दिउं ॥ सो० ॥ ३ ॥ किहांएक धूर्त ठग धर्महीण, धाडपाडो परधन हरो ॥ सो० ॥ कूडा घाटतणो घडनार, जनवंचक जोडागरो ॥ सो० ॥ ४ ॥ किहांएक बांद जलो कोटवाल, गुप्ति पालक मंत्रीसरू ॥ देश नगरना देइ अधिकार, खर कर्मनो कस्यो आगरू ॥ सो० ॥ ५ ॥ किहांएक नेल सने लमां नेलि, तेल इक्षु पीलाविने ॥ सो० ॥ मदिरा मांस वेचावी क्यांइ, किहांएक शस्त्र घडाविने ॥ सो० ॥ ६ ॥ लोह लाख अने रस केस, हल मूसल ऊखलतणा ॥ सो० ॥ सोंप्या बहु सावद्य व्यापार, घरटी आदि अति घणा ॥ सो० ॥ ७ ॥ वली सोंपी अधम अनेक, कुटुंब काजे आजीविका ॥ सो० ॥ इम हिंसा करावी अनंत, डुर्गतिनी जे दीपिका ॥ सो० ॥ ८ ॥ एकेंडियादिकमांहि, वास्यो तेहने वली वली ॥ सो० ॥ अनंतां पुजल एम, परावर्त्तन कीधां वली ॥ सो० ॥ ए ॥ इम मानव गति पुरमांहि, प्राणी ते पावो फरी फरी ॥ सो० ॥ आव्यो त्यां अनंती वार, अवतार बहुला करी करी ॥ सो० ॥ १० ॥ उदय रत्न कहे इणि नांति, पनरमी ढालें प्रेम सूं ॥ सो० ॥ कथा ए सुणवा कान, नितप्रते आवजो नेमसूं ॥ सो० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ मोह राजा हवे अन्यदा, मेली निज समुदाय ॥ मनसूं आलोची मुदा, इम बोल्यो तिणि ठाय ॥ १ ॥ असंव्यवहार पुर आदिथी, मांमी अद्य पर्यंत ॥ एसंसारी साथें नम्यो, मुज आदेशें तंत ॥ २ ॥ मिथ्या दर्शन महा सुनट, सेवक तेहना शूर ॥ ज्ञानावर्ण अज्ञान वे, नडवाव जेहनो नूर ॥ ३ ॥ ए त्रणेना प्रनावथी, देव धर्म गुरु नाम ॥ कानें पण क्यारे नवि सुण्युं, नमतां तिण कोइ ठाम ॥ ४ ॥ लोक नापित पण नवि लह्यो, केवल गमायो काल ॥ आहार निज्ञ मैथुन वसें, अवर जाण्युं सर्व आल ॥ ५ ॥ हवे सुणिएंठे एहवो, कनक पुरें कर्म राय ॥ अमरशेठ घरें अंगना, नंदा नाम कहेवाय ॥ ६ ॥ तेहनी कुखें उपजावशे, पुत्र पणें पुर तेह ॥ कांइक धर्म वासित अछे, तिण मुज चिंता एह ॥ ७ ॥ रखे पामे ते धर्मने, धर्मी लोक प्रसंग ॥ अधर्मी पण लहे धर्मने, वसतां धर्मी संग ॥ ८ ॥

॥ ढाल सोलमी ॥

॥ जरमर वरशे मेह हो राजा परनाले पाणी पडे महारा लाल ॥ ए देशी ॥ मिथ्या दर्शन नामें हो राजा, मंत्रीसर इम सांजली, महारा लाल ॥ ताली दे अज्ञानने हाथ ॥ हो० ॥ मुखें तव बोल्यो मन रली ॥ मा० ॥ १ ॥ अहो भलुं थयुं एह ॥ हो० ॥ घी ढल्युं खीचडी कपरे ॥ मा० ॥ आण न लोपे कोई ॥ हो० ॥ मेव ते अमरतणो घरें ॥ मा० ॥ २ ॥ माथे लई ते मारे ॥ हो० ॥ काम ए में करवूं सही ॥ मा० ॥ इम करतां जो कांइ ॥ हो० ॥ मुझथी निपजशे नहीं ॥ मा० ॥ ३ ॥ तो अनंत तमारे थो थ ॥ हो० ॥ एक एकथी बलिया घणुं ॥ मा० ॥ ससयक आदी गेह ॥ हो० ॥ अद्भुत दल अवलालणुं ॥ मा० ॥ ४ ॥ तेहवो हुं नहि बलवान ॥ हो० ॥ जेहवुं बल डे एहनुं ॥ मा० ॥ पग पग पाडे वाट ॥ हो० ॥ सुह नवि राखे केहनुं ॥ मा० ॥ ५ ॥ स्वामी वडे संसार ॥ हो० ॥ अथवा बल दाखे सहु ॥ मा० ॥ तो माहारां वखाण ॥ हो० ॥ इये कारणे बोल्यो ब हु ॥ मा० ॥ ६ ॥ तेहवे तिहां तरुणी एक ॥ हो० ॥ चिंतव्या मोह मंम पतलें ॥ मा० ॥ क्रीवडां करती कल्लोल ॥ हो० ॥ चेगी ले बाहेर चालतें ॥ मा० ॥ ७ ॥ ते मंत्रीना सुणि बोल ॥ हो० ॥ अट्टहासे ते हसी ॥ मा० ॥ क्रीव करे तनकाल ॥ हो० ॥ ताली लेईने उलसी ॥ मा० ॥ ८ ॥ तव विस्मित मोह नरिंद ॥ हो० ॥ कही आव्यो बाहिरें ॥ मा० ॥ निद्रा विपर्यय सहुह आसने ॥ हो० ॥ बेसी बोल्यो इणि परें ॥ मा० ॥ ९ ॥ कहे नस्थे तुं केम, हे नइ ॥ ए क्रीव आगें रमी इहां ॥ मा० ॥ नव प्र णमी तसु पाय ॥ हो० ॥ तरुणी ते बोली तिहां ॥ मा० ॥ १० ॥ देवा नहुने कृसर ॥ हो० ॥ जालम हुं बुं योगिणी ॥ मा० ॥ बालकांना पाडुं वियोग ॥ हो० ॥ हुं आपदा इष्ट वियोजनी ॥ मा० ॥ ११ ॥ ए मनगमना में महा योध ॥ हो० ॥ पंमक पराक्रमनो धणी ॥ मा० ॥ गणे त्रिभुवननें तृण मात्र ॥ हो० ॥ सुभट मुगट शिरोमणी ॥ मा० ॥ १२ ॥ इंद्रादिक माने आण ॥ हो० ॥ अतंभ्य आतम एहनुं ॥ मा० ॥ थिरता ने गरजें पाट ॥ हो० ॥ जगव्यापक बल जेहनुं ॥ मा० ॥ १३ ॥ तन बाल वृद्ध यु वान ॥ हो० ॥ डेलमें एहनें सहु ॥ मा० ॥ प्रभु प्रमानें गर ॥ हो० ॥ बल पराने ते बहु ॥ मा० ॥ १४ ॥ उदय ग्नल कहे एम ॥ हो श्रोता ॥

सोलमी ढालमांहे सुणो ॥ मा० ॥ यमने जीते जेह ॥ हो० ॥ जालिम जोर तेहनुं गणो ॥ मा० ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ प्रनु तुम बंधु कनक पुरें, अमरशेठने गेह ॥ लइ नंदा कूखें धस्यो, सत्व संसारी तेह ॥१॥ ब महिना वोल्या जिश्ये, तव लहि तुम अनिप्राय ॥ मरण सहायनी हुं तिहां, ततखिण पहोती जाय ॥ २ ॥ तुरत तात तेह नो हस्यो, जननी जणतां खेव ॥ शेष कुटंब सर्व संहस्युं, तुम पसायें देव ॥ ३ ॥ तव मरणें आवी तिहां, ते पण लीधो ताणि ॥ कुलमां कोइ न ऊगस्युं, नाम रह्युं निर्वाण ॥ ४ ॥ एकेंड्रियादिकमांहि वलि, कंमो धस्यो अथाग ॥ पुजल अनंत परावर्त्तशे, तव ते लहेशे ताग ॥५॥ मिथ्या दर्शन महत्तम, मंत्री मुखनी वाणि ॥ सांनलिने स्वामी अमे, हस्यां वने ते गणि ॥६॥

॥ ढाल सत्तरमी ॥

॥ सुंदर हे सुंदर वालुं दक्षणरी चाकरी ॥ ए देशी ॥ राजन हो राजन, मोह राजा मन वसि रह्यो ॥ खिजमतकारी ते खंत ॥ रा० ॥ पराक्रम ते हनां सांनली, उपनो हर्ष अत्यंत ॥ रा० ॥ मो० ॥१॥ रा०॥ तव प्रेमें अवलोकिने, करश्युं फरसी देह ॥ रा०॥ आग्रह नामें खवासने, कहे मोह राजा तेह ॥ रा० ॥ मो० ॥ २ ॥ सेवक हो सेवक, जो जो महारा सैन्यमां, पंमकनुं पण जोर ॥ रा० ॥ त्रण भुवनमांहे एकलो, जेह पडावे शोर ॥ रा० ॥ मो० ॥ ३ ॥ रा०॥ मरणमुखें तव बोलिउं, एहवुं म कहो स्वामि ॥ रा० ॥ प्रतापते प्रनुनो सही, जे सेवक साधे काम ॥ रा० ॥ मो० ॥ ४ ॥ यतः ॥ सिध्यंति मंदमतयोऽपि यदत्रकार्यं, संनावनागुणमवेहि तमीश्वराणां ॥ नियात्सपंगुररुणोऽपिकथं तमांसि, सूर्योरथस्य धुरि तं यदिनाऽकरिष्यत् ॥ १ ॥ मोह राजा वलतो वदे, वत्स सांनल कहुं वात ॥ से० ॥ जो तो चोपें ते जीवने, रहिजे तुं दिन रात ॥ से० ॥ मो० ॥ ५ ॥ मानव गति पुरिमां किहां, जोते आवे जीव ॥ से० ॥ तो उववा पण तेहने, रखे देतो लुणि रीव ॥ से० ॥ मो०॥ ६ ॥ से०॥ धर्म अकुर जिम नवि धारे, तिम उनमूली तास ॥ से० ॥ ततखिण पाछो वालि ने, आणजे आपणें वास ॥ से० ॥ मो० ॥ ७ ॥ आण प्रमाण करी सवें, उठ्या न करी जेडि ॥ से० ॥ मरणादिकें मन मोदश्युं, कीधी जेहनी केडि ॥ से० ॥ मो०॥८॥से०॥ कर्मप

रिणामें ते आणिउं, कुलटा नारिनी कूंख ॥ रा० ॥ दुष्टौपध पानादिकें, गर्भ थी घाल्यो दुःख ॥ रा० ॥ मो० ॥ए॥रा०॥ वलि एकेंडियादिकमां फरी, तेम ज राख्यो नेट ॥ रा०॥ वलि कर्मे काढी धस्यो, प्रथम गर्भनी त्रिय पेट ॥ रा० ॥मो०॥ १ ०॥रा०॥ त्यां पण योनिना यंत्रमां, पीडाणो ते प्राणि ॥ रा०॥ ज णतां जननी सहित ते, मरणें लीधो ताणि ॥ रा०॥ मो०॥ ११॥रा०॥ वलि एकेंडियादिकमां धस्यो, अहो अनंतो काल ॥ रा० ॥ इम किहां इक वर्षनो, किहां बे वरपनो बाल ॥ रा०॥ मो० ॥ १२॥ रा०॥ वलि किहांएक त्रण वर्ष नो, एम अनंतीवार ॥ रा० ॥ मरणें ते लीधो हरी, न लह्यो धर्म विचार ॥ रा० ॥ मो० ॥ १३॥ रा०॥ एम एकेंडियादिकमां तेहने, वाम्यो वार अनंत ॥ रा०॥ पुजल परावर्त्यां घणां, जेहनो नावे अंत ॥रा०॥ मो० ॥ १४॥ रा० ॥ सतरमी ढालें सांजलो, इम वदे उदयरतन्न ॥ रा० ॥ नरनव पामी निर्म लो, करजो जीव यतन्न ॥ रा० ॥ मो० ॥ १५ ॥ सर्वगाथा ॥ ३०१ ॥

॥ दोहा ॥

॥ श्री निलय नामे नगर, मानव क्षेत्र मजार ॥ तिहां धन तिलक श्रेष्ठि वसे, धनवति तस घर नार ॥ १ ॥ कर्म परिणामें अन्यदा, जीव संसारी तेह ॥ तसु उदरें अवतारीउं, लघु लाघव कले लेह ॥ २ ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रिने, मोह लही ते तंत ॥ व्यापे जय पामी मने, आतुर थइ अत्यंत ॥३॥

॥ ढाल अढारमी ॥

॥ आवे लालनी देशी ॥ नीचां नमावी नयण, वदनें न वदे वयण ॥ आवे लाल ॥ क्षण एक मनसुं आलोचिने ॥ शिर धुणी तेणि वार, मुख मेली हुंकार ॥आ०॥ सचिव कहे ते शोचिने ॥१॥ मन मान्या महाराज, करशुं सघलां काज ॥ आ० ॥ मुऊ सवलुं कुल तेह अबे, आज लगें प्रभु कांइ, वीरीयें वाम्यित नांहि ॥ आ० ॥ में पण मगन कर्युं न वे ॥ २ ॥ आ ज थकी ने माट ॥ विशेषे आणीसुं वाट ॥ आ० ॥ चिंता शी ए वातनी, न जाणी तुम नाक. किहां ए जाशे रांक ॥ आ० ॥ नजर अमोघ ने नाथ नी ॥ ३ ॥ अल्प कालें ए वात, गले काली गज्जात ॥ आ०॥ आणीसुं आ पणो घरें ॥ पण पांशीन आम, बीहुं छवी सलधाम ॥आ०॥ मंत्री जई निज मंदिरें ॥ ४ ॥ बेठो चिंतामगन, लागी जोर लगन ॥ आ० ॥ कपाल थापी करें ॥ सचनी जिमणो हाथ, गणतो थको मन साथ ॥ आ० ॥ आ

लोचें अरति भरें ॥ ५ ॥ कुदृष्टि नामें तस नार, पेखी कहे तिणिवार ॥ आ० ॥ कुण जगमां युवती इशी ॥ जेहने काजें धरि राग, अरति करो बो अथाग ॥ आ० ॥ कुण तुम कालजमां वशी ॥ ६ ॥ रूप पुरंदर स्वामि, यु वती जन विश्राम ॥ आ० ॥ मोहन मुनें कहोने खरुं ॥ कुण एहवी गुण वान, नारी रूप निधान ॥ आ० ॥ जेणें मन प्रजुनुं हर्युं ॥७॥ तव ते कहे गुण खाण, हसतां पण ए वाण ॥ सुण वाम ॥ कहेवी सही न घटे तुने ॥ जे तुज विण बीजी नार ॥ सूतां सुपन मझार ॥ आ० ॥ दीठी पण न गमे मुने ॥ ८ ॥ कोइक कार्य विशेष, चिंता वर्त्ते बे एष ॥ आ० ॥ तवसा भम री उल्लालीने ॥ कहेवुं स्वामी शुं काम, एहवुं बे उद्दाम ॥ आ० ॥ जिणे रा ख्युं बे चित पालीने ॥ ए ॥ लीलामां त्रिजुवन देव, वश करो ततखेव ॥ आ० ॥ समरथनें चिंता किशी ॥ कहेवा योग्य जो होय, तो कहो मुज आ गले सोय ॥ आ० ॥ चिंता जे चित्तमां वसी ॥ १० ॥ सुण सुजगे में कांइ, आजलगें मनमांहि ॥ सुणो वाम ॥ कपट किश्यो नवि राखिउं ॥ मुज घर नो कारजार, तुजहाथें निरधार ॥ आ० ॥ एशुं आज तें जाखिउं ॥११॥ उ दयरतन कहे एम,सुणो श्रोता धरि प्रेम ॥ सुख कामें,आगमने जे अन्यसे ॥ अढारमी ढाले तेह, नवनो उद्देशे बेह ॥ सु० ॥ मन मान्युं तेहनुं यशे ॥१२॥

॥ दोहा ॥

॥ चिंतानुं कारण हवे, सुण मन राखी ठाय ॥ कर्म परिणामें धर्मने, काजें एक सखाय ॥ १ ॥ अव्ययपुरथी ऊथरी, ऊंचो आव्यो तेह ॥ सांप्रत श्री निलय पुरे, धन तिलक श्रेष्ठी गेह ॥ २ ॥ धनवंती कुखें धर्यो, जीव संसारी सोय ॥ जिम जिम ते वाधे तिहां, तिम इहां चिंता होय ॥ ३ ॥ प्रतिज्ञा प्रजु आगले, पण पांकी ते काज ॥ में कीधी बे मजलसे, अहो अ वले सुण आज ॥ ४ ॥ तें पण तेह सुणी हशे, कठिण अबे ए काज ॥ इ तर लोकतणी परें, अफल न होय अवाज ॥ ५ ॥ सर्वगाथा ॥ ३२१ ॥

॥ ढाल उंगणीशमी ॥

॥ गढ बुंदि हो वाला ॥ एहनी देशी ॥ चारित्र धर्म नृप बे चावो, संग्रा मे महा सूरो हो ॥ प्रिये पंकजनयणी, सुजगे सुण शशिवदना ॥ कर्म प रिणाम राजाने काने, ते लागो बे पुरो हो ॥ प्रि० ॥ १ ॥ मोह राजानी माजा मुकीने, कर्म करे बे पासुं हो ॥ प्रि० ॥ आग उठे बे तिणे निजघर

मां. लोक करे ने हांसुं हो ॥प्रि०॥२॥ आजलगें तो कुशलपणे ते,मे पूरण नथि पास्युं हो ॥ प्रि० ॥ फेरव्युं पण न फरे अमारुं, वेरीएं जे वाह्युं हो ॥ प्रि० ॥३॥ निपुण अछे शत्रु ए सघला, मुज मतनिमां जेवा हो ॥ प्रि० ॥ ए अम वासित जनना मनने, समरथ छे भांजेवा हो ॥ प्रि० ॥४॥ सम्यक् दर्शन नामें सहि माहरो, विशेष अछे ते वेरी हो ॥ प्रि० ॥ धर्मबुद्धि नामें ने धूया, तेहने गुणनी लहेरी हो ॥ प्रि० ॥ ५ ॥ सुरपति सरिखा सेवे जेहने, चक्री जेहने चाहे हो ॥ प्रि० ॥ मगन थईने रहे मुनि मनमां, अवनीपति आराहे हो ॥ प्रि० ॥ ६ ॥ सुधी जन जेहनी संगति इछे, ध्यानी जेहने ध्याये हो ॥ प्रि० ॥ उत्तम जन अंगीकरे जेहने, जे अमरने मोह उपाये हो ॥ प्रि० ॥ ७ ॥ सकल सौभाग्य रूप सुधीनी, तरंगिणी ते राजे हो ॥ प्रि० ॥ तापस पण तेडे सहु तेहने, छवी अनोपम छाजे हो ॥ प्रि० ॥ ८ ॥ वश्य करवा चाहे तेह पासें, प्रथम एहने प्रेखे हो ॥ प्रि०॥ अम वासित देखी जन एहने, अमने न गणे लेखे हो ॥ प्रि० ॥ ९ ॥ अम स्वामीना भक्त जे पूरा, जे रहे चरणें विलगा हो ॥ प्रि० ॥ ततखिण तेहना मन एह भांजी, अमथी करे ते अलगा हो ॥ प्रि० ॥१०॥ उत्तम कुलनी उपनी अबला, जे अदभूत रूपाली हो ॥प्रि०॥ आशक थया जेह नर एहना, ते मेले तेहने टाली हो ॥ प्रि० ॥ ११ ॥ उपदेशें जे एहने लागे, तेहने संग बीजो न सुहाय हो ॥ प्रि० ॥ एहनी पूठें भमतो हींडे, निविड स्नेही थाय हो ॥ प्रि० ॥ १२ ॥ सार करीने माने तेहने, नेहनुं पासुं ताणी हो ॥ प्रि० ॥ संसार सघलो तेहमें देखी, अमने वेरी जाणी हो ॥ प्रि० ॥ १३ ॥ पक्ष अमारो एह समूलो, उनमूले इम जाणो हो ॥ प्रि० ॥ चिंतातुर हुं छुं ते माटे, अवर न गांसो आणो हो ॥ प्रि० ॥ १४ ॥ उंमरणी गर्भी हालें एम बोले, उदय रतन एकताने हो ॥ प्रि० ॥ नविजन भावें न स्वर थाजो, जिन वाणी सुणवाने हो ॥ प्रि०॥ १५ ॥ सर्व गाथा ॥३३५॥

॥ दोहा ॥

॥ नव सा कांइक मन हर्षी, कुदृष्टि कहे सुणो कंत ॥ वणिकपरें ए नुसने, नयनी लागे भ्रंत ॥ १ ॥ अर्कपत्र जिम दुग्धथी, शशि ज्योति ना शान ॥ थाय रणी जाने प्रभु, शस्त्र गुनमनी गान ॥ २ ॥ तिम लागे ते सुगने, अहनो जग अनंत ॥ नव कल्पित कायर परें, अग नहि अंकित

॥३॥ जीवन जेह तुमें कह्यो, कर्म करे ठे पक्ष ॥ स्वामी ते साचूं सही, व लिउं एह अलक्ष ॥ ४ ॥ अंगीकृतने ऊधरे, ते जाणो तहकीक ॥ पण केव ल केहनी नथी, वात कहूं हूं ठीक ॥ ५ ॥ असंग्र अठे ए आपणो, रिपु पखे ठे रेख ॥ दाक्षिण लगे तेहने मिले, आपणा कुलनो एख ॥ ६ ॥ वे रि अठे ते एहना, आपण एहनी बांह ॥ जे जेहना ते तेहना, आखर हुए ज्वांह ॥ ७ ॥ ते संसारी जीवने, आज लगें एकंत ॥ रोकी डुःख दी धां घणां, जेहनो नावे अंत ॥ ८ ॥ मध्यम वर्त्ति त्यां जाणजो, राजा क र्म परिणाम ॥ एह विना तुमे तेहने, डुःख किम देइ शको स्वाम ॥ए॥ नि ज घर वाहालूं सहूने, पाणी पाणीनी वाट ॥ आखर जातां ऊतरें, नवो न शोन्ने घाट ॥ १० ॥ सर्व गाथा ॥ ३४६ ॥

॥ ढाल वीशमी ॥

॥ वात म काढो व्रततणी, ए देशी ॥ वाहाला सुणो वलि वीनती, एहवुं कह्युं तुमे जेहरे ॥ वेरी निपुण ठे वासवा, हुं नवि मानुं तेहरे ॥ वा०॥ १॥ जो ते निपुण अति ठे एहवा, तो काल अनादिना फरतारे ॥ एक निगो दना जीवने, वश्य कहो कां नथि करतारे ॥ वा० ॥ २ ॥ एक निगोदें जंतु जेता, तेहने अनंतमे ज्ञागें रे ॥ एणें कीधा आपणा, काल अनंते लागेंरे ॥ वा० ॥३॥ वाकी अनुचर तुमतणा, त्रिज्ञुवन पूरियुं तेणेंरे ॥ अनंत जंतु गण जेहनी, संख्या न थाए केणेंरे ॥ वा० ॥ ४ ॥ चोराशी लक्ष चोवटे, नृत्य अनंतां थायरे ॥ जुउ तुमारा राज्यमां, नाटक चाल्यां जायरे ॥ वा० ॥ ५ ॥ तो निपुणपणुं पण तेहनुं, इये कामें आव्युं रोपेरे ॥ चांच वोले जो चरकली, तो सायर जल शुं शोपे रे ॥ वा० ॥ ६ ॥ जेह वली तुमें क ह्यो, धर्म बुद्धि तस वेटीरे ॥ इंडादिकने सेव्य ठे, सौज्ञाग्य गुणनी पेटीरे ॥ वा० ॥ ७ ॥ सापनी ज्ञातें शींदरुं, देखी जिम कोइ वीहेरे ॥ तिम तुम ने प्रज्ञु तेहनी, ज्ञांति वशी ठे हिएरे ॥ वा० ॥ ८ ॥ घोडाचड जिम कोइ क घणुं, तस्कर देखी त्रासेरे ॥ वीहिकें निज बल नवि लहे, सांसे पड्यो नवि नासेरे ॥ वा० ॥ए॥ तिम प्रज्ञु तुमे ठते वले, शाने पड्याठो सांसेरे ॥ जालिम मोह राजातणो, हाथो ठे तुम वांसेरे ॥ वा० ॥ १० ॥ आपणे पण पुत्री अठे, धर्म बुद्धि इणि नामेंरे ॥ तेहने पगसुं ठेसी परी, त्रिज्ञुवन जेहने कामेंरे ॥ वा० ॥ ११ ॥ ते सम्यक् दर्शननी सुता, मुज पुत्रीनी ज्ञी

कैंरे ॥ गमन करे आप गोपवि, नीर जिम चाले नीकैंरे ॥ वा० ॥१२॥ जे आपणी तनयायें तज्या, वक्र अनें बहु वादीरे ॥ जे चर्चकने शक नथा. ते नर एहना स्वादीरे ॥ वा० ॥ १३ ॥ ते रांकडीने मुज आगलें, शुं दाखो गो दीदारुरे ॥ उदय रत्न कवियें कही, वीशमी ढाल ए वारुरे ॥ वा० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वलि स्वामी शुं कहुं घणुं, जो पामो प्रज्ञुनीत ॥ तो मुजने तिहां मो कलो, जिम जइने करुं जीत ॥ १ ॥ गले जालिने गेरसुं, तुम डुहितानो करि दास ॥ ते संसारी जीवने, आणुं तुमारे पास ॥ २ ॥ प्रीतम हुं प्री बुंअहुं, इम मूकीने लाज ॥ न घटे बोलवुं नारिने, विनयशुं जेहने काज ॥ ३ ॥ आरत अलगी टालवा, जे जे कह्या जबाप ॥ महेर करी ते माह रो, अविनय करजो माफ ॥ ४ ॥ सर्व गाथा ॥ ३६४ ॥

॥ ढाल एकवीशमी ॥

॥ सुग्यानी पास जिणंदावे, ए देशी ॥ सब सुख दायक सुंदरि, तूं मुज प्राणाधार ॥ आज में तुजने पारखी, मारा घरनो तुं शणगार ॥ सुग्या नी सुण सुखकंदावे. भुवने में तुज वंदावे ॥ १ ॥ मिथ्यादर्शन मंत्री हसी नव, बोले एहवा बोल ॥ प्रिये महिला प्रधान ते. सहि गखवा घरनो तोल ॥ स० ॥ २ ॥ मोह राजाना राज्यमां सघले. राजे एहवी रीत ॥ मरद महिला पूठें चले, परिघल दाखंतो प्रीत ॥ स० ॥ ३ ॥ ते माटे अति सुंदर दाख्यां, सुंदर तें ए भेद ॥ तिहां जाइने प्रिया तुमे, अरिने नाखजो उनेद ॥ स० ॥ ४ ॥ इम सुणि मा अबला बोली. नाथ ए घटतुं नांहि ॥ पण होय जिहां तुमतणो, मारुं बल चाले त्यांहि ॥ सुज्ञानी लाहेव मेंग ये ॥ स० ॥ ५ ॥ मोकल निण गलुं सुं मारुं, ते माटे सुणो स्वामि ॥ तुमे पण तिहां आवजुं, आपण मांत्रियें एकठामि ॥ स० ॥ ६ ॥ पावें रह्या अमें गलशुं, तूं तिहां करजे फेलाव ॥ कलत्र सुताणुं संचर्यो, इम मंत्री ने भाग्य बनाव ॥ स० ॥ ७ ॥ मोह नृपें वली केटली मेल्या, आपद व्य सनने लोन ॥ ज्ञानांतरायादिक वली, जे जगने पमाडे क्षोभ ॥ सु ज्ञा नी सुणो मोनारग्ने ॥ स० ॥ ८ ॥ उदय वदे एकवीशमी ढालें, जगने वश या तेय ॥ मोह सम को मोटो नहीं, जेहनी आण फरे चोफेर ॥ स० ॥९॥

॥ दोहा ॥

॥ हवे ते श्रीनिजयपुरें, धन तिलक शेठ धाम ॥ जायायें सुत जनमि उ, वैश्रमण धखुं तस नाम ॥ १ ॥ अनुक्रमें यौवन आविउ, करतां कला अन्यास ॥ तव निज अवसर उलखी, धन तृष्णायें तास ॥ २ ॥ आलिं ग्यो कलट नरें, गाढालिंगन देह ॥ अनिलाष तव तसु कह्यो, लागो ते हसुं नेह ॥ ३ ॥ तव सा प्रेरे तेहने, जो मुजसुं बहु प्यार ॥ तो धन काजें धाइने, विविध करो व्यापार ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ३७७ ॥

॥ ढाल बावीशमी ॥

॥ बिंदलीनी देशीमां ढाल छे ॥ वसन सोवन मणि केरां, व्यापार करो नलेरा हो ॥ तृष्णा कहे तेहने ॥ कण कस्तुरी कपास, विणजो जिम पो चे आस हो ॥ तृष्णा कहे तेहने ॥१॥ लोह फोफलने गली लाख, वोरो जिम फले अनिलाष हो ॥ तृ० ॥ वाणोतर चलवो विदेशें, वाणना करो वणिज विशेषे हो ॥ तृ० ॥ २ ॥ नरी नांफसुं गाडी नूरे, देशावरे जाउ दूरे हो ॥ तृ० ॥ वलि वाहो कंटने पोठी, बंदरप्रतें घालो कोठी हो ॥तृ०॥३॥ मांफवी लिउ दाण वोलावी, लक्ष्मी जिम रहे घर आवी हो ॥ तृ० ॥ लिउ गाम नगर इजारे, थाउ कोटीध्वज सकरारे हो ॥ तृ० ॥ ४ ॥ करो खेतीने पशु पालो, जिम दरीद नरे उचालो हो ॥ तृ० ॥ खणो खाणने धातुवाद, अन्यसो धरीने आल्हाद हो ॥ तृ० ॥ ५ ॥ रस विद्य प्रवेश अ न्यासो, करी घरने नाडुत वासो हो ॥ तृ० ॥ कारमां करीआणां कर वा, शीखो वली कपट आदरवा हो ॥ तृ० ॥ ६ ॥ एहवा सुणिने उपदे श, उल्लसिउ तेह विशेष हो ॥ तृष्णाए प्रेख्यो ॥ तव तेहने कहे ते वा रू, उपदेश दीधो सुख कारू हो ॥ तृ० ॥ ७ ॥ एह पाखें धननी रासि, किम आवे निज आवासि हो ॥ तृ० ॥ इम कहीने विणज ते सघला, मांफ्या मेली मन अगेला हो ॥ तृ० ॥ ८ ॥ बावीशमी ढाल ए बोली, खांतें जो जो दिल खोली हो ॥ तृ० ॥ उदय कहे आगम पाखे, डुर्गति पडतां कुण राखे हो ॥ तृ० ॥ ए॥ सर्वगाथा ॥ ३८६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवसर जाणी आपणो,तव त्यां लान्नांतराय ॥ धनस्थाने वश्यो धा इने, वैश्रमणना घरमांय ॥१॥ तव तेहना परन्नावथी, कांणी कोडी मात्र ॥

लाभ न थाये हाटमां, तस्कर पाडे खात्र ॥ २ ॥ चिंतातुर मन चिंतवे, तेह तेणे प्रस्ताव ॥ भाडुं भरीयें जेटलुं, तेती न मिले आव ॥ ३ ॥ भाटक मात्र जो ऊपजे, तो वलि चिंते तेह ॥ वाणोत्तरी सूजे नहीं, वणज खोटो सहि एह ॥ ४ ॥ तसु लाभें घर खरचनी, आरति करी अपार ॥ इम जो गोपभोगादिक बहु, विध विध धरे विचार ॥५॥ खोट आवे ते अहो खरी, मूलगि पूंजीमांहि ॥ नो कोटिध्वज किम थाइशूं, एम चिंतवे त्यांहि ॥६॥

॥ ढाल त्रेवीशमी ॥

॥ जाटणीनी देशी ॥ धनने काजें हो ते धातो फिरे, न गणे रातने दीह ॥ तृष्णाएं वाह्यो आरति भरें, न गणे भूख तृष बीह ॥ ध० ॥ १ ॥ गरथनी करतां गवेषणा, जिहां तिहां भमतां हो जोर ॥ एक दिन पुरुष एक भेटिउ, चंचल जातें ते चोर ॥ ध० ॥ २ ॥ विलोकावे ते वैश्रमणने, एकां तें तेडी आभर्ण ॥ शिर कंठने श्रवणादिकनां, जहवेर जडित पंचवर्ण ॥ ध० ॥ ३ ॥ इंगित आकारें उलख्यां, चोरीनां एह सूत्र ॥ धनतृष्णायें त व धाइने, प्रेख्यो सेठनो पुत्र ॥ ध० ॥ ४ ॥ होनारुं जे होयशे, निर्वहि लेशूं तेह ॥ दूध पीतां मांग वागशे, तो वागो ससनेह ॥ ध० ॥ ५ ॥ इम चिंती अलंकार ते, अल्प आपीने मूल ॥ ते पासेंथी लीधा तिणे, जो जो लोभनां शूल ॥ ध० ॥ ६ ॥ तस्कर ते गयो जेहवे, तेहवे राजचरें त्यांहि ॥ आवि वणिक ते बांधिउ, भूषणसहित उछांहि ॥ ध० ॥ ७ ॥ लइ गया लाठिएं हणी, विगोता जिहां वसुवेश ॥ भाखे ते जइ भूपने, जन त्यां जुवे आक्षेप ॥ ध० ॥ ८ ॥ प्रभुजी भूषण तुमतणां, लोभें लीधां एण ॥ पछे दाइया बांधिने, इहां आण्यो ए तेण ॥ ध० ॥ ९ ॥ भूप कहे निर्धे एहने हणो, तव जनकें महाजन्न ॥ मलीने मूकाविउ, आपीने बहु धन्न ॥ ध० ॥ १० ॥ धन पिपासा प्रेर्यो वली, पुरमां हाट प्रभूत ॥ मंमावी मन मोद सुं, उद्यम करे अदभूत ॥ ध० ॥ ११ ॥ लाभांतरायतणे उदे, लाभ न थाय लवलेश ॥ महा आपद पद पामिउ, पग पग पामे क्लेश ॥ ध० ॥ १२ ॥ प्रेर्यो प्रदेश चलाववा, धन तृष्णाएं ते धाय ॥ तव तातें ते मनें करी, अ न्य गोंपी गिरनाथ ॥ ध० ॥ १३ ॥ करियाणां बहु भांतिनां, गाडीयें भरी गेल ॥ चाल्यो तेह देशावरें, खेलवा नवो खेल ॥ ध० ॥ १४ ॥ उदयरतन

कहे आतमा, तुं त्रेवीशमी ढाल ॥ लालच मेलने लोभनी, जिम न पडे भवजाल ॥ ध० ॥ १५ ॥ सर्वगाथा ॥ ४०७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ महा अटविमां मारगें, भूलो पड्यो ते साथ ॥ तरशें खोले तोयने, जलनी न मले जात ॥ १ ॥ आशा तूटी आपनी, तव मिलित लोचन मुर्बाय ॥ जन सर्वे जगतीतलें, पड्या अचेतन थाय ॥ २ ॥ तिणे समे त्यां आवी पडी, महातस्करनी धाड ॥ सर्वस्व ते लूंटी गया, अटवी तेडी ज जाड ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ ४१० ॥

॥ ढाल चोवीशमी ॥

॥ शालिभद्र मोह्यो शिवरमणी रसें रे ॥ ए देशी ॥ भुवनभानु भांपे इम केवली रे, चंद्रमौलि महाराय ॥ सावधान थइने सुणजे तुं हवे रे, पातक जेम पलाय ॥ भु० ॥ १ ॥ कोइक कृपालु पंथियें ते समे रे, किहां एकथी जल आणि ॥ थोडुं थोडुं सघला साथने रे, पायुं परमारथ जाणि ॥भु०॥२॥ स्वस्थ थया तव तेणें पंथिएं रे, जलाशय जणाव्यो तास ॥ तिहां जइने सहु जल पिये गली रे, अंग पखाले उल्लास ॥ भु० ॥ ३ ॥ सज्ज थइने पंथसिरे सहु रे, आप तणी इछाएं ॥ संबल रहित तिहांथी संचस्या रे, जेहने पूरवे ज्यांएं ॥ भु० ॥ ४ ॥ वैश्रमण पण एक गामें जइ रे, तरस्यो भुख्यो तरुगांहि ॥ पड्यो पृथिवियें पग पसारीने रे, मूर्छित मारगमांहि ॥ भु० ॥ ५ ॥ दीन देखीने दया ऊपनी रे, कोइकने तिणि ठाम ॥ अन्नादिक ते आपे आणिने रे, चेतन आव्युं ताम ॥ भु० ॥ ६ ॥ वलि आगल मारगें चालतां रे, श्रांत थयो अत्यंत ॥ पहोर पहोरे पण पग नवि ऊपडे रे, ऊर ऊर लोहि ऊरंत ॥ भु०॥ ७ ॥ रहि रहि पडीने मुर्छाये वली रे, वलि विशोचे विरंग ॥ वैभववाहलां विरहें जूरतो रे, दीन थयो गति भंग ॥ भु० ॥ ८ ॥ गामो गामे भीख काजे भमे रे, तो पण न मले तेह ॥ अंतराय पापी आवी आडो पडे रे, दुर्बल थइ तिणें देह ॥ भु० ॥ ९ ॥ भमतो भमतो इम दुःख देखतो रे, पहोतो वेलाकुलें कोइ ॥ वाणोत्तर राख्यो वणिक लही किणें रे, कांइक सधन थयो सोइ ॥ भु० ॥ १० ॥ तृष्णाएं प्रेस्यो तव मांमे तिहां रे, विध विधना व्यवसाय ॥ लक्ष्मी लाखगमें लाधी तिणें रे, एक श्लोक सुण्यो कोइ ठाय ॥ भु० ॥ ११ ॥ यतः ॥ इक्षुक्षेत्रं

समुद्दश्च. योनिपोषणमेवच, प्रसादो भूभुजां चैव, सयोघ्नंति दरिद्रतां ॥१॥ उदय वदे चोवीशमी ढालमां रे, पांत पूरी नव तेह ॥ पयोधिमांहि ठ ग्गा प्रेरियो रे, चाल्यो धरि भूप अनेह ॥ भु० ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जलधिमां जातां थकां, घटा करी घन घोर ॥ अंबर मंमल उन्हयो, चमकि बीज चिहुं उर ॥ १ ॥ कल्पांतकाल तणी परें, पवन वाया प्रति कूल ॥ उदधि तव तिहां कलल्यो, जलधर प्रगटया स्थूल ॥ २ ॥ जल भो लाना जोरथी, नाव थयां शतखंम ॥ वैश्रमण तव पामिउ, फलक तणो एक खंम ॥ ३ ॥ चपल कल्लोलें जलचरें, आकुल थतो अपार ॥ तरंग त णा सुपसायथी, पाम्यो जलधी पार ॥ ४ ॥ सर्व गाथा ॥ ४२६ ॥

॥ ढाल पचीशमी ॥

॥ मालीकेरे बागमें दोय नारंग पकेरे लो अहो ॥दो०॥ ए देशी ॥ नाम पण निज देशनुं, न जणाए जे देशें लो, अहो न जणाए जे देशें लो ॥ रा जेसर सुण रसरागीरे लो, स्वजननी न जहे वारता ॥ पढ्यो तेह प्रदेशें लो ॥ अ० ॥ १ ॥ दुःखभरें तिहां रेहेतां थकां, रोगें तक साधी लो ॥ अ० ॥ दग्ध उपर फोटकपरें, वेदना बहु वाधी लो ॥ अ० ॥ २ ॥ ज्वर शिर रोगशूलादिकें, महारोगें पीड्यो लो ॥ अ० ॥ सूने देवकुलें सुए, ज्ञा वठें बहु चीड्यो लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ३ ॥ वेवकें हिमे वेसतो, पडे प्रपाव लो ॥ अ० ॥ मठ मढियें लोटतो फिरे, आक्रंद सराय लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ४ ॥ जमतो रहे घर घरें, बोले दीन वाणी लो ॥ अ० ॥ पथ्य ओषध पाले नहीं, पाये कोइ न पाणी लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ५ ॥ इम दुःखें दिन गालतां, केने एक काले लो ॥अ०॥ रोग रहित तव ते थयो, तृणागें ते ता से लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ६ ॥ चढेलो तव उद्यमें, लोभें करी लागे लो ॥ अ० ॥ संपद काइं न संभवी, तोय पाछो न भागे लो ॥ अ० ॥ रा० ॥७॥ किहां एक नृप लूंटी लिये, धूर्त धुतल किहां रे लो ॥ अ० ॥ चोर क्यारे मांहे वली, दहे अगनि कोठारे लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ८ ॥ इम ते उद्यम करी बहु, नानाविधदेशें लो ॥ अ० ॥ निष्फलपणें निचरे वली, वेठे विपद विशेषें लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ९ ॥ वृश्चिक व्याल व्यंतरतणा, पराभव सहे तो लो ॥ अ० ॥ घर त्यागतो धन लालचें, श्रीमे गह गहितो लो ॥ अ०

॥ रा० ॥ १० ॥ अरहट घटि जलोका परें, नरी ठलवातो लो ॥ अ० ॥ इ मते आपद अनुनवी, जिहां तिहां उजातो लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ११ ॥ दे श दारा धन स्वजनने, वियोगें वरिउ लो ॥ अ० ॥ नूपीठें नमतो रहे, आरतियें आवरिउ लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ १२ ॥ तृष्णाने जोरेंकरी, इम उ दय ते बोले लो ॥ अ० ॥ पंचवीशमी ढालें जुउ, जिहां तिहां ते मोले लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ १३ ॥ सर्वगाथा ॥ ४३ए ॥

॥ दोहा ॥

॥ इणि परें नमतां एकदा, सुणो सहु श्रोता लोक ॥ मनमांहे कोइक मुखें, सांनल्यो एक श्लोक ॥ १ ॥ ॥ यतः ॥ ॥ आर्यावृत्त ॥ स्वज नधनजुवनयौवन, वनिता तत्वाद्यनित्य मिदमखिलं ॥ ज्ञात्वाऽपत्राणसहं, धर्मं शरणं नजत लोकाः ॥ १ ॥ सर्व गाथा ॥ ४४० ॥

॥ ढाल ठवीशमी ॥

॥ काठवानी देशी ॥ ए श्लोक सुणीने त्यांही, तव मनमांहें हो वणि क ते चिंतवे ॥ डुःख जे आगें जाय, कहियें तिहांरे हो ते सहु इम चिंत वे ॥ १ ॥ धर्म न कीधो धाय, यतन करीनें हो ते जन्मांतरें ॥ धर्म विना जगमांहे, प्राणी पामें हो आपद बहु परें ॥ २ ॥ डुःखिआने ते माट, ए क धर्म विना हो शरण बीजुं नथी ॥ अनेक धरो उचाट, पण पुण्य पाखें हो सुख न लहियें रति ॥ ३ ॥ चिंते कुदृष्टि ताम, मिथ्यादर्शन हो केरी जे गेहनी ॥ अहो अवसर अनिराम, आजहुं पामी हो चिंता हुती जेहनी ॥ ॥ ४ ॥ वैराग्य नामें विख्यात,अम वेरीनो हो सेवक ए सही ॥ ए पात्रमां हें सहसात, प्रगटियो दीशे हो इहां संदेह नहीं ॥ ५ ॥ जो आवशे एह नी केडि, वेरणी अमारी हो सम्यक्दर्शनसुता ॥ तो अमने नाखशे उथे डि, उद्यम सघलो हो अफल करी सर्वथा ॥ ६ ॥ इम चिंती उजमाल, धर्म बुद्धि हो नामें निज नंदिनी ॥ ते पासें ततकाल, प्रेमें प्रेरवी हो कुटुंब आनंदिनी ॥ ७ ॥ तेहतणे सुपसाय, उत्सुकपणे हो इम चिंत्युं निणें ॥ नेहें निजघर जाइ, धर्म करीशुं हो हवे आदर घणे ॥ ८ ॥ कारण पुष्टें कार्य, सहेजें थाये हो तें माटे जाउं घरें ॥ एम आलोची ताम, नमतो नमतो हो गयो कोइ बंदरें ॥ ए ॥ प्रवहण चढिउ तेह, कोइक जननो हो रही वतागरो ॥ निजपुरें पहोतो तेह, थलवट थइने हो अनुक्रमें पाधरो

॥ १० ॥ मात पिता पर लोक, पहोतां तेहनी हो दिशा ते देखिने ॥ तव तसु वाध्यो शोक,घर हाटादिक हो पड्यां तिहां पेखिने ॥ ११ ॥ विध विध करे विलाप,आरति पूरें हो आतम निंदतो ॥ पूरव नवनां पाप, उदय आव्यां हो इम कहि क्रंदतो ॥ १२ ॥ धर्म बुद्धें धरे मन्न, मावित्र केरां हो मृतकार्ज करे ॥ कहे कवि उदय रतन, ढवीशमी ढालें हो कर्म गतिनवि फरे ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ एहवे समय मलि एकठा, चारित्र धर्मादिक ॥ प्रेखी सदबोधने प्रीत वी, कर्म परिणाम नजीक ॥ १ ॥ तव ते जइ कहे तेहने, अमने एक स हाय ॥ आगें कह्यो ने आपवो, मन मोजें महाराय ॥ २ ॥ कथन तेह कह्या पछी,अनंत अनंती वार ॥ पुजल परावर्त्या तिणें,तोहे न आव्यो पार ॥ ॥ ३ ॥ आज लगें जुउ अमने. वातें पण नसनेह ॥ महाराजा मेलव्यो नथी, जीव संसारी तेह ॥ अंगिकर्युं जे उत्तमें,युगांतें पण तेह ॥ अवश्य न थाये अन्यथा, कहो स्वामी शुं एह ॥ ५ ॥ सर्वगाथा ॥ ४५७ ॥

॥ ढाल सत्तावीशमी ॥

॥ आठीनें वणाजो हो, मेडतिया ठाकुर ॥ ए देशी ॥ सदबोध मंत्रीनें हो तव कहे कर्मनरेसर, आंख नचावी एम ॥ वात सविगतें हो आज लगें पण एहनी, तुं नथि लहेतो केम ॥ स० ॥ १ ॥ ताकी दीन तुम स्वा मी हो आणुं हुं तेहने, पण मुफ बंधन प्राण ॥ फरिफरि ने पातो स्रो वाले ते ते शंकने, जाणि अजानी अजानी हांण ॥ स० ॥ २ ॥ घनने नि गोदी हो आखर जो ताणुं घणुं. तो थाजां वेरी होय ॥ मस्तकें लइने स्रो में पण निश्चय एकले. काज न थाए कोय ॥ स० ॥ ३ ॥ नव्य स्वभावनें हो लोकस्थिति उद्यम वली, काल परिणति आदि ॥ एहुनी रजा विण हो कांइ काज न नीपजे. पग पग मांहे ए वाद ॥ स० ॥ ४ ॥ ते माटे न हुवुं हो एकांते आलोचिने, समय लही तुम काज ॥ निश्चयशुं करीनें हो पोल जे पोरवा मुवें, तेहनी ने अमने लाज ॥ स० ॥ ५ ॥ कथन में तुम ने हो पहेलें जे कह्युं हतुं. ने जिहां लगें पिंडमां प्राण ॥ तोलही न जा ए हो निहां लगि वीजो नर्मा, समजो चतुर सुजाण ॥ स० ॥ ६ ॥ नरगति पांच हो नंप्रति सुणिया हिये हसुं, धर्म बुद्धि ते पाम ॥ गइ ने ने माटे हुं आजे पण अमने नमे, शुं नहि मंजो ताम ॥ स० ॥ ७ ॥ स्वकाय छलि ना

में हो निज मंत्रीश्वरने करें, ताली लेइने ताम ॥ ऊंचे स्वरें हसीने हो एह वी वाणी ऊचरे, नरपति कर्मपरिणाम ॥ स० ॥ ८ ॥ धर्म बुद्धि सा साची हो अहो अहो जुर्ड पारखी, ए शुं बोल्यो सदबोध ॥ पूरण पाप बुद्धि हो जातें एहने जाणजो, सत्यशुं जेहने विरोध ॥ स० ॥ ए ॥ नाम धरावे हो धूतारी जगने धूतवा, एहनुं तो मुह अदीठ ॥ सम्यक् दर्शननी हो सु ता ते बीजी अछे, धर्म बुद्धि धरे पीठ ॥ स० ॥ १० ॥ अमारी ए परखी हो जाणो उदयकारिणी, तमारी परखें विषकंद ॥ समूलो उनमुले हो ए ह तमारा वंशने, चालतो डुःखनो कंद ॥ स० ॥ ११ ॥ सहुने सुखकारी हो अमृतनी धारा जिशी, अलौकिक छे ते एक ॥ अम बंधु मंत्रीनी हो पुत्री ए सहु जीवने, अरति उपाए अनेक ॥ स० ॥ १२ ॥ अनिधान सरीखें हो सहेज न होवे सारिखा, विष जिम जलनें जहेर ॥ कहेवाए पण जहेरें हो जीवने जोखम ऊपजे, जलनी जीवाडे लहेर ॥ १३ ॥ पा न कहेवाए हो कनकने नागर वेलनां, जिम बहु नाणा जाति ॥ वृक्ष कही जें हो वलि अंबने लींबने, पण जूई जूई धात ॥ स०॥ १४ ॥ दधि दूध घृ तादिक हो कांजी बहु विध तेलने, रस कहेवाए जेम ॥ बहेन कहेवाए हो नगिनीनी जिम सोकने, इणि परें जाणो तेम ॥ स० ॥ १५ ॥ नाम सरीखें हो सरिखा गुण न होये कदा, जिम बहु विधनां धान॥ उदय पयंपे हो एह सत्तावीशमी, ढालें सुणो धरि कान ॥ स० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ कांइ कहेवुं अमने नवि घटे, शत्रु मित्र समान ॥ अधिके उठे नवि गणुं, ए अम सहज निदान ॥ १ ॥ अम बंधुना मंत्रिनी, पुत्री एह प्रत्य क्ष ॥ अवगुण एहना अमने, कहेवा न घटे मूख ॥ २ ॥ पण गुण अवगु ण जेहनो, जेहवुं देखुं नयण ॥ त्राहित अमे दाखुं तिश्यो, कुण शत्रु कुण सयण ॥ ३ ॥ तव स्वनाव कहे प्रभुजी सुणो, कह्यानुं शुं काम ॥ आचरण सवलां ए लहे, तेहना जे छे स्वाम ॥ ४ ॥ शिर धूणी तव बोलिउं, राजा कर्म परिणाम ॥ अहो ए तें साचूं कह्युं, भूरत ए छलधाम ॥ ५ ॥ ए त रुणी अम गरढा नणी, हसि नांगे छे हाम ॥ युक्ति सर्व जाणे अछे, पण मुंदी रह्यो मुह फाम ॥ ६ ॥ कांन ढांकिकरि तव कहे, सदबोध मंत्री सो य ॥ एहवुं प्रभु म ऊचरो, तुम नजरें सब होय ॥ ७ ॥ हूं तो हत्रे जाउं

अछुं, जे कांइ अम योग्य होय ॥ कारज ते कहेजो प्रछु, अमने अवसर जोय ॥ ८ ॥ तव ते नृपति कहे फिरि, समयें थाशे सवे ॥ आज जाउ घर आपणे, मूकी मननो गर्व ॥ ९ ॥ वाणी जेह मुखें वदी, ते निफल न होशे नेट ॥ अर्थ अमे ए साधशुं, मननो सांसो मेट ॥ १० ॥ इम सुणि मंत्री आविउ, नेहें निज आवास ॥ वात सवें निज स्वामिने, आखे मन उल्लास ॥ ११ ॥ सर्वगाथा ॥ ४७५ ॥

॥ ढाल अठावीशमी ॥

॥ राम सीताने धीज करावे रे ॥ ए देशी ॥ हवे माता पिता दुख जरिउ रे, वैश्रमण विपत्तें वरिउ ॥ कुदृष्टि सुता आवरिउ रे, तापस थावा मन करिउ ॥ १ ॥ तिहां एक त्रिदंडिउ वसे वासें रे, स्वयंभु नामें तसु पासें ॥ ते वणिक आवे तिहां रोज रे, सुणवा तस आगम खोज ॥ २ ॥ सांभलतां तेहनी शिक्षा रे, अंते लीधी तसु दीक्षा ॥ पूरण निज पंथमां लीनो रे, शौचादिकमां रहि लीनो ॥ ३ ॥ अणगल जलमां उछांहि रे, नित्य नाहे न थादिकमांहे ॥ भाजन कोपीन उपगरण रे, रोज पखाले वार त्रण ॥४॥ गुरु पद पाम्यो काल केने रे, उपदेश कुपथना देते ॥ शुद्ध पंथने तेह उथापे रे, अन्यने निंदी आप थापे ॥ ५॥ आतम सर्व देवमें माने रे, उत्तम देवने अपमाने ॥ कुधर्मे बुद्धे वश कीधो रे, मद मत्सरें घेरी लीधो ॥ ॥ ६ ॥ मरी एकेंद्रियादिकमांहे रे, ते अनंत पुद्गल अवगाहे ॥ पुत्रीना पराक्रम जाणी रे, कुदृष्टि थइ सपराणी ॥ ७ ॥ मिथ्या दर्शन मोह राजा रे, ते वात सुणी थया ताजा ॥ आपणि उन्नति थाए ज्यारें रे, कुण सुखित न थाए त्यारें ॥ ८ ॥ वलि कर्मे तिहांथी निकाश्यो रे, लेइ मनुज तणी गति वास्यो ॥ ब्रह्मदत्त ब्राह्मण घर जायो रे, सोमदत्त नामें निपायो ॥ ९ ॥ तिहां पण कुदृष्टियें केडो रे, कर्यो पिशुनो कन्यानो भेडो ॥ पति पुत्रीसुं जइ लागी रे, अथ क्षण न रही ते अलगी ॥ १० ॥ पूर्व कृत तेहने उदयाले रे, मोकल्युं वलि मोह नृपाले ॥ कुबद्ध हिंसादिक बहुलुं रे, पर हननें करे ते फूलवुं ॥ ११ ॥ तप तिहां पण तेह अपार रे, करे यज्ञने मारे छाग ॥ यागने काजें हणे नाग रे, मधु मांस ब्राह्मण धरी राग ॥ १२ ॥ इम होइ ब्राह्मण तिहां जान रे, गो भूमि कन्या दान ॥ स्मार्ती भृगु ग सन्याने रुपाग रे, इत्यादिक थापे उल्लास ॥ १३ ॥ इम बीजो पण दः

खदाई रे, धर्मने छलें पातक धाई ॥ करावी ते पाड्यो नरकें रे, मलीने मो हने कटकें ॥ १४ ॥ ए अगवीशमी ढाल रे, सांभलजो थइ उजमाल ॥ उदय रत्न कहे उल्लासें रे, पडता रखे मोहने पासें ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वलि तिहांथी लइ वासिउ, एकेंद्रियादिकमांहि ॥ परावर्त्त्यो परवश पणे, अनंत पुजल त्यांहि ॥ १ ॥ बौद्धादिक मतमां धरी, धर्म छलें अघ छेक ॥ करावि इणिपरें फेरव्यो, जीव ते वार अनेक ॥ २ ॥

॥ ढाल उंगणत्रीशमी ॥

॥ रूडी रे रवारणी रमला पदमणी रे ॥ ए देशी ॥ सौभाग्यपुर नामें न गरें वली रे, मानव खेत्र मकार ॥ गृहपति सुंदर घर उपजाविने रे, ते व रुण नामें कुमार ॥१॥ इणिपरें चिंते कर्म नरेसरू रे, में जीव संसारी एह ॥ चारित्र धर्म समीपें नवि धस्यो रे,आज लगे डुःख गेह ॥इ०॥२॥ नामें धर्मबुद्धि पण महा पापणी रे, जिहां लगि एहथी दूर ॥ न रहे तिहां लगि पहोचाडी नवि शकूं रे, चारित्र धर्म हजूर ॥इ०॥३॥ सम्यक् दर्शननी सुता विना रे, अलगी एह न थाय ॥ तेहने संगें ए लहेशे सही रे, शुद्ध दिशा सुखदाय ॥इ०॥४॥ शुद्ध दिशाएं श्रुति दूतीतणो रे, अरथी थाशे एह ॥ सु गुरु सदागमथी ते पामशे रे, योग मेलुं तिणे तेह ॥इ०॥५॥ अभिप्राय क र्मनो एहवो उलखी रे, बीनो मोह नरेंद्र ॥ कलुपाणो मनसुं रागकेसरी रे, भूज्यो द्वेप गजेंद्र ॥इ०॥६॥ मनसुं बीहीनो मोह नरेसरू रे, पागांतरें ॥ वज्र पड्यो जाणे सहुने शिरें रे, तव मंत्री सामंत ॥ मजलस मेलीने वेगा मली रे, आलोचे एकंत ॥इ०॥७॥ तव कोइ निज नायने ते कहे रे, त्रिभुवन गं जन स्वामि ॥ तुमने पण सचिंता साहिवा रे, सहिबे तुमारे नाम ॥इ०॥८॥ दीर्घ निसासो मेहली ते कहे रे, जे तुमें कह्यो ते तंत ॥ चावख सम पण महारी चाकरी रे, सुर पतिसा भूजंत ॥ इ०॥ ए ॥ मुक्त पायकने पण को न पमाडवा रे, समरथ नांहिं छे कोय ॥ पण सुं कीजे मुझघर वेरडुं रे, बंध वें मेल्यो विगोय ॥ इ० ॥ १० ॥ तेह कहेछुं नवुं गयुं किछुं रे, कर्म परिणा मने संग ॥ मोह वदे तव एक नवो इणें रे, उपजाव्यो छे रंग ॥ इ० ॥ ॥११॥ सदगुरु संगें सदा मनो सहि रे, ते जीव संसारीने जोग ॥ मनसुं चाहे छे ए मेलवा रे, एहवुं कहे छे लोग ॥ इ० ॥ १२ ॥ अम कुल कंद स

मूल्यो वालवा रे, जे दावानलनी फाल ॥ श्रुति दूतिका ते पामें प्रेखशे रे, ते सद्गुरु अम कुल काल ॥ इ० ॥ १३ ॥ उदय वदे ठंगणत्रीशमी रे, मारु रागें ढाल ॥ नायी नविचण नावें सांजलो रे,आगें यइ उजमाल ॥इ०॥ १४॥

॥ दोहा ॥

॥ तव हुंकारो मुख मुकिने, बोल्या सघला तेह ॥ जो एवुं ठे तो प्रज्ञु, न करो चिंता एह ॥ १ ॥ अमे करीशुं एहवुं, जिम ए चिंता मूल ॥ ते गुरु आवी तिहां नवि शके, कारण लहि प्रतिकूल ॥ २ ॥ मोह राजा मन हर खिने, तव फिरि आखे तास ॥ वत्सो वेगें तेहवुं करो, जिम लफल फले मुफ आस ॥ ३ ॥ इम कही ते कतावला, पायक पहोता त्यांही ॥ अप शुकन आलोचिने, प्रेख्या मारगमांहि ॥ ४ ॥ विविध विघन प्रेख्या वली, श्रम आलस शिररोग ॥ ठत्र नंग नृप विग्रह, मरकी उपद्रव सोग ॥ ५ ॥ गुरु आगमननो गेलशुं, नीत्यादिकें मलि नंग ॥ कीधो हुकम ते केलवी, साधुनो लहि संग ॥ ६ ॥ कुदृष्टि सुता कथनेंकरी, धर्म ठलें बहु पाप ॥ एकेंड्रियादिकमां ऊपनो, वरुण मरी ते आप ॥ ७ ॥

॥ ढाल त्रीशमी ॥

॥ शीरोहीनो शेलो हो दाडिम चोयपुरी ॥ ए देशी ॥ वली मानव खेत्रें हो, विमलपुरें धरिठे ॥ रमण श्रेष्टि घरें हो, कर्मे ते डुःख दरिठे ॥ १ ॥ यौवन पहोतो हो, सुमित्र नामें सोई ॥ एक दिन कर्मे हो, तव तिहां तक जोई ॥ २ ॥ आव्या आचारज हो, मोल धरी मनमां ॥ गुण जलधी पूरें हो, बहु शालक वनमां ॥ ३ ॥ संयमश्रीयें शोजित हो, पूरित प्रशमजरें ॥ तपे तप तेजें हो, जे सत्य शौच धरे ॥ ४ ॥ नव भ्रमरें नृपित हो, मुख पंकज जेहनुं ॥ शीलें विलेपित हो, तनु राजे तेहनुं ॥ ५ ॥ सद गुण शृंगारें हो, उपे अंग सदा ॥ चारित्र सीमायें हो, न चले जेह कदा ॥६॥ समकितने धरवा हो, थिर जे मेरु परें ॥ मति श्रुत ज्ञानी हो, मंमित मुनिमकरें ॥ ७ ॥ तव सुगुरु तिहांनें हो, श्रोता तिहां रसिया ॥ पुरजन नृप आदें हो, बहु आवे धसिया ॥ ८ ॥ मन कह्युं तिहां जावा हो, सुमित्रे पण जेहवे ॥ ते जनी मोहराजा हो, इम बोल्यो तेहवे ॥ ए ॥ रे रे घ ही रासो हो, बाकी गइ बाजी ॥ इम सुणिने ससंभ्रम हो, कहधा सहु गाजी ॥ १० ॥ मेंके मारु गरवा हो, पायकने प्रेरी ॥ मोह महीपति हो,

इम बहु उदेरी ॥ ११ ॥ आलस अलसावा हो, प्रेखे मूढपणुं ॥ कुटंबना रागमें हो, चडावी शूर घणुं ॥ १२ ॥ अवज्ञा करि आगें हो, मद बलव्या मांझी ॥ कस्या सज क्रोधादिक हो, प्रमाद कस्या राजी ॥१३॥ अदत्त गुण उप्यो हो, शोक कस्यो शूरो ॥ अज्ञानभयादिक हो, प्रेरी दल पूरो ॥१४॥ कृषि गृह हट्टनी हो, सबल सजी सेवा ॥ विषय वकाख्या हो, वली व्यसन देवा ॥ १५ ॥ नाटक पेषणादिक हो, कौतुक कोडि सज्यां ॥ निज स्वामीने कामें हो ॥ तिणे निज काम तज्यां ॥१६॥ किलली करि धायां हो, इत्यादिक सघला ॥ वेगें तिहां जइने हो, अनेक करी अगेला ॥ १७ ॥ केणें कोइक दिन हो, गुरु पासें जातां ॥ वलि ग्रहि ते राख्यो हो, विघन करी माता ॥ १८ ॥ ते गुरु पण एक दिन हो, विहार करे तिहांथी ॥ ते पण मरी पहुतो हो, आव्यो हुतो जिहांथी ॥ १९ ॥ एकेंद्रियादिक हो, मांहे तिम राख्यो ॥ काल अनंतो हो, पहिले जिम भाख्यो ॥ २० ॥ त्रीशमी ढालें हो, मोहना बल जेहवुं ॥ बल नथि केहनुं हो, उदय वदे एहवुं॥२१॥

॥ दोहा ॥

॥ ते संसारी जीवनें, एम अनंती वार ॥ फेरा तेमज फेरव्या, एकेंद्रियादि मझार ॥ १ ॥ अवति पुरि अवतारिउ, गंगदत्तने गेह ॥ सिंधुदत्त नामें ते बली, कर्म परिणामें लेह ॥ २ ॥ यौवन भर जब आवीउ, सुगुरु सदागम संग ॥ तव कर्मे जिम तिम करी, मेल्यो मन उछरंग ॥ ३ ॥

॥ ढाल ॥ एकत्रीशमी ॥

॥ रामचंदके बाग चंपो मोही रह्योरी ॥ ए देशी ॥ मोह लही ते वात, चिंता समुद्रें पड्योरी ॥ कहे मेली निज साथ, अहो ए ऊंचो चड्योरी ॥ ॥ १ ॥ तरकस खुटा तीर, अंत अरीनो न आव्यो ॥ धरिएं किम करि धीर, फंद ए एहनो फाव्यो ॥ २ ॥ ज्ञानावरण सामंत, तव तिहां एम वदेरी ॥ प्रभु तुम सुभट अनंत, एक एकथी अ वधेरी ॥ ३ ॥ सागरथी सुणो स्वामि, अंजली एक भरी री ॥ नंदिनी शून्यता नामें, माहरी सज्ज करी ॥ ४ ॥ मोकलो तेहने पास, सुणुंजे अफल करी री ॥ तव नृपें प्रेषी तास, चाली सा प्रेम भरी री ॥ ५ ॥ सिंधुदत्तना मनमांहि, जई तिणे वास कीयो री ॥ तव तेहने गुरें त्यांहि, इम उपदेश दीयो री ॥ ६ ॥ मिथ्यादर्शी न तसु नारि, तेहनी सुताने तजी री॥ श्रुत जे सुणे नर नारी, शिव सुख ते

ह भजी री ॥ ७ ॥ गुण वखाण्या गेलि, सम्यक् दर्शन तनयाना ॥ मोहने मेलो ठेलि, अर्थी थाउं दयाना ॥ ८ ॥ मोहनुं दल महा डुष्ट, पग पग स हुने पीडे ॥ कोडी पमाडे कष्ट, जव संकटमां जीडे ॥ ९ ॥ चारित्र धर्म प साय, वली तस सैन्य वलें री ॥ लहियें लील सवाय, डुर्गति दूर टले री ॥ १० ॥ इम दीधो उपदेश, सिंधुदत्तने तेह सूरें ॥ पण थयो अफल अशे ष, प्रबल महा शून्यता पूरें ॥ ११ ॥ पूछे तसु परषद लोक, मारगमां घरे जातां ॥ तें कांइ सांजल्यो श्लोक, ते कहे हुं नहिं ज्ञाता ॥ १२ ॥ मित्रा दिकने उपरोध, गुरुकने तेह गयोरी ॥ बीजे दिन पण प्रतिबोध, शून्यता एं न लह्यो री ॥ १३ ॥ चालणी नीरने न्याय, तेहने गुरुनुं कह्युं री ॥ मन मां न रह्युं कांई, चित्त शून्यताएं ग्रह्युं री ॥ १४ ॥ तव गुरु गया अन्य देश, कुदृष्टि कुधर्मबुधें री ॥ सिंधुदत्त वास्यो विशेष, कुमत कदाग्रह वधेरी ॥ ॥ १५ ॥ जव रही शून्यता क्रूर, तव ते रंग जरें री ॥ कह्युं कुमतिनुं नूर, समकी चित्त धरे री ॥ १६ ॥ एम करी पाप उपाय, एकेंद्रियादिकमांहि ॥ उपजी वेठे अपाय, काल अनंतो त्यांहि ॥ १७ ॥ ए एकत्रीशमी ढाल, उ दय रतन कही आखी ॥ वलिराजानुं रसाल, चरित्र इहां छे साखी ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ हृदयांतर हवे अन्यदा, चिंते कर्म परिणाम ॥ अहो ए किमे बापडो, न लहे धर्म सुगाम ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ ५६८ ॥

॥ ढाल बत्रीशमी ॥

॥ जरमर वरशे मेह जरूखे बीजली हो लाल ॥ज०॥ ए देशी ॥ बंधव मुज बलवान, जोरावर जालमी हो लाल ॥ जोरावर जालमी ॥ उद्धत ए हनो साथ, प्रबल महापराक्रमी हो लाल ॥ प्रबल महा० ॥ १ ॥ चारि त्र धर्म नरेंडनुं, जई जुए बल्युं हो लाल ॥ ज० ॥ ए संसारी जीवनुं, एह युं नहीं गजुं हो लाल ॥ ए० ॥ २ ॥ तुछ थाए बल तास, कला करुं तेह वी हो लाल ॥ क० ॥ पण पोतानी पांख, पडे ते छेडवी हो लाल ॥ प० ॥ ३ ॥ विषम ए दोइ न्याय, हुए शुं जूरतां हो लाल ॥ हु० ॥ जे थाए ते थाउ, प्रतिज्ञा पूरतां हो लाल ॥ प्र० ॥ ४ ॥ वडवानल वारिधि जेम, डुखें पण निर्वहे हो लाल ॥ डु० ॥ शशक काजे शशि जेम, कलंक पोतें सहे हो लाल ॥ क० ॥ ५ ॥ उपकार करतां आप, गुणी क्षय नवि गणे हो

लाल ॥ गु० ॥ जिम देह दजाडी दीप, दिशा तम ने हणे हो लाल ॥ दि० ॥ ६ ॥ धर्मादिक सघलां मुऊ, जो क्षय वांछे सदा हो लाल ॥ जो० ॥ तो पण करुं उपकार, एहवुं जाणी मुदा हो लाल ॥ ए० ॥ ७ ॥ यतः ॥ उपकारिणि कृतमत्सरे वा, सदयत्वं यदि तत्र कोतिरेकः ॥ अहितसहसावलवधे, सघृण यस्य मनः समासधुर्यः ॥ १ ॥ अपास्य लक्ष्मीहरणोब्धवैरतां, मा चिंतयित्वा च तदङ्गिमर्दनं ॥ ददौ निवासं हरये महार्णवो, विमत्सरा धीरधियां हि वृत्तयः ॥ २ ॥ अथवा मारो पक्ष शुन्न, पोषे बे ए नितें हो लाल ॥ पो० ॥ सम्यक् माहरूं स्वरूप, जाणे बे जे श्रुतें हो लाल ॥ जा० ॥ ८ ॥ जगमां मुज अवदात, जणावे जोपखुं हो लाल ॥ ज० ॥ त्रिभुवनमां परसिद्ध, चलावुं चोपखुं हो लाल ॥ च० ॥ ए ॥ नहितो महारुं कुण नाम बतुं जगमां लहे हो लाल ॥ ब० ॥ प्रसिद्धिना अर्थी पुरुष, ते शुं शुं नवि सहे हो लाल ॥ ते० ॥ १० ॥ यतः ॥ तमसाऽनिशं शशांको, गगनं न त्यजति खंड्यमानोपि ॥ कैतावती प्रसिद्धि, र्यस्मादन्यत्र परिवसतां ॥ १ ॥ विजय वर्धनपुरें लेई, सुलस श्रेष्टि घरें हो लाल ॥ सु० ॥ सुत अवताख्यो सोय, कर्मे को अवसरें हो लाल ॥ क० ॥ ११ ॥ नंदन धखुं नाम यौवन आव्युं जिशे हो लाल ॥ यौ० प्रछन्नपणे जइ पास कर्मे आप्युं तिशे हो लाल ॥ क० ॥ १२ ॥ खडग यथाप्रवृत्त, करण नामें सही हो लाल ॥ क० ॥ वली एक बानी वात, कर्णमांहें कही हो लाल ॥ क० ॥ १३ ॥ ए खडगें अरिनो वृंद, कहुं तिम मारजे हो लाल ॥ क० ॥ शीखामण मनमांहि, नली परें धारजे हो लाल ॥ न० ॥ १४ ॥ मोहनो सीतेरमो नाग कांईक कणो सही हो लाल ॥ कां० ॥ मेली उगन्योतेर नाग, अधिक केती लही हो लाल ॥ अ० ॥ १५ ॥ ज्ञानावरणादिक चार, अरीनो त्रीशमो हो लाल ॥ अ० ॥ नामने गोत्रनो नाग, तजीने वीशमो हो लाल ॥ त० ॥ १६ ॥ उगणत्रीशने उगणीश, कांइक अधिका वली हो लाल ॥ कां० ॥ हणजे तूं हुशियार, ए खडगें मन रली हो लाल ॥ ॥ ए० ॥ १७ ॥ ए सातें थाशे क्षीण, कटक तव एहनुं हो लाल ॥ क० मुहनंग थाशे विशेष, गजुं शुं तेहनुं हो ॥ लाल ॥ ग० ॥ १८ ॥ तव निर्नयपणे महामात्य, सम्यग्दर्शन तणुं हो लाल ॥ स० ॥ देखीश तूं सहि हार, जे सुखदाइ घणुं हो लाल ॥ जे० ॥ १ए ॥ बत्रीशमी ए ढाल वो

जी, बहु भेदनी हो लाल ॥ बो० ॥ उदय रतन कहे एम, अरि उछेदनी हो लाल ॥ अ० ॥ २० ॥ सर्वगाथा ॥ ५०० ॥

॥ दोहा ॥

॥ तिहां राग द्वेष रूपें अछे, घारें सजड कपाट ॥ ते कषाख्यानो पछे, देखाडीशुं घाट ॥ १ ॥ हमणा में ए जिम कह्यो, तिम तुं करजे तंत ॥ तव तेणें तिम आचर्युं, अरिनो लेवा अंत ॥ २ ॥ सम्यक् दर्शन मंत्रिनुं, जब इणें दीठुं द्वार ॥ तब कर्म सगुरुतणो, योग मेल्यो तिणिवार ॥ ३ ॥ सहायनी सोंपी दक्षता, शून्यता जिणें पलाहि ॥ सुगुरु सदागम संगतें, कर्मे आण्यो साहि ॥ ४ ॥

॥ ढाल तेत्रीशमी ॥ चउसद्दहणा ति लिंगहे ॥ ए देशीमां ॥

॥ आख्याननी देशी, रामगिरि रागें चाल ॥ मोह राजा मूर्गो लीनजी, ज्ञानावरण सामंत दीन जी ॥ नाम गोत्र शोकाधीन जी,रूए राग केसरी थइ बलहीन जी ॥ बलहीन सघलुं सैन्य देखी, मिथ्या दर्शन नाम ए ॥ मंत्रीश्वर तव थयो ऊभो,धरी हियामां हाम ए॥ अवस्था सहु निज साथ नी, अवलोकी असमय भयो ॥ अश्रद्धान नामें महाडुष्ट चूर्ण, ग्रही वेगें परवर्यो ॥ १ ॥ पहोतो जइ शीघ्र ते नंदने पासेंजी, सुगुरु सदागम तव तिहां नासे जी ॥ ते नंदन आगें आलस गंभी जी,मोह मिथ्या दर्शनना मांभी जी ॥ मांभी कहा मोह सायना,तिणे अवगुण एकेक ए ॥ तव धर्म नृपना पक्षना पण,गुण कह्या अनेक ए ॥ धर्मे सुर शिव हुवे संपद, पापें नरकादिक लही ॥ तव दक्षता प्रभावथी, ते साचुं सघलुं सद्दही ॥ २ ॥ तव मिथ्या दर्शनें निज कामें जी ॥ डुष्ट चूरणते अश्रद्धा नामें जी ॥ हेला तसु दीधुं हिंमत योगें जी ॥ तव ते चेती तास प्रयोगें जी॥ तिणें प्रयोगें मति पालटी,चिंते ते नंदन ताम ए॥ कुण कर्म ने कुण धर्मने कुण,कुगति ने सुर धाम ए॥ किणे कांइ दीठुं नहीं ए,आल जिम तिम उच्चरे ॥ फोगट मारे फंद मांभी, पेट भराइ इम करे ॥ ३ ॥ समीप वर्त्तिने शने शने एम जी,ताली लेइने कहे धरी प्रेम जी॥ अहो चरचा ए चिंतनी उपाई जी॥ धीरजें शुं कहे ते दृढ थाई जी ॥ दृढ थइ अलो धर्मनी ए. करे चर्चा फो क ए॥ प्रत्यक्ष ते प्रमाणिये, किणे दीठो छे परलोक ए॥ तिहारे कर्म राजा कोपिउ. मोहनी वाधी मानता ॥ तेना सुभट सघला भज थया. परिणामे

पहेला जिम हता ॥४॥ सम्यक् दर्शन महामंत्रीनें जी ॥ घरे जइने ते प्रा णीने जी ॥ गले ग्रहीने कीधो आगें जी ॥ मोहने साथें क्रोध अतागेंजी ॥ क्रोध अतागें तेहने तव, करावी महापाप, एकेंद्रियादिक मांहि धरीउं, जोजो मोहनो व्याप ॥ वलि नर्क तिर्यंच मनुष्यमांहे, फेरव्यो ते फरि फ री ॥ वार अनंती विगत तेहनी, ज्ञानी विण कुण लहे खरी ॥ ५ ॥ पू रव रीतें खडग देखाडी जी ॥ मोहादिकने पातला पाडी जी ॥ सम्यक् द र्शन मंत्री द्वारें जी ॥ वार अनंती एणे प्रकारें जी ॥ वार अनंती गयो पण तिहां,पाम्यो नही प्रवेश ॥ रोग विषय रस क्रोधयोगे, अफल कथा उ पदेश ॥ फरी मोहादिकें सज्ज थइ, एकेंद्रियादिकमां धख्यो ॥ उदय रत्न क हे वार अनंती, तेत्रीशमी ढालें फख्यो ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ मलयपुर नामें नगर, मानव क्षेत्र मजार ॥ इंद्र नामें अवनीपति, राज्य करे ते गार ॥ १ ॥ विजया राणी तेहने, तेहनी कूखें तास ॥ अं गज पणे अवतारीउं, कर्म परिणामें खास ॥ २ ॥ विश्वसेन वारू तिहां, निरुपम दीधुं नाम ॥ अनुक्रमें योवन आविउं, सकल कला गुण धाम ॥ ३ ॥ अशोक सुंदर उद्यानमां, एक दिन रमवा काम ॥ परिकर पूरें पर वख्यो, राजकुमर ते जाम ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ६०२ ॥

॥ ढाल चोत्रीशमी ॥

॥ जरमर जरमर हो सेला मारु वरशे लो ॥ ए देशी ॥ तव कर्में हो सुगुरु सदागम योग, तिहां विश्वसेनने वनमां मेलिउं ॥ तेहने दर्शने हो उल्लस्युं वीर्य विशिष्ट,तिणें सुविशेषें मोहने अवहेलिउं ॥१॥ त्यां ते खड्गे हो मोहादिक शत्रुनां तन्न,पूर्वेथी अधिक छेदी प्रेमने नरें॥प्रणमीने हो सुगुरु सदागम पास,कर जोडीने बेगो ते सपरिकरें ॥२॥ सदागम हो नणिनें सु गुरें तास,श्रुतसंगम कीधो तव सा कहि ॥ विश्वसेनने हो श्रवणें लागी विर तंत, सुणतां जेहथी ज्ञान दशा लही ॥ ३ ॥ नमाड्यो हो नवसागरमांहे नूरि, नइ नोला तुंने परें परें नोलवी ॥ प्रौढ पापीयें हो मोह राजाने प्र धानें, मिथ्यादर्शनें राख्यो उलवी ॥ ४ ॥ गेहिनी संगें हो प्रेखी निजनंदि नी सोच, धर्मबुद्धि नाम तेहनुं जूठूं धरे ॥ महापापणी हो त्रिभुवनें नम ती तेह, सहु प्राणीने घेरी वश करे ॥ ५॥ धर्मने छलें हो करावी पाप अ

घोर,पाडें नरक गतें सहु प्राणीने॥ मिथ्यादर्शन हो तात कुदृष्टि मात, मन तेहनां रीझवे हित आणीने ॥ ६ ॥ मिथ्यादर्शन हो कुदृष्टि जे करे करतुक, श्यां श्यां मांडी ते कहुं तुझ आगले ॥ रागादिक हो दोष रहित जे देव, अदेवपणुं थापे तेहमां ठलें ॥ ७ ॥ निःस्पृहादिक हो गुणें जे राजे गुरुराज, अगुरु बुद्धी तेहनेविषे धरे ॥ दयादिक हो सहित जे धर्म सदाय, ते धर्मना द्वेषी सहु जीवने करे ॥ ८ ॥ कुदेव कुगुरु हो कुधर्मसुं करे तल्लीन, विपर्ययपणुं उपजावी बहु परें ॥ आचरावी हो प्राणीने पाप अनेक, दूरतें दुःख दाखे सहुने शिरें ॥ ९ ॥ तुझने पण हो मोहादिकें मली जोर, काल अनंतो कष्ट दीधां घणां ॥ सकुटंब हो मिथ्यादर्शन सु विशेष, महा दुःख दीधां नवि राखी मणा ॥ १० ॥ तेहनी नारी हो पुत्रीएं पीड्यो जेह, सहस्र जीनें जो विवरीने कहे ॥ तो पण तेहनो हो पार न पामे कोय, उदय चोत्रीशमी ढालें इम कहे ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ श्रुति नापित इम सांभली, भय पामी ते भूर ॥ गद गद स्वर गुरुने कहे, पद प्रणमी हित पूर ॥१॥ आज लगें प्रभु ए सवे. हुं नवि समझ्यो कांइ ॥ आचरणें अज्ञानने, आतम मेल्यो ठांइ ॥२॥ एहवा मुझ अशरण भणि, वेरियें आणतां वाल ॥ शरण होशे प्रभु केहनुं, उपदेशो ते आज ॥ ३ ॥

॥ ढाल पांत्रीशमी ॥

॥ अणसण ते रे विरह अनाहक दीधुं ॥ ए देशी ॥ गुरु कथनें फरी तेहने रे, श्रुति समझावे विशेष॥ वार अनंती में तुने रे,ए दीधो ले उपदेश ॥ गु० ॥ १ ॥ किहां एक शून्यताने ठले रे, अश्रद्धानयोगें क्यांयें ॥ मद मोह प्रवशें किहां रे, शठगुणने महिमायें ॥ गु० ॥ २ ॥ कुदृष्टि सुताप्रसंगथी रे, जे में कह्यो ते ठेक ॥ आतमहित अणवांछते रे, ते अफल कर्युं अनेक ॥ गु० ॥ ३ ॥ हित उपदेश जे कहुं हवे रे, ते तुं सुण सावधान ॥ उपयोगणुं तव ते सुणे रे, कर जोडी धरी कान ॥ गु० ॥ ४ ॥ सा कहे सुगुण सुधारसें रे, भरिसुं सागररूप ॥ चारित्र धर्म ते नृपति रे, जस गज भानी अनूप ॥ गु० ॥ ५ ॥ सम्यक् दर्शन मंत्री भलो रे, सदागम सोदर सार ॥ सद्बोध बंधु जेहने वडो रे, सवि जीवनो हितकार ॥ गु० ॥ ६ ॥ पीपल पाननणी परें रे, मोह गजानुं सैन्य. ध्रुजे जेहना नामथी रे, पामे

अवस्था दैन्य ॥ गु० ॥ ७ ॥ परें परें पीस्यो घणुं रे, सवधू सुता समेत ॥ मिथ्या दर्शनने जेणे रे, रंगेशुं रणखेत ॥ गु० ॥ ८ ॥ पाईयो धर्म प्रसाद नो रे, मोक्ष तरुनुं मूल ॥ धरवा गुण सुपीठनें रे, फणीश्वर जे महा स्थूल ॥ गु० ॥ ए ॥ सुख स्मृति विपदने ते नहीं रे, जे तूठे न आपे एह ॥ सम्यक् आश्रित सत्वनें रे, पहोचाडे भव बेह ॥ गु० ॥ १० ॥ तनुजा बे एक तेहने रे, सकल सौभाग्य सदन्न ॥ धर्म बुद्धि सहि तेहनुं रे, नाम बे गुण निष्पन्न ॥ गु०॥ ११ ॥ जंतु जे एहने भजे रे, निबिड धरीने नेह ॥ सम्यक् दर्शन मंत्रीनुं रे, दर्शन पामे तेह ॥ गु० ॥ १२ ॥ दीठे जे दुरगति हरे रे, शरणे राखे सदीव ॥ मोहादि त्रास पामे मनें रे, जेहने नामे अ तीव ॥ गु०॥ १३॥ तस दुहिता न लही जिणें रे, ते दर्शन न लहे तास ॥ सत्व ते शरण विना लही रे, पग पग पामे त्रास ॥ गु० ॥ १४ ॥ जो गर जू होय तूं तेहनो रे,तो सा मेखुं तुज्ज ॥ जिम भागे भवयातना रे, मननी मटे अलुज्ज ॥ गु० ॥ १५ ॥ पांत्रीशमी ढाल ए कही रे, जें मोहनीमांजे जाति ॥ सांभल जो साचे मनें रे, उदय वदे इणि भाति ॥ गु० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ दर्शन तेहनुं देखवा, उत्सुक हूं बुं आज ॥ दया करी देखाडियें, क हूं बुं मेली लाज ॥ १ ॥ तव गुरुराजें तेहनुं, योग्यपणुं ते जोय ॥ श्रुतिमु खें सुविस्तरपणें, जंपावे तक जोय ॥ २ ॥ मोह मिथ्या दर्शनतणा, कुह ष्टि साथें जोडि ॥ अवगुण फरी तिणें उचस्या, कुधर्मबुद्धिना कोडि ॥ ३ ॥ शुद्ध धर्म सुधी परें, त्यां लगें कह्यो अविरुद्ध ॥ आदरवानी एहने, ज्यां लगें उपनी बुद्ध ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥

॥ ढाल बत्रीशमी ॥

॥ लेख आपीने कहावे ॥ ए देशी ॥ तव मगन थइने तेह, सद्गुरुने क हे सस्नेह ॥ भगवन तुम श्रुति सुपसाएं, धर्म बुद्धि हूं पाम्यो उठांहि ॥ ॥ १ ॥ चित्तमां हवे चाहूं करेवा, तुम भाषित धर्मनी सेवा ॥ कुदृष्टि कुधर्म बुद्धिनो, संग न करुं अन्य लिंगीनो ॥ २ ॥ भांपो करी तेणे सुपसाय, शु द्ध धर्म विधान उपाय ॥ तव गुरु कहे तारी ए थिरता ॥ थइ अमने उ ठाहनी करता ॥ ३ ॥ श्रोता श्रुत अर्थी लाधे, वक्तानुं महाबल वाधे ॥ शुद्ध धर्म विधान कहेवाने, अमे पण थया एकतानें ॥ ४ ॥ शुद्ध धर्मनो

थाय जे अर्थी, पहेलो परहो रहे ते परथी ॥ मन वचन कायानी शुद्धे, निर्जय नेही एक बुद्धे ॥ ५ ॥ सम्यक् दर्शन विण स्वामी, अन्यने न करे शिर नामी ॥ मनसुं हित राखे वहुलुं, दिल किहांरे न करे गुहुलुं ॥ ६ ॥ सम्यक् आराधो एह, चडतां सुख आपे अछेह ॥ तव चिंते राजकुमार, आणी हृदयमां हर्ष अपार ॥ ७ ॥ अहो ए सम्यक् दर्शन केरो, प्रनाव दीशे जलेरो ॥ नाम पण अति सुंदर जेहनुं, क्यारें दर्शनदेखीश तेह नुं ॥ ८ ॥ अंतरंग आलोची एम, मनमांहे धरी ते प्रेम ॥ तव अवसर उ लखी तास, राजा कर्म परिणामें खास ॥ ए ॥ शुद्धता परिणाम स्वरूप, अपूर्व करण नामें अनूप ॥ दृढ तीक्ष्ण कविन कुगर, एक आप्यो तेहने उदार ॥ १० ॥ कानमां वलि कही एक वात, तव उल्लस्युं वीर्य विख्यात ॥ शुगलेगुं यथोक्तप्रकारें, पोलें जइ तेह कुगरे ॥ ११ ॥ निबिड राग अने बीजो द्वेष, परिणति रूप लहो सविशेष ॥ ग्रंथी नाम कमाडनी जोडी, ततखिण ते नाखी त्रोडी ॥ १२ ॥ मोहादिक शत्रूने मथतो, उत्तम पंथ ने अनुसरतो ॥ अंतःकरण नामें सुविचार, महामात्य प्रसाद उदार ॥ १३ ॥ उदय रत्न वदे एम वाणि, छत्रीशमी ढालें जाणी ॥ जिनवाणी जे सद्दहिसे, ज्ञान ते अपूर्व लहिसे ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ प्रतिज्ञा पूरी थई, तव हरखी कर्म परिणाम ॥ अति विशुद्ध अध्यव सायमें, आपे एहने ते गाम ॥ १ ॥ अनिवृत्तिकरण नामें इसें, वज्रदंम प्र चंम ॥ ते पामी तस उल्लस्युं, अनिनव वीर्य अखंम ॥ २ ॥ द्वेष गजेंद्र मोह राजनो. सुन तेहना सुत दोय ॥ क्रोध मान नामें लहो, अनंतानुबंधी सोय ॥३॥ तथा बीजो सुत मोहनो, राग केसरी पुष्ट ॥ माया तेहनी नंदि नी. अनंतानुबंधिनी उष्ट ॥ ४ ॥ सुत तेनो वलि जालमी, अनंतानुबंधी लोज ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रीश ते, जे मोहयरनो मोन ॥ ५ ॥ ए पांचे अ ति आकरा, ते दंमे हण्या पूंठ ॥ मेहजी नहि तेहनी किमे, कन्ना थाये उत्त ॥ ६ ॥ तिम फेरी चूरण तिणें, जीवित लइ गत लाज ॥ महाअटविमां ज ई पड्या, मृगोगत नलि मान ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ ८५७ ॥

॥ ढाल साडत्रीशमी ॥

॥ चाले येले ने नावरी नाहनी ॥ ए देशी ॥ छद्मन मयणां दूर करीने,

वहु दिननो अलजायो रे ॥ अंतःकरण नामें तव मोहोलें, राजकुमर ते आयो के, दर्शन देखीने ॥ सम्यक् दर्शननुं सार,मोह्यो मुख पेखिने ॥१॥ तिहां उपशम समकित रूपधारी, सम्यक् दर्शन मंत्रीने रे ॥ देखंतां दिल उलस्युं तेहनुं, मृग जिम सुणि तंत्रीके ॥ द० ॥ २ ॥ पुष्करावर्त नामें घनयोगें, जिम तरु दवनो दाधोरे ॥ नवपल्लव थाए तिम तेणें, हर्ष अपूर्वे लाधो के ॥ द० ॥ ३ ॥ जिम पंथी सर देखी रीझे, ग्रीष्म ऋतु मरुदेशें रे ॥ दुर्जन वचनें दाधो जिम साधु, सुवचनें सीच्यों विशेषें के ॥ द० ॥ ॥ ४ ॥ जनम दरिद्री जिम धन धारा, देखीने दिल हीसे रे ॥ हीमें वाल्यां जिम अंबुज विकसे, वारु वसंत जगीसें के ॥ द० ॥ ५ ॥ जिम विरही वल्लभने योगें, मेघागमे जिम मोरा रे ॥ मालती लही जिम मधुकर माले, चंदने देखि चकोरा के ॥ द० ॥ ६ ॥ मोहादिक वेरिएं मलिने, काल अनादि अनंत रे ॥ दुःख दावानल दझव्यो ते प्राणी, एहवो तप्त अत्यंत के ॥ द० ॥ ७ ॥ सुधारस पूर समो महा शीतल, देखी तास दिदार रे ॥ तिम विश्वसेननुं मन उल्लसियुं, आनंद पाम्यो अपार के ॥ द० ॥ ८ ॥ तव गुरुराज कहे फरि तेहने, विगतेंसुं विस्तारी रे ॥ वली वली शीखामण वारू, हेजेसुं हितकारी के ॥ द० ॥ ९ ॥ साडत्रीशमी ढालें सुणो श्रोता, उदय रतन इम बोले रे ॥ मुक्ति तो तेहने छे मुह आगें, जे दर्शनथी नवि मोले के ॥ द० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥ कह्यो छे जो पूरवे, तो पण दृढवा काम ॥ सूरी कहे नृपसुत सुणो, एक चितें अभिराम ॥ १ ॥

॥ ढाल आडत्रीशमी ॥

॥ हमीरांनी देशी ॥ रखेरे राचो कोई अन्यने, जीव सलामती सीम कुमरजी ॥ आण एहनी आराधजो, निश्चयसुं धरी नीम ॥ कु० ॥ १ ॥ सुर पण न शके चालवी, दृढ तिम धरजो धीर ॥ कु० ॥ प्राणांतें पण प्रीछियें, व्रत नवि खंभियें वीर ॥ कु० ॥ २ ॥ शंका कंखा विगंछा वली, पर पाखंमी प्रसंग ॥ कु० ॥ प्रशंसा पर धर्मनी, रखे करो मन रंग ॥ कु० ॥ ॥ ३ ॥ पिंम प्रदान प्रपादिक, एहवा अनेक प्रकार ॥ कु० ॥ समकितने ते सर्वथा, दूषणना देनार ॥ कु० ॥ ४ ॥ आतमहितवंछक नरें, समकित राखवुं शुद्ध ॥ कु० ॥ थोडुं पण जो मेलुं करे, तो मांमे मोहादिक युद्ध

॥ कु० ॥ ५ ॥ पापी ते सहु वशें पडें, तव समरी पूरव वीर ॥ कु० ॥ को पें चड्या जाली गले, लई जाए निज घेर ॥ कु० ॥ ६ ॥ विडंबी विविध परें वली, निर्दय तेह निठोर ॥ कु० ॥ ते माटे तूं एहनुं, जतन करजे जो र ॥ कु० ॥ ७ ॥ क्यारे जो ते पामशे, थोडो पण अवकाश ॥ कु० ॥ तो वाधो गढ नेलसे, रखे करो विशवास ॥ कु० ॥ ८ ॥ सम्यक् दर्शनने स दा, आराधजे इकचित्त ॥ कु० ॥ पतिव्रता नारी परें, मेली मननी ज्रांति ॥ कु० ॥ ए ॥ चारित्र धर्म राजान ते, योग्य जाणि गुणगेह ॥ कु० ॥ देखा डशे दिन केटले, नक्तवत्सल प्रनु तेह ॥ कु० ॥ १० तनुजा बे ठे तेहनी, अंगथी पण नहि अलगी ॥ कु० ॥ परम वल्लन पूजित जगें, शीलशुं रही जे विलगी ॥ कु० ॥ ११ ॥ साम्राज्य संपद दायिनी, प्रवर लक्षणोपेत ॥ कु० ॥ सुख खाणी सुनगी घणुं, सकल सोहगनुं खेत ॥ कु० ॥ १२ ॥ स र्वेस्व गुणनी ऊरडी, देश विरति एक दिव्य ॥ कु० ॥ सर्व विरति बीजी स ही, नासें उत्तमतरें सेव्य ॥ कु० ॥ १३ ॥ एकमनें आराधतां, चक्री चा रित्र धर्म ॥ कु० ॥ ते पुत्री तुने परणावशे, शाश्वत जे थे शर्म ॥ कु० ॥ ॥ १४ ॥ तरवारनी धारा जिसुं, ठे आराधन तास ॥ कु० ॥ सुजाणने सु खनुं मूल ठे, अजाणने ते इःखरास ॥ कु० ॥ १५ ॥ त्रिविधें तेहने सेव तो, पामीश तूं सुख पूर ॥ कु० ॥ क्रमे क्रमे चडतो पगथिए, रहे तो तास हजूर ॥ कु० ॥ १६ ॥ परम प्रनूता पद पठे, मुक्ति पुरीनुं राज्य ॥ कु० ॥ पामीश परमेश्वरपणुं, जिहां वेरी न आणे वाज ॥ कु० ॥ १७ ॥ अडत्री शमी ए ढालमां, उदय रतन कहे एम ॥ कु० ॥ सुखिया तो तेहज सही, जेहने संयमसुं प्रेम ॥ कु० ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ सम्यक् ए सर्व सांजली, ते विश्वसेन कुमार ॥ सम्यक् दर्शन मंत्रि नो, सेवक थई निणिवार ॥ १ ॥ नेहेंशुं गुरुने नमी, पोतो पोताने गेह ॥ कुमर ने सपरिकरें, लाहो अपूरव लेह ॥ २ ॥ सुगुरु वचन संजारतो, स म्यक् दर्शन सेव ॥ सम्यक् ते सुधा करे, नवे नेहें नितमेव ॥ ३ ॥ कर्म राजा तव चिंतवे, अहो प्रतिज्ञा आजि ॥ पूरी में पाडी हवे, चिंता न र ही कांहि ॥ ४ ॥ नांगव मुज बहु कोपशे, जो आगें तो पण सल्य ॥ त्र धें पुदगल उपरही, एहनं नहिं नय स्थित्य ॥ ५ ॥ शेठ सहाय प्रनाव

थी, निवृत्ति पुरियें नेट ॥ आखर ए सहि पोचशे, खेली मोह आखेट ॥ ॥ ६ ॥ सर्वगाथा ॥ ६७७ ॥

॥ ढाल उंगणचालीशमी ॥

॥ वैरागी थयो ॥ ए देशी ॥ अनुक्रमें ते राजा थयो रे, जनकें जातां पर लोक ॥ नूमिका तेहने नालवी रे, सोंप्यो सघलो लोको रे ॥ १ ॥ समकित सांचवे, पाले राज्य पडूरो रे ॥ न्याय सुनीतिशुं, डुर्जनने करि दूरो रे ॥ स० ॥ २ ॥ निरानंद हवे एकदा रे, अमरपरहित अत्यंत ॥ पक्ष पोतानो पेखीने रे, कोप्यो राग केसरी चिंत्यो रे ॥ स० ॥३॥ दृष्टि राग रूपें थई रे, वडो सुत मोहनो ते वीर ॥ पिताने प्रणमी संचस्यो रे, पहोतो विश्वसेनने तीरो रे ॥ स० ॥ ४ ॥ छिड् जुवे छल कारणें रे, निशदिन रहे निजीक, पण लाग न पामे ते किशो रे, थापवा निज मत ठीको रे ॥स०॥५॥ पूर्व परिचित एकदा रे, तव एक तापस त्यांयें ॥ आव्यो पुर उद्यानमां रे, सांनल्युं ते नररायें ॥ स० ॥ ६ ॥ विश्वनूति नामें ते सही रे, कपट कलानो कोट ॥ दरीउ डुष्ट विद्यातणो रे, चूके न मंत्रनी चोटो रे ॥ स० ॥ ७ ॥ आकर्ष्या अज्ञानना रे, जन सहु जोवा जाय ॥ पण नरपति नावे कदा रे, समकित जिणे डुहवायो रे ॥ स० ॥ ८ ॥ कोईक साथें कहाव्युं इशुं रे, तव ते त्रिदंमीएं तास ॥ दर्शनने पण आवतां रे, श्यो थाए छे विणाशो रे ॥ स० ॥ ए ॥ पूर्व प्रसंगतणें वशें रे, दाक्षिण लगे नरदेव ॥ कांइक मुहूशरमें करी रे, तिहां पहोतो ततखेवो रे ॥ स० ॥ १० ॥ मंत्र विद्या कौतुक कला रे ॥ तपसी देखाडे तास ॥ दृष्टिरागें तव तक लही रे, नृपघटें पूस्यो वासो रे ॥ स० ११ ॥ त्रिदंमिएं तिम रीजव्यो रे, राजा आवे तिहां रोज ॥ नित जोए कौतुक नवां रे, चित्तमांहे धरि चोजो रे ॥ स० ॥ १२ ॥ चित्त चंचल थयुं कुमरतणुं रे, ते कुदृष्टिरागें कस्यो जेरो ॥ समकेतथी तव ते चव्यो रे, इम नाखे ते वेरो रे ॥ स० ॥ १३ ॥ ए श्वेतपटा निकु जडा रे, कला न बूझे कांइ ॥ ए त्रिदंमि नगवानमां रे ॥ ज्ञान उणिम किसी नांइ रे ॥ स० ॥ १४ ॥ तव सम्यक् दर्शन चिंतवे रे, कुदृष्टि स्नेह काम राग ॥ रूपें इहां राग केसरी रे, प्रगट्यो पूर्ण लही लागो रे ॥ स० ॥ १५ ॥ एक ज्वरतणे जोरें करी रे, व्यापे सवला रोग ॥ तिम ए एकने आगमे रे ॥ आवशे इहां अरि उघो रे ॥ स० ॥ १६ ॥ इहां रहे

वुं जुगतुं नहीं रे, मुजने हवे ते माट ॥ आलोप थयो इम चिंतिने रे, कु संग लही ते कुवाटो रे ॥ स० ॥ १७ ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रवी रे, किहांथ थी प्रगटी त्यांही ॥ गले झालीने तेहने रे, नाख्यो निज फंदामांही रे ॥ स० ॥ १८ ॥ कुलिंगी संग करावीने रे, धर्म ठगे बहु पाप ॥ एकेंद्रियादि कर्मां धख्यो रे, मोहादिकें मली सपापो रे ॥ स० ॥ १९ ॥ तिमज राख्यो तिहां रोकीने रे, तेहने अनंतो काल ॥ उगणचालीशमी ए कही रे, उद यरतन ए ढालो रे ॥ स० ॥ २० ॥

॥ दोहा ॥

॥ वली हवे ते एकदा, कर्म नृपें धरि हेत ॥ धन श्रेष्टीने धाम लेइ, उ पजाव्यो नर खेत ॥ १ ॥ भुजगनामा सुत ते सही, योवन पाम्यो जाम ॥ सुगुरु सदागम संगथी, समकित पाम्यो ताम ॥ २ ॥ मिथ्या दर्शन आदि दे, डुश्मन कीधा दूर ॥ सम्यक् दर्शननी सेवना, तिमज करे भरपूर ॥३॥ सम्यक् दर्शन मंत्रि जे, क्षायोपशमिक रूप ॥ त्रिविध आराधे तेहने, आ णी भाव अनूप ॥ ४ ॥ वरष केतां एक वही गयां, सुपरें करतां सेव ॥ प रण्यांपूठें एकदा, सुत तसु जणतां खेव ॥ ५ ॥ अवसर जाणी आपणो, वलि तिहां आव्यो वेग ॥ रोषभरें राग केसरी, उपजाव्या उद्वेग ॥ ६ ॥ ते भुजगतणां घटमां सही. बीजे रूपें बलवंत ॥ स्नेह रागमिषें संक्रम्यो, तव उपनो स्नेह अनंत ॥ ७ ॥ मात पिता भगिनीविषे, भाइविषे अति भूर ॥ दास दासी परिजनविषे, प्रीतिनुं बाध्युं पूर ॥ ८ ॥ बाहिरथी आ वे घरे. जो नजरे नावे कोय ॥ तो तेहने जोतो फिरे, भूख्यो तरस्यो सोय ॥ ९ ॥ नजरें देखे तेहने, तव तसु थाय करार ॥ पुत्रतणा तो प्रेमनो. प रमेश्वर लहे पार ॥ १० ॥ सर्व गाथा ॥ ७१८ ॥

॥ ढाल चालीशमी ॥

॥ नणदल माल्हडामां मोतीडो मणेर ॥ ए देशी ॥ वारी वेहुं मानानो बाल ते, वारी आलिंगे लई उत्संगे हो ॥ ढलमल गोरडामां मनडो ढकि गहि उ ॥ वारी मुखपर माखीगण गणे, वारी तो पण चुंबे मनरंगें हो ॥ढ०॥१॥ वारी खेलें खरडी नासिका, वारी भूपणथी शुण लाल हो ॥ ढ० ॥ वारी कौतकगी मुखे करें, वारीमल मूत्र बहु जंबाल हो ॥ ढ० ॥२॥ वारी केडे थाली कीरलो, वारी त्रिक चोक चाचरें तेह हो ॥ढ०॥ वारी सुत प्रसर्नी

परें भमे, वारी गलियां गलियां पुर तेह हो ॥ढ०॥३॥ वारी अनेक विधें दु लरावतो, वारी लोकनी न गणे लाज हो ॥ढ०॥ वारी दिन सारो लागी र हे, वारी भोजन न करे काज हो ॥ ढ० ॥ ४ ॥ सुखें रातें सूए नहीं, वा री जिहां नवि ऊंघे ते बाल हो ॥ ढ० ॥ वारी भर निंदामांथी भडकिउ, वा री ऊठे लेवा संभाल हो ॥ ढ० ॥ ५ ॥ वारी जनकनां भाणामांहेथी,वारी मीठुं मधुरुं नेह हो ॥ ढ० ॥ वारी आसडी जाए सवे, वारी खातो थयो जब तेह हो ॥ ढ० ॥ ६ ॥ वारी तिहां तिहां साथे संचरे, वारी जिहां जिहां जाए ते बाल हो ॥ ढ०॥ वारी जे जे कांई जोइयें तेहने, वारी चि त्तमां राखे चाल हो ॥ ढ० ॥ ७ ॥ वारी निशालें जई नित्यें, वारी पढावे रही पास हो ॥ढ०॥ वारी पांडसपाडां बहु करे,वारी पूरे पंमयानी आस हो ॥ ढ० ॥ ८ ॥ वारी व्याधितणे उदयें वली, वारी अधिक करे उचाट हो ॥ ढ० ॥ वारी ते ऊपर खडो रहे, वारी अहनिशि सूवे न खाट हो ॥ ढ० ॥ ए ॥ वारी वैद्य तेडावे वलि वलि, वारी औषध करे अनेक हो ॥ ढ० ॥ वारी जाणा जोपीने भूवा, वारी विध विध मेले विशेष हो ॥ ढ० ॥ १० ॥ वारी मंत्र यंत्र मणि औषधी, वारी अनेक परें ऊतार हो ॥ ढ० ॥ वारी करी इम करतां कांइ, वारी जो न पडे करार हो ॥ ११ ॥ वारी हिंमत तो हारे हिए, वारी डुखी थईने दीन हो ॥ ढ० ॥ वारी विविध परें विलवे घणुं, वारी लंघे आरती लीन हो ॥ ढ० ॥ १२ ॥ वारी हाहा शुं थाशे हवे, वारी नावे कां अमने मोत हो ॥ ढ० ॥ वारी अती नेहें इ म ऊचरे, वारी घर गयुं सर्वस्वसोत हो ॥ ढ० ॥ १३ ॥ वारी चालीशमी ढालें जुउ, वारी स्नेहवशें गई सान हो ॥ ढ० ॥ वारी उदय रतन कहे ते हने, वारी सुणजो सहु सावधान हो ॥ ढ० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ इम करतां मोटो थयो, जालिम तेह जुवान ॥ परणावी तस प्रेम सुं, कन्यारूप निधान ॥ १ ॥ हाट वेसाडी हेतसुं, शीखवे रही समीप ॥ वणिज कला तसु वेगसुं, कुमर लही कुल दीप ॥ २ ॥ धनद शेवनुं धन सवे, सुभगें सोंपी तास ॥ धव धव कीधो घर धणी, अंगें धरि उल्लास ॥ ३ ॥ लेवुं देवुं ते वस्तु, गरथ ने गृहव्यापार ॥ पोतें कांई पीछे नही, वेगो रहे घरबार ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ७३६ ॥

॥ ढाल एकतालीशमी ॥

॥ लाल वेसरदे ॥ ए देशी ॥ इम अंगजनी चेष्टा लीनो, भावठें भरमां रही भीनो ॥ लाल सुत नेहें, मनसुं मुंफाणो ॥ सु० ॥ पापें पथराणो ॥ सु० ॥ ला० ॥ १ ॥ सुत स्नेहें ते जो जो सुभगो, डुर्गति लहेसे महा डु भगो ॥ ला० ॥ २ ॥ दिलमांहे न संभारे देवा, वली वीसारी गुरुसेवा ॥ ला०॥ ३ ॥ सुत विसार्यां पड्यो सांसे, मुखथी न कहे सामी वरांसे ॥ ला० ॥ ४ ॥ अलगा रह्या गुरुना उपदेश, वेरणि थइ धर्मकथा विशेष ॥ ला० ॥ ५ ॥ सम्यग्दर्शन नामें पण तेह, आरति मने लही अछेह ॥ ला० ॥ ६ ॥ स्नेहरूपें राग केसरी बलिउ, लहि ने तिहांथी ऊचलिउ ॥ ला० ॥ ७ ॥ सम्यक्दर्शन नामें पण तेह, आरति मनें लही अछेह ॥ ला० ॥ ८ ॥ मिथ्यादर्शन मंत्रीसर धायो, लेइ परिकर ने तिहां आयो ॥ ला० ॥ ए ॥ सुभगतणा घटमां सकुटंबे, आवी वश्यो अवलंबे ॥ ला० ॥ १० ॥ जात वधूनो जव थयो जोरो, तव संचार्यो तिणे दोरो ॥ ला० ॥ ११ ॥ तिणे दोरे सुतनो दिल फरिउ, तव तातनो गुण विसरिउ ॥ ला० ॥ १२ ॥ आठे पहोर उद्वेग उपाय, ए दीठो अम न सुहाय ॥ ला० ॥ १३ ॥ स घला अनर्थनुं ए मूल, अमने सुखमांहे जगावे शूल ॥ ला० ॥ १४ ॥ सु खें वेसी रहेवा न दीयें, अवगुण केता मुख वदीयें ॥ ला० ॥ १५ ॥ इम चिंति घरमांथी नेटे, बापने काढयो ते बेटे ॥ ला० ॥ १६ ॥ सुधर्म बुद्धि तजी ते सुभगो, अंगज वधूथी घणुं उभगो ॥ ला० ॥ १७ ॥ घर घर भी ख मागीने खाय, किहां रे पेट पूरुं न भराय ॥ ला० ॥ १८ ॥ मन वचन नें काया केरां, करी पातक तेह घणेरां ॥ ला० ॥ १ए ॥ तिमज एकेंडि यादिकमां भमिउ, डुःखें मोहादिकें दमिउ ॥ ला० ॥ २० ॥ एकतालीश मी ढालें कहे उदय, श्रावक विण कूण हूए सदय ॥ ला० ॥ २१ ॥

॥ दोहा ॥

॥ नरभव वलि कर्में दियो, सिंह नाम नर सोय ॥ अनुक्रमि समकि त पामिउ, यौवने आव्यो जोय ॥ १ ॥ विषय राग त्रीजुं वली, रोपें ध रिने रूप ॥ वश्यो तेमां राग केसरी, मन हरख्यो मोह भूप ॥ २ ॥ शब्द रूप रस गंध फरस, तेहना त्रेवीश भेद ॥ तीव्र राग तेहनो धरे, अहनि शि तेह उमेद ॥ ३ ॥ रमणीरागें रंजिउ, मांजी सोनो मोह ॥ आपें ज

६ अलगो वश्यो, खिण नवि खमे विढोह ॥ ४ ॥ जे सा बोली ते खरुं, बीजो न गमे बोल ॥ हितकारि तेहनुं कह्युं, मनसुं मानि अमोल ॥ ५ ॥ वाह्लां सहु विष सारिखां, वनिता अमृतवेलि ॥ शरण न को श्यामा स मुं, वाला समी न बेलि ॥ ६ ॥ मनसुं तो इम मानतो, अवरां कहे अव हेलि ॥ सुखनुं मूल ढे सुंदरी, बाकी धीनो मेल ॥७॥ सर्वगाथा ॥७६२॥

॥ ढाल बेतालीशमी ॥

॥ तट जमुनानो अति रलिआमणो रे ॥ ए देशी ॥ तव तसु नारी रे निज जोरो लही रे, जूनां दास दासी जेह ॥ दूर करीने रे दूजां दिल भा वतां रे, राख्यां घर रंग लेह ॥ १ ॥ नखरां जो जो रे निर्लज नारिनां रे, अडखिल मेहली भचालि ॥ सलिल सुगंधें रे स्नान करे नितें रे, वेणि वधा री वाल ॥ न० ॥ २ ॥ सुरभिद्रव्यें रे नित भीनी रहे रे, पहेरे मन गमता वेष ॥ भूषणभारें रे अंग भांगी पडेरे, दर्पणमां रहि देख ॥ न० ॥ ३ ॥ भ ली पेरें भूंजे रे भोजन भावतां रे, मन माने ये मोज ॥ जे जे गमे रे ते ते जारशुं रे, रमणी रमतें रोज ॥ न०॥ ४ ॥ माया गाली रे तो पण ते मा नुनी रे, न्यायने वचनें नाथ ॥ जीभने जोरें रे भली परें भोलवे रे, जो जो युवतिनी जात ॥ न० ॥ ५ ॥ पवित्र ए नारी रे ढे पतिव्रता रे, सति आमां शिरदार ॥ दयिता माहरी रे ढे देवपूतली रे, भांखे इम भरतार ॥ ॥ न० ॥ ६ ॥ एक दिन तेणें रे पारखा कारणें रे, अढतो दोष उपाय ॥ मायामांहे रें मार्यो पग पानिएं रे, तव तस मर्दे ते पाय ॥ न० ॥ ७ ॥ कहे कांइ जूठुं रे नही ए कामनी रे, चतुरा पडि मुने चूक ॥ आज पढी एहवुं रे, हुं नहि आचरुं रे, दिलमां न धरो दूख ॥ न० ॥ ८ ॥ जो वलि चुंकूं रे इम करतां कदा रे, तो चंदन रसथी जोर ॥ शीतल तुम पगें रे प्र हार करी मुने रे, सुख देयां वल फोर ॥ न०॥ ए ॥ तव सा चिंते रे दास ए रांकने रे, श्याने भमाडुं भूर ॥ जे गमे मुने रे तेहने लावूं घरें रे, शंका मेहेली दूर ॥न०॥१०॥ तव बीजे दाडे रे नर दोषा समे रे,अंगणे तेडी ए क ॥ नर कोई तरुणो रे नाथने ते कहे रे, सुणो स्वामी सुविवेक ॥ न०॥ ॥ ११ ॥ पितृनुं प्रेष्युं रे पितृलोकथी रे, मनुज आवी रह्युं बार ॥ ते मु ऊ साथें रे करवा कांई वारता रे, इढे एकांतें अपार ॥ न० ॥ १२ ॥ पण हूं न करुं रे तमने पूढ्या विना रे, पर घर भंजा लोक ॥ मनन्नुं कल्प्युं रे का

लें कहे किश्युं रे, अछता उपाइ दोष ॥ पण हूं० ॥ १३ ॥ तुमे तो महा रां रे लक्षण सवे लहो रे, लोक लवे जो लाख ॥ तो पण केहनुं रे कह्युं मानो नहीं रे, स्नेह पूरे छे साख ॥ पण हूं० ॥ १४ ॥ ढाल ए बोली रे बे तालीशमी रे, उदय वदे इम धार ॥ कामिनी परें रे कोई आप गोपवा रे, समभूं नहिं संसार ॥ पण हूं० ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव ते कहे प्रिया तुने, न घटे कहेवुं एम ॥ विकल्प कोइ ताहरेविषे, कहो हुं चिंतवुं केम ॥ १ ॥ हुं नहिं बीजा सारिखो, लोकने कहेणे लाग ॥ मेलूं जे मूरखपणे, आपणा घरमां आग ॥ २ ॥ ते माटे जाई तुमे, तस सनमानो तेम ॥ पूर्वज प्रीतें आपणा, जयकारी होय जेम ॥ ३ ॥

॥ ढाल त्रेतालीशमी ॥

॥ रुकमणि राणि मोहोलमां ॥ ए देशी ॥ तव सा जइने तेहसुं, खेले विध विध खेल हो लाल ॥ स्वेछाएं तनु सोंपती, रसनी चलावे रेल हो लाल ॥ १ ॥ माया जो जो महिलातणी, जे किणें परखी न जाय हो लाल ॥ छयल पुरुषनें छेतरे, आखर केंहनी न थाय हो लाल ॥ मा० ॥ २ ॥ भरतारने भाखे पछे, अवहेली मुने एण हो लाल ॥ भक्तें तुमे भजो नहीं, पूर्वज रूठा तेण हो लाल ॥ मा० ॥ ३ ॥ विनयतणे वचनें करी, भाव दे खाडी भूरि हो लाल ॥ तिम संतोष्यो तेहने, में उलट आणी उर हो लाल ॥ मा० ॥ ४ ॥ पूर्वजने ए प्रीछवी, प्रसन्न करशे विशेष हो लाल ॥ स घला पितृनो सही, अति मानीतो एष हो लाल ॥ मा० ॥ ५ ॥ बीजुं प ण बहु काम छे, पितृसंबंधी स्वामि हो लाल ॥ दिन केताएक ते वती, ए रहेशे आ गाम हो लाल ॥ मा० ॥ ६ ॥ ते माटे में नूंतस्यो, जिहां ल गें रहो आंहि हो लाल ॥ भोजन तिहां लगें अम घरें, करजो तुमे उछां हि हो लाल ॥ मा० ॥ ७ ॥ तव ते कहे तें रूडं कह्युं, आमंत्र्यो जे एह हो लाल ॥ भलि परें भुंजावजो, अति आदरें सस्नेह हो लाल ॥ मा० ॥ ८ ॥ पितृ जन कोइ प्राहुणा, आवे आपणे भुवन्न हो लाल ॥ चाही कीजें चाकरी, पोते होवे जो पुन्य हो लाल ॥ मा० ॥ ए ॥ शालि दालि घृत शालणां, लापसि घृत पूर आदि हो लाल ॥ उपपतिने ते अंगना, सु विधें जमाडे स्वादि हो लाल ॥ मा० ॥ १० ॥ अनेक विधने आसनें, सु

रत सजि, तसु संग हो लाल ॥ अकल गति अबलातणी, ढांकी राखे ढंग हो लाल ॥ मा० ॥ ११ ॥ फल फूल मेवादिक नवा, आपे धरी उमेद हो लाल ॥ जरतार ज्ञक्तिज्ञरें करे, नित नवलां निवेद हो लाल ॥ मा० ॥ ॥ १२ ॥ तव ते जार वदे अहो, पूर्वज तुज ज्ञली पेर हो लाल ॥ संतो प्या ठे में सही, मनमांहे धरसे महेर हो लाल ॥ मा० ॥ १३ ॥ जे जे क रे ठे सेवना, ते ते पहोचे ठे तास हो लाल ॥ एहवुं जाणी ने तेहने, अंगें थयो उह्लास हो लाल ॥ मा० ॥ १४ ॥ ज्ञक्ति अपूर्व उह्लसी, अष्टांग प्र णमी विशेष हो लाल ॥ कांई जे खातां ऊगरे, शिर चढावे ते शेष हो लाल ॥मा०॥ १५ ॥ तेतालीशमी ढालमां, जो जो महिलानां काम हो लाल ॥ उदय वदे निज नाथने, गोरीयें कीधो गुलाम हो लाल ॥ मा० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जो कोई कहे तेहने, दुःशीला तुज नार ॥ तव ते कहे हुं जाणुं अ बुं, ए सघलो आचार ॥ निर्मल मुऊ नारी अठे, गोप्य न राखे गूऊ ॥ सं बंध पहिलो ए सवें, मांफि कह्यो ठे मुऊ ॥ २ ॥ इम उत्तर नापे किश्यो, कह्युं न माने कांहि ॥ मगन थयो महिला रसें, निर्गम समजे नांहि ॥३॥ तव एक दिन कोई दुर्जनें, देखाड्यो ते जार ॥ तेहने घरमां पेसतो, सम्य क् परें सुविचार ॥ पोताने घरें पेसतो, पेखी तेह पुरूष ॥ घर आवी घरणी प्रतें, रंगें जणावे रूप ॥ ५ ॥ हे कांते कहो ए किसी, लव करे ठे लोक ॥ तव सा कहे थइ तरतरी, लोक तणा मुख वोक ॥६॥ सर्वगाथा ॥ ७०२॥

॥ ढाल चुमालीशमी ॥

॥ सीता हो पीउ सीतारा प्रज्ञात ॥ ए देशी ॥ जाण्युं हो पिउ जाण्युं तुमारुं में आज, सघलुं हो पिउ सघलुं जाण पणुं सही ॥ परघर हो पि उ परघरज्ञंजा लोक, तेहनी हो पिउ तेहनी वातें लागा वही ॥ १ ॥ घरनी हो पिउ घरनी त्रेवड लहे जेह, परनी हो पिउ परनी न माने वा रता ॥ दोषी हो पिउ दोषी जन विण दोष, पापी हो पिउ पापी रहे प चारता ॥२॥ में तो हो पिउ में तो आगलथी एह, तुमने हो पिउ तुमने गुह्य कह्युं हतुं ॥ तुमें तो हो पिउ तुमें तो दिलनुं कूड, ज्ञलें हो पिउ ज्ञलें आज कह्युं ठतुं ॥ ३ ॥ फलशे हो पिउ फलशे मनोरथ माल, जो जो हो पिउ जो जो आज थकी सहु, धरशे हो पिउ धरशे पितृपण हेत ॥ ज्ञग

ति हो पिउ जगति तमारी देखी बहु ॥ ४ ॥ भावी हो पिउ भावी प्रमाणें बुद्धि, आखर हो पिउ आखर सहुने ऊपजे ॥ मतिने हो पिउ मतिने मा ने फलपत्ति, जगमां हो पिउ जगमां जोतां नीपजे ॥ ५ ॥ सुंदरी हो पिउ सुंदरी अवर समान, मुझने हो पिउ मुझने जाणीने सदा ॥ रहेजो हो पिउ रहेजो रखोपा काज, महारो हो पिउ महारो हाथ झाली मुदा ॥ ६ ॥ आपद हो पिउ आपद कोइ अत्यंत, लहेसो हो पिउ लहेसो तुम लक्षणें लहो ॥ दीशेहो पिउ दीशे वांको दींह, अमने हो पिउ अमने जे एहवुं कहो ॥ ७ ॥ निपट हो श्रोता निपट निर्भृछ्यो तास, पोतें हो श्रोता पोतें रोष धरी रही ॥ उदय हो श्रोता उदय रतन ए ढाल, चुंपें हो श्रोता चुंपें चुमालीशमी कही ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

॥भोजन काजे निज भुवन, विट आवंतो तेह ॥ वनितायें वर्ज्यो तदा, निश्चल दाखी नेह ॥ १ ॥ तव एक दिवसें ताकीने, मनोहर महिषी एक ॥ गोप्य रखावी आपणी, विटपाहे सुविवेक ॥ २ ॥ तव सिंह भणे सुण सुंदरी, महिषी नावी वार ॥ के कोइ चोरें अपहरी, के रही रान मजार ॥ ॥ ३ ॥ ते कहे तो हुं शुं करुं, फुटूं ताहरुं कर्म ॥ आचरण अंधा ताहरां, मूढ न जाणे मर्म ॥ ४ ॥ तव शोधे सघली दिशा, आरतिवंत अपार ॥ भूख्यो तरस्यो वन भम्यो, न लही शुद्धि लगार ॥५॥ घर आवी तव ते घ णुं, मुख मेली नीसास ॥ नारीने कहे नवि जडी, अहो हवे शी आस ॥६॥

॥ ढाल पीस्तालीशमी ॥

॥ वीजाजी हो रतन कुंउ मुख सांकडो रे वीजा ॥ ए देशी ॥ तव सा कहे जेवो ताहरो रे पिउजी, पितृ ऊपर छे भाव ॥ स्वामी सुणजो शीख साची ॥ पियुजी हो सिद्धि छे घरमां तेहवी रे ॥पि०॥ कहुं हुं पामी प्रस्ताव ॥स्वा० ॥१॥पि०॥ वधतो वलि थाशे किशोरे ॥पि०॥ आगल तुम उतपात ॥स्वा०॥ पि०॥ मुहुरत ए मांमथुं सही रे ॥पि०॥ धूल तुमारी धात ॥स्वा०॥२॥ श्रोता जी हो, तव ते वेगें ऊठिने रे ॥पि०॥ वहे विलगी पाय, वात सुणजो सेण वा रू ॥ प्रियाजी हो सघलुं ए तमे साचुं कह्युं रे प्रियाजी, में पितृ मेल्या पलाय ॥वा०॥३॥प्रि०॥ तेमाटे हवे तेहवुं रे ॥प्रि०॥ आराधन करो एम ॥वा०॥ प्रियाजी हो, जिम आवे आपण मंदिरें रे ॥प्रि०॥ पूर्वज धरीने प्रेम ॥वा०

॥ ४ ॥ श्रोताजी हो, तव सा कोपी कामिनी रे ॥ श्रोता ॥ मंदिरमां न स माय ॥ वा० ॥ सगाजी हो सत्य पुरुष तुं रहे ने परहो रे ॥ स०॥ इम बोली भूपराय ॥ वा०॥५॥स०॥ लक्षण ताहरां लहुं सवे रे ॥ स० ॥ इम कही माख्यो लात ॥वा०॥स०॥ फरी फरी वली नाखे परहुं रे ॥श्रोता॥ हडसेली पग साथ ॥वा०॥६॥स०॥ जोरपणे युवतीतणे रे ॥श्रोता॥ चरणें थापी रह्यो सीस ॥ वा० ॥ साधीस हुं तव सा कहे रे ॥ पि० ॥ पूर्वजने सुजगीस ॥वा०॥७॥पि०॥ पण पर घर पंमित लोकनां रे ॥पि०॥ तमे धरसो वच मनमांहि ॥ वा० ॥ तव ते कहे हवे आजथी रे ॥ श्रो० ॥ नहिं धरुं जीवित तांहिं ॥ वा० ॥ ८ ॥ त्रि० ॥ महारुं कयुं फल में लह्युं रे ॥ त्रि० ॥ हजी शुं वली नथी शीख ॥वा०॥श्रो०॥ वेलपरें इम बांधिने रे ॥ श्रोता॥ ते कामिनीएं कयो ठीक ॥ वा०॥९॥ श्रो०॥ उदयरतन इम उच्चरे रे ॥ श्रोता ॥ पिस्तालीशमी ढाल ॥ वा० ॥ श्रो० ॥ मर्द महिलाने वशें पड्यो रे ॥ श्रोता ॥ न जुए आप संभाल ॥ वा० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

॥ वलि पूजा उपचार बहु, आणावी पिउ पास ॥ पितर पूजे सा प्रेमदा, अगर उखेवी खास ॥ १ ॥ इम करतां आराधतां, यामनी जब गई याम ॥ तव ते विटने तेडीने, निज पीउने कहे आम ॥ २ ॥ मनुष्य पितृनुं मोकल्युं, आव्युं छे ग्रह वार ॥ तव ते कहे तुमे जई सुणो, जे जंपे तेह विचार ॥ ३ ॥ भक्ति करो बहु परें भली, जिम आपणें जयकार ॥ परिघल कमला पामियें, तिम करजो तुमें नार ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ८३० ॥

॥ ढाल छेतालीशमी ॥

॥ श्रेणिक मन अचरज थयो ॥ ए देशी ॥ तव सा जईने ते कने, प्रेमें पूरव रीतें रे ॥ सुख विलसी निज स्वामिने, भीडवे मननी प्रीतें रे ॥ १ ॥ स्नेह वशें परवश थयो, ते भामनीयें भोलविउरे ॥ भवसंकटमां भारिछे, आचरणमां उलवीउ रे ॥ स्ने० ॥ २ ॥ विनय विवेक वचनरसें, में पितृ संतोष्या विशेषें रे ॥ महीपी किहां एकथी आवशे, वलति कुशल कल्याण करेशे रे ॥ स्ने०॥ ३ ॥ प्रदोष समे तम पसरते, महीषी रिकती मोदे रे ॥ द्वारें पेठी दोडती, तव सिंह हरप्यो सविनोदे रे ॥ स्ने० ॥ ४ ॥ अदभूत प्रत्यय ऊपनो, अति रंज्यो रमणीरागें रे ॥ वलि कांइ आपो आगना, इ

म कहे स्त्री आगें रे ॥ स्ने० ॥ ५ ॥ शिर मुंमावो सा कहे, जिम विशेपें ते रीजे रे ॥ मुंमन वाहलुं प्रेतने, ते तिम करे दिन वीजे रे ॥ स्ने० ॥ ६ ॥ इम विषय रागरूपें करी, राग केसरीयें विगोयो रे, प्रमदाने वश पाडीने, अवतार आलें खोयो रे ॥ स्ने० ॥ ७ ॥ देव गुरु आदिक दिलथकी, प रिहरि प्रमदा राची रे ॥ धर्मादिक धंधोलिया, सुंदरी जाणी साची रे ॥ ॥ स्ने० ॥ ८ ॥ कोइ क्यारे कहे तेहने, तें समकित दर्शन सेवा रे ॥ कि म मेली तव ते कहे, सुणो कहुं समजावी हेवा रे ॥ स्ने० ॥९॥ श्लोक ॥ सम्यक् दर्शनमेतस्याः, प्रियाया एव निश्चितं ॥ सम्यग्दर्शनो ह्यन्यस्तु, को पि धूर्तैः प्रकल्पितः ॥ १ ॥ पूर्वढाल ॥ रागकेसरीना राज्यमां, इम ते बोले उंधुं रे ॥ आचरण अवलुं ए सवे, सम्यक् जाणी सूधुं रे ॥ स्ने० ॥ १०॥ सम्यक् दर्शन मंत्रवी, दिल चोरी रह्यो दूरें रे ॥ मिथ्यादर्शन तव मोदशुं, पेठो निज दलपूरें रे ॥ स्ने०॥ ११ ॥ मरण लहीने मूढ ते, एकेंद्रियादिक आदें रे ॥ योनि ते फरसी फरी फरी, वाह्यो विषय सवादें रे ॥ स्ने०॥१२॥ बेतालीशमी ढाले ठेतख्यो, विपयें तेह वराको रे ॥ उदयरतन कहे अहो भ वी, विरुआ विषय विपाको रे ॥ स्ने० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवतार्यो वलि अन्यदा, जिनदास श्रेष्ठि गेह ॥ पुत्रिपणे ते प्राणि ने, कर्मे तिहांथी लेह ॥ १ ॥ जिनश्री नामें ते सही, सकुटंबें ते सेठ ॥ स म्यक् दर्शन मंत्रिने, सेवे सदा शुभ डेठ ॥ २ ॥ जिनश्री पण पाले तिणे, समकित धरी स्नेह ॥ विमल सेठ शुद्ध श्राद्धने, परणावी ठे तेह ॥ ३ ॥ देव धर्म गुरु रागिणी, श्री जिन धर्म उदार ॥ करतां कुलमंमन थया, ते हने पुत्र वे चार ॥ ४ ॥ घर धणिआणी ते थई, आण न लोपे कोय ॥ चारो नहि कोइ अवरनो, जे एह करे ते होय ॥ ५ ॥ धनश्री नामें धर्मि णी, वडा पुत्र घर नार ॥ सारथ वाहनी ते सुता, स्वरूपवंत उदार ॥ ६ ॥

॥ ढाल सडतालीशमी ॥

॥ ठेडो नाजी ॥ ए देशी ॥ तेहवें तक सांधीने विनव्यो, द्वेप गजेंद्रें धाई ॥ मोह गजेंद्रनें मनती मोजें, जो जो मुज सकजाई ॥ १ ॥ दूउधोली ॥ मानें मोहराजा महाराजा ॥ दू० ॥ मेहेलावी तेहनी माजा ॥ दू० ॥ वजडावी सुयशवाजां ॥ दू० ॥ धोली धोली धोली डुउधोली ॥ ए आंक

॥ ४ ॥ श्रोताजी हो, तव सा कोपी कामिनी रे ॥ श्रोता ॥ मंदिरमां न स माय ॥ वा० ॥ सगाजी हो सत्य पुरुष तुं रहे ने परहो रे ॥ स०॥ इम बो ली उन्नराय ॥ वा०॥५॥स०॥ लक्षण ताहरां लहुं सवे रे ॥ स० ॥ इम क ही माख्यो लात ॥वा०॥स०॥ फरी फरी वली नाखे परहुं रे ॥श्रोता॥ हडसेली पग साथ ॥वा०॥६॥स०॥ जोरपणे युवतीतणे रे ॥श्रोता॥ चरणें थापी र ह्यो सीस ॥ वा० ॥ साधीस हुं तव सा कहे रे ॥ पि० ॥ पूर्वजने सुजगी स ॥वा०॥७॥पि०॥ पण पर घर पंमित लोकनां रे ॥पि०॥ तमे धरसो वच मनमांहि ॥ वा० ॥ तव ते कहे हवे आजथी रे ॥ श्रो० ॥ नहिं धरुं जी वित तांहिं ॥ वा० ॥ ७ ॥ त्रि० ॥ मह्ारुं कर्युं फल में लह्युं रे ॥ त्रि० ॥ हजी शुं वली नथी शीख ॥वा०॥श्रो०॥ बेल परें इम बांधिने रे ॥ श्रोता ॥ ते कामिनीएं कर्यो ठीक ॥ वा०॥ए॥ श्रो०॥ उदयरतन इम उच्चरे रे ॥ श्रो ता ॥ पिस्तालीशमी ढाल ॥ वा० ॥ श्रो० ॥ मर्द महिलाने वशें पड्यो रे ॥ श्रोता ॥ न जुए आप संजाल ॥ वा० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

॥ वलि पूजा उपचार बहु, आणावी पिउ पास ॥ पितर पूजे सा प्रेम दा, अगर उखेवी खास ॥ १ ॥ इम करतां आराधतां, यामनी जव गई याम ॥ तव ते विटने तेडीने, निज पीउने कहे आम ॥ २ ॥ मनुष्य पितृ नुं मोकल्युं, आव्युं ढे ग्रह वार ॥ तव ते कहे तुमे जई सुणो, जे जंपे तेह विचार ॥ ३ ॥ जक्ति करो बहु परें जली, जिम आपणें जयकार ॥ परिघल कमला पामियें, तिम करजो तुमें नार ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ७३० ॥

॥ ढाल बेतालीशमी ॥

॥ श्रेणिक मन अचरज थयो ॥ ए देशी ॥ तव सा जईने ते कने, प्रेमें पूरव रीतें रे ॥ सुख विलसी निज स्वामिने, प्रीबवे मननी प्रीतें रे ॥ १ ॥ स्नेह वशें परवश थयो, ते जामनीयें जोलविउरे ॥ जवसंकटमां जारिउ, आचरणमां उलवीउ रे ॥ स्ने० ॥ २ ॥ विनय विवेक वचनरसें, में पितृ संतोष्या विशेषें रे ॥ महीपी किहां एकथी आवशे, वलति कुशल कल्याण करेशे रे ॥ स्ने०॥ ३ ॥ प्रदोप समे तम पसरते, महीपी रिकती मोदे रे ॥ द्वारें पेठी दोडती, तव सिंह हरप्यो सविनोदे रे ॥ स्ने० ॥ ४ ॥ अदभूत प्रत्यय ऊपनो, अति रंज्यो रमणीरागें रे ॥ वलि कांइ आपो आगना, इ

३ ॥ सम्यक् दर्शन पण सही, ठटक गयो तव छोड ॥ परिकरसुं वासी दा, मिथ्यादर्शन मन कोड ॥ ४ ॥

॥ ढाल अडतालीशमी ॥

॥ आज सखी सामलीउंरे मुने मारगडा ॥ ए देशी ॥ एकदा ते रोषें भ णी रे, वदे छे जिम तिम वाणी रे ॥ विमल श्रेष्ठिकने विवहारी रे ॥ तव आव्यो कोई अधिकारी रे ॥ १ ॥ मुखें मौन धरी रही वहू रे ॥ सासु तव नांखे वहू रे ॥ तिहां बेठे तें नरें दीठो रे ॥ ऐन बलें जाणे अंगीठो रे ॥२॥ तव ते कहे सुण भद्रे रे ॥ सुं वहुसुं वढे छे छिद्रे रे ॥ फोकट ए फजेत थावुं रे ॥ एक श्लोक कही समजावुं रे ॥३॥ आर्या ॥ सत्वं कस्यगृहमिदं, या स्यति सह केन चेयमिति लक्ष्मीः ॥ कतिपयदिनपर्यंतं, नत्वं न गृहं न चेयं श्रीः ॥१॥ वहुनो स्वभावते सारो रे ॥ दीसे छे लाज अपारो रे ॥ नाहकसुं एहने निभ्रंछो रे ॥ वेढी लेवा शुं वंछो रे ॥ ४ ॥ कालें थाशे एहनो वारो रे, मनमां एहवुं न विचारो रे ॥ आखर ए घर थाशे एहनुं रे, दिल दुःख धरिएं शुं तेहनुं रे ॥ ५ ॥ इत्यादिक इणि परें वारी रे, घरे गयो ते व्यवहारी रे ॥ ते उपरे पण सा कोपी रे, अहो लाज माहरी इणें लोपी रे ॥ ६ ॥ केवल वहुसुं वढे नवि डापें रे, बीजाने पण संतापे रे ॥ हली ए कुण ताहरो सणीजो रे, तातो थई जण त्रीजो रे ॥ ७ ॥ शीखवणी ए सहु ताहरी रे, इणें जात विगोई माहरी रे ॥ इम कहेती करें ग्रहि पाली रे, थई वाघणी सी विकराली रे ॥ ८ ॥ धनश्री उपरे तव धाई रे, धरायें पडी धसकाई रे ॥ हैया ऊपर बेसीने रे, हणी छरीयें दंत पीसीने रे ॥ ए ॥ तव हाहाकार करी धाया रे, सहु सज्जन मलिने आया रे ॥ तव तेहने पण सा खीजी रे, हणवा दोडी छरी बीजी रे ॥ १० ॥ पाटू यष्टिका पहाणे रे, तेहने तव सहु मली आहणे रे ॥ तिहां लगे ज्यां वहु तिणें मारी रे, तेहने पण स्वजनें संहारी रे ॥ ११ ॥ असमंजस एहवुं जोई रे, सकुटंब विमल भेव सोई रे ॥ संयम पंथे परवरिउ रे, जिनश्री जीव नरकें संचरीउ रे ॥ १२ ॥ वली मत्त्य एकेंद्रियादें रे, अवतार लिया विखवादें रे ॥ इम काढयो काल अनंतो रे, द्वेष गजेंद्र थयो बलवंतो रे ॥ १३ ॥ ए अडतालीशमी ढालें रे, उदयरत्न वदे अंतरालें रे ॥ जे जिनमतमां रहे भीना रे, ते नर नरमांहे नगीना रे ॥ १४ ॥

णी ॥ ज्येष्ट बंधु माहरो जोरावर, राग केसरी रोसालो ॥ जीती करी आव्यो ते जालिम, पोते जई तिहां पालो ॥ दू० ॥ २ ॥ तातजी महेर करीने तेहने, नेहनो आप्यो नेजो ॥ अहिली वार अमारो वारो, नड जाणी तिहां नेजो ॥ दू० ॥ ३ ॥ इणि परें उल्लसितं उजे, अमरपसुं आवरितं ॥ जनकने प्रण मीने ते वेगें, जिनश्री घर संचरितं ॥ दू० ॥ ४ ॥ तेह तणे संजोगें तेहने, धनश्री उपरें द्वेप ॥ परें परें ते पुत्र वधूसुं, उपनो रोप अशेप ॥ दू० ॥ ॥ ५ ॥ दीठे रीसें बले दिलमांहि, अवलुं अवलुं वोले ॥ प्रीसे नहीं ना णामां पूरूं, खोटा अवगुण खोले ॥ दू० ॥ ६ ॥ विण अपराधें वांक उपा ई, चहोडे शिरमां चाटूं ॥ वहु विचारी पग चांपे तव, सासु मारे पाटूं ॥ दू० ॥ ७ ॥ काम कर्यां सघलां अवहेले, निकुकने पणे मेलो ॥ पोते आपीने पचारे, पुत्र न राखुं नेलो ॥ दू० ॥ ८ ॥ रोटी अन्नादिकने री सें, आगलथी न ये अडवा ॥ कण मात्र जो कोरुं खाए, तो नडकी वे से नडवा ॥ दू० ॥ ९ ॥ विनयवती ते न करे अविनय, पद पखाले वे सी ॥ निभ्रंठी तव नाखे तेहने, पगसुं पाठी ठेसी ॥ दू० ॥ १० ॥ वांसो चोलें तो वलि तेहने, निपट नाखे निछेटी ॥ प्रीसती वेला जो रहे पासें, तो अलगी करे आठेटी ॥ दू० ॥ ११ ॥ रखे एहनो कांइ थाए चारो, घडी एक घर नवि ठंमे, इम जाणी रहे छल जोती, नूंमी कहीने नंमे ॥ दू० ॥ १२ ॥ ॥ देव धर्मने गुरुने दिलथी, वली मेहेल्या वीसारी ॥ ढांकणादिक नांगुं ल ही नांमे, जूनुं पण संनारी ॥ दू० ॥ १३ ॥ लोक आगल हींमे लवलवती, अछता अवगुण कहेती ॥ वहु पाठो उत्तर नवि वाले, कुल लज्जाने वहेती ॥ दू० ॥ १४ ॥ द्वेपन्नरें इम रहे धगधगती, सदाकाल ते सासू ॥ वेरणीनी परें थइ वहुने आंखें पडावे आंसू ॥ दू० ॥ १५ ॥ सडतालीशमी ढालें सासूने, व हुनी साथें वेर ॥ उदयरतन कहे चाल्यां आवे, आगममां इणि पेर ॥ दू० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ समज्युं सयल स्वरूप ते, विमल श्रेष्टि सवि आदि ॥ स्वजन कुटंब सहु पुर जनें, वाध्यो तव विपवाद ॥ १ ॥ जो शीखामण कोइ कहे, तो कोपे सुविशेप ॥ क्रोध दावानलें धम धमे, आकुल हूइ अशेप ॥ २ ॥ फावी कर मेली सदा, दुर्जननी परें दूर ॥ सहुएं मलिने जिनसिरी, नूंमी जाणी नूर

॥ ३ ॥ सम्यक् दर्शन पण सह्यो, छटक गयो तव छोड ॥ परिकरसुं वासी तदा, मिथ्यादर्शन मन कोड ॥ ४ ॥

॥ ढाल अडतालीशमी ॥

॥ आज सखी सामलीउरे मुने मारगडा ॥ ए देशी ॥ एकदा ते रोपें न राणी रे, वदे छे जिम तिम वाणी रे ॥ विमल श्रेष्ठिकने विवहारी रे ॥ तव आव्यो कोई अधिकारी रे ॥ १ ॥ मुखें मौन धरी रही वहू रे ॥ सासु तव नांखे वहू रे ॥ तिहां बेठे ते नरें दीठो रे ॥ ऐन वलें जाणे अंगीठो रे ॥२॥ तव ते कहे सुण नइ रे ॥ सुं वहुसुं वढे छे छिडे रे ॥ फोकट ए फजेत थावुं रे ॥ एक श्लोक कही समजावुं रे ॥३॥ आर्या ॥ सत्वं कस्यगृहमिदं, यास्यति सह केन चेयमिति लक्ष्मीः ॥ कतिपयदिनपर्यंतं, नत्वं न गृहं न चेयं श्रीः ॥१॥ वहुनो स्वभावते सारो रे ॥ दीसे छे लाज अपारो रे ॥ नाहकसुं एहने निभ्रंछो रे ॥ वेढी लेवा शुं वंछो रे ॥ ४ ॥ कालें थाशे एहनो वारो रे, मनमां एहवुं न विचारो रे ॥ आखर ए घर थाशे एहनुं रे, दिल दुःख धरिएं शुं तेहनुं रे ॥ ५ ॥ इत्यादिक इणि परें वारी रे, घरे गयो ते व्यवहारी रे ॥ ते उपरे पण सा कोपी रे, अहो लाज माहरी इणें लोपी रे ॥ ६ ॥ केवल वहुसुं वढे नवि डापें रे, बीजाने पण संतापे रे ॥ हली ए कुण ताहरो सणीजो रे, तातो थई जण त्रीजो रे ॥ ७ ॥ शीखवणी ए सहु ताहरी रे, इणें जात विगोई माहरी रे ॥ इम कहेती करें ग्रहि पाली रे, थई वाघणी सी विकराली रे ॥ ८ ॥ धनश्री उपरे तव धाई रे, धरायें पडी असकाई रे ॥ हैया उपर बेसीने रे, हणी छरीयें दंत पीसीने रे ॥ ए ॥ तव हाहाकार करी धाया रे, सहु सज्जन मलिने आया रे ॥ तव तेहने पण सा खीजी रे, हणवा दोडी छरी बीजी रे ॥ १० ॥ पाट्ट यष्टिका पहाणे रे, तेहने तव सहु मली आहणे रे ॥ तिहां लगे ज्यां वहु तिणें मारी रे, तेहने पण स्वजनें संहारी रे ॥ ११ ॥ असमंजस एहवुं जोई रे, सकुटंब विमल भेठ सोई रे ॥ संयम पंथे परवरिउ रे, जिनश्री जीव नरकें संचरीउ रे ॥ १२ ॥ वली मछ एकेंद्रियादें रे, अवतार लिया विखवादें रे ॥ इम काढ्यो काल अनंतो रे, द्वेप गजेंद्र थयो बलवंतो रे ॥ १३॥ ए अडतालीशमी ढालें रे, उदयरत्न वदे अंतरालें रे ॥ जे जिनमतमां रहे लीना रे, ते नर नरमांहे नगीना रे ॥१४॥

॥ दोहा ॥

॥ वली ते मानव रूपनो, विप्र ज्वलनसिख नाम ॥ श्रावकनी तिहां संगतें, समकित पाम्यो ताम ॥ १ ॥ श्री जिन धर्मने साधतां, दिन केता एक छेह ॥ मोह राजायें मोकली, निर्द्धनता तसु गेह ॥ २ ॥ तव तेहनी सहचारिणी, दरिद्रता पण दोडि ॥ आवी तिहां उतावली, मंदिर तसु म न कोडि ॥ ३ ॥ तव वश्यो न्हाने गामडे, ज्वलनसीख ते जाय ॥ हल खेडे हाली परे, तिहां नहिं अवर उपाय ॥ ४ ॥

॥ ढाल उंगणपचाशमी ॥

॥ चित्रलंकीरो नमर सुजाण जेहडहारो ॥ ए देशी ॥ तव द्वेष गजेंद्र ने धाय, वडो पुत्र वीनवे ॥ महाराज ॥ अनंतानुबंधी क्रोध नामें, ते हरषें सुं हवे ॥ महाराज ॥ १ ॥ वैश्वानर बीजुं नाम ते, तातप्रतें वदे ॥ म० ॥ एक अरज म्हारी महाराज के, आज धरो हृदे ॥ म० ॥ २ ॥ पहेले ए वि प्रनी पासें, हुं रहेतो कलटे ॥ म० ॥ विचें सम्यक् दर्शन आवी, वश्यो ए हने घटें ॥ म० ॥ ३ ॥ तेणें हूं थयो दूर, हवे अवसर लही ॥ म० ॥ जो आपो तुमे आदेश, तो तिहां जाउं वही ॥ म० ॥ ४ ॥ तुमे वेगा रहो ते माटे, आपो आगना मुने ॥ म० ॥ जईने करुं अरि जेर, गलें ग्रहुं विप्रने ॥ म० ॥ ५ ॥ पिताजी तुमारे प्रसादें, हूं जय कमला वरुं ॥ म० ॥ कुसम न शिर दई दोट, के देसुटे धरुं ॥ म० ॥ ६ ॥ इम तातनी अनुमति लेइ, अनंतानुवंधिउ ॥ म० ॥ क्रोध चाल्यो थइ महासूर के, अवसर सांधिउ ॥ ॥ म० ॥ ७ ॥ जई पहोतो विप्रने संग, ज्वलनसिख तव थयो ॥ म० ॥ ज्वलननी सिखा समान, नामार्थ संग्रह्यो ॥ म० ॥ ८ ॥ अपराध विना पण जोर, क्रोधें रही धमधमी ॥ म० ॥ हृदयांतरथी महारोप, न जाय उपश मी ॥ म० ॥ ए ॥ थोडे गुनहे पण दंत, पीसी निज नारने ॥ म० ॥ बां धी मारे बहु मार, न पामे विचारने ॥ म० ॥ १० ॥ उछलि करे उनमाद, अनलपरें परजले ॥ म० ॥ पाडोसी करे पोकार, तोहे पण नवि खले ॥ ॥ म० ॥ ११ ॥ बालने पण बांधी जोर, ताडे तेहवी परें ॥ म० ॥ बहु लो क मलि जेम गाली, दीए आवी घरें ॥ म० ॥ १२ ॥ पिताने ठेली पाय, मारे निज मातने ॥ म० ॥ बहिनने दिए बहु गाल, जंपे निज भ्रातने ॥ म० ॥ १३ ॥ पूज्यने पजाए अपार के, गुरुने अवगणे ॥ म० ॥ निष्कारण प

णे सहु साथें, कोपे क्रोधें घणे ॥ म० ॥१४॥ उगणपचाशमी ढाले, उदय एम उचरे ॥म०॥ शत्रू कोई क्रोध समान, वीजो वल नवि करे ॥म०॥१५॥

॥ दोहा ॥

॥ अग्निरूप थई आकलो,भृकुटि चडावे भूर ॥ त्रांबावरणो तपतपे,क्रोधें दीशे क्रूर ॥ १ ॥ आंखो कंबाडा जिसी, रोपें राती थाय ॥ मार्तंड मंमलनी परें, सामुं किणें न जोवाय ॥ २ ॥ शीताकुल परें थरथरी, स्वेद बिंदु झरंत ॥ मुखमांथी जिम तिम लवे, विकल परे विलखंत ॥ ३ ॥ अग्निकुंमस्यो उलखी, बोलावे नहिं कोय ॥ अवश्य अंगारापरें, सहेजें बोलाव्यो सोय ॥ ४ ॥

॥ ढाल पचाशमी ॥

॥ बूरा दल वादल हो नदीयां नीर चल्यां ॥ ए देशी ॥ एकदा ते ब्राह्मण हो, हल खेडे खेत्रें ॥ जावाकुल भूमें हो, नवि जुए नेत्रें ॥ १ ॥ उखेडे बहु ढेंफाहो, जिहां झाडां जडियां ॥ हल नवि चाले हो, अडके तरु थडियां ॥ २ ॥ कुशें पड्यो कुचो हो, वली गोधो गलीउ ॥ ते ताजो तरुणो हो, मांसालो वलियो ॥ ३ ॥ पण जाए ते वेसी हो, नवि चाले दमिउ ॥ त्यारें विप्र ते क्रोधें हो, सूधो धमधमिउ ॥ ४ ॥ पराणें ते मारे हो, तो पण नवि चाले ॥ तव नाथें झाली हो, बहु आरो घाले ॥ ५ ॥ वासे ने पासे हो, खंधे खरीएं खारें ॥ जंघ ग्रीवा उदरें हो,बहु मार्यो आरें ॥ ६ ॥ तव लोही काढीने हो, ते भूमिसुं रह्यो लिपि ॥ वैश्वानरें प्रेर्यो हो, तव थयो विप्र खपी ॥ ७॥ तव पूछडुं मरडे हो,वली दंतें करडे ॥ शकट वधीने हो, दंत घणुं घरडे ॥८॥ तव खेत्रने ढलीए हो, मारे दूरे रही ॥ मोटे महास्थूले हो, पूरी तेणे मही ॥ ए ॥ त्यारे ते थाको हो, जव थयो थलियो ॥ ढेफां ते तले हो, ते वलद मुउ गलिउ ॥१०॥ तो पण ते जडनो हो, रोष न उतरीउ ॥ दाध्यो विशेषें हो, जिम लहेरें दरिउ ॥ ११ ॥ महाक्रोधने पूरें हो. हृदयांतर रेल्यो ॥ समकितने प्राणें हो, तव ततक्षिण मेल्यो ॥ १२ ॥ तव मिथ्यादर्शन हो, मोहादिकें मली ॥ गले झालीने हो,ते नाख्यो नरकें वली ॥ १३ ॥ तिमज भमाड्यो हो, भवनी कोडी गमे ॥ ते काल अनंते हो. आवे न छेहो किमे ॥ १४ ॥ पंचाशमी ढालें हो, उदय रतन्न कहे ॥ समकित विना भवनो हो, कोइ न पार लहे ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ सम्यक् दृष्टि कुलें अन्यदा, धनंजय नृपने गेह ॥ रुकमिणि नामें रागिणी, तेहनी कूखें धस्यो तेह ॥ १ ॥ पूरे मासें प्रसविउ, कुवेर नामें कुमार ॥ श्रावक कुल जन्म्या नणी, समकित लाधुं सार ॥ २ ॥ शीघ्र कला साधी सवे, पाम्यो यौवनवेष ॥ तेज प्रतापें ते तपे, डुसरो जाणे दिनेश ॥ ॥ ३ ॥ व्याघ्रनामा एक वाघस्यो, पल्लिपति अति प्रौढ ॥ गंजे न को तस गढपति, नपुंसक जेम नवोढ ॥ ४ ॥ धनंजय धरपति तणो, डुर्गं वासित डुष्ट ॥ मुलक उजाडे महावलि, परिकर लेइ पुष्ट ॥ ५ ॥ गरढेरे पण ए हुने, आगे अछे अजीत ॥ वली पड्यो ते तिणे समे, नूरि पमाडे नीत ॥६॥ कोईक देश दपव्यो तिणे, बूंब सुणी तिणिवार ॥ ते ऊपरें वाहार चढयो, कुवेर ते राजकुमार ॥ ७ ॥ दैवयोगें महा डुष्ट ते, आव्यो एहने हाथ ॥ कोइक नावी योगथी,सकुटंबें सहु साथ ॥८॥ डुर्गं निजदल थापिने, वरतावि निज आण ॥ आव्यो घरें उलट नरें,सहु जन करे वखाण ॥९॥

॥ ढाल एकावनमी ॥

॥ चित्रोडा राणा रे ॥ ए देशी ॥ गुण गीत गवाते रे, महा महोत्सव थाते रे ॥ वहु विरुद वोलाते, कुमर ते आविउ रे ॥ सहु वोले श्लाघा रे, आवीने आघा रे ॥ डुश्मन दूर नागा, जन मन नाविउ रे ॥ १ ॥ तव अवसर जाणी रे, पितु आण प्रमाणी रे ॥ अमरष अति आणी, आव्यो ते कने रे ॥ द्वेष गजेंड्रनो जात रे, विश्वानर भ्रात रे ॥ न्हानेरो विख्यात, जग लहे तेहने रे ॥ २ ॥ अनंतानुवंधी मान रे, शैलराज राजान रे ॥ एवे अनिधान, तेहनां जाणो तमे रे ॥ तेहने अनुसरवे रे, नराणो ते गरवें रे ॥ मुखें इम वरवे, भूरा शिरखुं अमे रे ॥३॥ नयण गगनने गाहे रे, रोम ऊन्ना थाए रे ॥ सूर गुण न समाए, तेहना शरीरमां रे ॥ अहंकार अछेह रे,त्रिभुवनमां तेह रे॥ न माए तिणे देह, थंनी रह्यो धीरमां रे ॥४॥ सहु कोने साखें रे,मुखथी इम नाखें रे॥ महारा पिम पाखें,ए डुष्टने कुण हणे रे ॥ रांमनी परें टरडे रे,अमारे घरडे रे ॥ राज्य कीधुं जरडे,न जीत्यो ए किणें रे ॥ ५ ॥ धनंजय पण एह रे,वणिक वृत्ति गेह रे ॥ वेगो रहे नेह, धरी अन्न प्राहीउ रे ॥ जो हुं न हुउ आडो रे,तो नीजें नीलवाडो रे ॥ इहां करी जाडो, क्यारे हुए त्राहीउ रे ॥६॥ गायुं जे गाए रे, इंटनें ते वाहे रे॥

ते नर तिणे, गर्यें थई वाउला रे ॥ निज गाल फूलावी रे, बहु वात ब नावी रे ॥ सहुने समजावी कहे चर राउला रे ॥ ७ ॥ कुमरें कह्यो शिष्ट रे, पोढो ए पापिष्ट रे॥ देवें पण दुष्ट, न जाए गंजीउ रे॥ देवने ए कुमा र रे, वे विण निरधार रे॥ एहनो अहो गार, किणें क्यारें भंजीउ रे ॥ ८ ॥ एहवी सुणी टूलो रे, फूली थई चोलो रे ॥ निज बल लही बहुलो, कुकव तणी परें रे ॥ सहुने अण नमतो रे, दान देई मन गमतो रे॥ मूढ गुण ने वमतो, पहोतो निज मंदिरें रे ॥ ए ॥ मात तात ने गुरुने रे, देवने श्रु तधरने रे॥ न नमे कवीश्वरने, मुखें बोले नहीं रे॥ भूषण धरी भारी रे, निज तनु शणगारी रे॥ वेतक समारी, वेसे ते सही रे ॥ १० ॥ तंबोलें ताजे रे, गल्लस्थल शुभ साजे रे॥ पूरी समाजें, बोले वेतमां रे॥ अधुरां वयणां रे, फेरवतो नयणां रे॥ देखीने सयणां, नही जुए हेतमां रे॥ ११ ॥ त्रिभुवन तृण तोलें रे, गणतो इम बोले रे ॥ मुजथी सहि मोले, सुरप ति सारिखो रे॥ इम निज परिकरमां रे, वेगो वरवे घरमां रे॥ नाणे केह ने हरमां, न जूवे पारखो रे॥ १२ ॥ एह एकावनमी रे, ढालें ते अनमा रे॥ उदय वदे न नमी, आपे केहने रे॥ विद्यावंत ने शूरो रे, दानेश्वरी पूरो रे॥ विण गर्वें सनूरो, कहे सहु तेहने रे॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवनिपति हवे एकदा, प्रीछवीने परधान ॥ पुत्रनी पासें मोकले, ते जई कहे तसु थान ॥ १ ॥ तेडे छे तुम तातजी, कुमरजी मिलवा काज ॥ आवो तिणें आसनतंजी, वाट जुए महाराज ॥ २ ॥ वासर बहु वही गया, दीठां तुम दीदार ॥ तरसे छे ते कारणे, जिम चातक जलधार ॥ ३ ॥

॥ ढाल बावनमी ॥

॥ हो मतवाले साजना, मुज कोई न छेडोवे ॥ ए देशी ॥ बोले कुमर ते वेतमां, मुख नाकतणी अणि मरडी रे॥ मूछें वल देतो थको, वली नजर करीने करडी रे॥ बो० ॥ १ ॥ काम किसुं छे माहरुं, अहो वलि ए हने केणें रे॥ संकटमां नाख्युं किसुं, तेडे छे मुजने तेणें रे॥ बो० ॥ २ ॥ जो एहवुं होय तो कहो, इंद्रादिकने पण बांधी रे॥ आणी सोपुं एहने, श त्रु जाणी तक सांधी रे॥ बो० ॥ ३ ॥ पण अमे नावूं को कने, अमपासें पण जो कोई रे॥ नहीं आवे तो शुं थशे, तेवें मेल्युं छे जोई रे॥ बो० ॥

॥ ४ ॥ काज किश्युं किणें नीपजे, आखर म्हारा पिंम पाखें रे ॥ तूं एह वो नथी कोइ देखतो, जे रणथंत्नीने राखे रे ॥ वो० ॥ ५ ॥ तव मंत्री कहे तेहने,जिहां वाजे तुम यस वाय रे ॥ तिहांलगें महाराजा शिरें, शत्रु कोई ऊन्नो न थाय रे ॥वो०॥ ६ ॥ जनक जगत अति लालमी, जगमांहे इक तूं जायो रे ॥ ताहरी जनितायें तुं सही, शूरां शिरताज कहायो रे ॥वो०॥७॥ पण ए न घटे बोलवुं,तुम सरिखाने सुणो स्वामी रे ॥ पितृ काजें पण आवुं नहीं, ए वातें बे तुम खामी रे ॥वो०॥८॥ ॥ आर्यावृत्त ॥ शौर्यं सौंदर्य त्ना, विद्या लक्ष्मीर्वचस्विताऽन्योवा ॥ शोन्नां नावहति गुणो, विनयालंकारप रिहीणः ॥१॥ वसंततिलका छंद ॥ त्यागोगुणोगुणशतादधिको मतो मे, विद्या विनूपयति तं यदि कं ब्रवीमि ॥ पर्याप्तमस्ति यदि शौर्यमपीह किंतु, यद्यस्ति ते नुवि नयः सगुणाधिराजः ॥ २ ॥ श्लोक ए बे सचिवें कह्या, कुमरने शी खामण कामेंरे ॥ कुमरें पण सूण्यो अबे,आगममां कोइक ठामेंरे ॥वो०॥ए॥

॥ यतः॥आर्यावृत्तं दुःप्रतीकारौ माता, पितरौ स्वामी गुरुश्च लोकेऽस्मि न् ॥ तत्र गुरुरिहामुत्रच, सुदुष्करावरप्रतीकारः ॥ १ ॥ इम आगल वलि कांई उच्चरे, तव कुमरने तिहां शैलराजें रे ॥ प्रेर्यो तव बोल्यो फरी, गर्वे नरी समाजें रे ॥वो०॥१०॥ रे ज्ञानदग्ध गमार तूं, अमने शिक्षा शी आपे रे ॥ त्रिनुवन तत्व लहुं अमें, जीते कोई अमसुं जवापें रे ॥ वो० ॥ ११॥ ते माटे ताहरा बापने, जई शीखामण नांखे रे ॥ जिम थाए ए पाधरो, लणिम कांई मति राखे रे ॥ वो० ॥ १२ ॥ इम कहीने गले फालीने, का ढी मेल्यो तव तेहो रे ॥ जई कहे ते महाराजने, संबंध सवे धुर बेहो रे ॥ वो० ॥ १३॥ उदय रतन इम ऊचरे, बावनमी ए में बोली रे ॥ ढाल गु मानी लोकने, गमशे जो जो दिल खोली रे ॥ वो० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव चिंते ते नूपती. अहो मुऊ पुत्र अत्यंत ॥ अहंकारें ए आवस्यो, जिरत्ती कसि न लहंत ॥ १ ॥ राज तज्युं तिण कारणें, वसवुं मोहने रा ज ॥ हवे मुऊने जुगतुं नथी, साधुं पर नव काज ॥ २ ॥ इम चिंती अंग ज प्रते, रंगे देवा राज ॥ सामग्री सघली सजी, मोहें ते महाराज ॥ ३ ॥ गोप्य राखी ते शैलिसुं, प्रेखे वली प्रधान ॥ तनुजने एक दिन तेडवा, रा ग वशें राजान ॥ ४ ॥ तिहां जई ते कहे तेहने, कोईक काज विशेष ॥

तात तेडे छे तुमने, आवो शीघ्र क्षण एक ॥ ५ ॥ शैलराजा संकेतथी, अनुक्रमें एकाएक ॥ अपमान देई अवगण्यो, कुमरें मंत्री छेक ॥ ६ ॥ अ वहेल्यो सामंत गण, मंमलिक मेल्या धूल ॥ जे जे आवे तेडवा, ते तोल लहे अकतूल ॥ ७ ॥ तव तसु माता मोकली, निपट निचंती तास ॥ पण पुत्र स्नेहें न उसरे, अनेक करी अरदास ॥ ८ ॥ पाय पडी जिम तिम करी, माए महिपति पास ॥ अति कष्टें ते आणिउ,तव नृप थयो उल्लास॥९॥

॥ ढाल त्रेपनमी ॥

॥ पांच सोपारी ले हाथें ॥ ए देशी ॥ तव नरपति निज पास, आसन एक मंमावीयुं जी ॥ ते ऊपर बेठो कुमार, रेप न अंग नमावीयुं जी ॥ १॥ भाखे तव नृपाल, सुरगुणे संसारमां जी ॥ जस तुऊ व्याप्यो जोर, नावे जस कोई हारमां जी ॥ २ ॥ देश देशथी दूत, कन्यादान काजे सही जी ॥ राजवीयें मन रंग, मोकल्या छे तुम गुण लही जी ॥ ३ ॥ पूरो मनोरथ तास, ए राज्य तुमारुं संग्रहो जी ॥ अमे थासुं अणगार, प्रजाने तुमे निर्वे हो जी ॥ ४ ॥ तव शैलराजें श्रवणेह, मंत्र गुमाननो मेलीउ जी ॥ त्यारें भ्रकुटी चडावी भाल, उत्तर तिणें इम दिउ जी ॥ ५ ॥ रजसरखो ए राज, शुं आपो तुमे अमने जा ॥ एवां तो राज सतेक, प्रगट करी दिउं तुम ने जी ॥ ६ ॥ इम कही पगनो प्रहार, आसन ऊपर मारीने जी ॥ ऊठी नीसख्यो बार, वन जावुं मनें धारीने जी ॥ ७ ॥ अयोग्य जाणी तत खेव, सम्यक् दर्शनें ते तज्यो जी ॥ मोह राजाने साथें, तव सहसा आवी भज्यो जी ॥ ८ ॥ एकलो अटवीमांहि, पहोतो ते तजि गेहने जी ॥ नील नामें लघु जात, राज्य दीधुं नृपें तेहने जी ॥ ९ ॥ पोतें लेई संयम भार, शिव पद पाम्यो अनुक्रमें जी ॥ हवे ते कुवेर कुमार, एकलो अटवी मां भमे जी ॥१०॥ चित्र नामें एक चंम,ते व्याघ्र पल्लिपति सुत तदा जी॥ शुरु समय गयो नासि,ते वनमांहे वस्यो मुदा जी ॥ ११ ॥ तेणें दीठो ते कुमार, तीरें माख्यो तव ताकिने जी ॥ पामी मरण अकाल, नरकें गयो मद छाकिने जी ॥ १२ ॥ मत्स्यादिकनी गतिमांहि, काल अनंतो घेरियो जी ॥ त्रेपनमी ढालें तेह, उदय कहे उद्दे करियो जी ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥ महापुर नगरे मेलिउ, कर्मे ते वलि कादि ॥ धनाढ्य श्रेष्ठिने घरे, पूरो तेह धनाढ्य ॥ १ ॥

॥ ढाल चोपनमी ॥

॥ साहिबो रे माहरो कलि रह्यो भागोयें ॥ ए देशी ॥ पदम नामें तिहां थापिउ रे, आजन्म थकी ते बाल ॥ अनंतानुबंधि मायावलें रे, मायावी अति असराल ॥ पोढो रे प्राणी जो जो मायानो पास ॥ १ ॥ राग केसरी जीते सुता रे, बहुली जस वीज्जुं नाम ॥ तेहने उदयें ते थयो रे, एक कपट कलानुं धाम ॥ पो० ॥ २ ॥ बालपणें पण बहुविधें रे, छोकराने छेतरी तेह ॥ खावुं धूती खाये सवे रे,जेहना बलनो नावे छेह ॥ पो० ॥ ३ ॥ साधु स्वभाव जाणे सहु रे, सुणि वचन तणा विलास ॥ मोटो थयो तव मायने रे, बापने पण पाडे पास ॥ पो० ॥ ४ ॥ भाईने पण भोलवे रे, भगनिने भमाडे जोर ॥ परिजनने पट ये घणां रे, करी कपट कला कठोर ॥ पो० ॥ ५ ॥ धूते धर्म दाता प्रतें रे, मित्रसुं मांमे महा कूड ॥ देवनी पण खोटें दिलें रे, महास्तवना करी ते मूढ ॥ पो० ॥ ६ ॥ निवेद मोदक ले हरी रे,अंगलूहणा घंटा आदि ॥ कलांतर घाली गछे रे,माने नहिं किमे अपराध ॥ पो० ॥ ७ ॥ साचो किहांए न उतरे रे, कोइ न लहे मन अभिप्राय ॥ वंच्याविण मेले नहीं रे, कुण परजन स्वजनने माय ॥ पो० ॥ ८ ॥ जनकादिक जाणे इश्यो रे, तेडी तेहने गुरुपास ॥ आवीने इम उचरुं रे, एक अवधारो अरदास ॥ पो० ॥ ए ॥ भगवन अमारे कुलें रें, आजलगें एहवो कोय ॥ नर मायावी न नीपनो रे, सेवक पण एहवा न होय ॥ पो० ॥ १० ॥ महेर करीने ते वती रे, एहवो आपो उपदेश ॥ मायावीपणुं मूकिने रे, कुलवटें चाले सुविशेष ॥ पो० ॥ ११ ॥ चोपनमीयें चेतजो रे, ढालें सहु धरमी लोक ॥ धूर्तपणुं जोतां धरा रे, आखर उपाये सोक ॥ पो० ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव गुरु करुणा आणिने, धर्म कथा कही धीर ॥ माया शील मान वतणी, सहु मनें धरे अधीर ॥ १ ॥ अपराध जो न करे किश्यो, तो पण सर्पनी पेर ॥ आशंका मन उपजे, सहुने जाणी जहेर ॥ २ ॥ मायावी वलि मानवी, अधम कुलें अवतार ॥ मरि पामे महिलापणुं, डुःकरगरुली अपार ॥ ३ ॥ इम ते प्रतिबोध्यो थको, दिन केताइक तांई ॥ मूके माया

वीपणुं, कांइक कर्म सहाय ॥ ४ ॥ मिथ्या दर्शन बल घर्‍यो, तव समकि तनी सेव ॥ करतां दिन केता गया, हरखें सुणो सहु हेव ॥ ५ ॥

॥ ढाल पंचावनमी ॥

॥ समवसरण त्रिभुवन पति सोहे ॥ ए देशी ॥ एक दिन तस उपनें विसवासें, पिताएं राख्यो ते पासे हो ॥ पोतें सुंपी एक वासरें, जनक ज मवा निजघरें ॥ पद्मोतो जिहारे उलटभरें, श्रोता सुणजो ते अवसरें ॥ जो जो पास मायानो ॥ १ ॥ घोडो खेलावतां नृपना करथी, मुद्रा रत्न पडयुं धरती हो ॥ मूसी लीधूं ते केणें, लेई देखाडयुं तेणें ॥ पदमने हट श्रेणें, देखि उलख्युं एणें ॥ जो० ॥ २ ॥ अवसर जाणी पूर्व मायाएं, तव ते प्रेर्‍यो तिणें ठायें हो ॥ लेतुं अलंकार एह, मुज वलें सस्नेह ॥ हीये हर्ष धरेह, दीये उत्तर गुणगेह ॥ जो० ॥ ३ ॥ कथन धर्‍युं तेहनुं एणें मनमां, तव मिथ्या दर्शन तेहना तनमां हो ॥ मोह सहित संक्रमिउ, तिहांरे स मकित वमिउ ॥ अल्पमूलें तव गमिउ, नृपण लीधो अण नमिउ ॥ जो० ॥ ४ ॥ तातने पण कांइ न कह्युं कपोतें, प्रछन्न राख्यो पोतें हो ॥ तव नृपें ढंढेरो, पुरमां फेर्‍यो सवेरो ॥ मुद्रा रत्नए मेरो, जे कोई आपे वहेले रो ॥ जो० ॥ ५ ॥ ते निर्दोष थई साबाशी लेशे, नहिं तो प्राण सहित मु द्रा देशे हो ॥ तव सारुं ते नगर, थयुं चिंतायें विगर, जिम आगमां अगर, थाये बलीने कगर ॥ जो० ॥ ६ ॥ पाडोशियें ते कांई वात जणावी, धना ढ्य शेठने आवी हो ॥ तव ते एकांतें धरी धरी, पूछे पुत्रने फरी फरी ॥ कांन ढांकी हे हरी हरी, एम्युं बोलो छो अरी अरी ॥ जो० ॥ ७ ॥ एहवो कुण थइ साहस भागी, मरण लिये मुखें मागी हो ॥ महर्द्धिक लोकें पिता यें, पुरजन पडोसी मायें ॥ अनेक अनेक उपायें, तेहने बुझव्यो त्यांयें ॥ ॥ जो० ॥ ८ ॥ जुनी वंसनी जडने न्यायें, अभिप्राय तेहनो न जणाये हो ॥ इकदिन राज भंमारी, जवहरीमां शिरदारी ॥ तेहनो मित्र एक भारी, परदेशी विवहारी ॥ जो० ॥ ए ॥ कोईक कामविशेषें त्यांहि, आव्यो ने व छाहिं हो ॥ भंमारीने संकेतें, थई वणजारो हेतें ॥ पदम पासें ते प्रीतें, प होतो कपटेंसु रीतें ॥ जो० ॥ १० ॥ कहे ते तेडी एकांते, सिंहलेश्वर नृ कंते हो ॥ मुद्रारत्नने कामे, मुजने प्रेप्यो ए गामें ॥ जो होए तमारे धामें, देखाडो तो आ ठामें ॥ जो० ॥ ११ ॥ मूल मुखें तुमे मांगसो जेतो, अ

मे आपसुं तेतो हो ॥ तव ते पदम विचारे, एहने आपे निरधारे ॥ जासे देश उतारे, प्रगट नहीं थाए किहारे ॥जो०॥१२॥ इम चिंती ते देखाडे निज हाथें, राज पुरुष तिहां तेहवे साथें हो ॥ नंभारीनी ते साने, पकडी आवी ते थानें ॥ भ्याना सहित राजाने, जई सोंप्यो पदमाने ॥ जो० ॥ १३॥ प्राणांत लगें दीधो प्रहार, अनेक विधनो मार हो ॥ मरी काल अनंत, न वमां नमिउ ते जंत ॥ पंचावनमी ए तंत, ढाल उदय कहंत ॥ जो०॥१४॥

॥ दोहा ॥

॥ जयपुर नगरें अन्यदा, श्रावक कुल श्रीकार ॥ धनदत्त धामें ते थयो, सुत सोमदत्त उदार ॥ १ ॥ सुकुल संयोगें पामिउ, सम्यक् दर्शन संग ॥ पण निर्धन धातो फरे, धन काजें धरी रंग ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥ १०२३ ॥

॥ ढाल उपनमी ॥

॥ चांदलीउने उग्यो रे हरणी आथमी रे ॥ ए देशी ॥ धननें काजें रे ते धातो फरे रे, संवल हीण सदीव रे ॥ तैलादिक रें वणिज करे वहीरे, आपद सहे अतीव रे ॥ ध० ॥ १ ॥ इणि परें करतां माया गांठडी रे, गर थनी कांइक गांठ रे ॥ घणे कालें रें वाली तेहने रे, पाथरी आवी कोई आंट रे ॥ ध० ॥ २ ॥ व्यापार तिहारे रे कणनो करे रे, तव राग केसरी धाय रे ॥ अनंतानुबंधी रे लोन्न तिहां मोकल्यो रे, नल जेहनो नडवाय रे ॥ ध० ॥ ३ ॥ बहुली केरो रे जे लघु बंधवो रे, सागर बीजुं जस नाम रे ॥ तनुज ते जाणो रे राग केसरी तणो रे, तेहना तनुमां वश्यो ताम रे ॥ ध० ॥४॥ दामनी तिहारे रे ते सोमदत्तने रे, इन्ना वाधी उदाम रे ॥ वणिज वधार्यां रे तव बहु नांतिना रे, सहस्रपति थयो ताम रे ॥ ध० ॥ ५ ॥ लघु उ ख सहेतां रे थयो लखेश्वरी रे, दिन केता इक तेह रे ॥ कोडि क्लेश वेठी रें वलि केते दिनें रे, कोटिध्वज थयो तेह रे ॥ ध० ॥ ६ ॥ जिमजिम वाधे रे वैन्नव तेहथी रे, बमणो वाधे तिम लोन्न रे ॥ अगनि न धाए रे जिम ज ग इंधणें रे, तिम लोन्नो दीशे नहि थोन्न रे ॥ ध०॥७॥ अतिशय लोनेंरे दे वने अवगणे रे, गुरुसुं राखे ते गाढ रे ॥ सेव्यो पण नापेरे दमडी केहने रे, कोडी काजें करे राढ रे ॥ ध० ॥ ८ ॥ उपदेश देतांरे मनें आंटी नजे रे, धर्मने कामें धरे ढील रे ॥ पापने गामेंरे पुरुपातन फोरवे रे, दान देतां करे अडखील रे ॥ ध० ॥ ए ॥ समकित तिहारें रे रह्युं वेगलुं रे, मिथ्या

दर्शनने मोह रे ॥ सपरिवारें रे तिहां आवी वस्या रे, तव वाधी तेहनी लोह रे ॥ ध० ॥ १० ॥ दिन दोडावी रे बहु देशावरें रे, विध विधना व्यवसाय रे ॥ मोटा मोटा रे तिणें तव मांमिआ रे, जलवट थलवटें धाय रे ॥ ध० ॥ ११ ॥ क्लेश साथें रे वाधी संपदा रे, केइ रत्ननी कोडी रे ॥ तृष्णा पूरें रे तिणे मेली तदा रे, अंगथी आलस गोडी रे ॥ ध०॥ १२ ॥ उदयरतन इणि परें उचरे रे, ए छपनमी ढाल रे ॥ परखी जोतांरे मोहना सैन्यमां रे, लोन्न जुंमो चंमाल रे ॥ ध० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तो पण तृष्णा नवि मिटे, अर्थ उपायो जेह ॥ रखोपुं करतां तेहनुं, निइ नावे नयणेह ॥ १ ॥ रात दिवस फूरण रहे, लेखुं जूए लखवार ॥ बिलाडीना बच्चा परें, फेरवे अर्थ अपार ॥ २ ॥ बदाम काजें त्यजे बापने, मातने मूके दूर ॥ याचक लागे जहेरसो, नोजन न करे नूर ॥ ३ ॥ तोली मापीने गणी, जोइ आपे तेह ॥ घण कष्टें घर खरच पण, तिल पापड थयो तेह ॥ ४ ॥ खाए खोरूं धान ते. नवुं न खाए रेप ॥ हाथो हाथें आपतां, प्रतीत न पामे एप ॥ ५ ॥ सर्वगाथा ॥ १०४१ ॥

॥ ढाल सतावनमी ॥

॥ मोरा आदि जिन देव देखी तुऊने आनंद नयो ॥ ए देशी ॥ मुलाइ नाइने तिणे, एकदा निज आय ॥ कोडि गमे सोंपी किमें, लोन्नने परमाथ ॥ जो जो लोन्ननां काम ॥ लोन्न नूंमो एह कंमो दरिद्र लह्यो ॥ १ ॥ नाणानुं ते लेखूं करतां, बहु कीया तव पंच ॥ पूरा न पडे तेहने काजें, थई खिंचा खिंच ॥ जो० ॥ २ ॥ पग बंधीने लेखूं करतां, वही गया दिन सात ॥ मुलाई ने मृत्यु पाम्यो, विसूचिका संघात ॥ जो० ॥ ३ ॥ तव उपमां शिरदार तेहने, लोक कहे ए लंम ॥ वल्या हाथनो बिरुद एहवुं, वली कहे करचंम ॥ जो० ॥ ४ ॥ प्रसिद्ध एहवी परवरी रे, आप्युं तेहनुं कोय ॥ हाथमां न फाले हाहा, लोनें गुं गुं होय ॥ जो० ॥ नगरमांहे एकदा तिहां, मुंघो थयो काव ॥ खेरनी मह्रा खोट पडी, नहीं आव्यानो घाट ॥ जो० ॥ ६ ॥ सागरें तव प्रेर्यो तेहने, कां मेहलियें लाज ॥ हिमन हिए राखतां. उंमलिमांहे आज ॥ जो० ॥ ७ ॥ तनुजने पण ते न धीरे. काई नापे काम ॥ रखे जाणे ए माहरो, छुट वेरे दाम ॥ जो० ॥ ८ ॥ पांच

सें सकट लेइ, लोजनने उच्चांहि ॥ स्वजनलोकें वारतां ते, गयो अटवीमां हि ॥ जो० ॥ ए ॥ काष्ट तिहां मजूर कापे अरहा, परहा को क्यांहि ॥ एकाकी तें आप जइ, वेगो तरुठांही ॥ जो० ॥ १० ॥ दैवयोगें दुष्ट तिहां, आव्यो एक वाघ ॥ देखी सोमदत्तने तिणें, माख्यो जोइ लाग ॥जो० ॥ ११॥ विलपतो विछुरी नाख्यो, नखें नस ताणि ॥ एकेंडियादिकमांहे जई, उपनो ते प्राणी ॥ जो० ॥ १२ ॥ वलि तिहां नवनी ते कोडी, न मिउ काल अनंत ॥ उदये ए ढाल कही, सतावनमी तंत ॥ जो० ॥१३॥

॥ दोहा ॥ ॥ समकित दुर्लन पामिने, इणि परें वार अनंत ॥ वल हीणो तें वापडो, जगमां हाख्यो जंत ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ १०५५ ॥

॥ ढाल अघावनमी ॥

॥ सुसाधु गुरुसही मोरे मंन माने ॥ ए देशी ॥ किहांएक रागें किहां एक द्वेपें, किहां एक अनंतानुवंधि ॥ क्रोध मान माया लोनयोगें, समकित न शक्यो संधि ॥ जगतमां जो जो मोहनो जोरो ॥१॥ बीजे पण एहवे नव वहुले, पामीने नीगमिउ ॥ समकित सुरतरु सरिखो सहेजे, दुर्गति दुखें तिणें दमिउ ॥ ज० ॥ २ ॥ किहां एक शंका दोप संयोगें, अने वली अ तिचारें ॥ किहां एक क्रीडा कामविकारें, किहां एक कुटंवने नारें ॥ ज० ॥ ३ ॥ किहां एक वल्लनतणें वियोगें, धन नाशादिक सोगें ॥ किहां एक परदल नयप्रयोगें, किहां एक रागने योगें ॥ ज० ॥ ४॥ किहां एक दुर्गंग दारिद् नावें, पुरुप स्त्री नपुंसक वेदें ॥ किहांएक संगें व्यसनने रंगें,किहां एक कुशास्त्रने नेदें ॥ ज० ॥ ५ ॥ इम प्रत्येकें काल अनंते, नरनव ल ही लही हाख्यो ॥ समकित रतन चिंतामणि करथी, संसार तिणें वधाख्यो ॥ ज० ॥ ६॥ मोह राजाने जोरें करीने, सम्यक् दर्शन साथें ॥ पूरी जिहां तिहां न प्रीति वंधाणी तिणें, दुःख लह्यां तेह अनाथें ॥ ज० ॥ ७ ॥ क्षेत्र पल्योपम असंख्यात नागें, प्रदेश राशि प्रमाणे ॥ समकित फरस्या पठी ल्यो मीठी, नव कीधा ते प्राणि ॥ ज० ॥ ८ ॥ अगवनमी ढाल ए वोली, उ दयरत्न कहे आगें ॥ सवंध ए सावधान थइने, श्रोता सुणजो रागें ॥ ए॥

॥ दोहा ॥

॥ विजय खेटपुरें अन्यदा, धर्म श्रेष्टिने गेह ॥ सुंदर नामें सुत थयो, जीव संसारी तेह ॥ १ ॥ सुगुरु समीपें श्रुत सुणी, समकित धरी सुजाण

॥ विचरे जिन मारग विषें, धरतो व्रत पचखाण ॥ २ ॥ कर्म तव करुणा करी, धर श्रुत अध्यवसाय ॥ तद्रूप करवाल तसु करें, आप्युं तेणे गाय ॥ ३ ॥ मोहादिक महा शत्रु जे, शरीरतणा तिणें अंश ॥ अधिकतर छेदे तदा, करतो कर्म प्रध्वंस ॥ ४ ॥ भीनाकुल भागा तदा, अप्रत्याख्यानावरण ॥ कषाय ते करवालथी, जिम सिंह आगे हरण ॥ ५ ॥ सम्यक् दर्शन तव सचिवें, सुगुरु पासें लेह ॥ चारित्र धर्म महा चक्रवर्त्ति, देखाड्यो नयणेह ॥ ६ ॥ गुरें तव गुण तेहना कह्या, चारित्र धर्मने जेह ॥ सुविधें सेवि सहजें लहे, सुर नर शिव सुख तेह ॥ ७ ॥ वली विशेषें वर्णव्या, गुरुराजें गुण तास ॥ तव सुंदरें सो स्वामी कर्यो, अंगें धरि उल्लास ॥ ८ ॥

॥ ढाल उंगणसाठमी ॥

॥ कर जोडी रही ॥ ए देशी ॥ समकित धारी सांभल्यो, चारित्र धर्म नृपालें रे ॥ योग्य जाणी तव तेहने, परणावी उजमालें रे ॥ स० ॥ १ ॥ देशविरति लघु कन्यका, तेहने संगें ते धारे रे ॥ नाहक त्रस जीव नवि हणुं, दुविधि त्रिविधि हुं किहारें रे ॥स०॥२॥ स्थूल प्राणीने पालतुं, वलि वरजुं अतिचार रे ॥ वध बंधन छेदन नवि करुं, न भरुं वधतो भार रे ॥ ॥ स० ॥ ३ ॥ भात पाणी रोकूं नही,ए पांचे मन शुद्ध रे ॥ अतिचार ते पाले सदा, व्रत राखवानी बुद्धें रे ॥ स० ॥ ४ ॥ इम करतां हवे एकदा, पिता तेहनो पठीनो रे ॥ तव घरना कारभारमां, सुंदर रहे ते भीनो रे ॥ स० ॥ ५ ॥ अवसर त्यारे उलखी, पासें तेहने प्रेखी रे ॥ स० ॥ निस्तृंसता मोहादिकें, जे व्रतने नाखे उवेखी रे ॥ स० ॥ ६ ॥ तसु संगें ते आदरे, निर्दयपणुं अतागें रे ॥ लंघावे ते लोकने, धन जे पासे मागे रे ॥ स० ॥ ७ ॥ वध बंधन ताडन करे, कोइ मरे अकलाइ रे ॥ इम करतां निर्धन थयो, तव राज्य कामूं ल्ये धाइ रे ॥ स० ॥ ८ ॥ तव हिंसा प्रगटी हवे जसुं, अप्रत्याख्यानावरण रे ॥ क्रोधादिक पण थया ठता, अधम जेहनां आचरण रे ॥ स० ॥ ९ ॥ व्रतनी भागा तव वासना, बंधनें केहने बंधे रे ॥ नाहे तरजे ने हणें,धर्म त्यजि पड्यो धंधे रे ॥ स० ॥ १० ॥ देशविरति दुलही तदा, अलगी रही तेहथी रे ॥ पण कुलक्रम मूके नही, छूटी न शके जेहथी रे ॥स०॥११॥ देव वंदे देहरासरें,पक्षपाती थइ पूजे रे ॥ जिन दर्शन करे दिन प्रतें,दिल नवि राचे दूजे रे ॥ स०॥१२॥ नरकें न गयो ते

वती, पण देशविरति विराधी रे ॥ वलि समकित विराधिउं, तेणें मरी ते अपराधी रे ॥ स० ॥ १३ ॥ नुवनपतिमां ऊपनो; हीन जाति थयो देव रे ॥ नव अनंता वलि नम्यो, ते जाणे जिन देव रे ॥ स० ॥ १४ ॥ उदय रतन कहे अहो नवी, उगणसातमी ढालें रे ॥ समकितथी चूको रखे, जेणें पडियें नव जालें रे ॥ स० ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ शालिनइ विवहारिउ, समकित दृष्टि तास ॥ अंगज ते थयो एकदा, माणिनइ नामें तास ॥ १ ॥ समकित तिहां सहेजे लह्यो, देशविरति वरि दार ॥ स्थूल मृषावाद विरमण, व्रत कर्यु अंगीकार ॥२॥सर्वगाथा १०७०

॥ ढाल सातमी ॥

॥ शुं करियें जो मूलज कूडुं ॥ ए देशी ॥ कन्या गो नूमि थापण मो सो, कूडी साखने कूडो दोसो ॥ इत्यादिक जे जूठां मोटां, डुविध त्रिविध न बोले खोटां ॥ १ ॥ बीजुं व्रत साधे इणि नातें ॥ अतिचार पांच त्यजे मन खांतें ॥ सहसातकारें आल न बोले ॥ स्वदार तणुं वलि गुह्य न खोले ॥ २ ॥ कूडो उपदेश ने कूडो लेख ॥ अज्ञात कांइ न बोले विशेष ॥ ए पांचे अतिचारने त्यजतो ॥ व्रत बीजाने रहे ते नजतो ॥ ३ ॥ एक दिन जनक गयो अन्य हाटें ॥ कोइक वस्तु लेवामाटें ॥ तव मोहादिक पमाडवा क्षोन ॥ अप्रत्याख्यानावरण जे लोन ॥ ४ ॥ मृषावाद आदे नट सोई ॥ तेह पासे मेल्या तक जोई ॥ तेहतणे आगमनें एह ॥ वणिज काज वदे अलिक अछेह ॥ ५ ॥ पाडोसीनुं वस्त्रादिक ल्यावे ॥ वमणो लान तें पोतें खावे ॥ पोतानुं आपे परहाथें ॥ बहु मूल खावा पर माथें ॥ ॥ ६ ॥ ग्राहक जो पूछे सुण सेठ ॥ शुं एहनुं मूल लेसो नेट ॥ तव ते कहे अमें कह्यो जेतो ॥ सोगन मेंती लेसुं तेतो ॥ ७ ॥ तव ग्राहक कहे बोलोने साचुं ॥ एक मूल कहो तो अमे राचूं ॥ तव कहे कहुं हुं निरधार, एतामांहि नहीं फेरफार ॥७॥ वारु तमे ए लेसो केते ॥ ग्राहक कहे अमे लेसुं एते ॥ तव सेठ कहे ए मूलें जो आपुं ॥ तो घर अमे शुं ग्रहणे थापुं ॥ ए ॥ इत्यादिक बोली वंकाई ॥ नोला लोकने मेले वाही, मनसुं मूल ते साचुं मानी ॥ लान आपी ते जाए अज्ञानी ॥१०॥ उदयरत्न कहे सातमी

ढालें ॥ जिम तिम लोकने नाखे जालें ॥ लोभिठ नर जगमां लख वातें ॥ पण जयकारो न लहे दिनरातें ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥ समय लही सागर तदा, इम तसु दे उपदेश ॥ जूठुं तूं स्युं जंपता, शंकायें सुविशेष ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ ११०२ ॥

॥ ढाल एकसठमी ॥

॥ गोकुल गामने गोंदरे रे ॥ ए देशी ॥ जूठुं बोलतो लोकमां रे, मलि मलि शुं करे मांम ॥ माह्रा वाह्ला रे, मृषावाद वदे इस्युं रे, लोनें प्रेस्यो ते लांम ॥ मा० ॥ जू० ॥ १ ॥ फेरव्यो तुं बोले फखुं रे, नथी लहेतो कांइ न्याय ॥ मा० ॥ घरनुं खरच बहु ऊंकुं रे, प्रचूर भांमां भराय ॥ मा० ॥ जू० ॥ २ ॥ वाणोतरी वली आपवी रे, करवा भोगोपभोग ॥ मा० ॥ वेसराणि बहु बाजारमां रे ॥ जोडवा विवाहादिक योग ॥ मा० ॥ जू० ॥ ॥ ३ ॥ साचूं बोलतां सोंखिया रे, लहियें न लाभ अपार ॥ मा० ॥ अलिक अठे अक्षय निधि रे, केतेक ठामें निरधार ॥ मा० ॥ जू० ॥ ४ ॥ यतः श्लोकः ॥ वाणिज्ये परमो नीवी,वेश्यानां परमो निधिः ॥ लिंगीनां परमाधारो, मृषावाद नमोस्तुते ॥ १ ॥ जूठूं बोले बीजा बहु रे, तेह्नी थासे जे पेर ॥ मा० ॥ गति थाशे माह्री पण तेह्वी रे, वणिजने साचने वेर ॥ मा० ॥ जू० ॥ ५ ॥ ते पण कानें कांई तूं धरे रे, जे मुखथी वके ए मूंम ॥ मा० ॥ पर घर लूरा पिंमिया रे, अखंम एह्नां पाखंम ॥ मा० ॥ जू०॥ ॥ ६ ॥ न घर बारा नकरा सदा रे, सुखें आपे ए शीख ॥ मा० ॥ पण कह्युं एह्नुं जे करे रे, ते आखर मागे भीख ॥ मा० ॥ जू० ॥ ७ ॥ माथुं मुंमावबुं जो होय रे, तो मुंमना मानियें वयण ॥मा०॥ सोहेलुं न रहेवुं संसारमां रे, लोनें नचाडिने नयण ॥ मा० ॥ जू० ॥ ८ ॥ उपदेश तेह्नो ते सांभली रे, अलिक बोले निशंक ॥ मा० ॥ व्रत भागुं बीजे वीसारे, देशविरति नाठी लहि वंक ॥ मा० ॥ जू० ॥ ९ ॥ देव पूजादिक आचरे रे, अनुक्रमें पूरी ते आय ॥ मा० ॥ हीन व्यंतर ते उपनो रे, समकित भ्रष्ट महिमाय ॥ मा० ॥ जू० ॥ १० ॥ किहां मुंगो किहां बोबडो रे, कंठ तालु लीन दंत ॥ मा० ॥ अधर रोग दुर्गंधता रे, एहवा मुख रोग लहंत ॥ मा० ॥ जू० ॥ ११ ॥ किहांयें बोल्युं गमे नहिं रे, इस्वर सहु रहे दूर ॥ मा० ॥ नर भव पामी एहवा बहु रे, पीडा दीठी प्रचूर ॥ मा० ॥ जू० ॥ १२॥

नरक तिर्यंचमां ते भम्यो रे, एणी परें काल अनंत ॥ मा० ॥ एकसरमी ढालें उदय वदे रे, जूठें वाह्यो ते जंत ॥ मा० ॥ जू० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ एक दिन ते वलि रूपनो, वणिक श्रावकनो पुत्र ॥ सोमनामें अति सुंदरुं, समजे सघला सूत्र ॥ १ ॥ धण कण सोवन रजत रस, इंधण वस न तृण आदि ॥ बादर अदत्त न आदरे, डुविधि त्रिविधि आल्हाद ॥ २ ॥ त्रीजुं व्रत भजे सर्वथा, स्थूल अदत्तादान ॥ अतिचार पंच वरजे सदा, तेहमां थई सावधान ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ १११८ ॥

॥ ढाल बासठमी ॥

॥ हरि गुण गातां लाज लागे तो लागजो रे ॥ ए देशी ॥ चोरनी आणी वस्तु, न ल्ये चित्तसुं लही रे ॥ न ल्ये चित्तसुं लही रे ॥ चोरीने काजें क्यारे साहाय्य, वली आपे नही रे ॥ व० ॥ १ ॥ उलंघे न राज्य विरुद्ध, आपद पद ते कदा रे ॥ आ० ॥ कूडा तोलने कूडां मापके, वरजे ते सही रे ॥ व० ॥ २ ॥ सरसमां निरस न भेले, क्रियाणां केलवी रे ॥ क्रि० त्रीजूं व्रत पाले तेह के, इम मन मेलवी रे ॥इ०॥३ ॥ बहुली सागर वेहु ते, अप्रत्याख्यानिया रे ॥ अ० ॥ तिणे भंभेख्यो तेहने, राय संतानिया रे ॥ रा० ॥ ४ ॥ तव व्रतने विराधी तेहके, पूरवनी परें रे ॥ पू० ॥ थयो नही जाति देव, पीड्यो पापने भरें रे ॥ पी० ॥ ५ ॥ भवांतर भमिउ भूर, दरिडें दामिउ रे ॥ द० ॥ वलि श्रावक कुल अवतार, ते प्राणी पामीउ रे ॥ ॥ ते० ॥ ६ ॥ दत्त नामें तेणे देव, तिर्यंच नारीपणुं रे ॥ ति० ॥ डुविधें त्रिविधें लीधुं नीम, वली आगें भणुं रे ॥ व० ॥ ७ ॥ मनुष महिलासुं संगके, कायायेंकरी रे ॥ का० ॥ न करुं हुं निर्धार, लही डुःखनी दरी रे ॥ ॥ ल० ॥ ८ ॥ इत्वर परिग्रहताने, अपरिग्रहता तजे रे ॥ अ० ॥ अनंग क्रीडा अघराशि, जाणी नवि जे भजे रे ॥ जा० ॥ ए ॥ जोडे न परविवाहके, महादोष जाणीने रे ॥ म० ॥ विषयनो तीव्राभिलाष, वरजे हित आणीने रे ॥ व० ॥ १० ॥ इणिपरें चोथुं व्रत, लई आराधतां रे ॥ ल०॥ केतो गयो तसु काल के, समकित साधतां रे ॥ स० ॥ ११ ॥ पुरुष वेदोदय तीव्र, तिणे योगें करी रे ॥ ति० ॥ व्रतने विराध्यो तेह के, आयु अंतें मरी रे ॥ आ० ॥ १२ ॥ पूर्व परें हीन देव, तणी योनी गठे रे ॥ दे० ॥

भवमां भमियो भूर ते, क्लीब थई पछे रे ॥ क्ली० ॥ १३ ॥ बोली बासठमी ढाल, ए उदय ते ऊचरे रे ॥ ए० ॥ धन्य सदा नर तेह, जे धर्म हृदय धरे रे ॥ जे० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तपनो पुनरपि अन्यदा, धनबहुल इण अभिधान ॥ समकित धारी आछते, पंचम अणुव्रतवान ॥ १ ॥ खेत्र वास्तु रूप्य हेम धन, धान्य द्विचतुष्पद कुप्य ॥ परिमाण तेहनुं ते करे, चितमांही धरि चूंप ॥ ॥ २ ॥ योजन दान बंधन वली, कारण भावादिक ॥ अतिचार पांचे ए थक, तेहना लह्यो तहकीक ॥ ३ ॥ दुर्गम कांई लही एहनो, विवरी कहुं विचार ॥ सज्जन सहु सुणजो तुमे, नेहेंसुं नर नार ॥४॥ सर्वगाथा॥१२६॥

॥ ढाल त्रेसठमी ॥

॥ गोडी रागें जकडीनी देशीमां ॥ खेत्र वास्तु परिमाणथी, अधिक तणी इछायें जी ॥ पासेंनां लेई प्रेमसुं, एक करें उछाहे जी ॥ आगल पाछलनां ग्रहे उछाहे, एक करे जे योजना ॥ वाडी वरडी टालीनें ते, भावेंसुं सुणो भवि जना ॥ अतिचार पहेलो एह भीठयो, पांचमें व्रत शुभ मती ॥ अतिचरी जे अधिक लोभें, खेत्र वास्तु प्रमाणथी ॥ १ ॥ तार अने सोना तणो, नियम करे जे नेहथी जी ॥ चोमासादिक समय लगें, अधिक न राखुं एहथी जी ॥ अधिक न राखुं एहथी, इम त्रेवडी मनें अगेला ॥ पछे नृपादिक मोज योगें, आय पामी अगेला ॥ स्वजनादिकने सोंपी ते फरी, संग्रहें धरि मोह घणुं ॥ इणि परें थाए नियम कुडुलुं, भार अति सोनातणुं ॥ २ ॥ धन धान्यादिक मान जे, उलंगे अनि लोभें जी ॥ वृद्धि देखी मूर्छा लगें, मनमां जाए न थोभें जी ॥ मन न थोभे लाभ जाणी, पोतानुं करी पर घरें ॥ आपे तथा निज जनने आपे, एम बहु बंधन करे ॥ मुंडादिक बलि बांधे मोटा, इणि विधें अज्ञान जे ॥ अतिचरी अतिचार त्रीजे, धन धान्यादिक मान जे ॥ ३ ॥ द्विपद चतुष्पदमां नथी, जे तृष्णाने जोरें जी ॥ प्रसव लही पण बालनो, अवधि अपूरे चित चोरी जी ॥ चित्त चोरी धरे पर घरें इम, कारणे अवसर लही ॥ पछे आणे घरें पोताने, निदाने अवसर सही ॥ अतिचार चोथो एह भीठयो, सुगुरुवचनें ज्ञानथी ॥ लोभें जे इम मन न मगावे, द्विपद चतुष्पद मानथी ॥ ४ ॥ कुप्य गय

नासन आदि दे, भाजन शस्त्र कचोलां जी ॥ दश पंच ते मेली मोकलां, बाकी नियम बहुलां जी ॥ व्रत उपहरे वृद्धि देखी, भंजावी ने घाट ते ॥ स्थूल घडावे तली थिरता, पण जाणो उवाट ते ॥ जिम तिम करीने संख्या पूरी, पण पूराए भव आपदें ॥ इम राग वसें जे अधिक राखे, कुप्य शयनासन आदि दे ॥ ५ ॥ ते पण बहु दिन पालिने, सागरने उपदेशें जी ॥ स्थूल परिग्रह परिमाण ते, व्रतते भांगी विशेषें जी ॥ व्रतने भांगी भ भ्यो भवमां, पूरवनी पेरें ते वली ॥ दिगपरिमाण पण तिमज भ्यारें, खं मयूं सागरने मली ॥ भोगोपभोग पण तिमज भाग्युं, अनर्थ दंम उलालि ने ॥ नाख्युं धरि तिम सामायक व्रत, ते पण बहु दिन पालिने ॥ ६ ॥ व ली लेई विराधियां, देसावकासिक आदे जी ॥ दशमुं अग्यारमुं बारमुं, व्रत विषयादि प्रमादें जी ॥ प्रमादें पोषधोपवास, व्रत विषंभी को भवें ॥ अ तिथिसंविभाग भांगें, अदत्त गुणने अनुभवें ॥ हास्य विकथा रौद्र आरति, ध्यान योग न सांधियां ॥ विषय कषाय ने राग द्वेषें, वली लेई विराधियां ॥ ७ ॥ इणिपरें भमतां तिणें, बे त्रण पांच चार जी ॥ छ सात आठ कोइक भवें, नव दश अग्यार नें बार जी ॥ बारे व्रत धरी बहुल ने हें, वलि वलि मोहने छलें ॥ विराधीने वमी समकित, डुःख दीठां डुरगति थलें ॥ अनुभवी महा आपदा मुखें, कही न जाए ते किणें ॥ ढाल त्रे सठमी ए उदय भाखे, इणिपरें भमतां तिणें ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ कुंभिनी नगरी वसे, सुभद्र सार्थवाह श्राध ॥ ते जीव संसारी अन्यदा, सुता पणुं तसु लाध ॥ १ ॥ रोहिणी नामें रागिणी, जिन मतनी जालीम ॥ शुद्ध थई ते श्राविका, अथिर लहि आलीम ॥ २ ॥ मेलें नमे गुरु देवने, सांभले सूत्र सदाय ॥ साध्वीनी करे सेवना, सूधे मनें सवाय ॥ ३ ॥ विमल वणीकें ते वरी, स्नेहें वाह्यो सोइ ॥ आवीने वश्यो एक ठो, घर जमाई होइ ॥ ४ ॥ धर्म करे ते धसमसी, सवा लाख सज्झाय ॥ कर्म ग्रंथादिक ते भणी, तात तणे सुपसाय ॥ ५ ॥ व्रत बारे वलि आद र्यां, टाले तसु अतिचार ॥ ज्वाले कर्म कषायने, पाले शुद्धाचार ॥ ६ ॥

॥ ढाल चोसठमी ॥

॥ आदि जिणेसर वीनती ॥ए देशी ॥ तव मोह वेगे निज आसनें,एक

दिन इम आलोचे रे ॥ अहो अहो ए उंची चढी, शुं करशुं एम शोचे रे ॥ १ ॥ मोह राजा मनें खोनियो, दिशने रखे दिलगीरो रे ॥ तव सचिवादिक सहु मली, कहे नाखो मनहीरो रे ॥ मो० ॥ २ ॥ तव मोहनृप बोल्यो मुखें, शुं पूछो छो सचिवो रे ॥ रोहिणी दिशि थई रागिणी, अरि आपणासुं अतीवो रे ॥ मो० ॥ ३ ॥ ते हवे किम वश आवशे, आपणे एम सुणीने रे ॥ तव हसि बोल्या ते सहू, अरियणने अवगणिने रे ॥ मो० ॥ ४ ॥ निवड सहु जग तिहां लगें, प्रभुजी तुम एक पालो रे ॥ जई न पहोंचे जिहां लगें, ए शुं बोल्या तमें आलो रे ॥ मो० ॥ ५ ॥ तव मोह कहे तिहां मोकलो, कोइक एहवो जोरालो रे ॥ जे पाछी वाले तेहने, देखाडी निज चालो रे ॥ मो० ॥ ६ ॥ तव ते कहेवा करें तेहने, इम सुणिने तव आपें रे ॥ उभी थई इम कच रे ॥ विकथा निज बल व्यापे रे ॥ मो०॥ ७ ॥ प्रसाद करीने ए प्रभु, आपो मुजने आदेशो रे ॥ प्रमाण पेखुं हूं तेहनुं, तिहां जईने सुविशेषो रे ॥ मो० ॥ ८ ॥ तरतरी देखी तेहने, प्रधानादिकें प्रेरी रे ॥ तव तसु पासें जई तिणें, ततखिण लीधी घेरी रे ॥ मो० ॥ ए ॥ चार रूपें चतुरा थई ॥ विकथा योगिनी वारू रे, वदनें वसी जइ तेहने, क्लेश करी दीदारू रे ॥मो०॥१०॥ चोसठमी ए ढालमां, उदय वदे ए आंटी रे ॥ मोटी मोह राजातणी, मुगती जातां छे घांटी रे ॥ मो० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तात घरें रहता तिहां, भलां वसन भोजन्न ॥ पामे परिबल रोहिणी, जी जी करें सहु जन्न ॥ १ ॥ काम काज न करे किश्युं, अरति न एक लगार ॥ मात पिता सुपसायथी, को न कहे तुंकार ॥ २ ॥सर्व०॥१२४५॥

॥ ढाल पांसठमी ॥

॥ वीर वखाणी राणी चेलणा जी ॥ ए देशी ॥ देव भुवन तव गए थके जी, उलट आणी उर ॥ वात प्रीय कोइ प्रेखीने जी, देव वंदन त्यजे दूर ॥ १ ॥ विकथानें रसें वाही रोहिणी जी, पोतें जइने तेह पासे ॥ बेसाडीने ते बोले इश्युं जी, ए मेंहली मुण्युं तुझ आवासे ॥वि०॥ २ ॥ आज ए तुम घरें नीपनुं जी, काज कर्यो मुनें केणें ॥ ते कहे अलिक ए चचगुं जी, तुझ आगल सहि तेणें ॥ वि० ॥ ३ ॥ तूं वारुरे माही वदे रोहिणी जी, मुझने पण उंजवे छे मांभ ॥ ता कहे समकण विना सही जी, जिम

तिम शुं जवेठे जांम ॥ वि० ॥४॥ इम उत्तर पडुत्तर आपता जी, वहवाडे आव्यो त्यां पार ॥ तव वीजासुं राजकथा करे जी, विकथाएं वाही अपार ॥ वि० ॥ ५ ते पण घरें गई थाकिने जी, तव त्रीजीसुं तेणे सराग ॥ पुरुष स्त्रीनी प्रारंभी कथा जी, ते सासरियाने नयें गई जाग ॥ वि० ॥ ६ ॥ चोथीसुं चाहीने तेकरें जी, जक्त कथा तिहां भूर ॥ इम पांचमीसुं देशकथाकरे जी, आवे तव शिर परें सूर ॥ वि० ॥ ७ ॥ इम आचरतां विकथा अनुदिने जी, कोई श्रावक कहे एक दिन्न ॥ कर जोडीने ते कामनी प्रतें जी, नडे आवी देव जुवन्न ॥ वि० ॥ ८ ॥ एक मनें त्यजिने आशातना जी, नमवुं घटे नाथने पाय ॥ ते वंदनातो रहि वेगली जी, किम करो हो कर्म कथाय ॥ वि० ॥ ए ॥ तव उत्तर आपे ते तेहने जी, वंधव वीजे को गाम ॥ किहारे को नवि मिले केहने जी, केहने को न जाये धाम ॥ वि० ॥ १० ॥ प्रिय मेलो थाये ए थांनकें जी, तेणे सुख डुःखनी कुण एक ॥ पासठमी ए ढालें धर्मने कर्मनी जी, वात थाये विसराल ॥ वि० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ उपाश्रय पण अज्जा तणे, सहेजे तजि व्याख्यान ॥ जे ते श्राद्धि सुं करे, विकथा तेह सदाय ॥ १ ॥ साधु श्रावकने श्राविका, साधवीना सुविशेष ॥ अवर्णवाद मुख उचरे, अनुदिन तेह विशेष ॥ २ ॥ तव सीखामण ये साधवी, नडे जणतर सर्व ॥ जाए ठे तुऊ वीसरी, जिम गुण जाए गर्व ॥ ३ ॥ एह नवे डुःख दायिनी, केवल कष्ट निवास ॥ एहवी कथा करे शुं होय, अनर्थ दंम आवास ॥ ४ ॥ सदन जे संपत्ति तणुं, मुक्ति पुरीनुं मूल ॥ सुधासम स्वाध्याय कर, अहनिशि थई अनुकूल ॥ ५ ॥

॥ ढाल ठासठमी ॥

॥ जोसीयडो जाणे जोस विचार ॥ ए देशी ॥ मुह मरडी तव ते कहे रे, साधवी जी सुणो वात ॥ साधुजनें पण सर्वथा रे, विकथा न वरजी जात ॥ १ ॥ गुरुणीजी मलि मलि म करो मांम ॥ आंकणी ॥ न गमे सुने पांखम ॥ गु० ॥ न तजाए अनर्थ दंम ॥ तो जीन थाए शत खंम ॥ गु० ॥ २ ॥ मुहपतिएं मुख वांधिने रे, तुमे वेसो ठो जेम ॥ गु० ॥ तिम मुखें मूचो देईने रे, वीजे वेसाए केम ॥ गु० ॥ ३ ॥ मुख वांधी मुनिनी परे रे, पर दोष न वदे प्राहिं ॥ गु० ॥ साधु विना संसारमां रे, क्यारे को

दीठो क्यांहि ॥ गु० ॥ ४ ॥ सरल पणे अमे सही रे, जेवूं देखुं ज्यांहिं ॥ गु० ॥ परने पण मुख ऊपरें रे, तेहवूं भाखुं त्यांहि ॥ गु० ॥ ५ ॥ कपट न जाणुं केलवी रे, अवरां परे एक रेष ॥ मुह रखती सगावापनी रे, वा त न जंपुं विशेष ॥ गु० ॥ ६ ॥ को रुसो तूसो कोई रे, पण अमे अमारी टेव ॥ मरणांते मूकूं नहीं रे, जो ड्हवाए देव ॥ गु० ॥ ७ ॥ सद उपदे श नवि सद्दहे रे, अयोग्य बापडी एह ॥ अजाण जाणी तव अज्ञाए रे, उवेखी मेली तेह ॥ गु० ॥ ८ ॥ शंका तजी सा एकदा रे, श्रुत सुणतां गुरु पास ॥ वस्त्रें वदन आछादिने रे, मुसकें मुंकति हास्य ॥ गु० ॥ ए ॥ ज णजण श्रवणे जूजूआ रे, अनेक वदे अवदात ॥ लख लख करती ते करे रे, वखाणमांहे व्याघात ॥ गु० ॥ १० ॥ माती महीषी तलावनुं रे, जल जिम मोहोले जोर ॥ तिम वखाण मोल्युं तिणे रे, सभा जनसुं करी शोर ॥ गु० ११ ॥ सारथवाहनी सुता लही रे, कोइ न वारें कांइ ॥ तिम तिम श्रमणी धाइने रे, लवती लाजे नांहि ॥ गु० ॥ १२ ॥ जो गुरुवादिकवारे कदारे, तो आडी कहे तनु भीड ॥ भगवत हूं वगनी परें, वेसी रहूं मुख बीट ॥ गु० ॥ १३ ॥ पण पडुत्तर पूठथातणो रे, जो जिम तिम न दे वाय ॥ तो लोक सहु मुंगी कहे रे, ते वीके कांइ बोलाय ॥ गु० ॥ १४ ॥ अयोग्य जाणीने सर्वथा रे, गुरें पण मेहली उवेख ॥ तेव निशंक मुखें मो कले रे, विकथा करे विशेष ॥ गु० ॥ १५ ॥ ठासठमी ढालें कुइ रे, वातें विणसे काज ॥ आखर उदय रतन कहे रे, वातें विगडे लाज ॥ गु० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ विकथाने जोरेंकरी, वीसर्युं विद्या पूर ॥ अर्थ सहु आगम तणा, चित्तथी तव थया दूर ॥ १ ॥ व्रत मेल्यां वीसारिने, आलोए नहिं अतिचार ॥ प्रमादें न नमे देवने, न गमे नियमाचार ॥ २ ॥ भणतां मन भेदे नहीं, धर्मे न धारे चित्त ॥ पडिकमणुं अनादरपणे, करे विकथाएं सहित ॥ ३ ॥

॥ ढाल सडसठमी ॥

॥ फोफलडां घडी देरे ॥ ए देशी ॥ कौइक सार्थे एकदा, विकथा कोइ कुठाम ॥ मगनपणे मांमी तिणे, केवल जाणे क्लेशनें काम ॥ १ ॥ अवतुं आगल न दीजियें रे, आलें थाए उत्पात ॥ वरजो विकथा वानडीरें ॥ भलो पियारी तात ॥ अ० ॥ २ ॥ रखे कोई इहां सांभले, न रखो ते उपयोग

॥ विकथाने वस परवसें, सहसा वदे सुणे लोग ॥ अ० ॥ ३ ॥ पटराणि ए पुरनाथनी, अति कुसीला डुष्ट ॥ सम्यग हुं समजूं अछुं, पापिणी छे ए पुष्ट ॥ अ० ॥ ४ ॥ कोइएक नलें माणसें, कह्यो मुजने एह ॥ तेमाटे वीसे वसा, साचुं ए नहीं संदेह ॥ अ० ॥ ५ ॥ तिणे समे ते थानके, कोइक काम विशेष ॥ ते राणीनी दासीयें तिहां, उदंत सुण्यो ते अशेष ॥ अ० ॥ ६ ॥ राणीने दाख्यो तिणे, राणियें राय हजूर ॥ आदियकी अवदात ते, कह्यो करी दिल क्रूर ॥ अ० ॥ ७ ॥ तिहां राये तेडावी रोहिणी, तेने तेडी गयो तिहां तात ॥ प्रथवीपति पूछे तदा, एकांते तेडी ते वात ॥ अ० ॥ ८ ॥ कहे नई जे तें सुण्यो, मुज महिला अवदात ॥ ते शुं साचो सुंदरी, विवरी कहो ते वात ॥ अ० ॥ ए ॥ ए तो में सुण्युं नथी, सा कहे सांजलो स्वामि ॥ हुं केंहनुं कांई जाणुं नहीं, वेठी रहुं निज धाम ॥ ॥ अ० ॥ १० ॥ जिम तिम लवती जाणी तिहां, तव ते दासी तेडि ॥ अहिनाणें सहु अवनीपति, पूराव्या करि केडि ॥ अ० ॥ ११ ॥ मुखामुखें इम मेलतां, संशयमां पडी सोय ॥ उत्तर नवि आपे किश्यो, जगति सामुं रही जोय ॥ अ० ॥ १२ ॥ तव सारथवाह सुननइने, तिहां रोषें तेडी राय ॥ ते दासिपें दाखावित, संबंध ते समजाय ॥ अ० ॥ १३ ॥ तव सहसा वज्र पडे सिरें, तिम थई पूछे तात ॥ अहो अहो पुत्री ए किश्यो, दासी वदे अवदात ॥ अ० ॥ १४ ॥ एकांतें पण ए किश्यो, पूछंतां बहु पेर ॥ उत्तर जव आपे नहीं, तव तातें तजि हेर ॥ अ० ॥ १५ ॥ तेडावी ते तारुणी, जे आगल एणे वात ॥ आगलथी कही हुती, उलखी ते दासी संघात ॥ अ० ॥ १६ ॥ कामनी ते आवी कहे, सारथवाहनी साख ॥ हा एणे इम उच्चर्युं, न जाणुं इयें अनिलाप ॥ अ० ॥ १७ ॥ जनक तेहनो जाणे अछे, मूल थकी मुख दोष ॥ ते वनिताने वश जाइने, तनुंजाने तेडी सरोष ॥ अ० ॥ १८ ॥ आवी अवनीपति कने, नेत्रें धरतो नीर ॥ पयंपे ते पाए नमी, दिलसुं थई दिलगीर ॥ अ० ॥ १ए ॥ सडसठमी ढालें लटकी, सहू को रहे सेण ॥ उदय वदे आपद पडे, कोई न माने कहेण ॥ अ० ॥ २० ॥

॥ दोहा ॥

॥ आज लगें प्रञ्जु अमकुलें, दीगे पण कोई दोष ॥ जीव जातां लगें

नवि वदे,पापनो जाणी पोष ॥१॥ अण दीठो अण सांभल्यो,ए दोष दाखी महाराज ॥ कलंक प्रथम ए मुज कुलें, एणें चढाव्युं आज ॥ २ ॥ बीज तणां शसिहर थकी, विमल मुज वंश विशेष ॥ कलुरुयें ते कालो कर्यो, अलिक वदीने एष ॥ ३ ॥ मोकलजीनी लोकमुखें, जाणीने में जेह ॥ वारी नहीं ए ते वती, तकसीर माहरी तेह ॥ ४ ॥ विविध गृह व्यापार वसें, संजारीने शीख ॥ नवि दीधी वलि नवि तजी, लागी तो ए लीक ॥ ॥ ५ ॥ ते माटे प्रभुजी तुमें, जिम जाणो तिम जोर ॥ ए अपराधिण ऊपर करो, निशंक थई निठोर ॥ ६ ॥ सर्वगाथा ॥ ११०७ ॥

॥ ढाल अडसठमी ॥

॥ धणरारे पंथी ढोला मत वादलियें ॥ ए देशी ॥ परतात कीएं इमसा विगोइ हो, हो सुगुणा रे, सुणजो श्रोता ॥ प० ॥ निगुणा रे, नर तिहां विगोता ॥प०॥ पुरनारे जन मलि जोता ॥ प० ॥ ए आंकणी ॥ नृप कहे मारा नगरमां रे, अवल पुरुषनुं एक ॥ वचन न लोपुं हूं ताहरुं, मुजने मानवा योग्य तुं छेक हो ॥ सु० ॥ १ ॥ शतखंम करी चोवटे रे, नहिं ना खूं ते माट ॥ पण देशोटो देवो घटे, जिम अवर को न वहे उवाट हो ॥ ॥ सु० ॥ २ ॥ अवनिपति तेहने इम कही रे, विसर्ज्यो तिणे ठाय ॥ ते णे पण तेहज गामथी, तनुजा ते कीधी विदाय हो ॥ सु० ॥ ३ ॥ राज नरें वींटीथकी रे, राजमारग सा जाय ॥ देशवटे डुखणी घणुं, डुष्ट लोक वदे तव त्यांहि हो ॥ सु० ॥ ४ ॥ अहो अहो श्राते श्राविका रे, अहो देव वंदनाए तेह ॥ पडिकमणो मुखे वलिका, श्राते पूठइं कह्युं अत्रेह ॥ सु० ॥ ५ ॥ अहो ए ते जणतर जलुं रे, एहवो ए जैननो धर्म ॥ अवगुण अछता उचरे, परना परख्या विण मर्म हो ॥सु०॥६॥ पग पग इम पामरज नें रे, निंदाती निज धर्म समेत ॥ नगर बाहिर ते नीसरी, संजारती सहु ना हेत हो ॥ सु० ॥ ७ ॥ जनक वैजव न वीसरे रे, मातनो संजारी मोह ॥ बंधु जन गौरव वहु परें,मनें समरे पामि विछोह हो ॥सु०॥८॥ परिजनना ते परें परें रे, श्रादर ध्याती अनाथ ॥ सुगुरु वियोगें शोचती, गमन करे भूजती गात हो ॥ सु० ॥ ए ॥ मुखोनि मुखे विलपती रे, गति हीण गामो गाम ॥ नीक्षाने काजें जमे, किहांयें पामे नहि विश्राम हो ॥ सु० ॥ १० ॥ वनमांहे वींधाए वली रे, कांटे कोमल चरण ॥ रुधिर धा

राये सींचे धरा, कथराला थयां आनरण हो ॥ सु० ॥ ११ ॥ क्रोध तदा कोप्यो घणुं रे, अप्रत्याख्याना वरण ॥ आरति सैन्य उदेरीने, तिणे समकितनुं कखुं हरण हो ॥ सु० ॥ १२ ॥ आयु पूरी ते ऊपनी रे, अपरिग्रहीता अं तरी हीन ॥ एकेंडियादिकमां वली, अति डुःख दीगं थई दीन हो ॥ सु० ॥ १३ ॥ किहां वेहेरी किहां बोबडी रे, किहां थयो जिन्हा रोग ॥ अड सठमी ढालें सुणो,उदय वदे आस्तिक लोग हो ॥ सु० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तालि लेइ मोहराय तव, महा मूढता प्रिय साथ ॥ हसी कहे सुण हे प्रिये, विस्मयकारी वात ॥ १ ॥ सूधी निवड जे श्राविका, निश्चल जे हना नीम ॥ विकथायें जुउ तेहनी, शी शी नांजी सीम ॥ २ ॥ ए गरीव डीनुं कहो शुं गजुं, सा कहे सांजलो स्वाम ॥ अचंनो श्यो ए वातनो, जो नर सुरपति तुम नाम ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ १२०४ ॥

॥ ढाल उंगणोतेरमी ॥

॥ सूर्य साहमी पोलें ॥ ए देशी ॥ पुरोहित चक्रीने पूज्य हो प्रजु, अम रगणें अक्षोन जे ॥ महारा लाल ॥ जगमां अतुलवल जास ॥हो०॥ सहु जीवने दे थोन जे ॥ म० ॥ १ ॥ शिव शोधना जे सोपान ॥ हो० ॥ चौद ते मांहे अग्यारमें ॥ म० ॥ पगथीए पहोता जे सूर ॥ हो० ॥ पग मांमवा चाहे वारमे ॥ म० ॥ २ ॥ पुरुष पलकमां तेह ॥ हो० ॥ हुंकार मार्गे तिहांथकी ॥ म० ॥ पाडी नमाव्या पाय ॥ हो० ॥ दीन ते जिहां तिहां रुले डुखी ॥ म० ॥ ३ ॥ ए जीव संसारी अनंत ॥ हो० ॥ आण प्रमाण करी सहु ॥ म० ॥ हाजर वंधा होय ॥ हो० ॥ सुविधें तुम सेवे वहु ॥ म० ॥ ४ ॥ तव सम कालें त्यांहि ॥ हो० ॥ सामंत मंत्री सहु कही ॥ म० ॥ अहो देवीने बुद्धि ॥हो०॥ वातनी विगतें केहवी लही ॥ ॥ म० ॥ ५ ॥ जुउ संसारी ते जीव ॥ हो० ॥ नरनव पामी एकदा ॥ ॥ म० ॥ समकित पाम्यो शुद्ध ॥ हो० ॥ मोहे ते भ्रष्ट कस्यो मुदा ॥म० ॥ ६ ॥ देतां कोइकनवें दान ॥ हो० ॥ अनुचरें मोहनी आणथी ॥म०॥ ततखिण जई थंन्यो तेह ॥ हो० ॥ किहां एक चुकाव्यो शीलथी ॥ म० ॥ ॥ ७ ॥ क्रोधें किधो कीहां जेर ॥ हो० ॥ तपना देखी तानमां ॥ म० ॥ किहां एक कस्यो नावना नंग ॥ हो० ॥ धरी तेहने डुष्ट ध्यानमां ॥म०॥

॥ ७ ॥ देश विरतिथी दूर ॥ हो० ॥ किहां एक वली तसु वासिउं ॥ म० ॥ मोकली मोहें नृत्य ॥ हो० ॥ परंपरें सुख पीलीउं ॥ म० ॥ ए ॥ इम यो जन कूपने माने ॥ हो० ॥ क्षेत्र पल्योपम लहो खरो ॥ म० ॥ असंख्या तमो तसु भाग ॥ हो० ॥ सूक्ष्म रोम खंमें भलो ॥ म० ॥ १० ॥ ते प्र देस रासि प्रमाण ॥ हो० ॥ देशविरति गुण में वरी ॥ म० ॥ पण मो हने सुभटें तेण ॥ हो० ॥ कपाचादिकें लीधो हरी ॥ म० ॥ ११ ॥ अप्र त्याख्यानावरणचार ॥ हो० ॥ कषाय तणे उदयें करी ॥ म० ॥ देशविरति जाए दूर ॥ हो० ॥ आगमें भाखी इणि परे ॥ म० ॥ १२ ॥ उदयरतन इणि भांते ॥ हो० ॥ उगणोतेरमी ए कचरी ॥ म० ॥ ढाल ए ढलते रागें ॥ हो० ॥ सुणजो सहु ऊलट धरी ॥ म० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ चंडमौलि नृप इणि समे, मोर्दे मुनिना पाय ॥ प्रणमीने पूछे इस्युं, करी रोमांचित काय ॥ १ ॥ भगवन् ए चूंभा घणूं, मोहादिक अरिमस्त ॥ पीडे जे सहु प्राणिने, सोंपी डुःख समस्त ॥ २ ॥ सुख सघलां ले संहरी, डुःख सघलां धे डुष्ट ॥ शल्य पडो ए मोह शिरें, पापी जे महापुष्ट ॥ ३ ॥ सकल सिद्धांतनुं रहस्य ए, उतम तुम आख्यान ॥ ए विचें अवर जे पू छियें, न घटे ते भगवान ॥ ४ ॥ केवल संदेह कारणे, प्रश्न पूछुं जे कांइ ॥ अपराध खमजो ते प्रभु, महिर धरी मनमांहि ॥ ५ ॥

॥ ढाल शीतेरमी ॥

॥ भमर गीतानी देशी, धन्याश्री रागें ॥ भगवन पहेलुं तुमे जे भांखि उं, समकित जेणे वेघडी फासिउं ॥ अर्ध पुजल परावर्त्तन रह्यो, संसार ते हने उत्कृष्टो कह्यो ॥ कह्यो वलि समकित संगम, तेहने असंख्याते भवें ॥ ते वार पन्नि पण तिमज तेणे, देशविरति लाधी सवें ॥ ते वेडुयकी थई भ्रष्ट भवमां, भूरि भव लगें डुःख लह्यो ॥ ते भूरि भवनों मान भाखों, सांसो मुजने ए रह्यो ॥ १ ॥ भुवनभानु भापे तव केवली ॥ किहां एक सं ख्याता असंख्याता वली ॥ किहा एक अनंता भव पण ते करे ॥ समकित देशविरति तजी फरे ॥ फरे अनंती उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी ते प्राणिउं ॥ अर्ड पुदगलें केम अनंतरें, आगम मांही जाणिउं ॥ इणि परें विचे विचे काल, अनंता अनंत भेदें भमे ॥ अंश मात्र तोपण अर्ड पुजल, तणो जोनां

नवि समे ॥ २ ॥ अनादि कालनो जीव निगोदिउ ॥ अव्यवहार राशें अति दुःखें नेदिउ ॥ समकितहीणो तिहांथी नीसरी ॥ व्यवहाररासें वरवते अव तरी ॥ अवतरे ते लाख चोराशी, जीवा योनी सर्वदा ॥ परावर्त्ततां अनंत पुदगल, पार नवि पामे कदा ॥ समकित वण संसारपारा, वार पार न पा मियें ॥ ठकायमां ठेदन नेदन, दुःखें जिहां तिहां दामियें ॥ ३ ॥ समकित पाम्यानो महिमा जुउ ॥ मुहूर्त्त लगें जे समकेती हुउ ॥ मोहादिक जो त स कोपे घणुं ॥ तो पण तेहने अर्द्ध पुदगलिकपणुं ॥ घणुं तेहने अर्द्ध पुदगल, लगें नवनी अगेला ॥ पठें परमानंद पामे, नांजी नवना आम ला ॥ हलु कर्मी कोइक जीव वहेलो, मुगति गामी माहावली ॥ समकि तनुं ए फल में नाख्युं, सुण तुं राजन मन रली ॥ ४ ॥ नृप नमि मुनिने तव कहे पडवडो ॥ नाखो नगवन ए अचरज वडो ॥ समकित देश विर ति वखा स्वामी ॥ मोहादिक दुःख एम दीये ठामी ॥ दामी दुःख ये दुष्ट स घला, सुनट मोह राजातणा ॥ तव केवली कहे अनंत कालें, अरि न उसरे ए घणा ॥ सर्वदा सर्व जीवने ए, संतापे सर्व पापिष्ठा ॥ ते माटे सहु ज्ञानीये पण, इमज उत्तर आपिआ ॥ ५ ॥ यतः ॥ समत्त देश वि रया, पलियस्स असंख नाग मित्ताउ ॥ अठ नव उवरिते, अणंतकालं च सम एत्ति ॥ १ ॥ पूर्व ढाल ॥ समम्यक् दर्शन देश विरति लही ॥ क्षेत्र प ल्योपम असंख्य नागें सही ॥ केश प्रदेश राशिमांहे जेती ॥ तेहना नवनी संख्या कही तेती ॥ तेती संख्या लहो तेहने, चारित्र सामायकवंतने ॥ न व आठ तस नगवंते नाख्या, पठे पामीनव अंतने ॥ श्रुत सामायक सम्य क् दृष्टि, मिथ्यादृष्टि नावें लहो ॥ त्रसमांहे ते नव अनंता, नमे साचुं सद्दहो ॥ तेणे शीतेरमी एह नाखी, ढाल एम उदय वदे ॥ संसार सागर तेह तरशे, शास्त्र जे धरशे हृदे ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ स्वामी कहियें संसारिते, चारित्र धर्म सहाय ॥ सर्व विरति कहो थाय से, पूठे इम महाराय ॥ १ ॥ तव मुनि कहे तक जोइने, रंग नरें राजान ॥ अंतर ए थोडो अठे, सांनल थई सावधान ॥ २ ॥ सुधो हूं सावधान हुं, राजा कहे ऋषिराज ॥ महेर करी मुजने कहो, संबंध ए शिरताज ॥ ३ ॥

॥ ढाल ॥ एकोत्तरमी ॥

॥ मारुजी हो अवर नदीरे माहरी वेहेनडी हो राज ॥ ए देशी ॥ राजा जी हो त्यारे कहे रे तेह केवली हो राज ॥ मनुष्य क्षेत्रंपुर एक ॥ सहाय लहोने राज, संसारीने ॥ स० ॥ अवतारीने ॥स०॥ सहुकुं समकित वे सुखदाय ॥ स० ॥ टेक ॥ रा० ॥ इंड्पुरं रे तेह कपनो हो राज ॥ विश्व थकी व्यतिरेक ॥ स० ॥ १ ॥ रा० ॥ समीरण नामें रे नृप सोहे तिहां हो राज, जयंति नामे तसु नार ॥ स० ॥ रा० ॥ कर्म नृपें लई ते जीवने हो राज ॥ तेहनी कूखें दियो अवतार ॥ स० ॥ २ ॥ रा० ॥ पूरे मासे रे जनम्यो ते यदा हो राज ॥ अरविंद तेहनुं अभिधान ॥ स० ॥ रा० ॥ थाप्युं थयो रे सहु कलाधरु हो राज ॥ निरुपम सुगुण निधान ॥ स० ॥ ॥ ३ ॥ रा० ॥ तव तरुण ते थयो रे तेहने ते समे हो राज ॥ अवसर ल ही उत्तरंग ॥ स० ॥ रा० ॥ उद्यानमांहि आणि मेलिउ हो राज ॥ कर्म नृपें गुरु संग ॥ स० ॥ ४ ॥ रा० ॥ मोहें नमी रे ते मुनींद्रने हो राज ॥ ते कुमर बेठो तिहां पास ॥ स० ॥ रा० ॥ तव कर्म नृपें रे तेहने आपिउ हो राज ॥ खडग वारु एक खास ॥ स० ॥ ५ ॥ रा० ॥ अध्यवसाय रे अ ति सुंदरु हो राज ॥ तदरूप ते करवाल ॥ स० ॥ रा० ॥ मोह आदि रे शत्रु सातना हो राज ॥ स्थिति रूप तनु तिणे ताल ॥ स० ॥ ६ ॥ रा० ॥ सागर संख्याएं रे तव छेद्यां तिणे हो राज ॥ तेहुनां तनु केटलां एक तेह ॥ स० ॥ रा० ॥ तेहने योग्य जाणीने तव ते साधुएं हो राज ॥ निर्मल धरी मननेह ॥ स० ॥ ७ ॥ रा० ॥ सम्यक् दर्शन रे ते मंत्रीसरु हो राज ॥ धरपति जे चारित्र धर्म ॥ स० ॥ रा० ॥ आगल थकी ते वन्हे मेलव्या हो राज ॥ जे सेव्या आपे शिव शर्म ॥ स० ॥ ८ ॥ रा० ॥ सर्व विरति रे नामें सुंदरी हो राज ॥ सालंकारा सुवेश ॥ स० ॥ रा० ॥ दिव्य देखाडी गु ण द्रागली हो राज ॥ ते मुनिएं धरि मोह अशेष ॥ स० ॥ ए ॥ रा० ॥ राज कुमरें रे तव रीझिने हो राज ॥ सर्व विरति वरी वेग ॥ स० ॥ रा० ॥ सुगुरु समीपें व्रत उच्चर्यां हो राज ॥ शुद्ध धरी संवेग ॥ स० ॥ १० ॥ रा० ॥ दीक्षा महोत्सव रे कीधो दीपतो हो राज ॥ उदय वदे मनोहार ॥ ॥ स० ॥ श्रोताजी हो एकोतेरमी ढालें सांभलें सही हो राज ॥ नित मु निनें नमो नर नार ॥ स० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ धरपति चारित्र धर्मनुं, सैन्य पाम्युं संतोष ॥ तव तेहने पासें रहे, दूर निवारण दोष ॥ १ ॥ अतिशय बोध आनंदिउ, सम्यक् दर्शन थिर नाव ॥ पामी तसु पासें वसे, नांगरीउं जिम नाव ॥ २ ॥ सदागम लीन रहे सदा, आचरि शुद्ध आचार ॥ प्रथम आनूपण पहिरणे, मार्दव मंमन सार ॥ ३ ॥ उंपे ते आर्जव गुणे, संतोषसुं मन मेल ॥ तप तरवारने जे धरे, करे संयमसुं केल ॥ ४ ॥ सेवे सत्य सुमित्रने, शौचसुं धरी सनेह ॥ अकिंचन ब्रह्मचर्य उपरें, राखी राग अछेह ॥ ५ ॥ चारित्र धर्म नृप अंगना, दशे मिल्या ए दोस्त ॥ ते अरविंद अणगारशुं, जिम पाणीसुं मले पोस्त ॥ ६ ॥ सदबोध सदागम प्रेरिउ, मुनिवर ते महा धीर ॥ सबल मोहनां सैन्यसुं, रोज चढे रणवीर ॥ ७ ॥ सर्वगाथा ॥ १२५० ॥

॥ ढाल बहोतेरमी ॥

॥ कडखानी देशी ॥ इम तेह अरविंद अणगार अरिशुं नडे, रण वढें रोज मन मोज धरतो ॥ मोह दल दलन बलवंत नड नंजणो, अखंम रिपु चंमना खंम करतो ॥ इ० ॥ १ ॥ चढी अप्रमाद अदनूत गजउपरें, ऐन अदंनते धरि अंबाडी ॥ समाधि सिंदूरसुं जेह शणगारिउ, अलोन गुण घंट घणणंत गाढी ॥ इ० ॥ २ ॥ धनुष समवृत्ति शुन सधर धरिउ करें, नावना रूप सर नूरि वरसे ॥ मारि मोह रायने मर्म स्थानकें लही, शत्रुनी सूरतें सीम फरसे ॥ इ० ॥ ३ ॥ नलकि ब्रह्मचर्यने काम नट नेदिउ, रणमां हृद यांतरें रोप पूरें ॥ घेरी राग केसरी जोर घूमाविउ, अराग आयुधें ते नसाडशुं दूरे ॥ इ० ॥ ४ ॥ द्वेष गजेंद्र अक्रोध बाणे थयो, जाए नाठो तदा चील पाडी ॥ एम सदबोध सदागमे उंलखी, सैन्य शत्रुतणी तिणे नसाडी ॥ इ० ॥ ५ ॥ वीर विश्वानर वींध्यो समता सरे, विनय बाणे वली शैल्य राज ॥ सरल बाणें करी बहुली दूरें करी, लोन निर्लोनसरे आण्यो बाज ॥ ॥ इ० ॥ ६ ॥ हिंसा असत्य अदत्त मैथुन तथा, मूर्गा आदिमहावेरी बलिया ॥ अहनिशे तेहनुं मूल उन्मूलतां, सर्व सामंतना गर्व गलिया ॥ इ० ॥ ॥ ७ ॥ प्रमाद दंमाधिपें मोहने अन्यदा, तेह उपिराजने जोर घेयो, ताम अथाम अणगार ते उंलखी, श्रुति रूप दूतियें इम उदेयो ॥ इ० ॥ ८ ॥ ॥ यतः ॥ वरं दृसांतेजंघुनं, वरं अग्गिपवेसणं ॥ वरं सप्पोहि सहवासो,

मा पमायाए संगमो ॥ १ ॥ एहवा आगमतणा अर्थ मन धारिने, शत्रु ना सैनने जोर जूंभे ॥ परिसह बावीस मोह राय पटावते, एकदा वेरिअ आवि हुंसे ॥ ड० ॥ ए ॥ धरिअ निजधीरता वीर ते वेरिने, देहनी अनित्यता आदि फोजें ॥ दूरकरि उटने आप बल दाखवी, मोहसुं इम चढे तेह मोजें ॥ ड० ॥ १० ॥ त्रिविधि उपसर्ग जट उत्कट मोहना, विकट तेह कटक थया निकट वरती ॥ प्रवचन वयणथी कर्म गति पारखी, ताम करि दूर तस तेह वरती ॥ ड० ॥ ११ ॥ तरुण तपसी वृद्ध बालने गिलाननी, विविध परें सेवना नित्य करते ॥ जोर संज्वलन कषायें जोरो कर्यो, उपशम्यो प्रशम रस ध्यान धरते ॥ ड० ॥ १२ ॥ शब्द रूप गंध रस फरस आदि वली, प्रगट थया पंच ए प्रौढ पापी ॥ सकाम रणांगणे प्रगट थई तव तिणे, तास संतोष बलें शीख आपी ॥ ड० ॥ १३ ॥ मुनि मोहरायसुं एम युद्धें जड्यो, हारे ने जीत करे हाथो हाथें ॥ उदयरतन्न कहे कर्म कर्त्ता अछे, बहोतेरमी ढालमां आव्युं धातें ॥ ड० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जय पराजय पामतां, इणि परें ते अणगार ॥ जय लक्ष्मी वरि जे समे, ते समे सुणो नर नार ॥ १ ॥ गाढो ने तरज्यो गुरें, कोईक काम विशेष ॥ घेर्यो तव तेहने घणुं, आपणो अवसर देखि ॥ २ ॥ प्रत्याख्यानावरण जे, क्रोध मान जट दोय ॥ पीड्यो तिणे निर्दयपणे, मर्मस्थाने मुनि सोय ॥ ३ ॥

॥ ढाल तहोतेरमी ॥

॥ उधव माधवने कहेजो ॥ ए देशी ॥ वेरी कषाये वाहीने, घेरी चोफेरें ॥ बलवंते वेढु लगी, यती कीधो जेरें ॥ वे० ॥ १ ॥ नव थई ते नरलरो, गुरु सादमो ममार ॥ बोलवा लागो ने चेतमां, लोपी लाज अपार ॥ वे० ॥ २ ॥ अहो आचारज जी अमे, कीधो स्यो अपराध ॥ सुगतें विचारीने जुओ, बोले पामशो बाध ॥ वे० ॥ ३ ॥ अणगार तो अनेक ने, गुरुजी तुम गच्छ मांहि ॥ ममोवडिआ मुज सारिखा, तेहने न कहो कांही ॥ वे० ॥ ४ ॥ गरीब सही गुनह विना, केवल मुज वंक ॥ दाखो ओ लहु देखतां, कोण ने निकलंक ॥ वे० ॥ ५ ॥ जो कोई बीजो पण यती, एहवुं आचरे मांहि ॥ तो मुजने उवेखवो, इम बढे मांहि ॥ वे० ॥ ६ ॥ थविर वारे जव तेहने, क्रकवंत तुण केम ॥ इम बढे इस्यां बोलवुं, जट बोले जेम ॥ वे० ॥ एनो कु

ल मुऊ उगटे, इम चिंते ते ताम ॥ अहंकार कोपें ऊफण्यो, गाढो तिणे ठाम ॥ वे० ॥ ८ ॥ जब गुरु कांइक कहे फरी, तब ताडी कहे तेह ॥ साद तुमारा सांभली, हीए पडेछे वेह ॥ वे० ॥ ९ ॥ मलि मलि एह मेहलो फरी, शुं करशो ठेडि ॥ आ ल्यो तुम उंघो मुहपति, मूको माहरी केडि ॥ ॥ वे० ॥ १० ॥ वेष तजावी वेगसुं, इणि परें अवहेलि ॥ सुंप्या तिणे मोहना सैन्यना, तेहने तिण वेलि ॥ वे० ॥ ११ ॥ छुष्टें मली ते दीनने, निंदनीक ग्रहवेष ॥ पहेरावीने परे परे, दीधां दुःख अनेक ॥ वे० ॥ १२ ॥ भीख मांगी करे चाकरि, पर घरें भरे पेट ॥ वरष तेहने वोल्यां घणां, करतां लोकनी वेठ ॥ वे० ॥ १३ ॥ अहो में भ्रष्ट बुद्धें भज्यो, धर्म त्यजी अधर्म ॥ अंत समय ते इणि परें, निंदे कृत कर्म ॥ वे० ॥ १४ ॥ इह लोकें लही आपदा, पर भवें बहु पीड ॥ पामीश एहना प्रभावथी, भवनी पण भीड ॥ वे० ॥ १५ ॥ इम ते आतम निंदतो, मरी ज्योतिषीमांहि ॥ अमरपणे जई ऊपनो, सुण नृप उछांहि ॥ वे० ॥ १६ ॥ तिहांथी चवीने जीवते, भव भमिउ भूर ॥ बोली ए तिहोतरमी, ढाल उदयें सनूर ॥ वे० ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ उपनो ते वलि अन्यदा, मंत्री सुत मनुहार ॥ राज्य पुरें रम्य आढ्यते, चित्रमति नामें कुमार ॥ १ ॥ मावित्र परलोके गयां, तव पुत्र रही निज गेह ॥ पोते संयम आदरी, बहुदिन पाले तेह ॥ २ ॥ पूर्व परें मोह सैन्यने, मुहकम देतां मार ॥ अंते विषय सुख महाभटें, हरव्यो ते अणगार ॥ ३ ॥ संयम विराधी सुर थयो, सौधर्मे सुर लोय ॥ पल्योपमने आउखें, तिहांथी चवीने सोय ॥ ४ ॥ भूरि भवांतर ते भम्यो, क्षेमंकर नृप धाम ॥ कंचनपुरें थयो एकदा, सुत विजयसेन इण नाम ॥ ५ ॥ तिहां पण सद्गुरु संगथी, धर्म सुणी सुखखाण ॥ मात पितादि मूकिने, संयम लीये सुजाण ॥ ६ ॥ तिमज हरखे रहे ते कने, सदागमने सद्बोध ॥ मोहराजाना सैन्यसुं, युद्ध करे ते जोध ॥ ७ ॥ सदागमसुं थयो स्नेह अति, सद्बोधनो थयो पोष ॥ अप्रमाद भेयो अंगमां, स्थिर थयो संतोष ॥ ८ ॥ तव पाम्यो ते महा मुनि, अप्रमत्त गुण स्थान ॥ सिद्धिसौधनुं सुंदरुं, सातमुं जे सोपान ॥ ९ ॥ सर्व गाथा ॥ १२९३ ॥

॥ ढाल चमोत्तरमी ॥

॥ चोपाईनी देशी ॥ कोईक कर्म परिणाम पसाय ॥ उपशम श्रेणि ना में तिणि ठाय ॥ महावज्र दंम मुनि पाम्यो तेह ॥ उग्रवीर्य नव उलस्युं अछेह ॥ १ ॥ अनादिकालना जे महा अरी ॥ तव शिरें माख्या तेह दंमें करी ॥ क्रोध मान माया ने लोभ ॥ अनंतानुबंधी जे भव थोभ ॥ २ ॥ नस्म पाम्यो रहे वह्नि छिपी ॥ तिम ते चारे रह्या तव लिपी ॥ अछता थई ते पड्या अचेत ॥ जिम कोईक घायल रण खेत ॥ ३ ॥ विशुद्ध समकित मोहनी भले ॥ अर्द्ध विशुद्ध जे मिश्र अने ॥ अविशुद्ध मिथ्यात मोहनी जोय ॥ त्रिहुं भेदे दर्शन मोहनी होय ॥ ४ ॥ ए त्रिणे थई तुं सांभल नृप ॥ मिथ्या दर्शन मंत्री रूप ॥ तव तेणे दंमें हणिउ तेम ॥ अचेत थई ने पडिउ जेम ॥ ५ ॥ अपूर्व करण नामें गुणथान ॥ पहोतो तव आठमे सोपान ॥ नवमुं निर्वृत्ति बादर संपराय ॥ तुरत ते थाने चढयो ऋषिराय ॥ ६ ॥ हणी मूर्छा पमाड्या त्यांही ॥ नपुंसक ने स्त्रीवेद उठांहि ॥ हास्यरती अरतीने शोक ॥ भय डुगंछादिक छ दोष ॥७॥ पुरुष वेद कियो गति भंग ॥ क्रोध मान मायानां अंग ॥ त्रिहुं भेदें जाणे तहकीक ॥ अप्रत्याख्याना वरणादीक ॥८॥ त्रिहुं प्रकारना लोभ समेत ॥ अनुक्रमें एहने कस्या अचेत ॥ संज्वलनाने देतां मार ॥ नासी लोभ गयो तिणि वार ॥ ए ॥ दशमे गुण स्थानें ते दुष्ट ॥ सूक्ष्म संपराय पापिष्ट ॥ छतो न जणाए तिम ते छिप्यो ॥ सूक्ष्म रूप करीने लिप्यो ॥ १० ॥ ते पण केडें आवी तेण ॥ मूर्छांगत कीधा ततखेण ॥ एह अठावीस कारण भून ॥ मोहतणां जाणो अद्भून ॥ ११ ॥ अंगित माणस पडते सहु ॥ मोह पण मूर्छा पाम्यो बहु ॥ जिम जड थड शाखा कापवे ॥ वृक्ष घणुं विसंस्थल हुवे ॥ १२ ॥ उपशम श्रेणि महावज्र दंम ॥ सकुटुंब हणि मोह प्रचंम ॥ इम निचेष्ट करी गुण भेद ॥ परमानंद पद पावतो नेह ॥ १३ ॥ उपशांत मोह नामें गुण स्थान ॥ एकादशमे पहोंतो सोपान ॥ केवलीना सरिखुं चारित्र ॥ भरतो ते नित्यां पुन्य पवित्र ॥ १४ ॥ ते सर्वार्थ सिद्धि विमान ॥ सकल सुरासुर पूज्या स्थान ॥ पद एहवो ने मुनि पामियो ॥ ते मही लगें तिहां विसामिउ ॥ १५ ॥ तेम ओांसें कांईक चेतन लही ॥ निज तनुनी जे कुरी नहीं ॥ दे हांपकरण मूर्छा नाम ॥ वेठि कोप धरी तिणि ठाम ॥ १६ ॥ मोकली ते

मुनिवरने पास ॥ तिणें जई कस्यो हृदयमां वास ॥ देहादिक मूर्छा घेरियो॥ गले जाली पाछो फेरियो ॥ १७ ॥ इग्यारमां गुण ठाणाथकी ॥ पापणीएं ते पाड्यो रूपि ॥ अनुक्रमें पडतो ते अडवड्यो ॥ पहिले पावडिएं जई प ड्यो ॥ १८ ॥ मिथ्यादर्शन मंत्रीने हाथ ॥ सुंप्यो ते मूर्छाएं अनाथ ॥ तव तें अरि सघलायें कठ ॥ पड्या ते मुनिवरने पूंठ ॥ १९ ॥ परिघल पाप करावी तास ॥ एकेंद्रियादिकमां दीधो वास ॥ नरकादिक गतिमां नरपूर ॥ नवमां तेह नमाड्यो भूर ॥ २० ॥ उदय वदे सुणजो उजमाल ॥ चमोत्तरमी ए नाखी ढाल ॥ कर्म तणी गति जे नर कले ॥ त्रिधा ताप तस दूरें टले ॥ २१ ॥

॥ दोहा ॥

॥ ब्रह्मसूर नामें अछे, नगर निरूपम एक ॥ सुनंद नामें श्रावक तिहां, वसे धनवंतो छेक ॥ १ ॥ श्रेष्टिमां ते शिरोमणी, धना नामें तस नार ॥ तनुज थयो ते तेहनो, पुंमरिक नामें कुमार ॥२॥ सर्व गाथा ॥१२१६॥

॥ ढाल पच्चोत्तरमी ॥

॥ मेरो नाह निठुर अभिमानी हो ॥ ए देशी ॥ बालपणाथी ते बुद्धि दरीयो, सकल कलाएं वरीउ हो ॥ तेने जोर परन मति जागी हो, थोडा दिनमां ते घणुं भणिउ ॥ गुणवंतें मुख्य गणिउ हो ॥ ते० ॥ १ ॥ अधित विद्याएं ते अण धातो, कोई मुनिने पूछे वातो हो ॥ ते तो आगमनो अति रागी ॥ सकल कलानो सघलो वेरो ॥ किहां छे कहो अधिकेरो हो ॥ ते० ॥ २ ॥ द्वादशांगिमां छे कहो साधु, चौद पुरवथी वाधु हो ॥ ते० ॥ विद्या अनेरे ठाम न दीसे, जाणो विसवा वीसे हो ॥ ते० ॥३॥ तव ते पयंपे छे केवडां तेह, तुमें पूर्व कहो छो जेह हो ॥ ते० ॥ गुरुने पूछो ते कहे कुमरने, तव ते पूछे जई गुरुने हो ॥ ते० ॥ ४ ॥ गुरु कहे गज सम मिसि जो थाय ॥ तो पूरव पहेलुं लखाय हो ॥ ते० ॥ ठाण वमणी इम मिसि पूंजे, सघलां लिखवा सूजे हो ॥ ते० ॥ ५ ॥ पण पुस्तकें लिख्या नथि केणें, मान कह्यो मिसि एणें हो ॥ ते० ॥ पूर्व ए मुखपाठे जे भणाए, किणही लिख्या न जाए हो ॥ ते० ॥ ६ ॥ कौतक पामी ते कहे एतो, मुफने भणावशो एतो हो ॥ ते० ॥ गुरु कहे ग्रहस्थने केम भणावुं, तव कहे साधु में थावुं हो ॥ ते० ॥ ७ ॥ मात पितानी अनुमति मागी, संयम लीये ते सोभागी हो ॥ ते० ॥ महा महोत्सवसुं लई दीक्षा, ग्रु

रु तणी सुणि शीक्षा हो ॥ ते० ॥ ७ ॥ चौद पूर्व ते भण्यो चूंपें, उदय व दे अनूपें हो ॥ ते० ॥ पञ्चोत्तरमी ढालें चित धरजो, प्रमादने परिहर जो हो ॥ ते० ॥ ए ॥

॥ दोहा ॥

॥ मोह महाचरें तिणि समे, तन्मय देखी तास ॥ सभामां सहुको देखतां, मुखें मेल्यो नीसास ॥ १ ॥ सर्व गाथा ॥ १३२६ ॥

॥ ढाल बहोतेरमी ॥

॥ रंगी रातो चूडो ॥ ए देशी ॥ सभायें बेठे सहु सेवके, पाणी जोडी रे तव पूछयुं एम ॥ जो जो मोहनो जोरो ॥ नीसासो आज नाथजी, अति लांबो ते मुखें मेल्यो केम ॥ जो० ॥ १ ॥ करकपालें थापिने, मुखें बोले रे हवे आव्युं मोत ॥ जो० ॥ अलवे पंखी उभाडतां, जिम जाएरे गोफ णी गोला सोत ॥ जो० ॥ २ ॥ सदागम वेरी सदा, अमारो रे तुमे जाणो अतीव ॥ जो० ॥ अभेद बुद्धें तेहसुं मिल्यो, जय कामें रे ते संसारी जीव ॥ जो० ॥ ३ ॥ सदागम कहेसे सर्वे, अमारा रे ए आगल मर्म ॥ जो० ॥ जण जणने ते जणावशे, गहगहसे रे तिहारे चारित्र धर्म ॥ जो० ॥ ४ ॥ पुत्र पौत्रादिक गोत्रने, तव लणसे रे भली सघला लोक ॥ जो० ॥ वंशो छेद थाशे तदा, मोह बोले रें इम मेलतो पोक ॥ जो० ॥ ५ ॥ तेहवो कोइ नथी देखतो, जे विघटे रें ए डुष्ट संयोग ॥ जो० ॥ सखेद देखी स्वामिने, थया लांखा रें परषदना लोक ॥ जो० ॥ ६ ॥ निद्रा नामें नारी तिसे, अंध आलस रे वैकल्य अंग भंग ॥ जो० ॥ स्वप्न जंखन भ्रम शून्य ता, जूंभादिक रे निज परिकर संग ॥ जो० ॥ ७ ॥ भावा पासाथी उठी ने, करजोडीनें कहे सुण स्वामि ॥ जो० ॥ ए अनाथनो श्यो आशरो, तुम दासियें रे एतो सीके काम ॥ जो० ॥ ८ ॥ चिंता शी ए वातनी, खण वो भूंगर रे हणवो मूषक महामल्ल ॥ जो० ॥ कीडी नगारा ऊपरे, शी कटकी रे देवजुठ दिल्ल ॥ जो० ॥ ए ॥ ताजा तृणनी ऊपरें, कुहाडो रे जिम मारे कोय ॥ जो० ॥ आरति ए तिम जाणवी, तुम नामें रे कुण अनमी होय ॥ जो० ॥ १० ॥ काल्हे किसुं दीठुं नही, मूठीयें रे गले झाली तेह ॥ जो० ॥ एकादशमा सोपानथी, वाल्यो पाछो रे जिम पवनें खेह ॥ जो० ॥ ११ ॥ हरषें कहे तव हेजमां, महाराजा रे मरकलडो देह

॥ जो० ॥ वारु वारु वळी वेगसुं, करो कारज रे तुमें कह्यो छो जेह ॥ जो० ॥ १२ ॥ ताहरी पण मन कामना, सिद्ध थाउ रे इम दीधी आशीस ॥ ॥ जो० ॥ छहोत्तेरमी ढालमां,वदे उदय रे धरो हृदयमां हीस ॥जो०॥१३॥

॥ दोहा ॥

॥ तव सा पोती ते कने, पापणि परिकर जेह ॥ अवतार्यो तसु अंगमां, आलस प्रथम अछेह ॥ १ ॥ आलसनें उदयें करी, संभारी सहि सूत्र ॥ अरथ लेतां आरति वधे, जिम तिम लवे उत्सूत्र ॥ २ ॥ तव बीजे त्रीजे दिने, थविरे थिर करि तास ॥ गुणवा वेसाड्यो जोरसुं, पण न गमे अभ्यास ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ १३४२ ॥

॥ ढाल सीतोतेरमी ॥

॥ होजी ऊरमर वरसे जो मेह ॥ ए देशी ॥ होजी तव निद्राएं अशेष, परिकर प्रेर्यो ते कने हो लाल ॥ हो जी सम कालें सर्वांग, व्याप्यो न कहे तां ते बने हो लाल ॥ १ ॥ हो जी जंभाएं ते जोर, वांसो घणुं मरडे वली हो लाल ॥ हो जी हाथपग शिरने सर्वांग, कंपावे उंघने वलें हो लाल ॥ ॥ २ ॥ हो जी उंची धरी भुज दोय, कड कड मोडे आंगली हो लाल ॥ हो जी भूतावेशनी भांति, धुजंतो धरणी ढली हो लाल ॥३॥ हो जी अंगी पूठे वेहु पास, ढले ढीकलीनी परें हो लाल ॥ हो जी थविर पढावे भाण, पण अक्षर मात्र न उचरे हो लाल ॥४॥ हो जी निंद नीलामां आप, पडे घणुं ते घेरियो हो लाल ॥ हो जी पडे पशुनी परें तेह, जिहां तिहां प्रमिला प्रेरि यो हो लाल ॥ ५ ॥ हो जी काष्टपरें कुठामें, सूवे संथारा विना हो लाल ॥ हो जी घोराएं घणुं जोर, चित्तमां न रहे चेतना हो लाल ॥ ६ ॥ हो जी पडिकमणे प्रभात, थविर उठाडे महा दुखें हो लाल ॥ हो जी कन्नां करी इक दिन्न, गुरु सूत्र गुणावे मुखें हो लाल ॥ ७ ॥ हो जी पलकमांहि भूपीठ, प्रमिलायें तव पाडियो हो लाल ॥ हो जी कुंहणी ढींचण ने शीश ॥ भांपीने भमाडिउ हो लाल ॥ ८ ॥ हो जी अक्षर न भणे एक, मुनि प ण मोन धरी रह्या हो लाल ॥ हो जी अतिव्यापी तव उंघ, चिह्न न जाए जेहनां कह्यां हो लाल ॥ ९ ॥ हो जी क्रिया करतां अनेक, चकुना चाला करे हो लाल ॥ हो जी केडि मुख कर ने पाय, मोडे पसारे बहु परें हो लाल ॥ १० ॥ हो जी निद्रा नारीयें एम,नव नव भेदें नचावियो हो लाल

॥ हो जी एहवां जोई आचरण, अचरज सहुने आवियो हो लाल ॥ ॥ ११ ॥ हो जी एवडी एसी उंघ, एम सुजाण सहु को वदे हो लाल ॥ हो जी सीत्योतेरमी ए ढाल, उदय वदे धरजो हृदे हो लाल ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ इम निडायें आचस्यो, आगम विण अभ्यास ॥ छिड हस्त जलनी परें, गलवा लागुं तास ॥ १ ॥ गहन अर्थ गया वीसरी, जिम जिम थाये भ्रंश ॥ तिम तिम लागे जहेरसो, आगम न गमे अंश ॥२॥ अमृतसी गणि उंघने, अज्ञाने अहोराति ॥ सूई रहे नवि सलसले, वीसरी सूत्रनी वात ॥३॥

॥ ढाल अग्योतेरमी ॥

॥ वेटी टोम्हर मल्लकी ॥ ए देशी ॥ तव गुरु भणे सो साधुकूं, केवल भणवा काज वे ॥ घर छोरी घणे आयसें, पायो तें आगम राज वे ॥ ॥ १ ॥ जाग वे ज्ञानी जागनां, जागना वे श्रुत लागनां वे ॥ जा० ॥ देवे जो दुर्गतिकों हरी, सुर उर शिव सुख खानि वे; सो हाथें आया क्यों ह रियें, गुनसागर श्रुत ज्ञानि वे ॥ जा० ॥ २ ॥ नरक निशानी नींदको, मूढ देवे कौन मान वे ॥ चौद पूरवरस छोरके, कह्या मेरा सच्चें मान वे ॥जा०॥ ॥ ३ ॥ तव तातो होयके सो वके, कहो उंघाता है कौन वे ॥ तुमकों जूठ कहे किने, बूरी ए वात जबून वे ॥ जा० ॥ ४ ॥ गुरुजी हम तो गुनेहथे, सूत एते एते कह्न वे ॥ हम तो मगनहिं पाठमें, दूजा न आवे दिल्ल वे ॥ जा० ॥ ५ ॥ गुरु तव चिंते चित्त में, अहो अहो एतो नवीन वे ॥ अ वगुण एहमां आपनो, महाजूठ बोले मलीन वे ॥ जा० ॥ ६ ॥ विप घा रित परें अन्यदा, मूर्छित घायल समान वे ॥ बोलाव्यो बोले नहीं, उंघ्यो सो असमान वे ॥ जा० ॥ ७ ॥ दिवसें सुपना देखिके, ज्यों ज्यों वकें जो र वे ॥ जगावे जो कोउ जायके, तो वहुत करे वकोर वे ॥ जा० ॥ ८ ॥ जोरे ताकूं जगाय के, गुरु कहे क्यों वत्स आज वे ॥ एती वेर उंघ्या हता, तव सो तजिने लाज वे ॥ जा० ॥ ए ॥ उत्तर गुरुकूं यूं दियो, जव हुं अ र्थ चिंतु एकध्यान वे ॥ तव तुम सवकूं अंवेकी, भ्रांति लगी भगवान वे ॥ ॥ जा० ॥ १० ॥ जूठो ताकूं जानिके, मुनिजनें मेल्यो उवेख वे ॥ कोउ क दर्थना नवि करे, गुरुयें पण त्यज्यो छेक वे ॥ जा० ॥ ११ ॥ मोह राजा ने माणसें, आवखुं तेहनुं अंग वे ॥ सदागम तव भागो सही, सदवोधें

त्यज्यो संग वे ॥ जा० ॥ १२ ॥ चारित्र धर्म पण चालियो, सर्व विरति स्वयमेव वे ॥ पडिलेज पलाये तदा, डुर्गंधें जिम देव वे ॥ जा० ॥ ॥ १३ ॥ क्षमादिक नासीने गया, दशेपटाकत दूर वे ॥ सम्यक् दर्शनें सीम तेहनी, तजी वाज ते तूर वे ॥ जा० ॥ १४ ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रीसरें, तव तिहां पूखो वास वे ॥ मोहादिकें मलि तेहने, पीडी निझपासं वे ॥ ॥ जा० ॥ १५ ॥ मरण पमाडी मोकल्यो, निगोद एकेंडि मकार वे ॥ नव मांहे नमाडिउ, पठे तेहने निरधार वे ॥जा०॥१६॥ अठोतेरमीयें सांजलो, ढालें धर्मनो ढाल वे॥ धरमीजन धरजो सदा, उदय वदें उजमाल वे जा०॥१७

॥ दोहा ॥

॥ चित्त वृत्ति अटवि इस्ये, विवेक गिरीने शृंग ॥ अप्रमत्त कूटें अति सुजग, जेनेंड्पुरें महाडंग ॥ १ ॥ निरानंद उत्साह विण, मजलस मेली सर्व ॥ चारित्र धर्म नृप आदि दे, बेठा ठे हतगर्व ॥२॥ मांहोमांहे इम क चरे, अहो शुं कीजें आंहि ॥ अनव्य डुर्नव्य आप्या जुउ, मोहने अनेक सहाय ॥ ३ ॥ अस्खलित ते सबले फरे, फेडे आपणो पक्ष ॥ आपणने जीरु एकज दीउ, तेपण नहीं सुदक्ष ॥ ४ ॥ अनंत कालें आवी मिल्यो, आपणने ते जीव ॥ तेने पक्ष पोषतां आपणो, उपजे व्यथा अतीव ॥ ॥ ५ ॥ आपण जव उंचो करां, तव नीचो घाले तेह ॥ उंचो आवण नवि दिये, अरि मोहादिक एह ॥ ६ ॥ आपण एहने सुख इछिएं, ए न लहे उपगार ॥ मोहादिकने जइ मिले, आरति लहे अपार ॥ ७ ॥ गुणगाणे इग्यारमें, चौद पूर्व धर आदि ॥ पद आपण आरोपिएं, तजावी तास प्रमाद ॥ ८ ॥ तिहां थकी पण जीव ते, धर्म तजीने धाय ॥ मोहना दलने जई मिले, कोइक कर्म पसाय ॥ ए ॥ शुं करियें कहियें किशुं, किहां जइएं फरियाद ॥ अहो वेरा नाथी गया, किम जीतासे वाद ॥१०॥ सर्व०॥१३८७॥

॥ ढाल उंगण्यासीमी ॥

॥ असवारी नृप शांति जी हो लाल, एदेशी ॥ सुखें मरकलडो देईने रे, सदबोध कहे तव स्वामि ॥ महा राजा ॥ आरति अठती एवडी हो लाल ॥ करो गो इयें कारणें रे, ए तो कायरनुं काम ॥ म० ॥ १ ॥ हिंमत कहो किम हारियें हो लाल, ए शुं कांई नवुं अने रे, अनादी ए चाल ॥ म० ॥ चाल्यो आवे ठे सदा हो लाल ॥ लोक स्थिति जगनि वडी रे, तेह

नो कर्म न लोपे स्वाल ॥ म० ॥ हिं० ॥ २ ॥ काल परणति कर्मनी रे, बे पटराणी प्रौढ ॥ म० ॥ कही न जाये ते वली हो लाल, भवितव्यता क रे भांजणी रे, गति बे तेहनी गूढ ॥ म० ॥ हिं० ॥ ३ ॥ जे संसारी जीव कने रे, भव करावे बे भूर ॥ म० ॥ हितकरी तुमे तेहने हो लाल, आरो पो ऊंचे पदें रे, उलट आणी ऊर ॥ म० ॥ हिं० ॥ ४ ॥ चौद पूर्वधर जो करो रे, उपशांत मोह आरूढ ॥ म० ॥ तो पण ते जीव तिहां थकी हो लाल, मोहादिकने मलि करी रे, महा अज्ञानी मूढ ॥म०॥हिं०॥५॥ भव मां उत्कृष्टो भमे रे, अर्द्ध पुद्गल परावर्त्त ॥ म० ॥ विवहार ए अनादिनो हो लाल, चाव्यो आवे सहु जीवनें रे, भमतां भव आवर्त्त ॥ म० ॥ हिं० ॥ ६ ॥ विस्मयश्यो ते वातनो रे, हृदयमां राखवो रेख ॥ म० ॥ तटें बे वां जुउ तुमे हो लाल, मिथ्यानुं अंगज कहो अबो रे, जे कांई अविवेक ॥ म० ॥ हिं० ॥ ७ ॥ अरिनो एकज भीरु ए रे, बेदी मूलनो पक्ष ॥ म० ॥ यश पडहो वजडावश्यां हो लाल, सुखी संसारी ए जीवने रे, करस्यां सहु समक्ष ॥म०॥हिं०॥ ८ ॥ तो पण सिद्धिहोसे सही रे, भवितव्यताने भोग ॥ म० ॥ समवायनां संयोगथी हो लाल, भव स्थिति कालपरिणतें रे, शु भ कर्मोदय जोग ॥ म० ॥ हिं० ॥ ए ॥ जे आपण कहो अबो रे, एक ए पाम्या सहाय ॥ म० ॥ ए पण न घटे आलोचवुं हो लाल, वहु भीरु प ण पामिने रे, मोहादिक मुंकाय ॥ म० ॥ हिं० ॥ १० ॥ रोधन करे रूठा थका रे, वाकी वल नवि होय ॥ म० ॥ अरीए आपण ऊपरें हो लाल, अंत कीजें तक जोय ॥ म० ॥ हिं० ॥ ११ ॥ एक ए किम आणे जुउ रे, शत्रु अंत सहाय ॥ म० ॥ श्याने थाउ सहु आकुला हो लाल ॥ जय पराजयनुं पारखुं रे, जाते दीहें जणाय ॥ म० ॥ हिं० ॥ १२ ॥ ऊत्ता वलानां पालिया रे, धीराना प्रासाद ॥ म० ॥ सहु जाणे संसारमां हो लाल ॥ उगन्यासीमी ढालमां रे, उदय रत्न आल्हाद ॥म०॥ हिं०॥ १३॥

॥ दोहा ॥

॥ तव ते जेटले सर्वे ते, सदवोधनुं व्याख्यान ॥ करे तव कहाव्युंति हां, कर्म परिणाम राजान ॥ १ ॥ अहो प्रतिज्ञा आज में, पूरी पाडी ते ह ॥ पण पांकीने पूरवें, तुमसुं करी हुती जेह ॥ २ ॥ पदमस्थल पुर रा जिउ, सिंह विक्रम इणे नाम ॥ कमलिनी नामें बे प्रिया, तस उदरें अ

भिराम ॥ ३ ॥ अंगज में अवतारिउं, सिंहरथ नामें सोय ॥ जेह सहायें तु मतणो, जीव ते अवसर जोय ॥ ४ ॥ हवे करो हर्ष वधामणां, एणे भ वें ए जीव ॥ पक्ष तुमारो पोषशे, आशक थई अतीव ॥ ५ ॥ पडशे नहि मोह पाशमां, पूरण पुण्य सहाय ॥ आप्यो छे में एहने, जेणे पातक क्षय जाय ॥ ६ ॥ चलव्यो केहनो नहिं चले, सदबोध सदागम लीन ॥ मुगतें जातां लगि मोहने, दलें न होसे दीन ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ १४०७ ॥

॥ ढाल एंशीमी ॥

॥ वागा जांगी ढोल ॥ ए देशी ॥ इम सुणि आणंद पूरें, हे सखि इम सुणि आणंद पूरें ॥ उठी ते महा आनंद भरें ॥ समकित आदि सनूर, ॥हे०॥ मलिने महोत्सव बहु करे ॥ १ ॥ जिनेंड् पुरनो लोक ॥हे०॥ वारु करे रं ग वधामणां, शम्यो समूलो शोक ॥ हे० ॥ भीरुनां ले भामणां ॥ २ ॥ बांधे तोरण बार ॥ हे० ॥ कमलें आछादित करुं ॥ कनक कलश धरि द्वार ॥हे०॥ सोधें सोधें सुंदरुं ॥ ३ ॥ शणगारी हट श्रेणि ॥हे०॥ घर घर गुडी उछले ॥ छटकायो हरषेण ॥ हे० ॥ राज मारग कुंकम जलें ॥ ४ ॥ मृग मदने घनसार ॥ हे० ॥ भेली चंदननें रसें ॥ रायांगण दरबार ॥ हे० ॥ छयल पुरुष छांटे तिसे ॥ ५ ॥ कनक रत्ननो राशि॥ हे० ॥ मन मोदें द्ये मांगणां, अनय दान उल्लास ॥ हे० ॥ देवरावे राजा घणा ॥ ६ ॥ वागां मंगल तूर ॥ हे० ॥ माननें माप वधारियां ॥ शोभा वाधीसनूर ॥ हे० ॥ जिन मंदिर शणगारिया ॥ ७ ॥ उदयरतन कहे एम ॥ हे० ॥ एंशीमी ए ढालमां ॥ धरमशुं धरजो प्रेम ॥ हे० ॥ मत पडो माया जालमां ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ हवे सिंहरथ ते राज सुत, शिशुपणे पण सोय ॥ देखी नमी गुरु देवने, हिये हरखित होय ॥ १ ॥ जनकसाथें जिन मंदिरें, जई जोतां जि नरूप ॥ स्नात्रादिक संपेखतां, आनंद लहे अनूप ॥ २ ॥ साधु संगें सुख ऊपजे, श्रवणे सोहाय वयण ॥ दान देतां दिल उल्लसे, निरखी रीझे न यण ॥ ३ ॥ इम पुण्योदय पोषतां, लघु वयमां तिणें लाध ॥ स्वल्प दिनें सघली कला, बोलतां न लहे बाध ॥ ४ ॥ विषयनी न धरे वासना, केव ल करुणाधाम ॥ साधु कन्हे श्रुत सांभले, भावे भव भाव विराम ॥ ५ ॥ रूपें रतिपति हारव्यो, यौवन पाम्यो जाम ॥ सुललित सुरपति सारिखो,

पण न गमे नारीनुं नाम ॥ ६ ॥ विरमे क्षण क्षण विश्वथी, वांछे शिव सुख वास ॥ गुण निधि नामें गुरु तिणे, एक दिन भेट्या खास ॥ ७ ॥ च उ नाणी ते गुरुकने, सांभलि श्रुत सुविशेष ॥ विधिसुं ते संयम वरे, आ रंभ त्यजी अशेष ॥ ८ ॥ सर्व गाथा ॥ १४२३ ॥

॥ ढाल एक्यासीमी ॥

॥ वेडले भार घणो छे राज, वातां केम करो छो ॥ ए देशी ॥ चारित्र धर्म राजा चितमांहे, तव पाम्यो महा तोष ॥ सहित परिकर रहे ते पासें, पुण्यनो करवा पोष ॥ १ ॥ इम ते जोर भडें अणगार, मोह नृपना भड सार्थें ॥ ए आंकणी ॥ अति अनुरक्त थई ते मुनिसुं, त्रिभुवननी जे त्राता ॥ सर्व विरति नामे सा श्यामा, योगिनी जे जय दाता ॥ इ० ॥ २ ॥ सद बोध योध सदा पासेथी, अध क्षण न रहे अलगो ॥ सम्यक् प्रकारें सम्य क् दर्शन, वपु सार्थें रहे वलगो ॥ इ० ॥ ३ ॥ अप्रमाद महासिंधुर ऊपरें, भजि भावन अंबाडी ॥ प्रशम कवच पहेरी भली भांते, विवेक निसान वजाडी ॥ इ० ॥ ४ ॥ ते गजें बेसी सिर सोहावे, संतोष टोप सनूरें ॥ अ ढार सहस सीलांग सामंते, परवरिउ दल पूरें ॥ इ० ॥ ५ ॥ धर्म धनें दि न दिन वाधंतो, पुण्योदय इणे नामें ॥ दंम नायक ते आगल दोडे, अरि उत्तारण कामें ॥ इ० ॥ ६ ॥ समय समयप्रत्यें शुभ भनना, प्रगटे जे परि णाम ॥ पायक ते चाले खल घायक, आगल जिहां अभिराम ॥ इ० ॥ ७ ॥ अणियें अणि आवीने अडिउ, मोह राजा मुनि सामो ॥ वक्षस्थल वीं ध्युं तव तेहनुं, तत्व कुंतीं धरि तामो ॥ इ० ॥ ८ ॥ ज्ञान दर्शन चारित्ररू पी ए, त्रिहुंसह्लें करि त्राडे ॥ हृदयमां रागने द्वेषने रोपें, कामने कूटी पा डे ॥ इ० ॥ ए ॥ जीव दया परिणाम निवाणे, हणे हिंसा सामंत ॥ मृ षा वादने सत भाषारूप, मुगरें मारे संत ॥ इ० ॥ १० ॥ अदत्तादान सुभ टनुं मस्तक, शौच भलकें करी भेदे ॥ ब्रह्मचर्य भालाडें महा भट, मैथुनने उछेदे ॥ इ० ॥ ११ ॥ मान सुभटनुं मान मुनि सो, मार्दव दंमें मोडे ॥ रिजु भालडियें माया मुसी, दोषी न दीठो छोडे ॥ इ० ॥ १२ ॥ संतोष यष्टिका यें ते भट, लोभनुं मस्तक मोडे ॥ शूरो देखीने कोई शत्रु, साहामां सिंग न जोडे ॥ इ० ॥ १३ ॥ देह असार चिंतन धर्म साधन, साहस सत्व ने धीर ॥ इत्यादिक आयुधें जीते, परिसहने ते वीर ॥ इ० ॥ १४ ॥ तनुनी थि

रता लेई तोमर, उन्मूली उपसर्ग ॥ इम मारीने कीधो अचेतन, वेरीनो ते णे वर्ग ॥ इ० ॥ १५ ॥ इत्रा रोधगवाने मारे, परिग्रह नटने त्रोडे ॥ इ मा रुपीउ खड्ग धरीने, क्रोधनी सिंधि विठोडे ॥ इ० ॥ १६ ॥ उदयरतन कहे एक्यासीमी, ढाले धरमी लोक ॥ सदा करजो सेवा साधुनी, जे साधन परलोक ॥ इ० ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ शत्रुने इम समावतां, नरतां पुण्य नंमार ॥ वहु प्राणीने बोधतां, स फल करे अवतार ॥ १ ॥ प्रवल करी निज पक्षने, खल पमाडी कीण ॥ अंत समे लहि ढूकडो, तनू जाणी वल हीण ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥ १४४२ ॥

॥ ढाल व्याशीमी ॥

॥ कुंतारे माता इम नणे ॥ ए देशी ॥ नमो रे नमो निर्ग्रंथने, एहवा जे आचारी रे ॥ घणा काल लगें आदर घणे, ताख्यां वहु नर नारी रे ॥ ॥ न० ॥ १ ॥ संलेपणा सो साधुयें, विहुं नेदें कीधी रे ॥ इव्य अने नावें थकी, अठे जेह प्रसिद्धि रे ॥ न० ॥ २ ॥ तव गीतारथ तपोधने, पुरथी ते प रवरिउ रे ॥ पर्वतनी कन्दणे जई, संथारो तिणें करिउ रे ॥ न० ॥ ३ ॥ प्रथम शिला तल पूंजिने, फासुनो संथारो रे ॥ पाथरीने ते ऊपरें, मन करि एक तारो रे ॥ न० ॥ ४ ॥ वेसी पर्यंकासने, कर संपुट धरी सीसे रे ॥ अन्माडीने ऊचरे, शक्रस्तव सुजगीसे रे ॥ न० ॥ ५ ॥ नमी सहु जिनराजने, शासनपतिनें सोइ रे ॥ प्रणमीने पूठे नमी, गुरुने गुणवंत जोइ रे ॥ न० ॥ ॥ ६ ॥ पचख्या ठे तो पण पठे, पापस्थान अढार रे ॥ प्रेमेंसुं पचखे फरी, नियमें चार आहार रे ॥ न० ॥ ७ ॥ प्रतिवंध तनुनो परिहरि, अतिचार आलोइ रे ॥ आहार सवि पचखे वलि, हिए हरषित होइ रे ॥ न० ॥ ८ ॥ पादोपगमन अणसण, लेइने गह गहितो रे ॥ देव मनुष्य तिर्यंचना, उप सर्ग ते सहितो रे ॥ न० ॥ ए ॥ एक मास तांइ इणि परे, अणसण आ राधी रे ॥ ठेहेला उसासा लगें, शुद्ध संयम साधी रे ॥ न० ॥ १० ॥ स माधि कालें करि थयो, सातमें सुर लोगें रे ॥ दिव्य ते महर्द्धिक देवता, संयम फल योगें रे ॥ न० ॥ ११ ॥ उत्कृष्टो तिहां आउखो, सागरोपम सोल रे ॥ नोगवे एके आगलुं, करतो रंगरोल रे ॥ न० ॥ १२ ॥ उदय

वदे इम व्यासीमी, ढाल ए में बोली रे ॥ संसारमां धर्म सार छे; जुउ अंतर खोली रे ॥ न० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तीर्थ तीर्थंकरनी तिहां, भगति करी तिणे भाव ॥ पुण्योदय पोढो कीयो, मुनिने सीस नमावि ॥१॥ सुरपदनां सुख भोगवी, तिहांथी चवि ने तेह ॥ कमल पुर नामें पुरी, वारू पूर्व विदेह ॥ २ ॥ श्रीचंद नामें नृप तिहां, कामिनी कमलातास ॥ अंगज तेहनो ऊपनो, भानु नामें ते खास ॥ ३ ॥ पूर्व परें बाल कालथी, धरतो तिमहिज धर्म ॥ पुण्योदयने पेखतो, करे सदा शुभ कर्म ॥ ४ ॥ अनुक्रमें भोगवी राज सुख, पुत्रने आपी पाट ॥ दीक्षा ग्रही तिणें मोह दल, दूर कर्युं दह वाट ॥ ५ ॥ संयम सूधुं पा लिने, अंते अणसण धारि ॥ नवमें ग्रैवेकें सुर थयो, ते भानु अणगार ॥ ६ ॥ त्रीस सागरोपम आउखो, पाली पूर्व विदेह ॥ पदम पुरें तें सुत थ यो, सीमंतक नृप गेह ॥ ७ ॥ राजवियां सिरसेहरो, इंद्रदत्त अभिधान ॥ राज्य तजी संयम भजे, तेमहिज ते तिणि थान ॥ ८ ॥ क्षीण पमाडी मो ह दल, पुण्योदय करि पुष्ट ॥ अंते अणसण ऊचरि, दूर कर्या अरि दुष्ट ॥ ९ ॥ मरण समाधें ते मरी, सर्वार्थ सिद्धि विमान ॥ अहमिंद्र सुरपणें ऊपनो, महर्द्धिक महा रिद्धिवान ॥ १० ॥ सर्व गाथा ॥ १४६५ ॥

॥ ढाल ब्यासीमी ॥

॥ धण समर्थ पीउ नान्हडो ॥ ए देशी ॥ सकल मंगल जय दायिनी, चारित्र धर्म राजानी सेव ॥ भुवन भानु कहे केवली, फले तेहना नृप सु ण तुं देव ॥ स० ॥१॥ एहज गंधिलावती विजयमां, इंद्रपुरीथी अधिक अ नूप ॥ चंद्रपुरी नामें पुरी, अकलंक नामें राजा तिहां भूप ॥ स० ॥ २ ॥ सकल भूपाल मौलि श्रेणे, पूजित छे जस पदअरविंद ॥ सुभग समृद्धि सक्तें करी, अवनि तल उपे जिम इंद्र ॥ स० ॥ ३ ॥ जे श्रीजिनपदपंकजें; मधुकरनी परें रहे मगन्न ॥ देवी छे तेहने सुदर्शना, शीलशुं जेहने लागी लगन्न ॥ स० ॥ ४ ॥ धवल समकितने धारिणी, सुपनमांहि ते देखी सिंह ॥ उज्वल शशिसो एकदा, वदन प्रवेश करंतो अबीह ॥ स० ॥ ५ ॥ ते इं द्रदत्त अणगारनो, तिहांथी जीव चवी ने तास ॥ उदरें आवी ऊपनो, पु त्र पणे पहोती मन आस ॥ स० ॥ ६ ॥ तव सा हरखी सुपन ते, जगत

रता लेई नोमर, उन्मूली उपसर्ग ॥ इम मारीने कीधो अचेतन, वेरीनो ते णे वर्ग ॥ इ० ॥ १५ ॥ इहा रोषगवाने मारे, परिग्रह नटने त्रोडे ॥ क्ष मा रूपीउं खड्ग धरीने, क्रोधनी सिंधि विछोडे ॥ इ० ॥ १६ ॥ उदयरतन कहे एक्यासीमी, ढाले धरमी लोक ॥ सदा करजो सेवा साधुनी, जे साधन परलोक ॥ इ० ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ शत्रुने इम समावतां, नरतां पुण्य नंमार ॥ बहु प्राणीने बोधतां, स फल करे अवतार ॥ १ ॥ प्रबल करी निज पक्षने, खल पमाडी क्षीण ॥ अंत समे लहि ढूकडो, तनू जाणी बल हीण ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥१४४२॥

॥ ढाल ब्याशीमी ॥

॥ कुंतारे माता इम नणे ॥ ए देशी ॥ नमो रे नमो निग्रंथने, एहवा जे आचारी रे ॥ घणा काल लगें आदर घणे, ताख्यां बहु नर नारी रे ॥ ॥ न० ॥ १ ॥ संलेषणा सो साधुयें, विहुं नेदें कीधी रे ॥ इव्य अने नावें थकी, अछे जेह प्रसिद्धि रे ॥न०॥२॥ तव गीतारथ तपोधने, पुरथी ते प रवरिउ रे ॥ पर्वतनी कमणे जई, संथारो तिणे करिउ रे ॥न०॥३॥ प्रथम शिला तल पूंजिने, फाजनो संथारो रे ॥ पाथरीने ते ऊपरें, मन करि एक तारो रे ॥न०॥४॥ बेसी पर्यंकासने, कर संपुट धरी सीसे रे ॥ अमाडीने ऊचरे, शक्रस्तव सुजगीसे रे ॥ न० ॥ ५ ॥ नमी सहु जिनराजने, शास नपतिने सोइ रे ॥ प्रणमीने पूछे नमी, गुरुने गुणवंत जोइ रे ॥ न० ॥ ॥६॥ पचख्या ठे तो पण पछे, पापस्थान अढार रे ॥ प्रेमेंसुं पचखे फरी, नियमें चार आहार रे ॥ न० ॥ ७ ॥ प्रतिबंध तनुनो परिहरि, अतिचार आलोइ रे ॥ आहार सवि पचखे वलि, हिए हरपित होइ रे ॥न०॥ ८ ॥ पादोपगमन अणसण, लेइने गह गहितो रे ॥ देव मनुष्य तिर्यंचना, उप सर्ग ते सहितो रे ॥ न० ॥ ए ॥ एक मास तांइ इणि परे, अणसण आ राधी रे ॥ नेहेला उसासा लगें, शुद्ध संयम साधी रे ॥ न० ॥ १० ॥ स माधि कालें करि थयो, सातमें सुर लोगें रे ॥ दिव्य ते महर्द्धिक देवता, संयम फल योगें रे ॥ न० ॥ ११ ॥ उत्कृष्टो तिहां आउखो, सागरोपम सोल रे ॥ नोगवे एकें आगलुं, करतो रंगरोल रे ॥ न० ॥ १२ ॥ उदय

वदे इम ब्यासीमी, ढाल ए में बोली रे ॥ संसारमां धर्म सार छे; जुउ अंतर खोली रे ॥ न० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तीर्थ तीर्थंकरनी तिहां, नगति करी तिणे नाव ॥ पुण्योदय पोढो कीयो, मुनिने सीस नमावि ॥१॥ सुरपदनां सुख नोगवी, तिहांथी चवि नें तेह ॥ कमल पुर नामें पुरी, वारू पूर्व विदेह ॥ २ ॥ श्रीचंड नामें नृप तिहां, कामिनी कमलातास ॥ अंगज तेहनो ऊपनो, नानु नामें ते खास ॥ ३ ॥ पूर्व परें बाल कालथी, धरतो तिमहिज धर्म ॥ पुण्योदयने पेखतो, करे सदा शुन कर्म ॥ ४ ॥ अनुक्रमें नोगवी राज सुख, पुत्रने आपी पाट ॥ दीक्षा ग्रही तिणें मोह दल, दूर कर्युं दह वाट ॥ ५ ॥ संयम सूधुं पालिने, अंते अणसण धारि ॥ नवमें ग्रैवेकें सुर थयो, ते नानु अणगार ॥ ६ ॥ त्रीस सागरोपम आउखो, पाली पूर्व विदेह ॥ पदम पुरें तें सुत थयो, सीमंतक नृप गेह ॥ ७ ॥ राजवियां सिरसेहरो, इंडदत्त अनिधान ॥ राज्य तजी संयम नजे, तेमहिज ते तिणि थान ॥ ८ ॥ क्षीण पमाडी मोह दल, पुण्योदय करि पुष्ट ॥ अंते अणसण ऊचरि, दूर कर्या अरि डुष्ट ॥ ए ॥ मरण समाधें ते मरी, सर्वार्थ सिद्धि विमान ॥ अहमिंड सुरपणें ऊपनो, महर्ध्दिक महा रिध्दिवान ॥ १० ॥ सर्व गाथा ॥ १४६५ ॥

॥ ढाल त्र्यासीमी ॥

॥ धण समर्थ पीउ नान्हडो ॥ ए देशी ॥ सकल मंगल जय दायिनी, चारित्र धर्म राजानी सेव ॥ नुवन नानु कहे केवली, फले तेहना नृप सुण तुं देव ॥ स० ॥१॥ एहज गंधिलावती विजयमां, इंडपुरीथी अधिक अनूप ॥ चंडपुरी नामें पुरी, अकलंक नामें राजा तिहां नूप ॥ स० ॥ २ ॥ सकल नूपाल मौलि श्रेणे, पूजित छे जस पदअरविंद ॥ सुनग समृध्दि सर्कें करी, अवनि तल उंपे जिम इंड ॥ स० ॥ ३ ॥ जे श्रीजिनपदपंकजें; मधुकरनी परें रहे मगन्न ॥ देवी छे तेहने सुदर्शना, शीलशुं जेहने लागी लगन्न ॥ स० ॥ ४ ॥ धवल समकितने धारिणी, सुपनमांहि ते देखी सिंह ॥ उज्वल शशिसो एकदा, वदन प्रवेश करंतो अबीह ॥ स० ॥ ५ ॥ ते इंडदत्त अणगारनो, तिहांथी जीव चवी ते तास ॥ उदरें आवी ऊपनो, पुत्र पणे पहोती मन आस ॥ स० ॥ ६ ॥ तव सा हरखी सुपन ते, जगत

पतिने नाखे जाय ॥ सुपन पाठक तेडी तदा, परमारथ तस पूछे राय ॥ स० ॥ ७ ॥ तनुज होसे तुम ते कहे प्रभु, ए उत्तम सुपन पसाय ॥ कुल दीवो कुल केसरी, अखंड भूमंडल भोगी राय ॥ स० ॥ ८ ॥ तव तूठो ये नृप तेहने, पारितोषिक दान प्रचूर ॥ विदाय कस्या संतोषिने, अग्रम हीषी आनंद नर ॥ स० ॥ ए ॥ सुखें गर्भ ते निर्वहे, देवपूजा दानादि अनेक ॥ मोहोला जे जे ऊपजे, पूरे नृप ते एके एक ॥ स० ॥ १० ॥ प्रसवे सा पूरे दिनें, पुत्ररतन्न पुंज समान ॥ आवासने उद्योततो, तरणि परें तपे तेजवान ॥ स० ॥ ११ ॥ हरखें हीए हुलरावती, महोटो मुक्ताफलनो हार ॥ उल्लसते उरें दोडीने, चंद्र धारा दासीयें ते वार ॥ स० ॥ १२ ॥ वसुधापतिने वधामणी, तनु जन्म्यानी दीधी तिणें जाय ॥ पहोचे सात पेढी लगें, दान तेहवुं तस दीधुं राय ॥स०॥१३॥ नगरमांहि ते नव नवा, मादलना थाए धोंकार ॥ आणंद रंग वधामणां,उत्सव तिहां थाए अपार ॥ स० ॥ १४ ॥ कनकादिक बहु दान ये, बंदीवानना ठोडे बंध ॥ महापूजा जिन मंदिरें, नेहसुं रचावे नरिंद ॥ स० ॥ १५ ॥ खान पानने दानसुं, गीत गान अति तान मान ॥ राजाने पुरजन सवें, मुदित कस्यो देई बहु मान ॥ स० ॥ १६ ॥ मानने माप वधारियां, राज कर मेल्या महाराज ॥ उदयरतन कहि ढाल ए, ज्यासीमी बोली शुभ साज ॥ स० ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ सिद्धार्थ नामें सुभग, गणक तेडी निज गेह ॥ जनम समय निज जातनो, नृप पूछे धरि नेह ॥ १ ॥ केहेवी वेला छे कहो, तव तिहां बोल्यो तेह ॥ महा राजा मन देईने, सांभलो धरी सनेह ॥ २ ॥ संवत्सर सानंद ए, शरद रितु सुखकार ॥ कार्तिक मास कल्याण कर, तिथि छे बीज उदार ॥ ३ ॥ सुरगुरुवार सोहामणो, रुक्ष कृतीका वृष रास ॥ धृतियोग कौलव करण, शुभ ग्रह निरीक्षत खास ॥ ४ ॥ लगन अने लख लाभ कर, ग्रह सर्व उच्चस्थान ॥ आव्या छे होरा लहो, ऊर्द्ध मुखी राजान ॥५॥ पाप ग्रह इग्यारमें, जाणि छे सुणो नृप ॥ एहवी वेलाए जनमि[illegible] ॥ स होसे कुल रूप ॥६॥ शूर वीरने धीर अति, तेजस्वी जस[illegible]क देवता, पी महाधनी, गजेंद्र होसे तंत ॥ ७ ॥ वृष रासि ए आवस्यो, सागरोपम सांभल तास ॥ जोसी कहे जोई शुभगतिसुं, अवनिपति[illegible] ॥ १० ॥ उदय

यतः ॥ भोगी दाता शुचिर्दक्षः, स्थूलगर्भोमहाबलः ॥ अर्थवानल्पभापीच, स्थिरचित्तोजनप्रियः ॥ १ ॥ परोपकारी कांतश्च, बहुपुत्रः शौर्यसंयुतः ॥ एवं गुणगणोपेतो,वृषेजातो भवेन्नरः ॥२॥ समानां च शतंजीवेत्,पंचविंशतिकं यदि ॥ नृमृतश्चतुष्पदातस्य, मरणं रोहिणीवुधे ॥३॥ सर्व गाथा ॥ १४ए३ ॥

॥ ढाल चोरासीमी ॥

॥ कोई पत्र लावे दीनानाथनुं ॥ ए देशी ॥ जूउ पुण्यतणां फल प्राणियां, भव फंद जे फेडे ॥ पुण्यें ग्रह होय पाधरा, वली वैरी न विहडे ॥ जू० ॥ १ ॥ बारें राशिनां फल बहु, भाष्यां भलि भांतें ॥ अवनिपतिने इणि परें, गणकें गुणवंतें ॥ जू० ॥ २ ॥ महाविदेह क्षेत्रमां, कपनो ते माटे ॥ कोडि पूरवनो आउखो, लह्यो तेहनुं सुघाटे ॥ जू० ॥ ३ ॥ वलि ते जोसी नृपने वदे, बारे राशिनां बहुलां ॥ फल भाख्यां छे आगमें, समजो ए सघलां ॥ जू० ॥ ४ ॥ शीखव्यां ते सुशिष्यने, सर्व जे शुभ ठाणें, व्याप्या तिहांथी विश्वमां, तेह काल प्रमाणें ॥ जू० ॥ ५ ॥ यतः ॥ ज्योतिपं निर्निमित्तं च, यच्चान्यदपि तादृशः ॥ अतींद्रियार्थं तच्छास्त्रं, सर्वं सर्वज्ञपूर्वकं ॥ १ ॥ ततोत्रयोव्यभिचारःस्यात्केवलं नरदोषतः ॥ विज्ञागं हि न जानीते, शास्त्रस्याल्पश्रुतोनरः ॥२॥ पूर्व ढाल ॥ जन्म समय जोतां सही, बालक ए वलीउ ॥ होसे जाचा हीरा जिस्यो, अनमी अति कलीउ ॥ जू० ॥ ६ ॥ जाण घणुं जोसी तुमे, सदा रहो ताजा ॥ सत्य कहो संशय विना, रीझी कहे राजा ॥ जू० ॥ ७ ॥ सर्वज्ञ विण संदेह विना, साचूं कुण भाखे ॥ अज्ञानीनुं जाखुं, कोई कबूल न राखे ॥ जू० ॥ ८ ॥ ज्ञानी विना ए ज्ञाननो, निर्वाह किम थाय ॥ सर्वज्ञ विण संसारमां, किणें सत्य कहेवाय ॥ जू० ॥ ए ॥ प्रेमें इम प्रशंसिने, दान जोसीने दीधुं ॥ राजाएं महा रीझनुं, लक्ष्मीफल लीधुं ॥ जू० ॥ १० ॥ दानमानें सनमानिने, वीसर्ज्यो तेह ॥ उदय वदे कही ढालमें, चोरासीमी एह ॥ जू० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

जगन्नेत्री कुमर ते बालनुं, निरुपम दीधुं नाम ॥ सहु साथें शुभ मुहूर ॥ उज्वल शाराम ॥ १ ॥ पांच धावे पाली जतां, वाधे दिन दिन वीर ॥ इस्त अणगारनो, शिशु ते महा सुधीर ॥ २ ॥ बालपणाथी बहु थयो, त्र पणे पहोती मन । समकित तो साथेज छे, पूरण पुण्य प्रसंग ॥ ३ ॥

सकल कला साधी सबल, क्षमा गुण न लहे क्षोन ॥ गुरुता अने गंभीरता, थिरता थई थिर थोभ ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ १५१० ॥

॥ ढाल पंच्याशीमी ॥

॥ आसाढो धुर उनह्यो ॥ ए देशी ॥ योवन वय ते पाम्यो यदा, वाध्यो तव तनु वानो रे ॥ सुजाण सूधा जन संगनो, तेहने लागो तानो रे ॥ ॥ यो० ॥ १ ॥ स्नात्र महोत्सव नित करे, विधिसुं सुणे गुरुवाणी रे ॥ देहरे देव पूजे सदा, अंगें उल्लट आणी रे ॥ यो० ॥ २ ॥ शासननी उन्नति करे, रथ यात्रा गीत गानो रे ॥ नृत्य करावे नित नवां, दीनने दीए दानो रे ॥ यो० ॥ ३ ॥ चारित्र धर्मना सैन्यसुं, अति परिचय थयो तासो रे ॥ बीहीकें निज बल लेईने, मोहें लीधो वनवासो रे ॥ यो० ॥ ४ ॥ राग द्वेष दूरें रहे, मवकी मारी क्रोधें रे ॥ शैलराज न जुए साहमुं, शठता कूप ने शोधे रे ॥ यो० ॥ ५ ॥ सागर खारे सागरें, गयो जोइ गति माठी रे ॥ विपय पंचेनी वासना, निपट जाये ते नाठी रे ॥ यो० ॥ ६ ॥ कृपणता कोपी घणुं, जय पामी जाए भागी रे ॥ अविनयें उचालो भर्यो, लालचने बीहिक लागी रे ॥ यो० ॥ ७ ॥ विनय प्रशम मृडने ऋजु, संतोप आदि सुरंगें रे ॥ गांभीर्य स्थैर्य शौर्यादिक, गुण ए वस्या तसु अंगें रे ॥ यो० ॥ ॥ ८ ॥ कीरति प्रसरी दशो दिशें, मात पिताने मोहो रे ॥ अतिशय ते उपर उपनो, क्षण न खमाये बिछोहो रे ॥ यो० ॥ ए ॥ घर घर गुण गीत तेहनां, कुलवधु गाये केई रे ॥ केई सुरी केई किन्नरी, हीए हर्ष धरेई रे ॥ यो० ॥ १० ॥ भाट चारण केई भणे, गुण जेहना गह गाटो रे ॥ सुधी जनने सुरपण केई, बोले तस गुण पाठो रे ॥ यो० ॥ ११ ॥ पंचाशीमी ढालमां, फेरा लाख चोरासी रे ॥ उदय वदे ते नवि फरे, मति जेणें जिनमतें वासी रे ॥ यो० ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जसु सघले यश विस्तर्यो, तें यश सुणयी जोर ॥ रूपें रंभ हरावती, राजसुता तिण ठोर ॥ १ ॥ मानमेटी गुण पेटी ते, साथें लई शुभ साज ॥ अनेक एकी एके समे, कुमरने वरवा काज ॥ २ ॥ पूरव उपचित पुण्यफल, कुमरसुं कोई बलवान ॥ आवी आकर्षी तेहनी, स्वयंवरा ति

णि स्थान ॥ ३ ॥ सकल कलायें शोभती, सुमुखी सकल सुरम्य ॥ भतारा नृपें आपिया, रहेवा तेहने रम्य ॥ ४ ॥

॥ ढाल छयासीमी ॥

॥ अवधें आवियें महाराज ॥ ए देशी ॥ व्रतविषे मन वासना, वली कुमरनी बलवंत ॥ वसी तिणें विवाहनी, कांई चाह न धरे चिंत ॥ तव इम कहे मातने तात ॥ १ ॥ सुदर्शना तसु मावडी, अकलंक राजा बाप ॥ अभिप्राय कुमरनो ओलखी, जई कहे एम जवाप ॥ त० ॥ २ ॥ खांतें ते खोला पाथरी, खरे दुखें पडदो खोल ॥ एकांतें अंजलि बांधिनें, बोले ते एहवा बोल ॥ त० ॥ ३ ॥ मावीत्र धर्मनुं मूलतो, जेहना उलंगल न थवाय ॥ पुत्रनुं प्रीछे अछे, इम जंपे श्रीजिनराय ॥ त० ॥ ४ ॥ मावित्र जो करी लेखवे तो, कह्युं अमारुं एक ॥ मान तुं मन कोमल करी, हठीला न थईएं छेक ॥ त० ॥ ५ ॥ तुज गुणें आकर्षीथकी, बहु राजसुता गुणरास ॥ मात पितानी मोकली, आवीछे आपणे वास ॥ त० ॥ ६ ॥ स्वयंवरा ए सुंदरी, नाजुक नवले वेश ॥ इहां आवी जो पाछी फरे, तो ऊजड थाये देश ॥ त० ॥ ७ ॥ अबला निराशें ए वली, तो अमने आरति होय ॥ आंटी तजी तूं तेवती, एक वार ते भंचो जोय ॥ त० ॥ ८ ॥ कह्युं अमारुं जो करो, तो ह रिणाक्षीयें हाथ ॥ ग्रहीने मन मेलसुं, सुख भोगवो सहु साथ ॥ त० ॥ ९ ॥ ए बापडी इहां चालिने, आवीछे धरी उमेद ॥ इच्छा पूरो एहुनी, भोगवी सुख बहु भेद ॥ त० ॥ १० ॥ अमने पण सुख ऊपजे, जो जोइएं ताहरुं राज ॥ पछी पाट आपी पुत्रने, साधजे परभव काज ॥ त० ॥ ११ ॥ मा बापनुं मन राखतां, अवगुण तुजने रेख ॥ इहां ऊपजतो नथी, दिलमां वि चारी देख ॥ त० ॥ १२ ॥ छयासीमी ए ढालमां, उदयरत्न भांखे एम ॥ उ ल्लंघिंगल माय बापना, कहो न थवाएं केम ॥ त० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वली कुमर तव चिंतवे, अहो ए मोटो बंध ॥ ए महारा मा बापनो, ए कज हूं तूं नंद ॥ १ ॥ जो उलंघूं आण तो, आरति लहे अत्यंत ॥ तिणें मुज मननी कामना, हवणां न होवे तंत ॥ २ ॥ पूरुं तिणे प्रेमेंकरी, हवणां ए हुंती हुंस ॥ तूटाये नहि जे विना, लो खांचं जो मुंस ॥ ३ ॥ भोग करम विण भोगवे, योगनो न मिले योग ॥ सरोगने सरस अहारनो, जिम न

घटे संयोग ॥ ४ ॥ इम मनमां आलोचिने, मात पितानो मोद ॥ पूरो ते पाल्यो तिणें, वधू वरी सविनोद ॥ ५ ॥ वारु विवाह उत्सव कर्यो, पुर जन वाधी प्रीत ॥ आनंद सहुने ऊपनो, रूडी देखी रीत ॥ ६ ॥

॥ ढाल सत्यासीमी ॥

॥ नवो पल्लेवडो रे ॥ ए देशी ॥ तव अकलंक ते राजिए रे, सुंदर जोई शुभनारी रे ॥ जो जो पुण्यथी रे ॥ कुमरने काजें कराविया रे, मोहल घणा मनोहार रे ॥जो०॥१॥ पुण्यथी परिघल नोग, पुण्यथी सुखसंयोग, पामी जोग, रसिड नोगवे रे ॥ एक पासें वहे आपगा रे, एक पासें आराम रे ॥जो०॥ क्रीडा गिरि सर वापियें रे, उपे ते थल अनिराम रे ॥ जो० ॥ २ ॥ वारु वृक्षनी आवली रे, दीसे शुहिर गंनीर रे ॥ जो० ॥ आगल कारंज कठ ले रे, नीऊरणें ऊरे नीर रे ॥ जो० ॥ ३ ॥ सुंदरीना सोहामणा रे, विहुं पासा प्रासाद रे ॥ जो० ॥ विचे बेठकनो बंगलो रे, विमानसुं मांमे वाद रे ॥ जो० ॥ ४ ॥ पोपट बोले पांजरें रे, हेठे हींमोलाखाट रे ॥ जो० ॥ ऊपर मोतीनां जूंबखां रे, चंडुएं शुन्न थाट रे ॥ जो० ॥ ५ ॥ बत्रीस बद्ध तिहां बेसीने रे, निरखी नाटारंन रे ॥ जो० ॥ नित नवलां सुख नोगवे रे, नित नवला अचंन्न रे ॥ जो० ॥ ६ ॥ सुरना जहेवी साहेबी रे, नोगवे जे नरपूर रे ॥ जो० ॥ पूर्व नवना पुण्यथी रे, नित नित चढते नूर रे ॥ ॥ जो० ॥ ७ ॥ कुवलयचंद केवली कने रे, तात देई तेहने राज रे ॥जो०॥ महाव्रत लेई मुगतें गयो रे, सार्यां आतम काज रे ॥ जो० ॥ ८ ॥ माता पण महाव्रत आदरी रे, पाली पहोती सुरलोक रे ॥ जो० ॥ वलि राजा राज नोगवे रे, पुण्यनो करे बहु पोष रे ॥ जो० ॥ ए ॥ अनमी आण म नाविआ रे. सीमाडा सामंत रे ॥ जो० ॥ चालीस लाख पूरव लगें रे, राज करे ते नंत रे ॥ जो० ॥ १० ॥ वीश लाख पूरव वोलियां रे, कुमर पणे निरधार रे ॥ साठलाख पूरव सहु मली रे, इम बोल्या उदार रे ॥ ॥ जो० ॥ ११ ॥ दया धर्म दीपाविउ रे, जैन शासन तिणे जोर रे ॥ जूना देवल जिन राजनां रे, समराव्यां ठोर ठोर रे ॥ जो० ॥ १२ ॥ नवा पण निज देशमां रे, मांडा बहु प्रासाद ॥ रे ॥ जो० ॥ गाम नगर सीम डूंगरें रे. कराव्या मन आल्हाद रे ॥ जो० ॥ १३ ॥ संघपति तिलकच गविनें रे, रथयात्रा करी रंग रे ॥ जो० ॥ देशें देशें दीपावियो रे, श्री जिनधर्म अ

जंग रे ॥ जो० ॥ १४ ॥ जोग तिणे एवा जोगव्या रे, देवने जे डुर्लन्न रे ॥ जो० ॥ राज करतां पण राजिये रे, दिलमां न धस्यो दंन्न रे ॥ जो० ॥ ॥ १५ ॥ उदय रतन इम ऊचरे रे, सत्यासीमी ढालें वयन्न रे ॥जो० ॥ बूजावतां बूजे सदा रे, पण सुं बूजे वयन्न रे ॥ जो० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ चौदशने दिन एकदा, उपवासें ते तेण ॥ सांज समे जिन पूजिने, सज्जाय करी हरखेण ॥ १ ॥ सामायक पोसह ग्रवी, जावन जावतां जूरि ॥ रजनी विरामें राय ते, सदवोधादि पूरि ॥ २ ॥ चित्तमांहि इम चिंतवे, इतर परें संसार ॥ केवल विषयने कारणें, में हास्यो अवतार ॥ ३ ॥

॥ ढाल अठयासीमी ॥

॥ घणो प्यारो घणो प्यारो प्राणथी तुं प्रजुजी ॥ ए देशी ॥ सुर जोगें सुरे जोगें जे उन्नगी नहीं जी, तुठ नरने तुठ नरने जोगें ते किम एह हो ॥ पूराये पूराये विषयनी वासना जी, अहो एतो अहो एतो कहेवाये अठेह हो ॥ १ ॥ जम वारो जम वारो अहो अहेलें गयो जी, संसारें संसारें नहीं कांई सार हो ॥ ज्रांते जे ज्रांतें जे रम्य जासे अठे जी, देहादि देहादि स्वजन परिवार हो ॥ ज० ॥ २ ॥ पण ते तो पण ते तो आखर अनित्य ठे जी, वाघणने वाघणने मुखें जिम कोई हो ॥ पेसीने पेसीने वांठे जीववुं जी, पण केतो पण केतो जीवे सोइ हो ॥ ज० ॥ ३ ॥ मूढ मनसुं मूढ मनसुं माने मोहंकरी जी, यौवनने योवनने रूप अनूप हो ॥ पण डुष्ट पण डुष्ट रोगतणे वसें जी, क्षणमांहि क्षणमांहि थाय ते कुरूप हो ॥ ज० ॥ ४ ॥ सुरवधुनां सुरवधुनां जे मन रीजवे जी, तेहने न करे तेहने न करे चंमाली कबूल हो ॥ जराने जराने रोगना योगथी जी, ते हवुं तनु तेहवुं तनु थाए सूल हो ॥ ज० ॥ ५ ॥ वाह्यदृष्टें वाह्यदृष्टें जे प्यारी लागे वहू जी, कमलारो कमलारो कोडी उपाय हो ॥ इछंतां इछंतां आवी नवि मिले जी, जो मले तो जो मले तो जोतांमां जाय हो ॥६॥ ठते तो ठते तो सुख नहीं तेहवुं जी, वित्त जाते वित्त जाते जेहवुं डुःख थाय हो ॥ जो रहे तो जो रहे तो आखर पण गांमवुं जी. तेह धनने तेह धनने काजें कुण धाय हो ॥ ज० ॥ ७ ॥ राज्य पदनो राज्य पदनो पण मद जे करे जी, अविवेकें अविवेकनुं विलसित तेह हो ॥ नृप केई नृ

प केई भीख मागे घणा जी, जिहारे जिहारे आवे पुण्यनो छेह हो ॥ज० ॥ ७ ॥ जोराळो जोराळो होय जे जेहथी जी, ते तेहने ते तेहने गंजे त तकाळ हो ॥ जगें मछ जगें मछ गळा गळनी परें जी, एक एकनो एक एकनो जाणो काळ हो ॥ ज० ॥ ए ॥ जावजीव जावजीव जो कोई पु ण्यथी जी, राज हुंति राज हुंति भ्रष्ट न थाय हो ॥ उत्कृष्टो उत्कृष्टो तो आरंभ करी जी, सातमी ते सातमी ते नरके जाय हो ॥ ज० ॥ १० ॥ राज काजे राज काजे केई रणमां मरे जी, रंगीला रंगीला जे राजान हो ॥ राज तेहने राज तेहने कांई काजें आवे नहीं जी, तो तेहनुं तो तेहनुं की जें शुं मान हो ॥ ज० ॥ ११ ॥ सुत बंधु सुत बंधु वधू आदे सहू जी, प रिकर छे परि परिकर छे माहरी पूठ हो ॥ आणमानी आणमानी सदा चा ले अछे जी, पण भली पण भली ए बांधी मूठ हो ॥ ज० ॥१२॥ आपगर जें आपगरजें सहु आवी मिले जी, परगरजें परगरजें न मर्म को पाय हो ॥ कुण माता कुण माता पिता भाई भारजा जी. वेकारें वेकारें ए सवि वद लाय हो ॥ज०॥१३॥ जन्म जरा जन्म जरा अने यम चोटथी जी, कांई राखी कांई राखी न सके कुटंब हो ॥ तेहने काजें तेहने काजें विविध विटं बनाजी, कुण सहे कुण सहे करे कुण दंभ हो ॥ ज० ॥ १४ ॥ कवि उदय कविउदय रतन कहे एटले जी, अठ्यासी अठ्यासीमी थई ढाल हो ॥ केवली ते केवली ते भुवनभानु भणे जी, चंडमोळि चंडमोळी सुण भूपाल हो ॥१५॥

॥ दोहा ॥

॥ सरस गीत श्रवणे सुणुं, रमणिक जोउं रूप ॥ भला गंध नित भो गवुं, रस आस्वाडं अनूप ॥ १ ॥ फरस सुकोमल फरसियें, ए पंच विषय सुख देखि, मान करे को मढ नर, ते पण मोहविशेष ॥ २॥स०॥१५७०॥

॥ ढाल नेव्यासीमी ॥

॥ रे मन पंखीआ म पडीस पिंजरे,संसार माया जाल रे ॥ ए देशी ॥ रे मन मूढ तूं म पडीश मोहमां, ए विषयनां सुख देखि रे ॥ एआंकणी ॥ भोगवतां क्षण भलां भासे, विषय ए विषरूप रे ॥ समयांतर ते विरस लागे, सीत समे जिम धूप रे ॥ रे० ॥ १ ॥ लीला विषयनी सदा लागे, अज्ञानी ने अनूप रे ॥ ज्ञानी नर ते इम गणे ए, केवल छे दुःख रूप रे ॥ रे० ॥ २ ॥ सुख तो सरसव जेटलुं ने, दुःख तो मेरुगर मान रे ॥ धिग पडो

ते विषयसुखने, निखर जे निदान रे ॥ रे० ॥ ३ ॥ विषयने वश वेर परथी ऊपजे अनेक रे ॥ रे० ॥ लोक पण लख गमे भंभे, नृप दंभे छेक रे ॥ रे० ॥ ४ ॥ अण मलते ऊचाट थाय, अरति उपजे अंग रे ॥ मरणांत पण लहे आपदा, बहु पड्या विषयने संग रे ॥ रे० ॥ ५ ॥ मृग मीन मधुकर अने मयगल, परवशें पतंग रें ॥ एक एक इंद्रि रसें आतुर, अंगनो करे भंग रे ॥ रे० ॥ ६ ॥ वंछित कोइक लहे विरलो, पामीने पण प्राप्ति रे ॥ रोग वियोग ने जरा योगें, भोगवी सके नाहिं रे ॥ रे० ॥ ७ ॥ पुण्यबलें जो विषय सुखनो, पूरो पामी साज रे ॥ अवतार आखो अनुभवे, कोई चक्री के महाराज रे ॥ रे० ॥ ८ ॥ तो मरी ते तेहने विपाकें, पामे नरक निवास रे ॥ ते माटे छे नेट निखरां, विषयना विलास रे ॥ रे० ॥ ९ ॥ इम बीजी पण अनेक वस्तु, रम्य भासे तेह रे ॥ आखर ते अनित्य सघली, छटकि दाखे छेह रे ॥ रे० ॥ १० ॥ प्रेम दंभने प्रहारे मूर्छित, राजमदें उन्मत्त रे ॥ विषयविषे गहिरे थके, वैभवरसें मयमत्त रे ॥ रे० ॥ ११ ॥ आज लगें में एवडी कांई, लही न कालनी लात रे ॥ अवतार अहिले नीगम्यो, बाउल दीधी बाथ रे ॥रे०॥१२॥ उदय रत्न कहे ए नेव्यासीमी, सुणो श्रोता ढाल रे ॥ धर्मनो दृढ राख जो, जिम भाजे भव जंजालरे ॥रे०॥१३॥

॥ दोहा ॥

॥ कुवलय चंद्र ते केवली, जिणे तार्यो मुज तात ॥ हवे जो भेटुं तेहने, तो साधुं परमार्थ ॥ १ ॥ आतम चिंता इणि परें, करतां थयो प्रभात ॥ पोसहादि व्रत पारी तव, नारी ने नरनाथ ॥ २ ॥ देव पूजा दिल रीझीने, सिंहासनें ते राय ॥ आस्थान सभा मंडप जई, बेठो जडी सभाय ॥ ३ ॥ कुवलयचंद्र पण केवली, वलि नृपनो अभिप्राय ॥ उलखीने आव्या वही, तिणि अवसर तिणि ठाय ॥ ४ ॥ कनकमय पंकज ऊपरें, मृगरमण उद्यान ॥ परखदें वींटया केवली, बेठा ज्ञान निधान ॥ ५ ॥ सुर नर तिहां आव्या बहु, केवली कहे उपदेश ॥ वलि राजा पण तिणे समे, पहोतो तेणे प्रदेश ॥ ६ ॥ अभिगम पांचे सांचवी, त्रण प्रदक्षिण देह ॥ वंदीने बेठो तिहां, सुणवा धर्म सनेह ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ १६०० ॥

॥ ढाल नेवुंमी ॥

॥ देवली इगलाथी चूडो वापरीउ ॥ ए देशी ॥ श्रोताजी ॥ धर्मनी देशना

सांजली, प्रणमी मुनिना पाय रे ॥श्रो०॥ पूछे अवसर पामिने, कर जोडी वलि राय रे ॥ १ ॥ श्रो० ॥ केवलियें ते नृपनुं मन हरीउं ॥ ए आंकणी ॥ प्रजुजी ॥ जगवन् में जव हारीउं, केवल विषयने काज रे ॥ प्र० ॥ शरणे आव्यो हवे तुमतणें, जाणी तारण तरण जिहाज रे ॥ के० ॥ २ ॥ प्र० ॥ शेष रह्यो जे थाकतो, ए माहरो अवतार रे ॥ प्र० ॥ सफल थाये हवे जे हथी, तेहवो कहो प्रकार रे ॥ प्र० ॥ ३ ॥ रा० ॥ केवली कहे तव तेहने, एहज तुं जव एक रे ॥ प्र० ॥ हार्यो नथी सुण पूरवें, हार्यो ठे अनेक रे ॥ के० ॥ ४ ॥ राजाजी ॥ कहेतां कहेवाए नहीं, जय उपजावे नूर रे ॥ रा० ॥ अचरज कारी अति घणुं, जिम दरियानुं पूर रे ॥ के० ॥ ५ ॥ रा० ॥ वलि राजा तव बोलिउं, स्वामी सुणो एक वात रे ॥ रा० ॥ सांजलवा इबुं अबुं, ते कहो मह्यारो अवदात रे ॥ के० ॥ ६ ॥ रा० ॥ केवली कहे सुण राजिया, कोडी जीजे पण कोय रे ॥ रा० ॥ कहेतां न पामे पारने, आयु पण पूरुं होय रे ॥ के० ॥ ७ ॥ रा० ॥ अचरज जो तुजने अछे, तो सांजल थई सावधान रे ॥ रा० ॥ कहुं कांइक संक्षेपिने, अवदात तुज अ समान रे ॥के०॥८॥रा०॥ श्रोताजी ॥ उदयरतन कहे एटले, नेवुंमी निर धार रे ॥श्रो०॥ ढाल थइ पण धर्मनो, आगे सुणो अधिकार रे ॥के०॥ए॥

॥ दोहा ॥

॥ काल अनंते इहांथकी, चारित्र धर्म सहाय ॥ करवा करमें काढियो, जीव ताहरो सुण राय ॥ १ ॥ अव्यवहार निगोदथी, व्यवहार निगोदें वा स ॥ दीधो तव मोहने दलें, तुरत घेर्यो जड तास ॥ २ ॥ काल अनंतो रोकियो, पछे कर्म परिणाम ॥ कर्यो तिहांथी आणियो, सुण मन राखी गम ॥ ३ ॥ पंच थावर विगलेंडिमां, पंचेंडी तिर्यंच ॥ नरक अनार्य नर गतें, वलिउं कर्म प्रपंच ॥ ४ ॥ वलि वलि पाठो वालिने, वेरीएं वार अनं त ॥ निगोदादिकमां नाखिउं, कहेतां नावे अंत ॥ ५ ॥ अनार्य देशें अ वतरी, वली अनंती वार ॥ नर जव नाहक निगम्यो, मोहतणे अधिकार ॥ ६ ॥ कुजाति पंगु कुलहीण किहां, अंध बधिर गदपूर ॥ इत्यादिक दो षें वली, राख्यो मोह हजूर ॥ ७ ॥ पुद्गल परावर्त्तन कर्यां, अनंत अनं ती वार ॥ एकेंडियादिकमां वालिने, मोहें कीधो खोवार ॥८॥सर्व०॥१६१७

॥ ढाल एकांणुमी ॥

॥ हो रे वणजारीडा ॥ ए देशी ॥ इणि परें कीधी रे भवनी आवली, कुलनी भमतां बहु कोडि हो ॥ हो रे सुण राजीया ॥ चोरासी लख जीवा योनिमां, पग पग पाम्यो तूं खोड हो ॥ १ ॥ हो० ॥ श्री निलयनगरें तूं थयो एकदा, वैश्रमण नामें वणीक हो ॥ हो० ॥ धर्मनी उपनी तिहां धीपणा, श्लोक सुणी एक रमणीक हो ॥ २ ॥ हो० ॥ यतः ॥ स्वजनधनभुवनयौवन, वनिता तत्वाद्यमनित्यमिदमखिलं ॥ ज्ञात्वापत्राणसहं, धर्मं शरणं भजत लोकाः ॥ १ ॥ कुधर्मनी बुद्धि तव आमी फरी, त्रिदंमिउ तापस कीध हो ॥ हो० ॥ एकेंड्रियादिकमां वली अवतारीने, छुःख बहुलां मोहें दीध हो ॥ ३ ॥ हो० ॥ पुदगल अनंता परावर्त्या वली, नरभव लही अंतरालें हो ॥ हो० ॥ कुधर्म बुद्धिने उपदेशेंकरी, जिहां तिहां पड्यो जंजालें हो ॥ ४ ॥ हो० ॥ आलस उंघादिक सुभटें मली, अलगो नाख्यो उखेडि हो ॥ हो० ॥ तिमज अनंता पुदगल परावर्त्या, कुदृष्टि लागी तिहां केडि हो ॥ ५ ॥ हो० ॥ विजय वर्द्धनपुरें नंदनने भवें, आयु टालिने सात हो ॥ हो० ॥ कर्म ते छेयां यथाप्रवृत्तकरणें, खडगें तिहां करी ख्यात हो ॥ ६ ॥ हो० ॥ एक कोडाकोडि सागरनी स्थिति, सा ते रह्या ते शेष हो ॥ हो० ॥ ग्रंथी भेद लगें पहोतो जई, पण मोहें मेला वी अशेष हो ॥ ७ ॥ हो० ॥ अश्रद्धानने राग द्वेषादिकें, पाछो वाली तिणें ताल हो ॥ हो० ॥ निगोदादिकमां तिमहिज फेरव्यो, कह्यो न जाये ते काल हो ॥ ८ ॥ हो० ॥ ते वली मलयपुरें विश्वसेनने, भवें करी ग्रंथी भेद हो ॥ हो० ॥ अपुरव करण खडगतेणे वलें, आगें वली धरी उमेद हो ॥ ॥ ए ॥ हो० ॥ अनिवृत्तिकरण दंभ उसारीने, मोहादिक वेरी मह्ा मल्ल हो ॥ हो० ॥ सम्यग् दर्शन मंत्री भेटीउ, अवसर पामी अवल्ल हो ॥ १० ॥ हो० ॥ कुदृष्टि रागें तव दीधो दगो, सुभगभवें वलीसोय हो ॥ हो० ॥ स्नेह रागें वली समकित हारिउं, जुगतें विचारी तुं जोय हो ॥ ११ ॥ हो० ॥ विषयरागें वली सिंहतणें भवें, जिनश्रीएं द्वेष विशेष हो ॥ हो० ॥ ज्वलनसिख क्रोधें कुबेरें मानथी, पदमें माया क्लेश हो ॥ १२ हो० ॥ सोमदत्त लोभें एम अनेक भवें, ताहरे जीवें राजन्न हो ॥ हो० ॥ मोह राजाना सुभट तणे बलें, हार्युं समकित रतन्न हो ॥ १३ ॥ हो० ॥ देशविर

ति हारि हिंसाएं सुंदरें, मणिजइ मृषावाद हो ॥ हो० ॥ सोमदत्तें अदत्ता दानथी, दत्तें मैथुन उनमाद हो ॥ १४ ॥ हो० ॥ धन बहुल सेठें परिग्रह ने पूरें, रोहिणियें विकथायें हो ॥ हो० ॥ देशविरति लही असंख्य नवें, हारी तें मोह महीमायें हो ॥ १५ ॥ हो० ॥ अरविंदने नवें सर्वविरति हारी, क्रोधने मान पसायें हो ॥ हो० ॥ चित्रमतियें विषयसुख लालचें, पाम्यो विजय सेन मूर्ठायें हो ॥१६॥हो०॥ संयम ने वली चौद पूरवथकी, पुंमरीकने नवे उंघें हो ॥ हो० ॥ पाडी अनंता पुदगल परावर्तन, न माड्यो नवसंगें हो ॥ १७ ॥ हो० ॥ मोहादिकें मलीने एणि परें, तुजने वार अनंत हो ॥ हो० ॥ नवमांहे नमाड्यो फरी फरी, कहेतां न आवे तसु अंत हो ॥ १८ ॥ हो० ॥ वली सिंहरथने नवें संयमवरी, अस्खलित तेह आराधी हो ॥ हो० ॥ सुरलोकें महाशुक्रे सुर थयो, पुण्यदिशा तिहां वाधी हो ॥ १९ ॥ हो० ॥ नानुनवें संयम शुद्ध साधिने, अणसणे मरिने समाधि हो ॥ हो० ॥ नवमे ग्रैवेयकें वली सुर थयो, तिहां पण पुण्योदय वाधी हो ॥ २० ॥ हो० ॥ वली इंद्रदत्त महाराजा नवें, संयम साधि सुविधाने हो ॥ एकावतारी सुर पद पामिउ, सर्वार्थ सिद्धि विमाने हो ॥ २१ ॥ हो० ॥ तिहांथी चवीने इहां तुं ऊपनो, वली राजा बलवान हो ॥हो०॥ उदय वदे एकाणुंमी ढालमां, सुणजो थइ सावधान हो ॥२२॥हो०

॥ दोहा ॥

॥ संबंध ए निज सांनली, हिए ससंभ्रम होय ॥ मोहें मुनि पाएं नमी, नेहें वदे नृप सोय ॥ १ ॥ नगवन् ए नुंमा घणुं, मोहादिक महाडुष्ट ॥ जिम ते न ठले आनवें, कहो उपाय ते पुष्ट ॥ २ ॥ केवली कहे करी एक मन, विधें धरी श्रम वेष ॥ चारित्र धर्मनी चाकरी, सदा करो सुविवेक ॥ ॥३॥ सर्वविरति जे सुंदरी, मोह कुलनी मथनारि ॥ कुसमन जेहने देखिने, हेला पामें हारि ॥ ४ ॥ वाला वीजीने तजी, सदा नजो तसु संग ॥ दिलमां दश विध धर्मशुं, राखो अविहल रंग ॥ ५ ॥ सदबोध सदागम उपदिश्यो, सत्व धरी थई सूर ॥ वढो मोहादिक वेरीशुं, डुष्ट जाए जिम दूर ॥ धर्म सुनटने नीरुयें, इम करतां संग्राम ॥ मोहादिकने मारीने, पामीन संपद गाम ॥ ७ ॥ सर्वगाथा ॥ १६५१ ॥

॥ ढाल बाणुंमी ॥

॥ गोरीके नयन वडे वडे रें लाला ॥ ए देशी ॥ कथन ए केवलीनां सु णी रे लाला, हृदयमां उपनो राग ॥ हो रे लाला ॥ अवसर ए वली दो हिलो रे लाला ॥ इम चिंते महाभाग ॥ हो० ॥ १ ॥ मोहे महाबल रा जा, मन रीझी मोहने रे, मोक्ष देवा संयम पंथे धस्यो ॥ टेक ॥ इम चिंति ने उतावला रे लाला, जेष्ट सुत नयसार ॥ हो० ॥ रति सुंदरी राणी तणो रे लाला, जण्यो तेडी तिणिवार ॥ हो० ॥ मो० ॥ २ ॥ राज भलाव्युं तेह ने रे लाला, सहु मंत्रीनी साख ॥ हो० ॥ पोते महापूजा रची रे लाला, पूरिया याचक अभिलाष ॥ हो० ॥ मो० ॥ ३ ॥ अमारि पडहो वजडाविने रे लाला, महामहोत्सव मंमाण ॥ हो० ॥ व्रत लेवाने संचस्यो रे लाला, रंगभरें महाराण ॥ हो० ॥ मो० ॥ ४ ॥ सामंत पुरजन मंत्रवी रे लाला, पांचशें लेई साथ ॥ हो० ॥ अंतेउरी पण केटली रे लाला, संगें धरी नर नाथ ॥ हो० ॥ मो० ॥ ५ ॥ पंच महाव्रत उचरे रे लाला, आवी ते केवली पास ॥ हो० ॥ नृप ते केतिक नारिशुं रे लाला, पांचसे नरशुं उल्लास ॥ हो० ॥ मो० ॥ ६ ॥ कल्प क्रिया श्रुतनी कला रे लाला, गीतार्थ गुण जेह ॥ हो० ॥ पुण्योदयना प्रभावथी रे लाला, शिखी दिन थोडे तेह ॥ ॥ हो० ॥ मो० ॥ ७ ॥ चौद पूर्वधर ते थयो रे लाला, अतिशयवंत अपार ॥ हो० ॥ कुवलयचंद्र केवली तदा रे लाला, आपी एहने गछभार ॥ हो० ॥ ॥ मो० ॥ ८ ॥ पोतें शैलेसी करी रे लाला, कर्म खपावी शेष ॥ हो० ॥ परमपद पाम्या सही रे लाला, अमर थयो अलेख ॥ हो० ॥ मो० ॥ ए ॥ राजऋषि रूडी परें रे लाला, वली आचारय तेह ॥ हो० ॥ सद्बोध सदा गमयोगथी रे लाला, अरिनो लेतो छेह ॥ हो० ॥ मो० ॥ १० ॥ गाम नगर पुर आगरें रे लाला, विचरे देश विदेश ॥ हो० ॥ मोहना बंधने मोड तो रे लाला, नर नारीना अशेष ॥ हो० ॥ मो० ॥ ११ ॥ उदय वदे ढाल ए कही रे लाला, में बाणुंमी अनूप ॥ हो० ॥ अवसर लहीने चेतजो रे लाला, जिम चेत्यो बलि भूप ॥ हो० ॥ मो० ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ पाम्यो ते मुनि अन्यदा, अप्रमत्त गुणस्थान ॥ अकस्मात तव ऊपनुं, अति विशुद्ध शुभ ध्यान ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ १६६४ ॥

॥ ढाल त्र्याएंमी ॥

॥ हव्या सुणरे सुण महाकाल ॥ ए देशी ॥ मनना कोइ शुद्ध परिणाम ॥ तद्रूप लहो अनिराम ॥ क्षपक श्रेणि ताम खडग यष्टी ॥ पामी तिहां ते उत्कृष्टी ॥१॥ अनंतानुबंधी जे चार कषाय ॥ तिणे ते गोरें हण्या तिणी ठाय ॥ अशुद्ध मिश्र विशुद्ध त्रिहुं नेदे ॥ मिथ्या तस मूल उछेदे ॥ २ ॥ फरसी अपूरव करण गुण ठाणुं ॥ वलि आगल कीधुं प्रयाणुं ॥ अनिवृत्ति बादर गुणगणे ॥ पहोतो शुन ध्यान प्रमाणे ॥ ३ ॥ अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यानावरण ॥ कषाय अष्ट पमाड्या मरण ॥ माख्या पण ठामें न मुआ ॥ आठे अथ सुरता हुया ॥ ४ ॥ नरक तिर्यंचगति आनुपूर्वी ॥ एकेंडी लहो आदी कुर्वी ॥ वेंडी तेंडी चौरेंडी जाति ॥ आतप उद्योत स्थावर ख्यात ॥ ५ ॥ सूक्ष्म साधारण नहीं फेर ॥ नामकर्मना नेद ए तेर ॥ निडा निडा प्रचला प्रचला ॥ थिणद्धि आदि त्रण्य प्रमिला ॥ ६ ॥ प्रकृति ए कही जेती ॥ क्षय पमाडी तिहां तेती ॥ पछे अर्द्ध हण्या कषाय ॥ आठे ते माख्या ठाय ॥ ७ ॥ नपुंसकने स्त्री वेद ॥ हास्यादिक रिपु षट नेद ॥ पुरुष वेद संज्वलन कषाय ॥ क्रोध मान माया हणि त्यांय ॥ ८ ॥ संज्वलना लोनने जेहवे ॥ मारे तव नासिने तेहवे ॥ सूक्ष्मरूप करीने रपीउ ॥ दशमें गुण ठाणें ते खपिउ ॥ ए ॥ अंगु माणस अठावीस ॥ एह पडते पछ्यो मोहईस ॥ अस्खलित गतें तव ते कढलीउ ॥ बारमें सोपाने वलिउ ॥ १० ॥ क्षीणमोह गुण ठाणे पहोतो ॥ मनमांहि थणुं गहगहितो ॥ उदय वदे दिल खोली ॥ त्र्याएंमी ढाल ए बोली ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ मति आवरणादिक तिहां, पांचे जे आवरण ॥ ते पंच रूपें ज्ञानावरण, पटाउत पमाड्यो मरण ॥ १ ॥ दान लान नोगोपनोग, पांचमो वीर्यांतराय ॥ ए पांचे रूपें पाडिउ, सामंत जे अंतराय ॥ २ ॥ निडा प्रचला निड बे, चक्षु अचक्षु अवधि ॥ केवल दर्शनावरण जे, दर्शनावरण षट विधि ॥ ३ ॥ दर्शनावरण नामें तिहां, सामंत ते महाशूर ॥ पाड्यो तव प्रगट्यो सही, अनिनव आनंद पूर ॥ ४ ॥ घाति कर्म महा नायकें, चारे थने चकचूर ॥ सैन्य सकल रिपुनुं थयुं, निनायक गतनूर ॥ ५ ॥ आवरणें अनगे थते, निर्मल केवल ज्ञान ॥ केवल दर्शन ए वन्हे, प्रगट थयां

लिणियान ॥ ६ ॥ आंखें पमल जिम ऊघडे, झलकें ज्योति अनूप ॥ तिम मुनि निरखे ते तदा, लोकालोक सरूप ॥७॥ सिद्धि सौधनुं तेरसुं, पगथीउं पाम्युं ताम ॥ संयोगि केवलि गुण स्थानकें, पहोंतो सो गुणधाम ॥ ८ ॥ तव नृप चारित्र धर्मनुं, सैन्य सकल सम काल ॥ पाम्युं परमानंदने, वैरी थते विसराल ॥ ए ॥ सर्वगाथा ॥ १६८५ ॥

॥ ढाल चोराणुंमी ॥

॥ कमल रस भूंभरवडां ॥ ए देशी ॥ तिवार पछी वली केवली, मोह दिकना सुविशेष ॥ सकलजनसुखकरू, मर्म प्रकाशी लोकने, छोडवे देई उपदेश ॥ स० ॥ १ ॥ विचरतां वसुधातलें, बहु जननां मोह बंध ॥ स० ॥ गामो गामें छोडावतां, फेडतां भवना फंद ॥ स० ॥ २ ॥ विहार करंतां आ विआ, अनुक्रमें आणे देश ॥ स० ॥ सांप्रत तुम सहु लोकने, देवाने उप देश ॥ स० ॥ ३ ॥ बूझविया बहू लोकजे, तिणें गुण निष्पन्न ॥ स० ॥ भुव नभानु नाम तेहनुं, धरियुं लही ज्ञानभुवन्न ॥ स० ॥ ४ ॥ समजो ते हूं केवली, इम सांभली अवनीस ॥ स० ॥ चंद्रमौलि चित्त चमकियो, तव क री सुजगीस ॥ स० ॥ ५ ॥ पाय लागी प्रणमी कहे, साधु साधु तुमे स्वामि ॥ स० ॥ भगवन पाउधास्या भले, अम तारवा हित काम ॥ स० ॥ ६ ॥ सकल सिद्धांतनुं रहस्य ए, वारु तुमारुं चरित्र ॥ स० ॥ कही अमने पा वन कस्या, प्रभु तुमे पुण्य पवित्र ॥स०॥७॥ तव केवली कहे तेहने, राजन निजआख्यान ॥स०॥ निजमुखें कहेवुं नवि घटे, थाए निजव्याख्यान ॥स० ॥ ८ ॥ निज गुण कहेवा निज मुखें, निषेधे नीति ग्रंथ ॥ स० ॥ कीर ति ते जे बीजो कहे, पौराणिक ए पंथ ॥ ॥ स० ॥ ए ॥ पण तुमने हित कारणे, खरो कह्यो एह संबंध ॥ स० ॥ संक्षेपे में माहरुं, भाजे जे भवबं ध ॥ स० ॥ १० ॥ उदयरतन कहे आगमें, बोल्या जे छे बोल ॥ स० ॥ चोराणुंमी ढालें ते सद्दहो, चित्त धरी रंग चोल ॥ स० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥ विस्तारें जो वर्णवुं, चंद्रमौलि सुण राय ॥ तो कोडि पूरवने आउखे, पूरुं एह न थाय ॥ १ ॥ केवल ए जे कारणे, महारायील निहा ल ॥ प्राहें संसारी जीवनी, सहुनी एहज चाल ॥ २ ॥ सर्वगाथा १६ए८

॥ ढाल पंचाणुंमी ॥

॥ बिंदली मन लागो ॥ ए देशी ॥ चोद लोक च्यारे गति, जगमांहि स

॥ ढाल न्याएंुमी ॥

॥ हव्या सुणरे सुण महाकाल ॥ ए देशी ॥ मनना कोइ शुद्ध परिणाम ॥ तदरूप लहो अनिराम ॥ क्षपक श्रेणि ताम खडग यष्टी ॥ पामी तिहां ते उत्कृष्टी ॥१॥ अनंतानुवंधी जे चार कषाय ॥ तिणे ते गोरें हण्या तिणी गाय ॥ अशुद्ध मिश्र विशुद्ध त्रिहुं नेदे ॥ मिथ्या तस मूल उछेदे ॥ २ ॥ फरसी अपूरव करण गुण गणुं ॥ वलि आगल कीधुं प्रयाणुं ॥ अनिवृत्ति बादर गुणगणे ॥ पहोतो शुन ध्यान प्रमाणे ॥ ३ ॥ अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यानावरण ॥ कषाय अष्ट पमाड्या मरण ॥ मारुया पण गामें न मुआ ॥ आगे अध मुसता हुया ॥ ४ ॥ नरक तिर्यंचगति आनुपूर्वी ॥ एकेंडी लहो आदी कर्वी ॥ बेंडी तेंडी चौरेंडी जाति ॥ आतप उद्योत स्थावर ख्यात ॥ ५ ॥ सूक्ष्म साधारण नहीं फेर ॥ नामकर्मना नेद ए तेर ॥ निडा निडा प्रचला प्रचला ॥ थिणद्धि आदि त्रण्य प्रमिला ॥ ६ ॥ प्रकृति ए कही जेती ॥ क्षय पमाडी तिहां तेती ॥ पछे अर्द्ध हण्या कषाय ॥ आगे ते मारुया गाय ॥ ७ ॥ नपुंसकने स्त्री वेद ॥ हास्यादिक रिपु षट नेद ॥ पुरुष वेद संज्वलन कषाय ॥ क्रोध मान माया हणि त्यांय ॥ ८ ॥ संज्वलना लोनने जेहवे ॥ मारे तव नासिने तेहवे ॥ सूक्ष्मरूप करीने रपीउ ॥ दशमें गुण गणें ते खपिउ ॥ ए ॥ अंशु माणस अडावीस ॥ एह पडते पड्यो मोहईस ॥ अस्खलित गतें तव ते कबलीउ ॥ बारमें सोपाने बलिउ ॥ १० ॥ क्षीणमोह गुण गणे पहोतो ॥ मनमांहि घणुं गहगहितो ॥ उदय वदे दिल खोली ॥ न्याएंुमी ढाल ए बोली ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ मति आवरणादिक तिहां, पांचे जे आवरण ॥ ते पंच रूपें ज्ञानावरण, पटाउत पमाड्यो मरण ॥ १ ॥ दान लान नोगोपनोग, पांचमो वीर्यांतराय ॥ ए पांचे रूपें पाडिउ, सामंत जे अंतराय ॥ २ ॥ निडा प्रचला निड बे, चक्षु अचक्षु अवधि ॥ केवल दर्शनावरण जे, दर्शनावरण पट विधि ॥ ३ ॥ दर्शनावरण नामें तिहां, सामंत ते महाशूर ॥ पाड्यो तव प्रगट्यो सही, अनिनव आनंद पूर ॥ ४ ॥ घाति कर्म महा नायकें, चारे थते चकचूर ॥ सैन्य सकल रिपुनुं थयुं, निर्नायक गतनूर ॥ ५ ॥ आवरणें अलगे थते, निर्मल केवल ज्ञान ॥ केवल दर्शन ए बन्हे, प्रगट थयां

लिणिथान ॥ ६ ॥ आंखें पम्हल जिम ऊघडे, जलके ज्योति अनूप ॥ तिम मुनि निरखे ते तदा, लोकालोक सरूप ॥७॥ सिद्धि सौधनुं तेरमुं, पगथीउं पाम्युं ताम ॥ संयोगि केवलि गुण स्थानकें, पहोतो सो गुणधाम ॥ ८ ॥ तव नृप चारित्र धर्मनुं, सैन्य सकल सम काल ॥ पाम्युं परमानंदने, वैरी थते विसराल ॥ ९ ॥ सर्वगाथा ॥ १६८५ ॥

॥ ढाल चोराणुंमी ॥

॥ कमल रस फूंनखडां ॥ ए देशी ॥ तिवार पछी वली केवली, मोहा दिकना सुविशेष ॥ सकलजनसुखकरू, मर्म प्रकाशी लोकने, छोडवे देई उपदेश ॥ स० ॥ १ ॥ विचरतां वसुधातलें, बहु जननां मोह बंध ॥ स० ॥ गामो गामें छोडावतां, फेडतां भवना फंद ॥ स० ॥ २ ॥ विहार करंतां आ विआ, अनुक्रमें आणे देश ॥ स० ॥ सांप्रत तुम सहु लोकने, देवाने उप देश ॥ स० ॥ ३ ॥ बूझविया बहू लोकजे, तिणें गुण निष्पन्न ॥ स० ॥ भुव नभानु नाम तेहनुं, धरियुं लही ज्ञानभुवन्न ॥ स० ॥ ४ ॥ समजो ते हूं केवली, इम सांभली अवनीस ॥ स० ॥ चंद्रमौलि चित्त चमकियो, तव क ही सुजगीस ॥ स० ॥ ५ ॥ पाय लागी प्रणमी कहे, साधु साधु तुमे स्वामि ॥ स० ॥ भगवन पाउधार्या भले, अम तारवा हित काम ॥ स० ॥ ६ ॥ सकल सिद्धांतनुं रहस्य ए, वारु तुमारुं चरित्र ॥ स० ॥ कही अमने पा वन कर्या, प्रभु तुमे पुण्य पवित्र ॥स०॥७॥ तव केवली कहे तेहने, राजन निजआख्यान ॥स०॥ निजमुखें कहेवुं नवि घटे, थाए निजव्याख्यान ॥स० ॥ ८ ॥ निज गुण कहेवा निज मुखें, निषेधे नीति ग्रंथ ॥ स० ॥ कीर ति ते जे बीजो कहे, पौराणिक ए पंथ ॥ ॥ स० ॥ ९ ॥ पण तुमने हित कारणे, खरो कह्यो एह संबंध ॥ स० ॥ संक्षेपे में माहरुं, भाजे जे भवबं ध ॥ स० ॥ १० ॥ उदयरतन कहे आगमें, बोल्या जे छे बोल ॥ स० ॥ चोराणुंमी ढालें ते सद्दहो, चित्त धरी रंग चोल ॥ स० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥ विस्तारें जो वर्णवुं, चंद्रमौलि सुण राय ॥ तो कोडि पूरवने आरखे. पूरुं एह न थाय ॥ १ ॥ केवल ए जे कारणे, महारायीज निहा ल ॥ प्रायें संसारी जीवनी, सहुनी एहज चाल ॥ २ ॥ सर्वगाथा १६९८

॥ ढाल पंचाणुंमी ॥

॥ विंदली मन लागो ॥ ए देशी ॥ चोंद लोक भ्यारे गति, जगमांहि स

हु जीव ॥ महाराज ॥ मोह राजाना राज्यमां, भ्रमण करे अवतीव ॥ म० ॥ १ ॥ भवमां इम सहुए भमे, नथी कोइ ते स्थान ॥ म० ॥ एकेंद्रिनी जातिमां, भाखे श्री भगवान ॥ म० ॥ २ ॥ भ० ॥ नहीं विगलेंद्री रूप ते, नहीं ते तिर्यंच जाति ॥ म० ॥ नरकावासो ते नथी, नरक सोधतां सात ॥ म० ॥ ३ ॥ भ० ॥ गाम नगर पुर पेखतां, नर लोकें नहि तेह ॥ म० ॥ जिहां सहु जीव न ऊपना, अनंती वार अछेह ॥ म० ॥ ४ ॥ भ० ॥ भुवनपति व्यंतर ज्योतिषी, सौधर्म ईशान सुर लोय ॥ देवनी देवी ते नहीं, जिहां उपना नहिं सहु कोय ॥ म० ॥ ५ ॥ भ० ॥ दश देव लोक आगलें, नव ग्रैवेयक पर्यंत ॥ म० ॥ प्राहे नथी कोई स्थान ते, जिहां उपना नहीं सर्व जंत ॥ म० ॥ ६ ॥ भ० ॥ जे सहु जीवें न भोगव्युं, ते सुख दुःख नहिं संसार ॥ म० ॥ द्रव्यथी नहीं जिन लिंगतें, जे न लह्युं अनंती वार ॥ म० ॥ ७ ॥ भ० ॥ जाति योनि कुल तें नहीं, नहीं कोई तेहवो वेष ॥ म० ॥ सहु संसारी जीवडे, जे वेठयो न वार अनेक ॥ म० ॥ ८ ॥ भ० ॥ सामान्यथी कह्यो जे सवे, ए माहरो विरतंत ॥ म० ॥ भव अनंता जे भम्या, विचें विचें वार अनंत ॥ म० ॥ ९ ॥ भ० ॥ ते संख्याते आउखे, कहो केम कह्यो जाय ॥ म० ॥ क्रमें क्रमें मुखें कहेतां थकां, केता एक कहेवाय ॥ म० ॥ १० ॥ भ० ॥ भारी दुःख में भोगव्यां, असरण पणे अनंत ॥ म० ॥ सरणे पण कुधर्मने, रेप न आव्यो अंत ॥ म० ॥ ११ ॥ भ० ॥ सरण कर्युं जिन धर्मनुं, सम्यक् जो अंगीकार ॥ म० ॥ सुर नरनां सुख भोगव्यां, पाम्यो तो भवपार ॥ म० ॥ १२ ॥ भ० ॥ शाश्वत शिव सुख पामशुं, श्री जिन धर्म पसाय ॥ म० ॥ तुमने पण तेह ज हसे, सरण सदा सुखदाय ॥ म० ॥ १३ ॥ भ० ॥ सहु संसारी जीवने, सरण नहीं को अन्य ॥ म० ॥ जिन वयणे जे रत्तडा, धरणितलें ते धन्य ॥ म० ॥ १४ ॥ भ० ॥ पंचाणुंमी चाहीने, उदयरत्न कहे एह ॥ म० ॥ ढाल कही ढलते स्वरें, पण छे अनुभव गेह ॥ म० ॥ १५ ॥ भ० ॥

॥ दोहा ॥

॥ पूर्ण संवेगे पूरित्त, नेत्रें धरंतो नीर ॥ चंद्रमौलि नृप तव कहे, मुनिने मन धरी धीर ॥ १ ॥ प्रभु तुमे प्रसन्न थई, केवल म्हारे काम ॥ क

था विस्तारी ए कही, उपकार भही अभिराम ॥ २ ॥ सभूजी संसारथी, पहोता पेले पार ॥ तो पण परने कारणें, उद्यम करो अपार ॥ ३ ॥

॥ ढाल ब्रत्रीसमी ॥

॥ श्र मलती चाकरी रे ॥ ए देशी ॥ कहो भगवन करुणा करी, केता नीसरे एके काल ॥ प्रभु प्रकासीएं रे ॥ अविवहार निगोदथी, प्राणी पूछे इम भूपाल ॥ प्र० ॥ १ ॥ विवहार रासें थकी रे, जेता मुगतें जाए जीव ॥प्र०॥ कहे इम केवली रे ॥ सूक्ष्मनिगोदथी नीसरी रे, आवे तेटला सदीव ॥ क० ॥ २ ॥ यतः ॥ सिज्झंति जित्तिया खलु, इह्य ववहार रासिजीवाउ ॥ इंति अणाइ वणस्सइ, मज्झा उ तत्तिया चेव ॥१॥ करवा नाल तणी परें रे, जाईने आवे इम तेह ॥ क० ॥ मुगति न भराए कदा रे, नावे निगोद तणो पण छेह ॥ क० ॥ ३ ॥ यतः ॥ जइआवि होइ पुच्छा, जिणाण मग्गंमि उत्तरं तइया ॥ ईक्कस्स निगोअस्स, अणंत भागोअ सिद्धिगउ ॥ १ ॥ ॥ पूर्वढाल ॥ तव राजा कहे कहो प्रभु रे, निगोदथी निसरिया जीव जेह ॥क०॥ एटलेज चाले ते सवे रे, पामे मुगति सदा सुख गेह ॥ क० ॥ ४ ॥ बहु जीव तो माहरी परें रे, सीझे ते जाणो तहकीक ॥ क० ॥ थोडे कालें पण केटला रे, केताएक तेहथी नजीक ॥ क० ॥ ५ ॥ मरुदेवा मातानी परें रे, केता एक सीझे ततखेव ॥ क० ॥ अभव्य ते सीझे नहि कदा रे, न चाले मोक्ष सामां जिम नेव ॥ क० ॥ ६ ॥ चंद्रमौलिनृप चाहिने रे, बोले त्यारे बे कर जोडी ॥ प्रभु मया करी रे ॥ तारो भवसागर थकी रे, मुझने मोह तणो मद मोडि ॥ प्र० ॥ ७ ॥ संयम लेवो में सही गे, तुम पासें तजीने राज ॥ भणे इम भूपति रे ॥ मुनी कहे विलंब न कीजियें रे, साधतां पर भवनां काज ॥ भ० ॥ ८ ॥ प्रेमें निज पाटें ठवी रे, नंदन चंद्रवदन इणि नाम ॥ नमो ते साधुने रे ॥ सुविधशुं सयंम वरे रे, सायें लई केतिक वाम ॥ न० ॥ ए ॥ पुरजन ले संग केटला रे, केटलाएक ले मंत्री सामंत ॥ न० ॥ पंच महाव्रत उच्चरे रे, चंद्रमौलि राजा गुणवंत ॥ न० ॥ १० ॥ थोडे दिन सीखी घणी रे, विद्या चौद पूरव विस्तार ॥ न० ॥ योग्य लही वली केवली रे, आपे तव तेहने गच्छ भार ॥ न० ॥ ११ ॥ चालीस लाख पूर्व लगें रे, पाल्युं संयम कांईक न्यून ॥ न० ॥ कोडि पूर्वनो आउखो रे, सघलुं जाणो ते देसोन ॥ न० ॥ १२ ॥ उदयरतन कहे एट

ले रे, पूरी छत्तुंमी थई ढाल ॥ न० ॥ साचो श्री जिन धर्म छे रे, बीजुं जाणो आल पंपाल ॥ न० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अंते सैलेसकरण जे, करमांही करवाल ॥ मोह रिपु दलशेष लें, फोडे देई फाल ॥१॥ वेदनीने वली आउखो, नाम गोत निरधार ॥ भवो पग्राही कर्म भट, चूरीने ए चार ॥ २ ॥ चढी सोपाने चौदमे, अयोगि के वलि गुणगण ॥ अ इ उ ऋ लृ कहितां लगें, तिहां कीधुं रहिगण ॥ ३ ॥ संयम धर्मने भोगवि, उन्नति करी अतीव ॥ त्रिगुण रहित थईने तदा, बलि ऋषि केवलि जीव ॥४॥ पाम्यो परमानंद पद,शाश्वत मुक्ति सुठोर ॥ अजर अमर अविचल थयो, जिहां नहि यमनुं जोर ॥ ५ ॥ स्नेह न को माता समो, घृत सम नहि रसघूट ॥ सुख न को शिवपदसमो, शुं कीजे वैकुंठ ॥ ६ ॥ साकर समो न स्वाद को, मुक्ति समी न मोज ॥ संयम समो न सखाइउ, चित्तमां धरजो चोज ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ १७४५ ॥

॥ ढाल सत्तावीशमी ॥

॥ राग धन्याश्री ॥ हवे कुमर शुं मन चिंतवे ॥ ए देशी ॥ धन्य धन्य श्री जिनधर्मने रे, पापीने रे जे करे पुनीत ॥ वढतां मोह दल वेरिशुं रे,जगमांहि रे जिणे लहियें जीत ॥ ध० ॥ १ ॥ जगमांहि जे जे जीवडा, तजी कर्मने रे ते भवने तीर ॥ पहोता पहोंचे पहोंचशे, ते तो जाणो रे जिन धर्म सुधीर ॥ ध० ॥ २ ॥ कनक जिम लोहने करे, सिद्ध रसने रे अडतां तत खेव ॥ तिम दुःखीने सुखिया करे, फरसतां रे समकित स्वयमेव ॥ ध० ॥ ३ ॥ जिम बलि कुमर बहु भवतणा, भवमांहे रे भमतां बहु फेर ॥ समकित सरणुं आदरी, मोहने शिर रे वाही समशेर ॥ ध० ॥ ४ ॥ तिम भवि जन भावें तमे, जिन धर्मने रे लइ अवसर जोय ॥ एकमनें आराधजो, जिम जामण रे वली मरण न होय ॥ ध० ॥ ५ ॥ मलधारी गछ मंडणो, श्री हेमचंद्र रे सूरिना इंद ॥ ए चरित्रनी रचना तिणें, रची छे रे रमणिक सुख कंद ॥ ध० ॥ ६ ॥ ते चरित्रनी लेई चातुरी, भल भला रे लेई तेहना भाव ॥ रास रच्यो में अभिनवो, ए तो भवजल रे जाणे तारण नाव ॥ ध० ॥ ७ ॥ अधिकुं उछुं कह्युं हुवे, मूल चरित्रथी रे जे एहमां तेह ॥ मिछा दुक्कड मुज हजो, सहु संघनी रे साखें करी तेह ॥ ध० ॥ ८ ॥

अशुद्ध जे कांई इहां, में कह्यो जे होय जवाप ॥ सूधा जन ते शोधजो, मुज गुनहो रे वली करजो माफ ॥ ध० ॥ ए ॥ तपगछ मंमण तिलकसो, श्रीराजविजय सूरिराज ॥ तरणि जिस्यो तस पाटवी, रत्नविजय रे सूरी शिर ताज ॥ ध० ॥१०॥ गुरुराज राजसमाजनो,दीवो सेव्यो सदीव ॥ हीररतन सूरी हेलज्युं, पूरे आश्या रे प्रतापे अतीव ॥ ध० ॥ ११ ॥ जयरत्न सूरी ज यकरु,संप्रती तेहने पाटें ॥ भावरतन सूरी भेटतां,दुःख मेटे रे नमीयें ते माटें ॥ ध० ॥ १२ ॥ श्री हीररत्न सूरिंदनो, सोहे वडेरो सीस ॥ लब्धिरत्न पंमित तेहनो, नमुं वाचक रे जेनी जगमां जगीश ॥ध०॥१३॥ श्री मेघरत्न मुणिंदनो, अमररत्न अनुचर तास ॥ शिवरत्न गुरु सुपसाउलें, में गायो रे वलिकृपि गुण खास ॥ ध० ॥ १४ ॥ सतरसें उगण्योत्तर समे, वदि तेरस मंगलवार ॥ पोष मास पूर्वाषाढ भे, हर्षण योगे रे थयो हर्ष अपार ॥ ध० ॥ १५ ॥ गुणनिधि उनाउवा गाममां, भीडभंजन श्रीजिन पास ॥ तास प्र सादें पूरो थयो,रसलहरी रे नामें ए रास ॥ ध० ॥ १६ ॥ जे सांभले सूधे मनें,वली जे भणे मनने भाव ॥ ते मुक्ति पामे मानवी,समता रसें रे सहु कर्म खपाव ॥ ध० ॥ १७ ॥ गगने ग्रह मंदर गिरी, धरा सिंधु जिहां लगें धर्म ॥ अविचल रहो ए त्यां लगें, एह संबंध रे दायक शिव शर्म ॥ ध० ॥ १८ ॥ आज सखी म्हारे आंगणे, सुरतरु फलिउ सार ॥ कामगवी प्र गटी नवी, आज अभिनव रे थयो जय जय कार ॥ध०॥१ए॥ सुख श्रेणी मंगल मालिका, दीपालिका दिन जेम ॥ भुवन भानु केवलीतणा, गुण गातां रे लीला लहिएं तेम ॥ ध०॥२०॥ इम उन्नुमी ढालमां, उदयरत्न धे आशीष ॥ सुख संपद वाधो सदा, सहु संघनी रे पहोचो सुजगीश ॥ ध० ॥२१॥ इति श्रीउदयरत्नजीमहाराजकृत भुवनभानुकेवलीनो रास संपूर्ण ॥ ग्रंथा ग्रंथ श्लोक संख्या २४१४ ॥

॥ इति श्रीउदयरत्नजीमहाराजकृत
भुवनभानुकेवलीनो रास संपूर्ण ॥

अथ

श्रीमद्यशोविजयजी उपाध्यायकृत समकितना षट्स्थान स्वरूपनी चोपाई अर्थसहित प्रारंन

॥ प्रथम ग्रंथकर्त्तानुं मंगलाचरण ॥

इंद्रश्रेणिनतं नत्वा, वीरतत्त्वार्थदेशिनम् ॥
सम्यक्त्वस्थानषट्कस्य, नाषेयं टिप्यते मया ॥१॥

॥ मूलगाथा ॥

॥ वीतराग प्रणमी करी, समरी सरसति मात ॥ कहिशुं नविहित कारणे, समकितना अवदात ॥ १ ॥ अर्थः—श्रीवीतराग देवने प्रणमी करी प्रजुनी वाणी जे श्रीसरस्वती माता तेने समरीने नव्यजीवना हितने कारणे समकितना अवदात एटले चरित्र कहीशुं ॥ १ ॥

॥ दर्शन मोह विनाशथी, जे निरमल गुणगण ॥ ते समकित तस जाणियें, संखेपे खट गण ॥ २ ॥ अर्थः—दर्शनमोहनीयकर्मनो विनाश जे क्षय, उपशम अनें क्षायोपशमरूप तेथी जे मलरहित एवुं गुणनुं स्थानक ऊपजे ते निश्चयथी समकित जाणियें. उक्तंच ॥ सेयसमत्तपसब्बे, सम्मत्त मोहणिक्कममाणु ॥ वेयणोवसमखय, समुब्बेसु हेआय परिणामे ॥ ॥ इति ॥ ते समकेतना संक्षेपेंकरी जे कहेशे ते षट्स्थानक जाणवां, जे स्वसमय श्रद्धान प्रकार ते स्थानक कहियें ॥ २ ॥

हवे ते षट्स्थानकनां नामनी गाथा कहे छे.

॥ अछिजिउ तह णिच्चो, कत्ता जुत्ता य पुस्सपावाणं ॥ अछि धुव निव्वाणं, तस्सोवाउ अ छ ठाणा ॥ ३ ॥ अर्थः—एक जीव छे, बीजो ते जीव नित्य छे, त्रीजो तथा चोथो ते जीव स्वयं पुण्यनो कर्त्ता, नोक्ता छे,अने पापनो कर्त्ता,नोक्ता पण छे,पांचमो ते जीवने निर्वाण एटले मोक्ष पण (ध्रुव के०) निश्चें (अछि के०) छे, छठो ते मोक्ष थवानो उपाय पण निश्चय छे तेमां संदेह नथी. ए छ स्थानक समकेतनां जाणवां ॥ ३ ॥

॥ समकित थानकथी विपरीत, मिथ्यावादी अति अविनीत ॥ तेहना नाव सवे जूजूवा ॥ जिहां जोइयें तिहां ऊंमा कूवा ॥ ४ ॥ अर्थः—ए स

मकेतनां षट्स्थानकथी जे विपरीत बोल ते मिथ्यात्वनां ठ स्थानक जाणवां ॥ उक्तं च ॥ संमतौ ॥ णत्थिणाणेणिच्चो, ण कुणइ कयंणवेएईणत्थि ॥ णिव्वाणंणत्थिय मोस्को वाउ मिच्छत्तहाणाइं ॥ १ ॥ ए थानकें वर्त्ततो मिथ्यावादी होय. ते गाढ मिथ्यात्व परिणामी घणो अविनीत होय, ते मिथ्यात्वीनां वचन ते मांहोमांहे आपआप हवें जोइयें तो कोइनां मले नही. ते सर्व वंध्या कूवा सरखा छे ॥ ४ ॥

॥ पहेलो नास्तिक नाखें शून्य, जीव शरीरथकी नहि भिन्न ॥ मद्य अंगथी मदिरा जेम, पंचभूतथी चेतन तेम ॥ ५ ॥ अर्थः—हवे प्रथम स्थानवादी पहेलो नास्तिक चार्वाक ते (शून्य के०) तत्वज्ञानें करी शून्य कोण मुक्तिनो कहेनार (भाखे के०) बोले छे. ते नास्तिक कहे छे के जीव जे छे ते शरीर थकी भिन्न एटले जूदो नथी, अने चेतनपणुं जे होय छे ते पंचभूतना संयोगथीज थाय छे. जेम मद्यनां अंग जे गुड, द्राक्ष, इक्षुरस, धावडीपुष्प प्रमुख छे तेथी मदिरा नीपजे छे, तेम जाणवुं ॥ ५ ॥

॥ माखणथी घृत तिलथी तेल, अगनि अरणिथी तरुथी वेल ॥ जिम पडियारथकी तरवार, अलगो तो दाखो इणिवार ॥ ६ ॥ अर्थः—जो जीव शरीरथकी भिन्न होय तो माखणथी जेम घृत, तिलथी जेम तेल, अरणीथी जेम अग्नि, वृक्षथी जेम वेल, तथा पडियारथकी जेम तरवार अलगी करी देखाडीयें तेम जीवने शरीरथकी भिन्न करीने आ वेलायें देखाडवो जोइयें. ते शरीरथकी भिन्न करीने कोइ देखाडतो नथी. तेमाटे जीव जे छे ते शरीरथकी भिन्न नथी ॥ ६ ॥

॥ जिम जलथी पंपोटा थाय, ऊफणतां तेहमांहे समाय ॥ अन्नादिक जिम क्षिति परिणाम, तिम चेतन तनुगुणविश्राम ॥ ७ ॥ अर्थः—जेम पाणीथी पंपोटा थाय छे, अने ते पंपोटा ऊफणीने वली पाणीमांहेज समाय छे. तथा अन्न प्रमुख ते जेम (क्षिति के०) पृथ्वी तेहनो परिणाम छे एटले पृथ्वीमांहेथी उपजीने पृथ्वीमांहेज लीन थाय छे, तेम चेतना जे छे ते (तनु के०) जे शरीर तेना गुणनो विश्राम छे, एटले शरीरथकी उपजीने वली शरीरमांहेज लय पामे छे. ए उत्पत्तिपक्ष अने बीजो अभिव्यक्तिपक्ष छे. ते मतें कायाकार परिणामें चेतनानी अभिव्यक्ति होय छे ७

॥ नहिं परलोक न पुण्य न पाप. पाम्युं ते सुख विलसो आप ॥ वृकपदनी

परें नय दाखवे, कपटी तप जपनी मति ठवे ॥ ८ ॥ अर्थः—ए चार्वा कने मतें परलोक नथी, पुण्य नथी, पाप नथी, ते एम कहे ठे, के जे पाम्युं सुख ठे ते पोतें विलसो. जे माटें वर्त्तमान सुखने मूकीने अनागत सुखनी वांठा करवी ते खोटी ठे, सुखनोगमां जे वृकपदनी पेरें नरकादिकनो नय देखाडे ठे, तेतो माता जेम पोताना बालकने हाऊ देखाडे ठे; तेम लोकने नोलवीने ते कपटी पोतें नोगथी चूका, अने बीजाने चूकावे ठे, अने तप जप कहेतां राख्यानी मति एटले बुद्धि ठवे एटले थापे ठे ॥८॥

॥ एहवा पापी नाखे आल, बांधे करमतणां बहु जाल ॥ आतमसत्ता तेहनें हवे, जुगति करी सद्गुरु दाखवे ॥ ए ॥ अर्थः—चार्वाक एहवी जुठी युक्ति बोले ठे तेथी ते कर्मनां घणां जाल बांधे ठे, माटे सद्गुरु तेने युक्तियें करीने आत्मसत्ता ठे एवुं देखाडे ठे ॥ ए ॥

॥ ज्ञानादिक गुण अनुनवसिद्ध,तेहनो आश्रय जीव प्रसिद्ध ॥ पंचनूत गुण तेहने कहो, इंद्रिय ग्राह्य न किम सद्दहो ॥ १० ॥ अर्थः—ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य प्रमुख गुण जे अनुनवसिद्ध अनुमानप्रत्यक्षें प्रसिद्ध ठे, ते गुणनो जे आधार ते जीवद्रव्य ठे, ते अनुमानप्रमाणें आवे. ते अनुमानप्रमाण जे न माने ते परना मननो संदेह केम जाणे? अने तेवारें ते परने उपदेश पण केम दइ शके? अने जो तेहने ज्ञानादिक गुणने पंचनूतनो संयोगज गुण कहो, तो इंद्रिय ग्राह्य केम न मानो? नूतगुण जे काठिन्य शीतत्वादिक ते इंद्रियग्राह्य ठे चेतना इंद्रियग्राह्य नथी. तेमाटे ते आत्मानो गुण जाणवो ॥ १० ॥

॥ तनु ठेदे नवि ते ठेदाय, तनुवृद्धें नवि वधता थाय ॥ उपादान ज्ञानादिकतणो, तेहथी जीव अलाधो घणो ॥ ११ ॥ अर्थः—शरीर ठेदे ठे, अने चेतनना गुण ठेदाता नथी. तथा ते शरीरनी वृद्धियें वधता पण थाता नथी. तेमाटें ज्ञानादिक गुणनुं उपादान ते आत्मा ठे, तेने शरीरथकी अलाधो मानो. जेमाटें उपादाननी हानि वृद्धियेंज उपादेयनी हानि वृद्धि थाय. जेम माटीनी हानी वृद्धियें घटनी हानि वृद्धि थाय ठे. तेम इहां जाणवुं. यद्यपि प्रदेशथी हानिवृद्धि आत्माने नथी तथा पर्यायनी हानिवृद्धि ज्ञानप्रत्यें एकेंद्रियाद्यात्मपणें उपादानता सामान्यथी चैतन्यगुणप्रत्यें आत्मपणें उपादानता मानवी जोइयें, नही तो लोकव्यवहार न मले ॥ ११ ॥

॥ प्रज्ञादिक थिति सरिखी नहीं, युगलजाति नरने पण सही ॥ तो किम ते कायापरिणाम, जुउ तेहमां आतमराम ॥ १२ ॥ अर्थः–प्रज्ञादिक स्थिति एक वीर्योत्पन्न युगल मनुष्यनी पण नथी. कोइक अंतर तेहमां पण छे. तो ते चेतननी कायानो परिणाम केम कहेवाय? एक माता पितायें नीपाया छे तेमां आत्माराम जूदो छे. तेणेंकरीज प्रज्ञादिकनो नेद संनवे छे॥ १२॥

॥ रूपीपण नवि दीसे वात, लक्षणथी लहियें अवदात ॥ तो किम दीसे जीव अरूप, तेतो केवल ज्ञान सरूप ॥ १३ ॥ अर्थः–हवे जे पूर्वें कह्युं छे के जीव जो शरीरथी निन्न होय तो आत्मा अलाधो करी देखाडो? तेनो उत्तर कहे छे. (वात के०) वायरो जे छे ते पुजल छे माटें रूपी छे; तोपण दीसतो नथी. पण तेना अवदात एटले प्रकटलक्षण कंप, धृति, शब्दादिक लिंगें करी लहियें छैयें. तिहां लतादिकनो कंप, अर्कतूलादिकने आकाशें धृति, फंफादिकनो शब्द जेहने अनिघातें तथा संयोगें होय ते वायुद्रव्य छे, एम अनुमान प्रमाणें जाणियें छैयें. तो अरूपी जीव तेतो केवलज्ञानस्वरूप छे, ज्ञान मने प्रत्यक्ष छे, तें लिंगें जाणवुं. तेनो आश्रय जे आत्मा तेनुं अनुमान करियें. यद्यपि ज्ञानगुण प्रत्यक्ष छे माटे आत्मा पण तदंशें प्रत्यक्ष छे "गुणपच्चरकतणाउ, गुणिवी जीवो घडोव्व पच्चरको" इत्यादि विशेषावश्यकवचनात् ॥ वायुपनीति सुरनिद्रव्यपणेंज गंधाशें ए प्रत्यक्षज छे. तथापि वादिविप्रतिपत्ति अनुमान करियें. उक्तंच ॥ शतशः प्रत्यक्षपरिकलितमप्यर्थमनुमिमीयन्त्यनुमानरसिकाः॥ अथवा ज्ञानाश्रय प्रत्यक्षज छे तेहने. तत्त्वनिन्नतानुं अनुमान करियें छैयें ॥ १३ ॥

॥ बालकने स्तनपान प्रवृत्ति. पूरवनव वासना निमित्ति ॥ ए जाणो परलोक प्रमाण, कुणजाणे अणदीठुं ठाण ॥ १४ ॥ अर्थः–हवे बालकने दृष्टांतें परलोकनुं प्रमाण कहे छे, बालकने जे स्तनपानप्रवृत्ति छे, ते इष्टसाधनतास्मरणहेतुक छे. ते स्मरण अनुनवथी थाय ते स्मरण आ नवें नथी, तो परनवनुंज स्मरण आवे, तज्जनित वासनायें आ नवें स्मरण थाय. ए परलोकनुं प्रमाण जाणो. नहीं कां अणदीठुं स्थानक कोना जाणवामां आवे? माटे जो पूर्वें दीठुं छे, तोज ते स्मरणमां आवे छे. एमज मरण त्रासें पण पूर्वनवना मरणानुनवने अनुनवें नहींकां अणदीगपी

त्रास केम होय ? जातमात्रें तो मरण दीठुं नथी, अने त्रास तो पामे छे. तेथी जाणियें जे परलोक छे ॥ १४ ॥

॥ एक सुखिया एक डुखिया होय, पुण्य पाप विलसित ते जोय ॥ करम चेतनानो ए भाव, उपलादिकपरें ए न स्वभाव ॥ १५ ॥ अर्थः—सरखेज बाह्य कारणें एक सुखिया अनें एक डुखिया जे होय छे ते पुण्य अने पापनो विलास जोजो. उक्तंच ॥ जोतु च साहणाणं, फले विसेसो ण सोविणा हेक ॥ जक्कत्तणउ गोयम, घडोव्वहेक असे कम्मं ॥ १ ॥ इहां कोइ एम कहेशे के एक पाषाण तो पूजाय छे, अने एक पाषाण रझले छे, तेम ए पण स्वभावें हशे तेनें उत्तर कहेवुं के, पाषाणादिकने पूजा अने निंदाथी सुख डुःख वेदन नथी, अने जीवने ते सुख डुःख वेदन छे, तो ए भोग चेतनानो करेलो भाव छे. दृष्टान्वयव्यतिरेक स्वभावें निराकरियें तो दंमादिकने घटादिक प्रत्यें पण कारणता केम कहिये ? ॥ १५ ॥

॥ निःफल नहीं महाजन यत्न, कोडीकाज कुण वेचे रत्न ॥ कष्टसहे ते धरमारथी, मानो मुनिजन परमारथी ॥ १६ ॥ अर्थः—महाजन जे पुण्यार्थें तप जप क्रियारूप प्रयत्न करे छे ते निःफल नथी. निःफलकार्यें बुद्धिवंत प्रवर्त्ते नहीं जो एम कहेशो के लोकरंजननेअर्थें ते प्रवर्त्ते छे, तो कोडीने काजें रत्न कोण वेंचे ? इहां लोकरंजन ते कोडी छे तो तेने अर्थें महाप्रयाससाध्यक्रिया तद्रूप रत्न वेंचवुं एवुं फोकट डुःख भोगववुं तो, कोइ वांछे नही. अने सर्वजन भूले पण नहीं तेमाटे महाजन प्रवृत्ति जे छे ते पुण्य पाप नथी. आत्मा अर्थें छे. ए सर्व मानवुं. उक्तंच ॥ विफला विश्वप्रवृत्तिर्नो, नडुःखैकफलापि च ॥ दृष्टलाभफला नापि, विप्रलंभोपि नेदृशः ॥ १ ॥ इति ॥ १६ ॥

॥ आतमसत्ता इम सद्दहो, नास्तिकवादें मन मत दहो ॥ नित्य आतमा हवे वर्णवुं, खंमी बौद्धतणुं मत नवुं ॥ १७ ॥ इति नास्तिकवादी गतः ॥ अर्थः—एम ए प्रकारें आत्मानी सत्ता सद्दहो; पण नास्तिकवादें पोताना मनने दहन करशो नही. एटले नास्तिकवादि चार्वाक मत निरास थयो.

हवे रुजुसूत्रनयमांहेथी बौद्धमत निकल्युं, माटे नवुं एवुं जे बौद्धनुं मत तेनुं खंमन करीने नित्य आत्मा एवुं समकेतनुं बीजुं स्थानक वर्णवुं छुं. ॥ १७ ॥

॥ तेह कहे क्षण संततिरूप, ज्ञान आतमा अतिही अनूप ॥ नित्य होय तो बाधे नेह, बंधन कर्मतणो नहीं छेह ॥ १८ ॥ अर्थः—ते बौद्ध एम

कहे ठे के, जे अतिही अनुपम मनोहर क्षण संततिरूप जे ज्ञान तेहज आ त्मा ठे. तथाच तन्मतम् ॥ प्रवृत्तिविज्ञानोपादानमालयविज्ञानमेवात्मा ॥ प्रवृत्तिविज्ञान जे नीलाद्याकार ते उपादेय अने तेनो अहमाकार उपादान ते आलय विज्ञानरूप नेहें उपादान उपादेय नाव ठे, पण परमार्थें ज्ञान क्षणे ठे. परं एक नित्य आत्मा कोइ ठे नहीं. माटे जे एक नित्य आ त्मा माने ठे, तेने मोक्ष वेगलो ठे. जे कारणमाटे जेवारें नित्य आत्मा माने तेवारें आत्मा उपर स्नेह होय. ते स्नेहथकी सुखनो राग अने डुः खनो द्वेष थाय, तेथी तेना साधननो राग द्वेष थाय, एम करतां राग द्वेष वासनाद्वारा निरंतर वधे तेवारें कर्मबंधनो अंत आवे नही. तेमाटे आ त्मा क्षणिकज मानवो ॥ १७ ॥

॥ सर्वनाव क्षणनाशी सर्ग, आदिअंत जो एक निसर्ग ॥ क्षणिकवास ना दिये वैराग, सुगतज्ञान नापे वडनाग ॥ १९ ॥ अर्थः—तथा सर्व जे (नाव के०) पदार्थ ते क्षणनाशी ठे. तो आत्मानुं शुं कहेवुं ? तिहां ए प्रमाण आपे ठे के, जे अनादि अने अंत जो एक (निसर्ग के०) स्वनाव मानियें तो क्षणनाशिपणुंज आवे, स्थिति नाश स्वनाव मानियें तो आदि क्षणें पण तेहज स्वनाव मानवो तेवारें द्वितीय क्षणें नाश थयो अंत ना श स्वनाव न मानीयें तो क्यारें नाश न थाय. तावत्काल स्थायी स्वनाव मानीयें तो फरी तेटला कालपर्यंत रेहवो जोइयें एम तावत्काल स्थायीना स्वनावनी अनुवृत्तें कल्पांतस्थायिता होय क्षणिकआत्मज्ञानीयें वासना ते वैराग्य आपे. एम जेवारे आत्माज क्षणिक जाण्यो. तेवारें कोनी उपर राग होय ? सर्व क्षणिक अनित्य वस्तु जाणियें. तेवारें गमे अल्पें नाग्यें फूट्युं क्षणेंक नावे ॥ अनित्यताकृतमतिर्म्लानमाल्योनशोचति नित्यताकृत बु द्धिश्चनसामपि शोचतीतिवचनात् ॥ एम महानाग्यवंत (सुगत के०) बौद्ध ते ज्ञान नाखे ठे ॥ १९ ॥

॥ रागादिक वासना अपार, वासित चित्त कह्यो संसार ॥ चित्तधारा रा गादिक हीन, मोक्ष कहे ज्ञानी परवीन ॥ २० ॥ अर्थः—चित्तमेवहिसं सारो, रागादिक्लेशवासितः ॥ तदेव तैर्विनिर्मुक्तं, नवांतरेति कथ्यते ॥ १ ॥ धर्मकीर्त्तिनिरूपपल्लवाचित्तसंततिः परमार्थ इति मोक्षलक्षणम् ॥ २० ॥

॥ एह बौद्धनुं मत विपरीत,बंध मोक्ष न घटे क्षण चित्त ॥ मानो अनु

गत जो वासना, इव्यनित्य तेहज शुभमना ॥ २१ ॥ अर्थः– एहवुं बौद्धनुं मत विपरीत एटले मिथ्याज्ञान रूप छे. जेमाटे (क्षणचित्त के०) क्षणज्ञानरूप आत्मा मानीयें तो बंधमोक्ष न घटे. जे बंध कह्यो ते मोक्षक्षण जे बंधक्षण नहीं. अने जो एम कहेशो के वासना एक छे, तो मन शुभ करी विचारो पूर्वापर ज्ञानक्षण अनुगत जे एक वासना कहो छो, तेहज स्वभाव नियत आत्मद्रव्य छे, अने जो कहेशो के वासना बुद्धिमात्र कल्पित छे, पण परमार्थें नथी, तो परमार्थ पर्यायनो एक आधार ते कोण? ज्ञानक्षणने नानाकार योगें तत्त्वनो विरोध नथी, तो इव्यने नानाक्षणयोगित्वनो श्यो विरोध ? पर्याय छता अनुभवियें छैयें तेम इव्यपण छतुं अनुभवियें छैयें. निर्विकल्पबुद्धि तो विकल्पथी प्रमाण छे ॥ यत्रैवयनेयेदेशं तत्रैवास्यांप्रमाणतेतिवचनात् ॥ अने निर्विकल्पबुद्धयुत्तरविकल्पबुद्धि तो इव्य पर्याय बे भासे छे, माटे बे ज्ञानादि पर्याय सत्य छे, तो तदाधार आत्मद्रव्य पहेलां सत्य करी मानवुं ॥ २१ ॥

॥ सरखा क्षणनो जे आरंभ, तेह वासना महोटो दंभ ॥ बंधमोक्षक्षण सरखा नहीं, शकति एक नवि जाये कही ॥ २२ ॥ अर्थः– सदृशक्षणनो जे आरंभ तेहज वासना छे, एम कहेवुं ए महोटुं कपट छे, जेमाटें बंध मोक्षना क्षण सरखा नथी. तो जे बंधाय ते मूकाय एम कह्युं जाय नही. तेवारें मोक्षने अर्थें कोण प्रवर्त्ते ? वली कहेशो के, बंधजने तो शक्तिवंत क्षण जूदा छे, अने मोक्षजने नशक्तिवंत क्षण जूदा छे. बंध छे ते एकत्वाधिवासित मोक्षजनक क्षणसंपादनार्थे अविसाइज प्रवर्त्ते छे. मोक्षप्रवर्त्तक अविद्याविवर्त्त संसारमूलाविद्यानाशक छे ॥ हरति कंटक एव हि कंटक मिति न्यायात् ॥ नो देव दत्त यज्ञदत्ताधमोक्षक्षणजननार्थें केम न प्रवर्त्ते ? बंधमोक्षक्षणजनक एक शक्तिनो ते न कही जाय, एमतो आत्मद्रव्य सिद्ध थाय. कुर्वद्रूपप्रपंचजाति मानतां सांकर्य थाय. कारणने कार्यव्याप्यता छे. तेमाटे एकदा उभयक्षण मन्या जोइयें. एकेक क्षणनें भिन्नशक्तिमांहे घाततां निर्द्धारण थाय. तेमाटें ह्वैशक्तें कल्पना जूठी जाणवी ॥ २२ ॥

स्वंभन क्उपादान अनुपादानता, जो नवि भिन्नकरे क्षण छता ॥ पूर्व अपर प ॥ तेह तो नवि इव्य लहे त्यजी खेद ॥ २३ ॥ अर्थः– वीजुं एक तो वाधे नेह, अनेक कारणना क्षण छे. तिहां उपादान निमित्तपण जो क्षण

नो भेद नथी तो पूर्व अपर पर्यायने भेदें द्रव्य भेद न पामे. माटे मताग्र हनो खेद गंमीने द्रव्य एक आदरो ॥ २३ ॥

॥ जो क्षणनाशतणो तुझ धंध, तो हिंसाथी कुणने बंध ॥ विसदृश क्षणनुं जेह निमित्त, हिंसक तो तुझ मन अपवित्त ॥ २४ ॥ अर्थः—वली क्षण नाशी वस्तु माने छे तिहां दोष कहे छे. जो क्षणनाशनो धंध तुजने लागो छे, तो हिंसाथी बंध कोने थाय, जेमाटे जीव तो क्षणेंक्षणें नाश पामे छे, तो हिंसापण कोनी केहथी थाय छे ? तेवारें हिंसाथी जे पापबंध कह्यो छो ते पण कह्यो केम मले ? हिंसाविना अहिंसा पण क्यांथी होय ? ते अहिंसाने विनाशें तहारे व्रतपण क्यांथी होय ? जेमाटे व्रतपण अहिंसानी वाडिरूप कह्यां छे. एम सर्व वातोनो लोप थाय. जो एम कहेशो के, मृगने माखो तेवारें मृगनो सदृशक्षणारंभ टल्यो, विसदृशक्षणारंभ थयो, तेहनुं निमित्त कारण आहेडीप्रमुख ते हिंसक कहियें. एवीरीतें बोलनारा ते बौद्धने क हेवुं के, एमतो तहारुं मनपण हिंसायें अपवित्र थयुं. जेमाटे व्याधिक्षणनी परें ताहारो पण अनंतरक्षण मृगविसदृश क्षणनो हेतु थयो ॥ तडुदितः स हि यो यदनंतरः इति न्यायात् ॥ क्षणना अन्वयव्यतिरेक तो सरखा छे. तज्जाति अन्वयव्यतिरेकनुं ग्राहक प्रमाण नथी ॥ २४ ॥

॥ समलचित्त क्षण हिंसा यदा, काययोगकारय नहिं तदा ॥ अनुमंता ने हंता एक, तुझविण कुण भाखे सविवेक ॥ २५ ॥ अर्थः—जो कहेशो के, अमे असचित्तकृत कर्मविकल्प वानी तूंटे तेमाटे मृगमारणाध्यवसायवंत व्याध चित्तसमल छे, ते क्षणने हिंसा कहियें छैयें. तो एक काययोगें ह णे अने एक तेने प्रशंसे, ए बेहुमां फेर नथीज. तो मोक्ष कहेतां योगभेदें प्रायश्चित्तभेद कह्यो छे ते न घटे. जेमाटे निमित्तभेद विना नमस्कार भेद होय तो सर्वावस्था लोप थाय ॥ २५ ॥

॥ खलपिंमीने माणस जाणि, पंचे तेहने गुणनी हाणि ॥ नर ने खल जाणे नवि दोष, कहियो बुधने तेहथी पोष ॥ २६ ॥ अर्थः—मनःपरिणाम पणें आज्ञायोगेंज प्रमाण छे. तमें एम कह्यो छो जो खलपिंमीने माणस जाणीने पंचे तेने घणी हाणी होय, जेमाटे नरने खलपिंमी जाणवाथी तेने मनुष्य हणवानो भाव थयो. जो कहेशो के नरने खलपिंमी जाणे पचे कोइ दोष नथी. कारण के तिहां मनुष्यने हणवानो अध्यवसाय नथी पिं

मपरिणाम शुद्ध छे तेणेंकरी बुद्धने पारणुं करावीयें, पोषीयें, तो सूजे ॥ उ क्तंच ॥ पुरिसं च विद्धूणकुमारगं वा, सूलंमि केई पमइ जाय तेए ॥ पिन्नाग पिंमस इमारुहित्ता, बुद्धाण ते कप्पइ मारणाए ॥ २६ ॥

॥ संघभगति अजमांसें करो, दोष नहीं तिहां इम उच्चरो ॥ ए महोटुं छे तुमं अज्ञान, जोजो बीजुं अंग प्रधान ॥ २७ ॥ अर्थः—तथा बोकडाने मांसें संघभक्ति करो छो, अने तेमां कांइ दोष नथी एम मुखें उच्चारो छो, ए महोटुं तमारुं अज्ञान छे. ते विचारी जोजो ॥ उक्तंच श्रीसूयगडांगसूत्रे, यतः ॥ चूल्हउरप्पइहमारिआणं, उदिठ्ठभत्तं च पकप्पइत्ता ॥ तलोणतल्लेण उवरकमित्ता, सविप्पजाइ पहंतिं मंसंतं भुंजमाणा मिलिअं णभूयणं, उवलिप्पा मुवयंरएण ॥ इच्चेवमाहंसुअणजधम्मा, अणायरिआ याव रसे सुगिद्धा ॥ इत्यादि ॥ एम तमारे मतेंतो माताने स्त्री करी सेवतां पण दोष न लागो जोइयें. मंमलतंत्रवादी तो अगम्यागमनें पण दोष नथी केहेता. ए सर्व ज्ञान व्यवहारलोपक मिथ्यात्व छे ॥ २७ ॥

॥ हणियें जे परयाय अशेष, दुःख जपाइवुं ने संक्लेश ॥ एह त्रिविध हिंसा जिन कथी, परशासनें न घटे मूलथी ॥ २८ ॥ अर्थः—जिन श्रीवीतराग देवें कहेली हिंसा त्रण प्रकारें छे, तेमां एक तो जे मृगादि पर्याय ध्वंस करियें ते, तथा बीजी ते जीवोने दुःख उपजाववुं ते, त्रीजी पोताना मनमांहे संक्लेश एटले मारवानो भाव धारण करवो, ए त्रण प्रकारनी जे हिंसा ते जे एकांत नित्य अने एकांत अनित्य आत्माने माने छे, एवा जे परशासनी तेने मूलथी न घटे. जेमाटे मृग मरीने मृगज थयो. तिहां विसदृश क्षणनो आरंभ क्यां छे? संतानैक्यनी अपेक्षायें व्यक्तिवैसदृश्य कहेतां तो द्रव्यैक्यज आवे. इत्यादि विचारवुं ॥ २८ ॥

॥ निश्चयथी साधे क्षणभंग, तो न रहे व्यवहारें रंग ॥ नव सांधें ने त्रूटे तेर, ऐसी बौद्धतणी नव मेर ॥ २९ ॥ अर्थः—निश्चय जे ऋजुसूत्रनयने लइने क्षण साधे छते व्यवहार जे बंधमोक्षप्रत्यभिज्ञानप्रमुख छे तेणें रंग रहे नही. एम बौद्धनी मर्यादामांहे 'नव सांधे ने तेर त्रूटे' ए उखाणो साचवे छे. अने निश्चय व्यवहार उभय सत्य ते स्याद्वादीज साधी शके ॥ २९ ॥

॥ नित्यपणाथी नहिं ध्रुव राग, समभावें तेहनो नवि लाग ॥ नित्यपणें फलहेतु संबंध, नहिं तो चाले अंधो अंध ॥ ३० ॥ अर्थः— आत्माने

नित्य मानीयें तेमाटे ध्रुव निश्चय राग नथी. जेमाटें रागद्वेष ते मनःसं कल्परूप छे. आत्मा ज्ञानी निर्विकल्पस्वभाव समताभावमांहे आवे तेवारें राग वासनानो लाग नथी. साम्य संस्कार ते राग संस्कार विरोधी छे. आत्माने नित्यपणुं माने तो, फल मोक्ष अने हेय आत्मज्ञान चारित्रप्रमुख तेनो एक द्रव्यसंबंध संभवे नही. तो बंध मोक्ष कृणना संबंधविना सर्व प्रवृत्ति अंधपरंपरा थाय ॥ २० ॥

॥ रयणतणीपरें थाये विशुद्ध, नित्य आतमा केवल बुद्ध ॥ रागविना नवि प्रथम प्रवृत्ति, तो किम उत्तर होय निवृत्ति ॥२१॥ अर्थः—नित्य आत्मा मानियें तेवारेंज प्रथम अशुद्ध हतो ते केवलज्ञानें विशुद्धि थइने शुद्ध थाय. जेम रत्न पहेलां अशुद्ध होय. ते उपायथी आत्मा नित्य छे तेऊपर राग होय तोज धनार्थीने दुःखक्षयनेअर्थें पहेलां प्रवृत्ति होय, अने ते न होय तो निवृत्ति पण पछी क्यांथी होय ? ॥ २१ ॥

॥ छांमीजें भवबीज अनंत, ज्ञान अनंत लहीजें तंत ॥ पण नवि उंछो अधिको भाव, नित्य आतमा मुक्तस्वभाव ॥ २२ ॥ अर्थः—नित्य आत्मा मानियें तोज आविर्भाव तिरोभाव रूपें सर्व पर्याय मले; ते कहे छे. भव जे संसार तेनां बीज रागद्वेषादिक अनंत छे. तेने छांमियें छैयें. ततः परमार्थ ज्ञान पर्याय अनंत लहियें छैयें. पण आत्मानो भाव एकअंशे उंछो अधिको नथी. अनंतधर्मात्मकस्वरूप आविर्भावमात्रज नित्य सत्य मुक्तात्मक छे.
॥ उक्तं च सिद्धसेनाचार्यैः॥ भवबीजमनंतमुज्झितं, विमलज्ञानमनंतमर्जितं ॥ नचहीन कलोसि नाधिकःसमतांचाप्यतिवृत्य वर्तसे ॥२२॥ ए दृष्टांतें कहेछे.

॥ घनविगमें जिम सूरज चंद, दोष टले मुनिहोय अमंद ॥ मुगतिदशा थिरदर्शन घटे, ते मेली कुण भावें अटे ॥ २३ ॥ अनित्यवादी गतः ॥
अर्थः—ए दृष्टांतें कहे छे (घन के०) मेघ तेने (विगमें के०) नाशें जेम सूर्य चंद (अमंद के०) शुद्ध थाय, तेम दोष जे रागद्वेषादिक ते टलें थके मुनि पण अमंद एटले शुद्धबुद्धि मुक्त स्वभाव थाय. एणीपरें थिरभावीने दर्शनें मुक्तिदशा घटे ते मले अनित्यवादी बौद्धनुं मत आदरीने कोण संसारमांहे (अटे के०) भमे. अर्थात् कोइपण बुद्धिवंत भमे नहीं ॥२३॥

॥ नित्य आतमा मानो एम, योगमार्गमां पामो खेम ॥ करता भोक्ता भाखुं हवे, ते न रुचे जे जूठुं लवे ॥ २४ ॥ अर्थः—एणीरीतें आत्मा

नकें शोधे, तेम अबद्ध ब्रह्मनेज बंध जाणी बंध वियोगने अर्थें तपस्वी प्रवर्त्ते छे.

॥ भ्रांतिमिटये चिन्मात्र अगाध, करता नहिं पण साखी साध ॥ व्यवहारें करता ते होय, परमारथें नवि बांध्यो कोय ॥ ४३ ॥ अर्थः—ते भ्रांति मटे. अगाध निस्तरंग चेतना विलासमात्र छे, ते दिसायें साधु करता नथी. पण शाक्षी छे व्यवहारें लोक प्रत्यें ते कर्त्ता भासे छे परमार्थें कोइ बांध्यो नथी ॥ ४३ ॥

॥ अभिधानयोजन कैवल्य, गुण पामे श्रुति कहे निसल्य ॥ परमारथ व्यवहार अभ्यास, भासनशक्ति टले सवि तास ॥ ४४ ॥ अर्थः— अभिमुख ध्यान ते अभिध्यान वेदांत श्रवणयोगें मुक्तिने ते योजन तत्त्वज्ञान (कैवल्य के०) विदेह केवलभाव ए त्रण गुण पामीयें, ते जीवने अनुक्रमे प्रपंचनी पारमार्थिक व्यावहारिक आभासिकता प्रतिभासननी शक्ति छे, ते मटे. तिहां नैयायिकादि वासनायें प्रपंचने परमार्थिकपणुं जणातुं ते वेदांत श्रवण पछी मटे तेवार पछी प्रपंचने योगी व्यावहारिक करी जाणे, पण पारमार्थिक करी न जाणे वलतुं तत्त्वज्ञान ऊपजे तेवारें प्रपंचने व्यावहारिकपणें न जणाय. बाधितानुवृत्त्यायंतिकदुःखनिवृत्तौ विदेहकैवल्यप्रपंचनुं ज्ञानमात्रज टले. निःप्रपंच चिन्मात्र होइ रहे. तस्याभिध्यानाद्योजनात्तत्त्वभावाद्भूयश्चांते विश्वमायानिवृत्तिरिति श्रुतिः ॥ ४४ ॥

॥ जीवन मुक्त लह्यो निज धाम, तेहने करणीनुं नहिं काम ॥ जिहां अविद्या करणी तिहां, वीसामो छे विद्या जिहां ॥ ४५ ॥ अर्थः—तत्त्वज्ञाने संचित कर्म करी प्रारब्ध मात्र भोगीनी प्रतीक्षा करतो, जीवन्मुक्त थयो ते पोतानुं तेज पाम्युं. तेने करणीनुं काम नथी. ज्यांसुधी अविद्या छे, त्यांसुधी क्रिया छे, ज्यां विद्यातत्त्वसाक्षात्काररूप आवी, तिहां वीसामो छे. यतः आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं, क्रिया कारणमुच्यते ॥ योगारूढस्य तस्यैव, शमः कारणमुच्यते ॥ १ ॥ ४५ ॥

॥ विधिनिषेध ज्ञानीने कही, प्रारब्धें तस किरिया कही ॥ अवर कहियें नहि तास अदृष्ट, जीवनकारण अन्य अदृष्ट ॥ ४६ ॥ अर्थः—तत्त्वज्ञानीने विधिनिषेधरूप वैदिकक्रिया कोइ नथी. जेमाटे विधिनिषेध सर्व अविद्यावत्पुरुष विषय छे, आहारविहारादि क्रिया शरीरसाधन छे, तेपण प्रारब्धादृष्ट छे, एम सांप्रदायिक वेदांति कहे छे. उछृंखल कहे छे ॥ क्षीयंते

चास्य कर्माणि, तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥ ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि, भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन ॥ इत्यादिवाक्यें कर्म सर्वपद संकोचनी अन्यायतायें ज्ञानीने अदृष्टमात्रनो नाश माने छे, अने तेने शरीराश्रित कारण ते इश्वर शरीरनी परें अन्यादृष्ट छे ॥ ४६ ॥

॥ करे न भुंजे इम आतमा, वेदंति बोले महातमा ॥ सांख्य कहे प्रकृति सवि करे, चेतनरूप बुद्धिमांहे धरे ॥ ४७ ॥ अर्थः— एरीतें आत्मा न कर्त्ता न भोक्ता एम वेदांति बोले छे, ए वेदांतिनो मत कह्यो. हवे सांख्यनो मत कहे छे. ते सांख्य मतवाला कहे छे के सत्व, रज अने तमोगुणनी साम्यावस्था अनादि मूलकारण प्रकृति छे, तेहज सर्व प्रपंच करे छे, स्वपरिणाम महत्तत्त्वापर नामक स्वछ बुद्धि छे तेहमां चिन्मात्र आत्मरूप प्रतिबिंब धरे छे ॥ ४६ ॥

॥ जिम दरपण मुख लालिम तास, बिंब चलननो होइ उल्लास ॥ विषय पुरुष उपराग निवेश, तिम बुद्धि व्यापारावेश ॥४८॥ अर्थः—तेवारें त्रण प्रकार थाय छे ते दृष्टांते देखाडे छेः—जेम दर्पण एटले आरिसाथी मुख नीलो तेम रक्त जो देखाय अने ते दर्पणनी चलनायें बिंबनी चलनानो उल्लास होय, तेम ते बुद्धि चित्प्रतिबिंबें घटादि विषयोपराग 'अहं' ए पुरुषोपराग क्रियारूप व्यापारावेश होय ॥ ४८ ॥

॥ हुं जाणुं ए करणी करुं, ए त्रिहुं अंशे माने खरुं ॥ पण ते सरव भ्रमनी जाति, जाणे शुद्ध विवेकह ख्याति ॥४९॥ अर्थः—हुं एटले आत्मा, जाणुं घटादिक, करण गमनादिरूपकार्य करुं, ए त्रण अंशें जीव खरुं करी माने. पण ते सर्व प्रतिबिंब भ्रमनी जाति छे. (विवेकहख्याति के०) प्रकृतिपुरुषान्यताव जेहने होय ते शुद्ध केवलात्मस्वरूप जाणे ॥ ४९ ॥

॥ प्रकृतिधर्म हित अहित आचार, चेतनना कहे ते उपचार ॥ विजय पराजय जिम भटतणा. नरपतिने कहियें अतिघणा ॥ ५० ॥ अर्थः— अपरोक्षभ्रम ते अपरोक्ष साक्षात्कारेंज निवर्त्ते ते शुद्धात्मक ज्ञान छे, (हित अहित के०) विधिनिषेध आचार क्रियारूप छे ते सर्व प्रकृति नाना धर्म छे. आत्मानो अक्रिय छे तेहने जे चेतना कहे छे ते उपचार करी जाणवो. जेम सुभटना विजय पराजय अतिघणा छे ते सर्व राजाना कहियें एटले सुभट जीते राजा जीत्यो. अने सुभट हार्ये राजा हार्यो, एवो

व्यवहार ढे एम प्रकृतिगत शुनाशुन किरिया ते आत्मानी करीने य
री लोक माने ढे ॥ ५० ॥

॥ प्रकृति करे नवि चेतन कलीव, प्रति बिंबे ते नुंजे जीव ॥ तत्त्व अगम्य, ढे कूटस्थ सदा शिव रम्य ॥ ५१ ॥ अर्थः—प्रकृति ते वे कार्य करे ढे, चेतन आत्मा नथी करती जेकारण माटे ते कलीब ढे क्रियानुं असमर्थ ढे, ज्ञस्वनाव ते कर्तृस्वनाव केम होय, बुद्धि करे ढे, प्रतिबिंबे जीव नुंजे ढे, बुद्धिनिष्ठप्रतिबिंबग्राहित्वमेव चितो नोगः सांख्यमें शाक्षात् नोक्ता आत्मा नथी. पचवीसमुं तत्व आत्मरूप अगम्य अगोचर ढे. (कूटस्थ के०) अनित्यधर्मे रहित सर्वकाले सदा (शिव के०) निरुपद्रव (रम्य के०) मनोहर ढे ॥ ५१ ॥

॥ आपविलास प्रकृति दाखवी, विरमे जिम जग नटुइ नवी ॥ प्रकृति विकार विलय ते मुक्ति, निर्गुण चेतन थापे युक्ति ॥ ५२ ॥ अर्थः—प्रकृति ते आत्म विलास महदादि प्रपंच देखाडी विरमे निवर्त्ते जेम जग नवी नट्टइ नाटक देखाडी विरमे ॥ उक्तंच ॥ रंगस्य दर्शयित्वा निवर्त्तते नर्त्तकी यथा नृत्यात् ॥ पुरुषस्य तथात्मानं प्रकाश्य विनिवर्त्तते प्रकृतिः ॥ प्रकृतिविकारनो विलय तेहज मुक्ति ते चितिरसंक्रमा इत्यादि सूत्रानुसारें निर्गुण चेतननेज थापे ढे ॥ ५२ ॥

॥ पंथी लूंट्या देखी गूढ, कहे पंथ लूंटाणो मूढ ॥ प्रकृतिक्रिया देखी जीवनें, अविवेकी तिम माने मने ॥ ५३ ॥ अर्थः—पंथी लोकनें लूंट्या देखीने तेनो गूढ एटले रहस्य ते मूढबुद्धि एवुं कहे ढे. जे पंथ लूंटाणो. इहां (पंथ के०) नाग ते अचेतन ढे तेनुं लूंटवुं ते वली किश्युं होय. ए उपचार वचनने अनुपचार करी माने तेने मूढ कहियें तेम प्रकृतिनी क्रिया देखीने अविवेकी पुरुष, जीवने क्रिया पोताने कृत्या दयो मनस्थो धर्माभेदाग्रहात् पुरुषे नासंते ॥ ५३ ॥

॥ मूल प्रकृति नवि विकृति विख्यात, प्रकृति विकृति महदादिक सात ॥ गण षोडशक विकारी कह्यो, प्रकृति न विकृति न चेतन लह्यो ॥ ५४ ॥

अर्थः—जे मूलप्रकृति ते विकृतिरूप न होय, कोइनुं कार्य महदादिक सात पदार्थ महन् अहंकार पचतन्मात्र ए प्रकृति कही अने विकृति कहियें उत्तरोत्तरनुंकारण पूर्व पूर्वनुं कार्य ढे तेनणी पांचनूत अने इगीआर इंडि

थ ए षोडशगण विकारी कह्यो. ए कार्य छे,पण कारण नथी. चेतन ने प्रकृते नहीं कारण वकार्य नहीं तो कूटस्थ चेतन्यरूप कह्यो छे ॥ तदुक्तं सांख्यसप्ततिकायाम् ॥ मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त ॥ षोडशकस्तु विकारी न प्रकृतिर्निर्विकृतिः पुरुषः॥गंधतन्मात्र १ रसतन्मात्र २ रूपतन्मात्र ३ स्पर्शतन्मात्र ४ शब्दतन्मात्र ५ ए पांच तन्मात्र नाम. श्रोत्र घ्राण जिव्हा नयन स्पर्शन ए पांच बुद्धींद्रिय. वाक् पाणि पाद पायु उपस्थ ए पांच कर्मेंद्रिय अने इग्यारमुं मन इंद्रिय ॥ ५४ ॥

॥ ए बिहुंने साधारण दोष, न करे तो किम बंधनमोख ॥ मनबंधाये छूटे जीव, एतो जुगतुं नहीं अतीव ॥ ५५ ॥ अर्थः—एम जीव अकर्त्ता अभोक्ता सांख्य वेदांती ए बे मतवाला कहे छे. हवे ते बेहुने दूषण दीये छे. ए बेहुने साधारण एटले सरखो दोष छे. जो जीव करे नही, तो तेने बंध पण न घटे,तथा मोक्षपण घटे नहीं. जो एम कहेशो के, क्रियावती प्रकृति छे. तेमाटे प्रकृति बंधाय. सात्विक राजस तामस भावे प्रकृतिनेज संबंध छे. तद्विकार महत्तत्वना ए भाव छे. जीवमां तो अध्यास मात्रें सविलास प्रकृति निवृत्तिरूप मोक्ष ते जीवने छे. ए तो घटे नहीं. जे कारणमाटे जे बंधाय ते. ते छूटे. परंतु अन्यने बंध अने अन्यने मोक्ष ए कहेवुंज केम होय? ॥ ५५ ॥

॥ परमारथे नवि बंधन मोख, उपचारें जो करसो तोष ॥ मोक्षशास्त्र तो तुम सवि वृथा, जेह्मां नहीं परमारथकथा ॥ ५६ ॥ अर्थः—हवे कोइ कहेशे के, बंध मोक्ष तो जीवने व्यवहारें कहियें छैयें. पण परमार्थे तो अबंधमुक्तिमत स्वरुप छे ॥ नमुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थतेति वचनात् ॥ तेहने कहियें के. जो परमार्थे बंध मोक्ष नथी तो मोक्ष उपचारें होय छे. ए वातेंज तमे संतोष करशो तेवारें तो सर्व तमारे वृथा छे. मोक्षशास्त्ररूप परमार्थनी कथा जेमां नथी तेवारें ॥ पंचविंशतितत्त्वज्ञो,नरोत्रा त्रिंशके रतः ॥ जटी दरी शिखी चापि, मुच्यते नात्रसंशयः ॥ १ ॥ ब्रह्मविद् ब्रह्मरूपमाप्नोति इति आदिशास्त्र सर्व प्रवर्त्तक न थाय ॥ ५६ ॥

॥ प्रकृति अविद्या नाशें करी, पहेली आतमदशा जो फिरी ॥ तो कूटस्थ पणुं तूटक गयुं, नहिंतो कहो शुं अधिकुं थयुं ॥ ५७ ॥ अर्थः—हवे ए बेहु मत आत्माने कूटस्थपणुं माने छे,ते दूषे छे. प्रकृतिनो सांख्यमतें अने अ

विद्यानो वेदांतमतें जेवारें नाश होय, तेवारें जे पहेली आत्माने संसारी दशा हती ते जो फरी गइ तो तमारे मतें कूटस्थपणुं पण गयुं. परिणाम पणु थयुं. नहीं तो कहो के मुक्तिदशायें अधिकुं शुं थयुं. जे सर्वदा शुद्ध आत्मा छे तेने प्रकृति अविद्या नाशने अर्थें स्यो साधन प्रयास करावो छो? ॥५७॥

॥ माया नाशन अधिको भाव, शुद्ध रूपतो प्रथम विभाव ॥ रत्नादिक मां शुद्धि अशुद्धि, जो कहो तो शी इहां कुबुद्धि ॥ ५८ ॥ अर्थः—जो कहेशो, के माया नाशअधिको भाव नथी. अधिकरण स्वरूपज छे. तो पृथिवि भावरूप आत्मा ते शुद्धरूप थइ जाय. जेमाटे ते आत्मामांहे मायिकभावनो अत्यंताभाव छे. शुद्धरूपज्ञानेंज जो शुद्ध थाय तो समलभाजनादिक पण निर्मलता ज्ञानेज निर्मल थवुं जोइयें. रत्नादिकने जेम शुद्ध अशुद्ध उपाधें कहो छो. तेम आत्माने परिणामविशेषें जाणो. ए शी कुबुद्धि ? जे पुजलद्रव्यने परिणामें शुद्ध कहो छो,अने आत्माने तेम नथी कहेता?॥५८॥

॥ रतनशोध जिम शतपुट खार,तिम आतमशोधक व्यवहार ॥ गुणधारायें अखिल प्रमाण, जिम भाखे दासूर सुजाण ॥ ५९ ॥ अर्थः— जेम रत्नशोध करे तेने दोषनो टालणहार शतपुट खार एटले शोखार पुट छे. तेम आत्माना दोषनो शोधक क्रियाव्यवहार छे. चरमक्रियासाधन मान्वे प्रथमादि क्रिया पण लेखे छे. प्रथमादिविना चरमखारपुट न होय ते विना रत्नशुद्धि न होय. ए क्रियादृष्टांत जाणवो. गुणधारा वृद्धि सर्व प्रमाण छे. जीहज अभिप्रायें योगवाशिष्ठ ग्रंथमध्ये दासूर रूषी रामचंद्र प्रत्यें बोल्या॥५९दे

॥ सतुषपणुं जिम तंडुल तणुं,श्यामपणुं त्रांबानुं घणुं ॥ क्रियाविना नहि नाशे पुत्र, जाणि पुरुषमल तेम अपवित्र ॥ ६० ॥ अर्थः— सतुषपणुं. फोतरासहितपणुं जेम तंडुलतणुं त्रीहीतणुं जेम! त्रांबाभाजननुं घणेरुं श्यामपणुं मलिनपणुं ते कुट्टन मांजनादिकें जाय. तेम क्रियाविना हे पुत्र रामचंद्र,अपवित्र जे अनादिकालीन पुरुषमल कर्मरूप छे,ते क्रियाविना ज्ञानमात्रें नाशे नही. वचनमात्रें आत्मसंतोषें शुं थाय? ॥ उक्तंच ॥ भणंतो अकरंतो य,बंधमुरकपइन्निणो॥वाया विरयमित्तेणं,समासंतिय अप्पयं॥६०॥

॥ एतो शुद्धाशुद्ध स्वभाव,कहियें तो सवि फावे दाव ॥ कालभेदथी न हीं विरोध, सघट विघट जिम भूतल बोध ॥ ६१ ॥ अर्थः—एतो आत्मानो स्वभाव जो संसारी दिशायें अशुद्ध एम शुद्धाशुद्ध स्याद्वाद प्रमाणें क

री माने तो सर्व दाव मुक्तिशास्त्रनो पामे. पण एकांतवादें तो कांइ मली शके नहीं. विरोध परिहार छे कालभेदथी विरोध नहीं जेमाटे एकज घट कालें घटवत् स्वभाव छे, अन्यकालें अघटस्वभाव छे. एम शुद्धाशुद्धोभयस्व भावकालें भेद माने तो विरोध नथी. अन्यनें जे भावाभावसंबंधघटक ते जन्म हारे स्ववशस्वभाव छे ॥ ६१ ॥

॥ केवल शुद्ध कही श्रुति जेह,निश्चयथी नहिं तिहां संदेह ॥ ते निमित्त कारण नवि सहे, चेतन निजगुण करता कहे ॥६२॥ अर्थः—श्रुतियें कूटस्थपणुं कह्युं छे ते मेले श्रुतियें जे केवल शुद्धआतमा कह्यो छे ते निश्चय नयी. तेहथी तेमां संदेह नहीं. जेहनो आविर्भाव सिद्धमांहे छे, ते निश्चय नय निमित्त कारण न माने, शुद्धपर्याय उपादानें व्यतिरिक्तभावेंज शुद्ध कहे.

॥ चेतन कर्म निमित्तें जेह,लागे तेलें जिम रज देह ॥ करम तास करता सद्दहे, नयव्यवहार परंपर ग्रहे ॥ ६३ ॥ अर्थः—तेहने ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्म कहियें तेनो कर्त्ता जीव छे. एम व्यवहार नय सद्दहे. ते भाव कर्मघटित परंपरा संबंध माने छे. निश्चयनयने मतें पुद्गलनिमित्तें जीवस्व परिणामकर्त्ता अध्यवसाय निमित्त पुद्गल स्वपरिणामकर्त्ता एम माने ॥६३॥

जे ॥ बीज अंकूर न्यायें एम धार,छे अनादि पण आवे पार ॥ मुगति सा म ? ने जेम अनंत, तिम भव्यत्व अनादि स अंत ॥ ६४ ॥ अर्थः—एम (ावकर्मे द्रव्यकर्म अने द्रव्यकर्मे भावकर्म कहेवाथी अन्योन्याश्रय दोष तुमाय. ते टाले छेः—ए द्रव्यकर्म भावकर्म अन्योन्यापेक्षनी धारा बीज अंकूर पणे अनादि छे. स्थायिकत्वान्न दोषः॥ ए धारा अनादि छे, पण शुक्लध्यानें दाह थाय, तेवारें पार आवे जेम बीजांकूर संताननो एकने नाशे अनादि ? भावनो केम अंत होय ? त्यां कहे छे. जेम सादि होय ते सांतज व्याप्ति नथी. मोक्षपदार्थेंव्यभिचार होय तेमाटे तेम जे अनादि होय ते अनंतज एम निश्चय न कहेवो. भव्यत्वें विघटे तेमाटे ॥ ६४ ॥

॥ मुगतिप्रागभावह ते ठाम, जातियोगता जिय परिणाम ॥ जूवीं मा या कारण थाय, वंध्या माता किम न कहाय ॥ ६५ ॥ अर्थः—ते जाति भव्यभवनामें जीव कार्य परिणाम विशेष प्रगटे तदाभिमत मुक्ति प्राग भावनें ठामे छे, तुच्छ अभावरूप जो माने तो जातिकार्य न करे मुक्त्यधिकार ते भव्यत्व छे. शमदमवत्ते अधिकार ना होय तो तत्त्वज्ञाने प्रवृत्ति तद्गत

र शमादि संपत्ति एम अन्योन्याश्रय थाय इत्यादि घणी युक्ति न्यायालोकें कही ले ते नव्यत्ववंत जीव तथा नव्यत्व परिणामे तत्तत्कार्यनो कर्त्ता ले. जो जूठी मायाज कारण कहीयें तो, वंध्या माता ए साचुं थाय ॥ उक्तंच हेमसूरिनिः ॥ माया सतीचेद्द्वयतत्त्वसिद्धिरथासती चेन्न कुतः प्रपंचः॥ मायैव चेदर्थसहा चतत्किं माता च वंध्या च नवेत्परेषामिति ॥ १ ॥ ६५ ॥

॥ जग मिथ्या तो ए शी वाच,आशामोदक मोदक साच ॥ जो अज्ञान कहे बहु रूप, साच नावनो श्यो अंधकूप ॥ ६६ ॥ अर्थः—जो सविला साज्ञान जग केम मिथ्या कहो बो, तो ए शी वाच जे एक आशाना मोदक अने एक साच मोदक ए बे अज्ञानजन्य ले. जो अज्ञान जाग्रत्स्वप्नप्र पंचारंनक निन्न निन्न मानो, तो साच नाव घटपटादिक दृष्टवैचित्र्यवंत मानो, तो तुमने ए स्यो अंधकूप ले. अत्र श्लोकः ॥ आशामोदकनूता ये, ये चास्वादितमोदकाः ॥ रसवीर्यविपाकादि, तुल्यं तेषां प्रसज्यते ॥ ६६ ॥

॥ साधक ले सविकल्प प्रमाण,तेणे सामान्य विशेष मंमाण ॥ निरविक ल्प तो निजरुचि मात्र, अंशें श्रुति निर्वाहे यात्र ॥ ६७ ॥ अर्थः—साध क ले सविकल्पें प्रमाण ज्ञान अवश्य उपस्थित ले तेहने विषय स्वबंध प्रा गन्नावादिकजने गौरव ले तेमाटें वाह्यसंबंधरहित अनाद्यंत ब्रह्मज ले. स त्य अन्य वस्तु प्रमाण नावेज असिद्ध ले. तेने कहियें जे तमे साधकता न अवलंबो बो ते सविकल्पज प्रमाण ले. निर्विकल्प स्वयं असिद्ध ते पर साधक केम होय. ते सविकल्पनो सामान्य विशेषरूप अर्थ निग्रहे ले. स्वयं उपयोगरूपे तथा अवग्रहादिरूपें सामान्य विशेषरूप ले. तेवारें सर्वत्र त्रि लक्षणपणुंज सत्य ले. निर्विकल्प मानवुं तेतो निजरुचिमात्र ले, बोध स्वलक्षण विषय ते माने वेदांती ब्रह्मविषय ए सर्व रुचिमात्र थयुं. श्रुति जे निर्विकल्पब्रह्मप्रतिपादक ले ते (अंशें के०) नयें (यात्र के०) व्यव हार ते निर्वाह ले ॥ ६७ ॥

॥ ब्रह्म परापर वचने कह्यो, एक ब्रह्म उपनिषदें रह्यो ॥ मायोपम पण जग श्रुति सुण्युं, जेहनी जिम रुचि तिम तिणे मुण्युं ॥ ६८॥ अर्थः—द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परं चापरं च ए वचने वेदमांहे ब्रह्मपरात्पर द्विनेदें कह्युं. उपनिषदें एकज ब्रह्म लह्युं. एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नेहनानास्तिकिंचनेत्यादिव चनात् तथा मायोपमं सकलं जगत् ए वचने सर्व जगत शून्यरूप पणें कहेवुं.

तिहां द्वैतवादी अद्वैतवादी शून्यवादीयें जेने जेम रुचे तेणें तेम पुरुं करी ने जाण्युं. वस्तुं ते वादी युक्ति पण तेहवीज कल्पे ॥ ६७ ॥

॥ स्याद्वाद विण पण सवि मृषा,खारे जल नवि भांगे तृषा ॥ माया मिटे रहे जो अंग, तो किम नहीं परमाथ रंग ॥ ६९ ॥ अर्थः—पण ते निज निज नय रुचे ठे ते स्याद्वादविना सर्व जूठा. जेविना समत निर्वाह न था य. जेम खारा जलथी तृषा न भांजे तेम स्याद्वादविना कांक्षा न टले. जो वेदांतने मतें सर्व माया गवेषे ठे. ते मटे तो तत्कार्य अंग केम रहे ? जो रहे अंगें पारमार्थिक थाय,तो व्यावहारिक केम कहियें ? ॥ ६९ ॥

॥ बाधित अनुवृत्तें ते रही, ज्ञानीने प्रारब्धें कही ॥ कर्मविलास थयो तो साच, ज्ञानें न मट्यो जेहनो नाच ॥ ७० ॥ अर्थः—हवे जो एम क हेशो के ज्ञानीने पण माया बाधितानुवृत्तें रही ठे. दग्धरज्जु आकार ते प्रारब्धें करीने ॥ ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि, भस्मसात्कुरुतेर्जुन ॥ इहां कर्मप द प्रारब्धातिरिक्त कर्मपर कहेवुं. पर कहेवुं तो कर्मविलास साचो थयो. प ण कल्पित थयो जेनुं (नाच के०) नाटक ते ज्ञानें पण न मट्युं. सिद्धां त पण एहनोज ठे, केवलज्ञान उपने पण भवोपग्राही कर्म टलतां तथा सर्वकर्मक्षय ते युक्तिदिशायें परनी समाधिज सत्य होय ॥ ७० ॥

॥ व्यवहारिक आजासिक गणे, योगी ते ठे भ्रमअंगणे ॥ योगी अयोगी शरीर अशेष, इयो व्यवहार आजास विशेष ॥ ७१ ॥ अर्थः—जे यो गी व्यावहारिक प्रपंचने आजासिक गणे ठे, ते भ्रम गृहने अंगणे रमे ठे. जे अन्यने अन्य करी जाणवुं तेज भ्रमयोगीनुं शरीर, ते आजासिक जाण वुं. अने अयोगीनुं शरीर ते व्यवहारें कथनमात्र सदृश परिणामज दीसे ठे. तेणेंकरी जेहवुं ठे तेहवुं कहे ठे. ज्ञानीने रागादिक जाव ठे, ते आजा सिक गुंजापुंजवन्हिसमान ते सर्व निरस्त कर्युं एम जाणवुं, कर्मजनित जाव ते सत्यज ठे. तो क्षुधातृषादि जाव पण सर्व जूठा थाय. ते तो प्र त्यक्षविरोध ॥ ७१ ॥

॥ अन्य अदृष्टें योगिशरीर,रहे कहे ते नहिं श्रुतिधीर ॥ जो शिष्यादि अदृष्टें रहे, अग्निअदृष्ट तेहने किम सहे ॥ ७२ ॥ अर्थः—कोइ उन्मत्तप्राय क हे ठे. ज्ञानीने सर्वअदृष्ट गयां शरीर रहे ठे. अन्य शिष्यादिकने जेम लो कादृष्टें ईश्वरशरीर रहे ठे. ते श्रुतधीर नही. एटले सिद्धांतमांहे धैर्यवंत न

(अरि के०) वैरी ते

॥ ९१ ॥

॥ कर्म होय

अर्थः—एम अवि

वली अनंतरा

क्षयोपशमा

कहे कर्म जन्मनी

॥ ९३ ॥

॥ आकाशादि

॥ ९४ ॥ अर्थः—चित्

नथी, जे एम कहे छे, ते

जेम आदर्श प्रति

न होय गंभीर जल कहेतां

प्रतिबिंबस्वरूप देखाडी

॥ ९५ ॥

ते प्रतिबिंब कहाय ॥ स्थूलखंधनुं संग

॥ ९६ ॥ अर्थः—(आदर्शादिक के०)

छाया आवे ते प्रतिबिंब कहियें ॥

हवंति संकंता ॥ तेसिं तनुव

पुद्गलनुं होय. उक्तं च ॥ सामाउदिया

॥ सत्तेय संदेहना

(अदेह के०) अशरीर जे आत्मा ते बु तिबिंब

॥ ९७ ॥

दिकगुण रस

॥ अर्थः

इंद्रि

प्रतिबिं

थी प्र

त्रण

बुद्धिरुपलब्धिर्ज्ञानमित्यनर्थान्तरमिति ॥ एहनो भेद खिन्न थको तुं शुं करे छे? समो अर्थ ज्ञान मान्य ॥ ७६ ॥

॥ बुद्धि नित्य तो पुरुषज तेह, ज्ञानप्रवृत्ति इछा सम गेह ॥ जो अनित्य तो किहां वासना, प्रकृति तो शी बुद्धिसाधना ॥ ७७ ॥ अर्थः—बुद्धितत्त्व जे सांख्य माने छे ते नित्य विकल्पें दूषे छे. जो ज्ञानादिक धर्माश्रयबुद्धि नित्य मानीयें तो तेहज पुरुष छे, जे माटें ज्ञान, इछा, प्रवृत्ति (सम गेह के०) समानाश्रय छे. ज्ञानप्रवृत्तिनुं व्यधिकरणपणुं कल्पवुं अनुचित छे. तथा बुद्धि नित्यपुरुषोपाधिरूप न टले, तो मुक्ति पण केम होय? जो अनित्य मानो तो बुद्धिविनाशें वासना किहां रही? अने जो न रही तो पुनः प्रपंचोत्पत्ति केम होय? जो एम कहेशो के, बुद्धि विनाशें प्रकृतें लीन वासना रही तो बुद्धि साधनानुं शुं काम? प्रकृत्याश्रितज्ञानादिगुणाविर्भावें ज कार्य थाशे ॥ ७७ ॥

॥ अहंकार पण तस परिणाम, तत्त्व चउवीसतणुं किहां ठाम ॥ सकति विगति प्रकृतें सवि कह्यो, बीजा तत्त्व विमासी रह्यो ॥ ७८ ॥ अर्थः—बुद्धितत्त्व मिथ्या तेवारें तत्परिणाम अहंकारादिक पण मिथ्या. चोवीश तत्त्वनुं ठाम किहां होय? चोवीश तत्त्वना धर्मशक्ति विगतें करी प्रकृतिथीज सर्व कह्यो, बीजा तत्त्वबुध्यादिक छे, ते विमासीने रह्यो. एटले प्रकृतिविलासन ते अजीवतत्त्वविलासज हुउ. जीवतत्त्वतो मुख्य बीजा उभयपरिणामरूप छे. एम नवतत्त्वप्रक्रिया तेहज शुद्ध थइ जाणवी ॥ ७८ ॥

॥ विरमे रमे यथा नर्त्तकी, अवसर देखी अनुभवथकी ॥ प्रकृति अचेतन किम तिम रमे. विरमे जो करता नवि गमे ॥ ७९ ॥ अर्थः— नाटकणी पोताना अनुभवथी कार्य नाशादिकने विषे रमे, तथा अवसर देखी दानादिक पामी विरमे, तेम प्रकृति अचेतन छे, ते केम रमे? अने विरमे? जो करता पुरुष तुजने न गमे ॥ एवं च ॥ रंगस्य दर्शयित्वा निवर्त्तते नर्त्तकी यथात्मानं ॥ पुरुषस्य तथात्मानं प्रकाश्य विनिवर्त्तते प्रकृतिः ॥ इत्यादि शिष्य कहे छे, ते शिष्य धंधमात्र कहेवुं, पुरुषने आत्मदर्शन प्रकृति करे, ते अचेतनने न संभवे. तथा तिहां प्रयोजन तद्ज्ञान छे ॥ ७९ ॥

॥ प्रकृतिदिदृक्षायें जिम सर्ग, भांति चाहिनायें मुक्तिनिसर्ग ॥ कर्ताविण कालविशेष, तिहां चलणें नय अन्य अशेष ॥ ८० ॥ अर्थः— प्रकृति

दिदृक्षायें (सर्गे के०) सृष्टि जेम सांख्य कहे छे, तेम (निसर्गमुक्ति के०) स्वभावमुक्ति शांतिवाहितायें होय, ए बे लक्षण करताना छे. ते विना जो प्रकृतिपरिणामनां लक्षण कहीयें, तो कालनां लक्षण थाय. तिहां अन्य अशेष नय वले, ते सर्वना अर्थनो अनुग्रह करवा पांच कारणसमवाय मानवो. तेवारें कर्त्ता मुख्यपणें आवे ॥ उक्तं च ॥ कालो सहाव णियइ, पुव्व कयं पुरिसकारणोवगतं ॥ समवाए समत्तं, एगंतं होइ मिछत्तं ॥ १ ॥ ७० ॥

॥ प्रकृतिकर्म ते माटे गणो, ज्ञानक्रियाथी तस क्षय भणो ॥ अशुद्ध भाव करता संसार, शुद्ध भाव करता भवपार ॥ ७१ ॥ अकर्तृअभोक्तृवादिनौगतौ॥ अर्थः– तेमाटे प्रकृतिने कर्मनुंज नाम गणो, प्रधान कर्म संस्कार वासना विद्या सहजमल ए सर्व एकार्थेज शब्द छे दर्शनभेदें ते कर्मनो क्षय ज्ञान शुद्ध भाव छे. ते भवपारनो कर्त्ता छे ॥ अप्पा कत्ता विकत्ता य,सुहाण य डुहाण य ॥ इत्यादि शास्त्र वचनो पण छे ॥ ७१ ॥ अकर्त्ता अभोक्ता आत्मा माने छे ते वादि गया. इहां समकेतनां चार स्थानक पूर्ण थया ॥

॥ एक कहे नवि छे निरवाण, इंद्रिय विणस्यां सुख मंमाण ॥ डुःख अभाव मूर्छा अनुसरे, तिहां प्रवृत्ति पंमित कुण करे ॥ ७२ ॥ अर्थः– हवे समकितनुं पांचमुं मोक्षस्थानक कहे छेः– एकवादी कहे छे के, (निरवाण के०) मोक्ष नथी. इंद्रियविलासविना मुक्ति मुख्य छे. तेना मंमाण छे. ते कोण सद्दहे.तोके अशेष विशेषगुणोछेदरूप वैशेषिकाभिमत मुक्ति मानो. डुःखाभवने अर्थेज मुमुक्षुप्रवृत्ति हशे. ते उपर कहे छे– डुःखाभावने पुरुषार्थ नथी. जेमाटे मूर्छावस्थायें पण अविद्या डुःखाभाव छे, तिहां कुप्रवृत्तें पंमित करे, ॥ उक्तंच ॥ डुःखाभावोपि नावेद्य; पुरुषार्थतयेष्यते ॥ नहि मूर्छाद्यवस्थार्थं, प्रवृत्तो दृश्यते सुधीरिति ॥ १ ॥ ७२ ॥

॥ काल अनंते मुकतें जतां, होइ संसार विलय आजतां ॥ व्यापकने कहो केहो गाम, जिहां एक सुखसंपतिधाम ॥ ७३ ॥ अर्थः– जो मोक्षपदार्थ रात्रिदिवस जीवें करी भरातां अनंतो काल थयो तो आजतांइ ए जीवोने मुक्तिमां जतां संसारनो विलय थाय.एक एक युगमां एक एक मोक्षें जाय तो अनंता युग गया एटले कालें संसार खाली कां न थाय ॥ सत्या अनंता एव ह्यपवृक्तास्तथापि संसारस्य प्रत्यक्षसिद्धत्वादित्यादि करणावलीकारें कह्युं ते तो घटे के, जो कालानंत्यथी जीवपरिणामानंत्य अधिक

होय तेमाटे ए कल्पनामात्र छे. बीजुं आत्मा सर्वव्यापक कहे छे, तेहने ए क सुखसंपतिनुं घर एवो किहां गाम छे? के ज्यां ए जाय. क्रियावत्त्वाज्ञा वाज्ञात्मनः सिद्धिक्षेत्रगमनइत्यर्थः ॥ ७३ ॥

॥ किम अनंत इक गामें मिले, पहिलो नहिं तो कुंण शुं जले ॥ पहिला जव के पहेला मुक्ति, ए तो जोतां न मिले युक्ति ॥ ७४ ॥ अर्थः— वली मोक्षमां अनंता सिद्ध मानो तो ते एकस्थानकें अनंता केम मले? जो प हेलो अनादिसिद्ध न मानो तो बीजा सिद्ध थाय ते कोणमांहे जले? प हेलो सिद्ध नहीं तो कोण सिद्धने सर्व साधक नमे? तेवारें पहेला संसार के पहेलां मुक्ति? प्रथमपक्षें मुक्ति सादि थइ, एटले आदिसहित थइ? बी जे पक्षें बंधव्याघाते बंधविना मुक्ति केम होय? ए युक्ति जोतां मलती नथी ॥ ७४

॥ जिहां न गीत न जाव विलास, नहिं शृंगार कुतूहल हास ॥ तेह सु गतिथी कहे कृपाल, वनमां जन्म्यो जलो शृंगाल ॥ ७५ ॥ अर्थः— जि हां गीतगान नहीं, जावविलास नहीं, शृंगाररस नहीं, (कुतूहल के०) ख्याल नहीं, ते मुक्तिमांहे शुं सुख हशे? ते मुक्तीथी तो कृपी कहे छे के, कृपाल वनमांहे सीयाल जन्म्यो होय तो जलो ॥ वरं वृंदावने रम्ये, शृगालत्वं सदैवहि ॥ न तु वैशेषिकीं मुक्तिं, मे मतिर्गंतुमिच्छति ॥ ७५ ॥

॥ जव अजिनिंदि एहवा बोल, बोले ते गुणरहित निटोल ॥ जेहनें नहीं सुगतिकामना, बहु संसारी तेह डुरमना ॥ ७६ ॥ अर्थः— जवअजिनंदि लक्षणवंत जे कह्या छे, ते मुक्ति उछापवाने एवा बोल बोले छे, तेने गु णरहित कहियें, अने निटोल, निःश्रूक कहियें, जेहने मोक्षनी कामना ए टले वांछा नथी. ते डुर्मना एटले माठा मनवाला बहुल संसारी एटले अ जव्य अथवा डुर्जव्य कहियें. एतो जे चरमपुजलावर्त्तवर्त्ती होय, तेनेज मुक्तिकामना होय ॥ उक्तंच ॥ मुक्खासउवि न तस्स. होइ गुरुजाव मलप्प हावेणं ॥ जह गुरुवाहिविगारन, जाउ पछा सउसम्मं ॥ ७६ ॥

॥ इंडियसुख ने डुखनुं मूल, व्याधि प्रतिक्रिया अतिप्रतिकूल ॥ इंडियवृ निरहित सुख सार, उपसम अनुजवसिद्ध उदार ॥ ७७ ॥ अर्थः—पहे लां मोक्ष सुखरूप साधे छे. इंडियसुख जे छे ते डुःखनुं मूल छे, ते व्याधि प्रतिकार छे, क्षुधायें पीडित होय तेवारें जोजन करवुं जलुं लागे, तृषायें होठ सूकायें, तेवारें पाणी पीवुं जलुं लागे, हृदयमांहे कामाग्नि दीपे ने

वारें मैथुननी इच्छा ऊपजे,ए व्याधिना औषध छे. तेने सुख जाणे छे ॥ मिथ्या यत् सूक्ष्म क्षुधार्त्तः सन् साक्षी कवलयति मांस्या कवलितान्. तृषा शुष्यत्यास्ये पिबति च सुधास्वा दुसलिलं ॥ प्रदीप्तकामाग्नो निजहृदि वृषस्यत्यथ वधूं, प्रतीकारो व्याधेः सुखमिति विपर्यस्यति जनः ॥ १ ॥ इंद्रियवृत्तिरहित ध्यानसमाधिजनित उपशम सुख छे. तेहज (सार के०) निरुपचरित छे. ते क्षण एक रागद्वेषरहित थइ आत्मामांहे जोइयें ते अनुभव सिद्ध छे ॥ उक्तं च प्रशमरतौ ॥ स्वर्गसुखानि परोक्षाण्यत्यंतपरो क्षमेव मोक्षसुखं प्रशमसुखं प्रत्यक्षं न परवशं नचाप्राप्तं तथा यत् सर्वविषयकांक्षोद्भवं सुखं प्राप्यते यारोगेण तदनंतकोटि गुणितं मुधैव लभते वीतरागः ॥ इत्यादि ॥ ७७ ॥

॥ तिहां अभ्यास मनोरथ प्रथा,पहिलां आगें नवि परकथा ॥ चंद्रचंद्रिका शीतल धाम, जिम सहजें तिम ए सुखधाम ॥ ७८ ॥ अर्थः—ते उपशमसुख मांहेलां अभ्यास अने मनोरथ तेनी (प्रथा के०) विस्तार होय ॥ दृष्टंचामासिकं मानोरथिकं च सुखं लोकेऽपि ॥ पछी निर्विकल्पकसमाधें परद्रव्यनी कथाज न होय ॥ उक्तंच ज्ञानसारे ॥ परब्रह्मणि मग्नस्य, श्लाघा पौज्ञलिकी कथा ॥ कामीचामीकरोन्मादाः, स्फारा दारादराः क्च ॥ १ ॥ अभ्यासमाश्रित्याप्युक्तं प्रशमरतौ ॥ यावत्परगुणदोषपरिकीर्त्तने व्यावृत्तं मनो भवति ॥ तावद्वरं विशुद्धेच व्यग्रं शक्तो मनः कर्त्तुं ॥१॥ चंद्रनी चंद्रिका जेम सहेजे शीतल होय तेम आत्मस्वभावस्वरूप उपशम जे छे ते सहेसुखनुं गाम छे ॥ ७८ ॥

॥ तरतमता एहनी देखियें, अति प्रकर्षे ते शिव लेखिये ॥ दोपावरण तणी पण हाण, इम निःशेष परमपद जाण ॥ ७९ ॥ अर्थः—ए शम सुखनी तरतमता उत्कर्षापकर्ष देखे, जे अतिप्रकर्ष ते (शिव के०) मोक्ष लेखवियें. दोपावरणतणी हाणे पण तरतम भाव छे. जे निःशेप ते परम पद जाण ॥ उक्तंच ॥ दोपावरणयोर्हानिः,शेषारूपतिशायनात् ॥ क्चिद्यथा स्वहेतुभ्यो, वहिरंतर्मलक्षयः ॥ १ ॥ इति अष्टसाहस्र्याम् ॥ दुःखीभावथी पण सिद्धने सुखज कहेवुं ॥ ७९ ॥

॥ दुखहोवे मानस शारीर,जिहां लगें मन तनु वृत्ति समीर ॥ तेह टले दुखनासे सुख, नहिं उपचार विशेपें मुख्य ॥ ८० ॥ अर्थः—ज्यांलगें मन तनु वृत्ति रूप (समीर के०) वायु ते विस्तारवंत होय त्यांलगें मननुं

अने शरीरनुं ऽुःख होय, तेह टले. तेवारें निस्तरंगसमुद्रसमान आत्मदशा होय ते ऽुःख नहीं. उपचारविशेषें ते (सुरक के०) सुख ठे ॥ उक्तंच ॥ प्रशमरतौ ॥ देहमनोवृत्तिभ्यां नवतः शारीरमानसे ऽुःखे तदनावात दनावे सिद्धं सिद्धिसुखं ॥ ए० ॥

॥ सर्व शत्रुक्षय सर्वेज रोग, अपगम सर्वारथ संयोग ॥ सर्वकामनापूरित सुरक, अनंतगुण तेहथी सुखमुरक ॥ ए१ ॥ अर्थः—कोइने घणा शत्रु ठे तेमांथी एक शत्रुनो क्षय थयो सांनले तो तेने कहेवुं सुख थाय ? तेवारे सर्व शत्रुउनो क्षय थवाथी महासुख होय तेमां शुं कहेवुं ? तेम सर्व रागादि शत्रुक्षयजनित अतिशय सुख मोक्षमांहे ठे. तथा शोल रोग समग्र ऊपना होय ते मांहेलो एक रोग टले तेवारें घणुं सुख ऊपजे, अने शोले रोग टले तेवारें पूरुंज सुख ऊपजे. तेम सर्व कर्मव्याधिविलयजनित सिद्धने सुख ठे, जेमाटे एक अर्थयोगें जे सुख उपजे तेथी सर्व अर्थयोगें अनंतगुण सुख उपजे. तेम सर्व अर्थ सहेजगुण सिद्धिजनित सुख मोक्षमांहे ठे, जेम एक इबा पूर्ण थातां जे सुख उपजे, तो सर्व इबा पूर्ण थातां तो तेथी अनंतगुणुंज सुख होय. एम सर्व अनिबारूप वैराग्येबा पूर्ण थतां अनंत सुख सिद्धने ठे. ॥ उक्तं च ॥ विंशिकायांतें ॥ सवं तु सच्चवाहि, सवठ सच्चसिद्धांजं खयविगमजोगपत्तीहि ? होश्तत्तोअणंतगुणं ॥१॥ इत्यादि ए१

हवे अनंतमोक्षसंख्या केम ठे ? एवुं पूठे ठे, तेहनो उत्तर कहे ठे.

॥ घटे न राशि अनंतानंत, अक्षतनवनें सिद्ध अनंत ॥ परिमित जीव नयें नवरिक्त,थाये जन्म लहे कइ मुक्त ॥ ए२ ॥ अर्थः—सिद्धना जीवोनी संख्याराशि अनंत ठे ते घटती नथी. एवा प्रश्ननो उत्तर कहे ठे के, अनंतानंतराशि (नव के०) संसारी जीवोनी ठे, ते (अक्षत के०) आखो अनें सिद्धपण अनंत ठे, त्रण कालना समयनी अनंत संख्या ले,तेथी जीवोनी अनंतसंख्या घणी महोटी ठे, माटे एमां कशो बाध नथी. जे मतें ते परिमित जीवसंख्या कहे ठे, तेना मतें तो संसार खाली थवो जोइयें. नहींकां मोक्षमांहेथी जीव इहां पाठा आववा जोइयें ॥ उक्तं च ॥ मुक्तोपि वाभ्येतु नवं नवे वा, नवश्च शून्योस्तु मितात्मवादे ॥ षड्जीवकायं तुअनंतसंख्यं, नाष्यं तथा नाथ यथा न दोषः ॥१॥ इति स्याद्वादमंजर्यां ॥ ज्यारे ज्यारे नगवंतने पूठीयें त्यारें त्यारें एवुं कहे के एक निगोदनो अनंत

मो भाग मोक्षें गयो एहवे अनंत जीववादीयें किशुं बाधक नथी ॥ ए२ ॥

॥ थया अने थासे जे सिद्ध, अंशनिगोद अनंत प्रसिद्ध ॥ तो जिन शासन शी भवहाणी, बिंछु गये शी जलधें काणी ॥ ए३ ॥ अर्थः—पूर्वें कहेली वातनेज स्पष्ट करे छे. जे अतीतअद्धायें सिद्ध थया अने अनागत अद्धायें जे सिद्ध थाशे ते सर्व मली एक निगोदना अनंतमा भाग प्रमाण सिद्ध थाशे. तो जिनशासनमांहे शी हाणी? संसारसमुद्रमांहेथी एक बिंछु गयाथी शी काणी छे? ए संख्या उत्कर्षापकर्ष निमित्त नथी. अतीताद्धाथी अनागताद्धा अनंतगुण छे तो पण सर्व मली एक निगोद जीवने अनंतमें भागे छे. ए परमार्थ जाणवो ॥ ए३ ॥

॥ व्यापकने नवि भवनी सिद्धि, बांधे छोडे क्रियविवृद्धि ॥ पण तनुमित आतम अमें कहुं, तिहां तो सघलुं घटतुं लहुं ॥ ए४ ॥ अर्थः—सर्व व्यापक जे आत्मा माने छे, तेने परभवें जावुं नथी. तेवारें न संसार अने न मोक्ष एम घटे, पण अमे तो आत्मा (तनुमित के०) तनु एटले शरीर ते प्रमाण मानीयें छैयें. तिहां तो सघलुं ए घटतुंज लहियें छैयें. जेहवुं गति जात्यादिकने घटतुं आउखुं बांधे तेहने ते उदय आवे तेवारें ते क्षेत्रें जीव जाय. वक्रगति होय, तो आनुपूर्वी तिहां खपावी आणे. मोक्षें तो पूर्वप्रयोगादि कारणे समयांतरें प्रदेशांतर अणफरसतो नियतस्थाने उपजे. तिहां शाश्वतानंदघन थइ रहे छे सही ॥ ए४ ॥

॥ योग निरोध करी भगवंत, हीन त्रिभागवगाह लहंत ॥ सिद्धिशिला ऊपर जइ वसे, धर्मविना न अलोकें धसें ॥ ए५ ॥ अर्थः—केवलज्ञानी भगवंत आवर्जीकरण करी, योगरुंधी चरमभवें जेटलुं शरीर छे तेनी त्रिभाग हीनावगाहना पामतो सिद्धशिला ऊपरें जइने वशे. इहां कोइ पूछे के, ते थी आगल केम जातो नथी? ते ऊपर कहे छे, के (धर्मविना के०) धर्मास्तिकायविना अलोकाकाशमांहे धसे नहीं ॥ ए५ ॥

॥ जिहां एक तिहां सिद्ध अनंत, पय साकरपरें भले एकंत ॥ रूपीनें भलतां सांकडुं, रूपरहितनें नवि वांकडुं ॥ ए६ ॥ अर्थः—जिहां एक सिद्ध छे, तिहां अनंता सिद्ध छे, दूध साकरनी पेठें एकठा भले छे. एकांत ए पण एकदेशिदृष्टांत रूपीने मांहोमांहे भलतां सांकडुं होय, पण रूपरहितने भलतां किशुंयें वांकडुं नथी ॥ धर्माधर्माकाशादिवत् ॥ अत्रगाथा ॥

जब्बय एगो सिद्धो, तब्ब अणंता नवरकयविमुक्का ॥ अन्नुन्नमाहाबाहं, चिठंति सुहीसुहेपत्ता ॥ १ ॥ एद ॥

॥ काल अनादें सिद्ध अनाद, पूर्व अपर तिहां होय विवाद ॥ नव निर्वाण तणो क्रम योग, शाश्वत नाव अपर्यनुयोग ॥ ए७ ॥ अर्थः– संसारी टलीने सिद्ध थाय ठे, तेवती सिद्ध जे ठे, ते यद्यपि सिद्धनावें प्रथम ठे, पण कालनी अनादिता ठे, तेमाटे प्रवाहें अनादिसिद्ध कह्या. तिहां पहेला कोण अने पठी कोण ए विचार न होय. निर्वाणनो अनुक्रम योग कहेवाय नहीं. शाश्वता नावनो पाठो उत्तर नथी. एमज पहेलां कूकडी के पहेलां इंडुं? रात्रि पहेलां के दिवस पहेलां? इत्यादि नाव श्रीनगवतीसूत्रमध्ये कह्या ठे, जे क्षण वर्त्तमानत्व पाम्यो ते अतीत थयो. पण तेमां पहेलो अतीत समय कह्यो, एम कहेवाय नहीं. तेम संसारी टल्यो ते सिद्ध थयो, पण तेमां पहेलो कोण प्रवाहें एम न कहेवाय. अनादिसिद्ध अनादिसिद्ध तो कहियें. व्यक्तें न कहियें. ॥ उक्तं च विंशिकायां ॥ एसो आणाइमचिय, सुद्धोयतउ आणाइ सुद्धुत्ति ॥ जुत्तोअ पवाहेण, ण अन्नहासुद्धयासम्मं ॥१॥ इत्यादि ॥ ए७ ॥

॥ मोक्षतत्त्व इम जे सद्दहे, धर्ममन थिर तेहनुं रहे ॥ मुक्ति इछा ते मोटो योग, अमृत क्रियानो ए संयोग ॥ए८॥ अनिर्वाणवादी गतः ॥ अर्थ– एमजे परीक्षा करीने मोक्षतत्त्व सद्दहे, तेनुं धर्मने विषे मन थिर रहे. जे मुक्तिनी इछा ठें ते अमृतक्रियाना रसने संयोगें महोटो योग ठे चरमपुजलपरावर्त्तें अपुनर्बंधकादिकने नारें जे कर्ममल होय ते तेहने न होय ॥ उक्तंच विंशिकायां ॥ मुरकासउवि एणब, होइ गुरुनाव मलयपन्नावेणं ॥ जहगुरुवाहिविग्गरेण, जाउव सास उस्सासं ॥ए८॥ अनिर्वाणवादी निरस्त थयो ॥

॥ नास्तिक सरिखा नाषे अन्य, ठे निर्वाण उपायें शून्य ॥ सरज्युं होसे लहेशुं तदा, करो उपाय फिरो नर सदा ॥ एए ॥ अर्थः– हवे अन्यवादी नास्तिक सरखा नाखे ठे के, निर्वाण ठे पण तेनो उपाय शून्य ठे. यद्दायें होय, जेवारें सरज्युं हशे तेवारें लहेशुं. ते कहे ठे के, जे माटे (नर के० मनुष्य तमे उपाय करो, सदाइ फरो पण मोक्ष तो सरज्युं हशे तेवारें मलशे ॥ उक्तंच ॥ प्राप्तव्यो नियतिबलाश्रयोर्थः सोवश्यं नवति नृणां शुनोऽशुनोवा ॥ नूतानां महति कृतेपि हि प्रयत्ने, नानाव्यं नवति न नाविनोऽस्ति नाशः ॥एए

॥ दर्शन ज्ञान चरण शिव हेत, कह्यो तो श्यो पहिलो संकेत ॥ गुण विण गुण जो पहिला लह्या, तो गुणमां शुं जाउ वह्या ॥ १०० ॥ अर्थः— मोक्षना उपाय रूप दर्शन ज्ञान चारित्र जो मोक्ष हेतु कह्यो छो तो श्यो संकेत छे? गुण जो गुणविना लह्या तो गुणमांहे वह्यां शुं फरो छो? जेम गुणविना नवितव्यतायें गुण पाम्या तेम मोक्ष पण पामशो. जो एम कहेशो के पहेला गुण शक्तियें हता ते काल परिपाकें व्यक्तें थया, तो नव्यनी शक्ति मोक्षनावनी छे. तें कालपरिपाकें व्यक्तें प्रगट थाशे. कारणनो तंत किहां रह्यो. इत्यादि घणी युक्ति छे ॥ १०० ॥

॥ मरुदेवा विण चारित्र सिद्ध, नरह नाण दरपण घर लिद्ध ॥ थोडे कष्टें सीधा केइ, बहुकष्टें बीजा शिव लेइ ॥ १०१ ॥ अर्थः— वली एह ज वात कहे छेः— मरुदेव्याजी अत्यंतवनस्पति मांहेथी निकली क्यारें धर्म न पाम्या. क्रियारूप चारित्र पाम्या विना नगवद्दर्शन जनित योगस्थैर्यें ज अंतकृत सिद्ध थयां. नरतचक्रवर्त्ति दीक्षा ग्रह्याविनाज नावना बलें दर्पण घरें ज्ञान पाम्या. माटे जो क्रियाकष्टेंज मोक्ष पामे तो तडत्कर्ष होय ते तो नथी. तेमाटे केटला एक नरतादिक थोडे कष्टें सिद्ध थया. केटलाएक गजसुकुमालादिक बहुकष्टें मोक्ष पाम्या ॥ १०१ ॥

॥ जेहनी जेहवी नवितव्यता, तिम तेहनें होइ निःसंगता ॥ कष्टसहे ते कर्म निमित्त, नियति विना नवि साध्य विचित्त ॥ १०२ ॥ अर्थः— माटे जेहने जेहवी नवितव्यता छे, तेहने तेम ते प्रकारें (निसंगता के०) मोक्ष लान्न होय छे, जेटलुं कष्ट सहेवुं छे तेटलुं वेदनीयादि कर्म निमित्त छे, नहीतो श्रीमहावीरने घणा उपसर्ग थया अने श्रीमल्लिनाथ प्रमुखने कोइ उपसर्ग न थयो, ते केम मले? नियतिविना विचित्र साध्य न होय. अतएव प्रत्येकबुद्धसिद्धादिन्नेदस्तथानवितव्यतेति ललितविस्तरायां ॥ १०२॥

॥ ज्ञानीयें दीठुं तिम जाणि, दीठ नवमां वृद्धि न हाणी ॥ काया कष्ट करो शुं फोक, क्रिया देखाडी रंजो लोक ॥ १०३ ॥ अर्थः—जेम ज्ञानीयें दीठुं छे तेम थाय छे एम निश्चय करी न जाणो, दीठ नवमांहे वृद्धि हानी थाती नथी उछो अधिको न थाय, तो शुं फोकट काया कष्ट करो छो, क्रिया देखाडीने लोकनें रंजो छो, जे कष्ट करशे तेहने अने जे कष्ट नहीं करशे तेहने पण ज्ञानीयें जेटला नव दीठ छे तेटलाज थाशे. उक्तंच ॥ नि

यतिद्वात्रिंशिकायां ॥ ज्ञानमव्यभिचारं चेज्जिनत्वे मा श्रमं कृथाः ॥ अथ तत्राप्यनेकांते जिनतां स्मतु को भवान् ॥ १०३ ॥

॥ काम भोग लंपट इम भणे, कारण मोक्ष तणा अवगणे ॥ कारज छे नें कारण नहीं, तेहने ए क्षति मोटी सही ॥ १०४ ॥ अर्थः—एम जे वादी कामभोगना लंपट छे, ते पूर्वोक्त रीते भणे छे. ते वादीउ मोक्ष तणा जे कारण छे, तेने अवगणे छे, उवेखी नाखे छे, तेहने ए क्षिति म होटी छे. एटले महोटुं दूषण छे, के जे कार्यरूप मोक्ष तो छे, अने तेना कारण नथी. एम तो स्वप्रवृत्तिज व्याघात होय. ए दंभथी कार्य कारण भाव साचुं मानवो ॥ १०४ ॥

॥ वायसताली न्याय न एह, सरजे तो सघले संदेह ॥ जो सरज्युं जं पें निसदीस, अव्यभिचारीशुं सी रीस ॥ १०५ ॥ अर्थः—ए (वायसताली के०) काकतालीय न्याय कहीयें. जेम कागडो बफनार अने ताल फल पडनार, एम नहीं समजवुं. जेमाटे नियतान्वयव्यतिरेक छे. जो सरज्युं थाय एम कहियें तो सघले संदेह थाय. केम सरज्युं हशे, प्रवृत्ति तो इष्टसाधनतानिश्चयथी थाय. जो सरज्युं रात्रदिवस कहियें छैये, तो घटादिकनो अव्यभिचारि कारणं दंभादिक छे, तेनी साथें शी रीश करशो ! तेम मोक्षना कारण ज्ञानादिक पण सद्दहवा ॥ १०५ ॥

॥ सरज्युं दीठुं सघले कहे, तो दंभादिक किम सद्दहे ॥ कारण भेली सरजित दीठ, कहितां विघटे नवि निज इठ ॥ १०६ ॥ अर्थः—जो सर्वत्र सरज्युं दीठुं कहे छे, तो दंभादिक घटादिकना कारण केम सद्दहे. सरज्युं ते तत्प्रकारक सिसृक्षायेज. तेणें तो बाह्य कारण सर्व अन्यथा सिद्ध थाय. ए णें करी ॥ जं जहा तं भगवया दिठं, तं तहावि परिणमइ ॥ ए सूत्रव्याख्यान थयुं. जेमाटे केवलज्ञान ते व्यापक छे, कारण नथी. तेहज कहे छेः—कारणभेली सरजित दीठुं एम कहेतां तो निज इष्ट विघटे नही जे माटे दंभादि कारण सहितज घटादिक सरज्या छे. एम कहेतां ज्ञानादि कारण सहितज मोक्ष सरज्यो ॥ १०६ ॥

॥ तृप्ति हशे जो सरजी हशे, भोजन करवा शुं धसमसे ॥ पापें उद्यम आगल करे, धरमें शुं सरज्युं उच्चरे ॥ १०७ ॥ अर्थः— अथवा अव्यभिचारी चोरपारदारिकनी सार्थें पण शुं रीश करें छे. तेतो सरज्युं छे तेज

करे छे. वळी जो सरज्युंज लइश तेवारें तो सरज्युं हशे तेवारें पोतानी मेले तृप्ति थशे. भोजन करवाने शामाटे धसमसे छे? ए प्रमाणे जोतां तो पापना जेटलां कार्य छे, ते ते कार्यनां जे जे कारण छे. तेने सेववाना उद्यमने आगल करे छे. कृष्यादिक आरंभ करतां तो पाछो जोतो नथी. पण धर्मनी वेलायें गळीया बलदनी पेरें थइ रहे छे, अने सरज्युं हशे ते थाशे एम मुखमांथी शुं भाखे छे ॥ १०७ ॥

॥ पहेला गुणजे गुणविण थया, पाकी भवथितिनी ते दया ॥ थया जेह गुण ते किम जाय, गुणविण किम गुण कारज थाय ॥ १०८ ॥ अर्थः—पहेला गुणविना गुण थयो पछी गुणनुं काम ते उपर कहे छेः— पहेला जे गुणविना गुण थया ते पाकी भवस्थितिनी दया छे. एटले ते भवस्थिति परिपाक कार्य जाणवुं. हवे ते थया जे गुण ते शुं जाय? केम रहे तेवारें अनन्यथासिद्धनियतावस्थिति पणे कारण केम होय? गुणविना गुणकार्य ते केम थाय? ॥ स्वाव्यविहितोत्तरोत्पत्तिकत्व सामान्याधिकरण्यो भयसंबंधेन गुणविशिष्टगुणत्वावच्छिन्नं प्रति गुणः कारणं तदन्यगुणप्रतिकाल विशेष इति तत्वम् ॥ १०८ ॥

॥ एक उपायथकी फल पाक, बीजो सहजें कालविपाक ॥ करमतणो इम जाणी भेद,कारणमां शुं आणो खेद ॥ १०९ ॥ अर्थः—भवस्थिति परिपाक तेपण आत्मनिष्ठ तथा भव्यता पर्याय ते गुणविना केम थाय? ते उपर कहे छे—एक उपायथी फलनो पाक थाय छे पलाल प्रमुखमां घाली ने अकालें आंबा पचवीयें. बीजा सहेजें कालथकीज पाका होय छे, एम कर्मविपाकें एक उपाय होय छे, अने एक सहेजे छे. ए कारणना भेद जाणीयें छैयें. माटे कारणमां प्रायें शो कारण खेद आणो छो? केटला एक सहेजें थया तो हवे उद्यम शो करियें, एम शुं मुंजाउ छो? ॥ १०९ ॥

॥ अथवा गुणविण पूरव सेव, मृडुतर माटे होइ ततखेव ॥ तिम नवि गुणविण सिद्धि गरिष्ठ, तेहमां बहुलां कह्या अरिष्ट ॥ ११० ॥ अर्थः— अथवा अपुनर्बंधकादिक्रिया ते पूर्व सेवा छे ते मृडुतर कार्य थाय तेमाटे गुणविना पण होय (तेम के०) तेणीपरें (ततखेव के०) तत्काल गरिष्ठ सिद्ध गुणविना केम? जेम महाविद्यानी सिद्धिमां वेतालादिक उठे तेम उत्कृष्टगुण सिद्धिमां बहुलां अरिष्ट होय ते गुणविना केम टले? अतएव श

मदमादिमंतने अधिकारिता ते जाणी मार्गप्रवृत्तें शमदमादि संपत्ति अन्यो न्याश्रय शास्त्रकारें टाल्या छे. अतुलशमदमादिमंतने अधिकारिता प्रवृत्ति विशिष्ट शमादि सिद्धि ए अभिप्राय ॥ ११० ॥

॥ भरतादिकनें छांडी पंथ, राजपंथ किरिया निर्ग्रंथ ॥ उवटे जातां को इ उगस्यो, तोपण सेर न तजीयें भस्यो ॥ १११ ॥ अर्थः—भरतादिक क्रिया कस्या विना भावनायेंज मुक्ति पाम्या, ते पंथनें छांडीने पंथ एटले राजपंथ ते निर्ग्रंथक्रियाज कहियें. जे माटें कोइक उवाटें जातां उगस्यो लूंटाणो नहीं. तोपण भस्यो सहेर (नगर) न त्यजीयें, ए शुद्ध व्यवहार छे. अतएव भरताद्यवलंबन लेइ जे क्रिया उछेदे छे, तेने शास्त्रमां महापातकी कह्या छे. रोग घणा, औषधपण घणा, एम मार्ग भिन्न भिन्न छे, पण राज मार्ग व्यवहारज सद्दहियें ॥ १११ ॥

॥ तीरथसिद्धादिकनो भेद, नियित तिहां नवि क्रिया उछेद ॥ जाणी कष्ट सहे तप होइ, करम निमित्त न कहियें सोइ ॥ ११२ ॥ अर्थः—तीर्थसिद्ध अतीर्थसिद्धादि भेद नियति प्रमाणे छे, पण क्रिया उछेद न होय तत्कालें तत्सामग्री जनक होय. हवे जे एम कह्युं के, कष्ट करवुं ते कर्म निमित्त छे, ते ऊपर कहे छे—जाणी कष्ट खमे ते तप होय पण कर्मवेदना मात्र नही. अतएव ॥ देहदुःखमहाफलेंहोज्ञात्वेति शेष कह्युं. आभ्युपगमिक औपक्रमिक दुःखसहन गुण तेहज तप. तेहथी गुणवृद्धि अने गुणाप्रतिपात होय, क्रियानुं पण एहज फल ॥ अवदाम च ॥ गुणवृद्ध्यै ततः कुर्यात् क्रियां स्खलनामयीम् ॥ एकं तु संयमस्थानं, जनानामवतिष्ठते ॥ अतएव मार्गाच्यवन निर्जरार्थं परितोष्टव्याः दरी जहा इति तत्वार्थे प्रोक्तं दुःखस्यानादित्वात्तद्धयोऽनादेयश्चेत्कर्मणोऽनादित्वात्तन्मोक्षोपि तथा स्यात् स्वभावेसमवस्थानेन दुःख तत्सहनसंकल्पश्चेत् मोक्षे भवेच्च सर्वत्र निःस्पृहो मुनिसत्तम इतिवचनात्तदा मोक्षसंकल्पोऽपि नेति तुल्यमदः॥ ११२ ॥

॥ बहु इंधण बहु कालें बले, थोडे कालें थोडुं जलें ॥ अग्नितणी जिम शक्ति अभंग, तिम जाणो शिवकारण रंग ॥ ११३ ॥ अर्थः—कोइ घणे कालें मोक्षें जाय छे, कोइ थोडे कालें मोक्षें जाय छे. ते केम? ते ऊपर कहे छे—जेम घणा इंधन होय ते घणे कालें बले, अने थोडुं इंधन होय ते थोडे कालें जले, पण अग्नीनी शक्ति अभंगज छे. तेम शिवकारण ते

ज्ञानादिकनो संग जाणो. क्रमे बहुकाल क्षपणीयने साधन बहुकालें खपावे. स्तोककाल क्षपणीयने साधन स्तोककालें खपावे. तथा स्वभाव ते भव्यता तथा नियत छे. जो भोगवेज कर्म खपता होय तो केवारे कोइ मोक्षें जाय ज नहीं. चरमशरीरने पण शास्वादनादिक अपूर्वकरणांतने अंतःकोटाकोटि प्रति समये सात कर्मनो बंध छे. माटे क्रमें यथोचित कर्मसाधने जीव मोक्षें जाय इम सद्दहीयें ॥ ११३ ॥

॥ दंमादिक विण घट नवि होइ, तस विशेष मृद्भेदें जोइ ॥ तिम दल भेदें फलमां भिदा, रत्न त्रय विण शिव नवि कदा ॥ ११४ ॥ अर्थः—दंमादिक विना घटादिक केवारें नीपजे नही. पण (तस विशेष के०) घटादि विशेष ते उपादान कारण जे मृत्तिकाविशेष तेथी होय. तेम रत्नत्रयविना मोक्ष कदापि न होय पण फल जे तीर्थंकरातीर्थंकरादि सिद्धावस्थारूप तद्भेद ते (दलभेदें के०) जीवदल भेदें होय. ॥ उक्तं च विंशिकायां ॥ एय सच्च हेउ तुल्ल, भवत्तं हंदि य सवजीवाणं ॥ जंति एवय किचा, णो तुल्ला दंसणा इआ ॥१॥ विचित्रदर्शनादिसाधनोपनायकविचित्रानंतरपरसिद्धाद्यवस्थापर्यायोपनायक तथा भव्यत्वेतरकारणाक्षेपक मुख्य कारण धारवुं ॥ ११४ ॥

॥ सिद्धि न होय कोइ निजव्रत थकी, तोपण मत विरचो तेह थकी ॥ फलसंदेहें पण कृषिकार, वपे बीज लहि अवसर सार ॥११५॥ अर्थः—कोइ निजव्रतथकी चारित्रादिक क्रियाथकी कर्मवैगुण्यादिकें, सिद्ध न होय तोपण ए मोक्षसाधनथकी विरचसो मां, जेमाटे फल संदेहें पण (कृषिकार के०) करसणी जे छे ते सार अवसर वर्षाकालादि लइने बीज वपे छे, एटले वावे छे. अग्रिमकालभावि पवननैर्गुण्यादिसामग्री विघटक जाणी विरचता नथी. नहि फलावश्यंभावनिश्चयः प्रवृत्तौ कारणं किंतु प्रकृते इष्टोपायत्वंनिश्चय एव ॥ ११५ ॥

॥ हेतुपणानो संशय नथी, ज्ञानादिक गुणमां मूलथी ॥ तेमाटे शिवतणो उपाय; सद्दहजो जिम शिवसुख थाय ॥११६॥ इति अनुपायवादीगतः ॥ अर्थः—एहज कहे छेः—ज्ञानादिक गुण जे मोक्ष साधन छे, तेमां हेतुपणानो संशय नथी. सामान्य व्यभिचार अनुगता गुरुधर्मारोपस्थिति विना अन्वयव्यतिरेकें ज्ञानत्वादिकें कारणता निश्चय छे. जे मोक्षें गया छे, तथा जे मोक्षें जाशे, ते ज्ञानादि त्रय साम्राज्यें, अतएव प्रकाशशोधगुप्ति

द्वारें ज्ञान तप संयमने मोक्षहेतुता अवश्यकें कही ॥ नाणं पयासयंसो, हउं तवोसंजमो अ गुत्तिकरो ॥ तिएह्र पि समाउंगे, मुक्खो जिणसासणे नणिउं ॥ १ ॥ ए गाथायें कारणना प्रकाशादि व्यापार अर्जवा मोक्षार्थी प्रवर्त्ते, ए मोक्षनो उपाय सद्दहजो. जेम सत्प्रवृत्तें शिवसुख थाय ॥ ११६ ॥ ए अनुपायवादी गयो. एम मिथ्यामतिना ब स्थानक थया.

॥ ढाल ॥ चाल ॥ हवे नेदगुणना नांखीजे॥ ए देशीमां ॥ मिथ्यामतिनां ए षट थानक, जेह त्यजे गुणवंतो जी ॥ सूधुं समकित तेहज पामे, इम नाखें नगवंतो जी ॥ नयप्रमाणथी तेहनें सूजे, सघलो मारग साचो जी ॥ लहे अंश जिम मिथ्या दृष्टी, तेहमां को मत राचो जी ॥ ११७ ॥

अर्थः– ए मिथ्यामतिना ब स्थानक थयां तेमां एक नास्तिकवाद, बीजो अनित्यावाद, त्रीजो अकर्तृवाद, चोथो अनोक्तृवाद, पांचमो मोक्षानाववाद अने बहो अनुपायवाद, ए ब वादने जे गुणवंत त्यजे, ते सूधुं समकित पामे. तत्त्व परीक्षाजन्य अपाय रूप ज्ञान तेहज समकित बे. उक्तंच ॥ संमतौ ॥ जं जं तत्त परिस्सा, सद्दहमाणस्स नावउं नावे ॥ पुरिसस्सा नणिवोहे, दंसण सद्दो हवइ जुत्तो ॥ १ ॥ षटस्थानविषय तत्तत्प्रकारक ज्ञानें सम्यक्त्ववंत नगवंत न थाय. सम्यक्दृष्टी ते अंशअंशथी केवली बे, तेने नयप्रमाणें करी सघलो मार्ग साचो सूजे, अने मिथ्यादृष्टी ते एक अंशने तत्त्व करीने ग्रहे. बीजाशुं द्वेष करे, माटे तेमांहे कोइ राचशो मां ॥ ११७

॥ ग्रही एकेक अंश जिम अंधल,कहे कुंजर ए पूरो जी ॥ तिम मिथ्यात्वी वस्तु न जाणे, जाणे अंश अधूरो जी ॥ लोचन जेहनां बिहुं विकस्वर, ते पूरो गज देखे जी ॥ समकितदृष्टी तिमज सकल नय, सम्मत वस्तु विशेषें जी ॥ ११८ ॥ अर्थः– जेम कोइक अंधो पुरुष ते हाथीनो कोइएक अंश ग्रहीने ए कुंजर बे, एम सद्दहे. जे गजना दंत ग्रहण करे, ते हाथीने मूलकप्रमाण कहे, जे सूंढ ग्रहे ते दंडप्रमाण कहे, जे कर्ण ग्रहे ते सूपडा प्रमाण कहे,तेम मिथ्यात्वीपण वस्तुनो यावत्कर्म माने बे, तावत्कर्ममान पूर्ण जाणे नही, अधूरो एक अंशनेदादिक जाणे, परंतु जेहना बेहु लोचन विकस्वर बे, अनुपहत बे, तेतो गजने करचरणदंताद्यवयवें, संस्थानरूपादिकें विशिष्ट पूर्ण देखे. सकलनयसम्मत वस्तु बे, ते विशेषें जेम सम्यग्दृष्टी नयवादमां उदासीन थइ रहे, न निंदे, न स्तवे, कारण

विना नयभाषा एम बोले ॥ उद्दारिणिं अप्पियकारिणिंच, भासं न भासिज्ज सया सज्जो ॥ इति वचनात् ॥ ११७ ॥

॥ अंशग्रही नय कुंजर कळ्या, वस्तु तत्व तरु भांजे जी ॥ स्यादवाद अंकुशथी तेहनें, आणे धीर मुलाजे जी ॥ तेहनिरंकुश होये मतवाला, चालाकरे अनेको जी ॥ अंकुशथी दरबारें छाजे, गाजे धरिय विवेको जी ॥ ११९ ॥ अर्थः– नयरूप कुंजर छे, ते एकेक अंशग्रही उन्मत्त थका कळ्या छे, ते वस्तुतत्त्वरूप (तरु के०) वृक्षनें भांजे छे. अने जे धीर पुरुष छे, ते अंशग्राही नयरूप कुंजरने स्यादवाद अंकुशें मुलाजे आणे, वश करे. अने निरंकुश थइने निरपेक्षथको चालतो मतवालो होइने वेदांतादि वादमांहे प्रवेश करीने, अनेक चाला करे, जेम हाथीपण निरकुंश होय, तो हाट घर प्रमुख भांजी नाखे, स्वतंत्रथको वनमांहे फरे, अने जो तेने अंकुश होय तो ते अंकुशथी दरवारें छाजे, विवेक धरी पट्टहस्ती थइ गाजे, तेम इहांपण जे स्याद्वाद अंकुशे शीखव्या, ते श्रीजिनशासनरूप राजद्वार छे तिहां आप वलें गाजे छे ॥ ११९ ॥

॥ नैयायिक वैशेषिक विचस्या, नैगमनय अनुसारें जी ॥ वेदांती संग्रहनय रंगी, कपिल शिष्य व्यवहारें जी ॥ ऋजुसूत्रादिक नयथी सौगत, मीमांसक नय भेलें जी ॥ पूर्ण वस्तु ते जैनप्रमाणे, षट्दर्शन एक मेलें जी ॥ १२० ॥ अर्थः– नैयायिक अने वैशेषिक ए वे दर्शन नैगमनयनें अनुसारें विचस्या. ते पृथग् नित्यानित्यादि द्रव्य माने, पृथिवी परमाणुरूपा नित्या कार्यरूपात्वनित्या ए प्रक्रिया नैगमनय ते नयद्वयात्मक छे.एकत्र प्राधान्येनोपक्रमात् मिथ्यात्वम् ॥ उक्तंच ॥ दोहिंवि णएहिं सछ, उलूएणयतहवि मिछत्तं ॥ जं सवि सम्मप्पहाणं, तणेण असूण निरवेरकं ॥१॥ तेम वेदांती संग्रहनयनें रंगें चाल्या, जेमाटे ते शुद्धात्मद्रव्य माने छे ॥ उक्तंच ॥ दवियनयपडिसुद्धा, नयएण संगह परूवणाविसउ ॥ तथा कपिलशिष्य पच्चीश तत्त्व प्रक्रिया मानता व्यवहारनयें चाल्या. उक्तंच ॥ जं काविलेय दरिसण, एयंदं चठियस्स वेत्तवं ॥ व्यवहार ते द्रव्यार्थिक भेद छे. तथा सौगत ते चोथा ऋजुसूत्रादिक नयथी थया. सौत्रांत्रिक, वैभाषिक, योगाचार, माध्यमिक, ए अनुक्रमे ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ अने एवंभूत नयथी थया. तथा मी

मांसक उपलक्षणें वैयाकरणादिक नयनेलें नयसांकर्यें थया, अने पूर्ण एट ले पूरण नय नंग प्रमाणे वस्तु षट्दर्शन नये एक मेलवी जैनप्रमाणे छे. नदंमि छ दंसण, समूहमइ अस्सइ इत्यादि वचनात् ॥ १२० ॥

॥ नित्यपक्षमां दूषण दाखे, नय अनित्य पक्षपाती जी ॥ नित्यवाद मांहें जे राता, ते अनित्य नयघाती जी ॥ मांहो मांहे लडे बे कुंजर, नांजे निज कर दंतो जी ॥ स्यादवाद साधक ते देखे, पडे न तिहां नगवंतो जी ॥ १२१ ॥ अर्थः– अनित्यनयना पक्षपाती क्षणिकवादी बौद्धादिक छे ते नित्यपक्षमांहे दूषण दाखे छे. अंकूरादिजनकाजनकत्वादिविरोधें क्षणिक बीजादि थापे छे. सदृशक्षणदोषें अनेदग्रहादि उपपादे छे तथा जे नित्यवादमांहे राता छे. ते अनित्यनयना घाती छे. ते एकांतें नित्य आत्मादिक माने छे ते मांहोमांहे बे हाथी लडे छे, अने लडतां थकां पोताना कर जे सूंढ तथा दांत तेने नाजे छे. अने जे स्याद्वादसाधक छे, ते तेमनी लडाइ देखे छे. पण नगवंत तिहां पडे नही. उदासीन रहे. उक्तंच ॥ अन्योन्यपक्षप्रतिपक्षनावाद्, यथा परे मत्सरिणः प्रवादे ॥ नयानशेषान विशेषमिछन्नपक्षपाती समयस्तथा ते ॥१॥ इति द्वात्रिंशिकायाम् ॥१२१॥

॥ तूटा रत्न न माला कहियें, माला तेह परोयां जी ॥ तिम एकेक दर्शन नवि साचा, आपहि आप विगोयां जी ॥ स्यादवाद सूत्रें ते गूंथ्या, समकित दर्शन कहियें जी ॥ समुद्र अंशनी समुद्र तणी परे, प्रगट नेद इहां लहियें जी ॥ १२२ ॥ अर्थः–तूटा रत्नने माला पर्याय न कहियें, जे वारें परोयां होय तेवारें माला पर्याय कहियें. तेम एकेक दर्शन तूटा छे, ते एकांतानिनिवेशें साचा न कहियें. आपेंज आप विगोयां छे, ते स्याद्वादसूत्रें गुंथ्या होय, तेवारें सम्यग्दर्शन कहीयें. स्यात्कारें एकांतानिनिवेश टले. जेम मालाकारने पुष्पादिक सिद्ध छे, तेहनी योजन रूप व्यापार मात्र मालाकार अधीन छे, तेम सम्यग्दृष्टीने सिद्धदर्शनने विषे स्याद्वाद योजनमात्र व्यापार छे. तावताजितं जगत्. समुद्रअंशने समुद्रमां जेटलो नेद तेटलो इहां नयप्रमाणमां प्रगट नेद जाणवो. उक्तंच ॥ नासमुद्रो समुद्रो वा, समुद्रांशो यथोच्यते ॥ नाप्रमाणं प्रमाणं वा, प्रमाणांशस्तथा नय ॥ १ ॥ इति ॥ गीतार्थें सत्य कहेलुं चित्तमां नावियें ॥ १२२ ॥

॥ वचन मात्र श्रुत ज्ञाने होवे, निज निज मतआवेशो जी ॥ चिंता

ज्ञानें नय विचारथी, तेह टले संक्लेशो जी ॥ चारामाहें अजाणी जिम कोइ, सिद्धमूलिका चारे जी ॥ भावनज्ञानें तिम मुनिजनने, मारगमां अवतारे जी ॥ १२३ ॥ अर्थः—वचनमात्र जे श्रुतज्ञान तेहथी निजनिज मतनो (आवेश के०) हठ होय जे पुरुष जे नयशास्त्र सांभलें, ते चिंता मान, बीजुं विचाररूप तेहथी हठ टले, संक्लेशरूप विचार जन्य सकलनय समावेशज्ञाने पक्षपात टले, तेणें स्वानुग्रह होय, भावनाज्ञान ते देशकालाद्यौचित्ये परानुग्रह शक्त बे, तेवी रीतें देशनादीये जेम परानुग्रह थाय, उत्सर्गापवादसार तादृश प्रवृत्ति होय " केयं पुरिसे कंचण ए इत्याद्यागमानुसारात् " पुरुष पशुरूप थयो तेहने स्त्रीयें जेम छायानो चारो व्यंतरवचनें चराव्यो. जेवारें संजीवनी औषधी मुखमांहे आवी तेवारें स्वरूप प्रगट थयुं. तेम भावनाज्ञानवंत सद्गुरु ते भव्यप्राणिने अपुनर्बंधकादिक क्रियामां तेरीतें प्रवर्त्तावे. जेरीतें तेने सम्यग्दर्शनरूप संजीवनी औषधी आवे, के जेथी तेनुं निश्चयरूप प्रगट थाय. मिथ्यात्वमय पशुरूप टली जाय. उक्तंच षोडशके ॥ आद्य इह मनाक् पुंस, स्तद्दारा दर्शनग्रहो भवति ॥ न भवत्यसौ द्वितीये चिंतायोगाद् यद्यपि चारिचरकचारणाविधानं ततश्चरमे सर्वत्र हि तादृशीस्तिगांभीर्यात् समरसापत्त्यापश्चोसत्यतमभावि ॥ उदक अमृत सरखां कह्यां बे. उक्तंच ॥ उदकपयोमृतकल्पं, पुसां मऽज्ञान एव मारय ॥ तद्विधिमत्त्व चतुर्गुरुर्विषयतृरूपहारिनियमेन ॥ १२३ ॥

॥ चरण करण मांहे जे अति राता, नवि स्व समय संभाले जी ॥ निज पर समय विवेक करी नवि, आतमतत्व निहाले जी ॥ सम्मति मांहे कह्युं तिण न लह्युं, चरण करणनो सारो जी ॥ तेमाटे ए ज्ञान अभ्यासो, एहज चित्त दृढ धारो जी ॥ १२४ ॥ अर्थः—जे साधु चरणसित्तरी करणसित्तरी मांहेज अत्यंत राता बे, स्वसमयव्यवहारथी स्वसिद्धांतार्थपरिज्ञाननिश्चयथी जडश्रुति विचारजन्य आत्मविवेक न संभारी, निजपर विवेक अण पामी, शुद्धात्मस्वरूप न निहाले, तेणें संमुग्धजीवाजीवादिज्ञानें क्रिया कीधी. पण चरणकरणनो सार न पाम्यो. जेमाटे शुद्धात्मज्ञाननो सार चरणकरणादिसाधन बे, ते तत्कारणीभूत भव्यत्वशुद्धिद्वारें उपकारी बे. मिथ्याज्ञानोन्मूलननुं कारण तत्वज्ञान बे, साधनमांहे पण ज्ञान अंतरंग बे, क्रिया बहिरंग बे, ए सर्व संमतिग्रंथ मध्ये कह्युं बे. तथा गाथा ॥

चरणकरणप्पहाणा, ससमय परसमय मुक्कवावारा ॥ चरणकरणस्स सारं, णछिय सुद्धं ण याणति ॥१॥ श्रीदशवैकालिक मध्येपण "पढमं नाणं तउ दया" ए उपदेश छे. तिहां ज्ञान ते चारित्रोपयोगें षड्जीवनिकायानें संमुग्धपरिज्ञान एम जाणी मनःसंतोष करवो. जेमाटे तेहनी हेतु स्वरूप अने अनुबंध्यादि शुद्धि करवी. ते परीक्षारूप निश्चयज्ञान विना न होय. निश्चयज्ञाननेंज निश्चय चारित्र आवे. उक्तंच आचारांगे ॥ जं सम्मति पासहा, तं मोणंति पासहा ॥ जं मोणंति पासहा, तं सम्मति पासहा ॥ इत्यादि एम कहेतां अगीतार्थ साधु क्रियावंत छे, तेने चारित्र नावे. कोइ कहेशे के, एम कां कहो छो? तेने कहियें के, जो गीतार्थ निश्चय न होय, तो नहींज आवे. जो गीतार्थनो निश्चय होय तो उपचारें चारित्र होयज. उक्तंच ॥ गीयछो य विहारो, बीउ गीयछनिस्सहो नणिउ ॥ इत्तो तइअ विहारो, नाणुन्नाहो जिणवरेहिं ॥ १२४ ॥

॥ जिनशासन रत्नाकरमांथी, लघुकपर्दिका माने जी ॥ उद्धरिउ एह नाव यथारथ,आप सकति अनुमाने जी ॥ पण एहने चिंतामणि सरिखा, रतन न आवे तोलें जी ॥ श्रीनयविजय विबुध पय सेवक, वाचक जस इम बोले जी ॥ इति श्रीसम्यक्त्व चतुष्पदी समाप्ता ॥ लोकगिरासमर्थित नय प्रस्थानषट्स्थानकव्याख्या संघमुदे यशोविजय श्रीवाचकानां कृतिः ॥

अर्थः– (जिनशासन के०) प्रकरण परिसमासें एटले जिनशासन रूप रत्नाकर ते मांहेथी ए षट्स्थानक नाव उद्धरिउं. ए उद्धार ग्रंथ यथार्थ छे. जिनशासनरत्नाकरने लेखे ए ग्रंथ लघुकपर्दिका मान छे. अने रत्नाकरतो अनेक रत्नें नयो छे. ए उपमा गर्व परिहारने अर्थें करी छे. पण शुद्धनाव एवा विचारियें तो चिंतामणी सरखा रत्नपण एने तोले नावे. ग्रंथकर्त्ता गुरुनामांकित यश एवुं पोतानुं नाम कहे छे, एटले श्रीनयविजयविबुधना पदनो सेवक वाचक श्रीयशोविजय उपाध्याय एणीपरें बोले छे ॥१२४॥ इतिश्रीसम्यक्त्व चोपई समाप्ता ॥ श्रीराजनगर एटले अहमदावाद नगरने विषे तिहां प्रसिद्ध जे हेमश्रेष्ठिसुत श्रीताराचंदनाम्ना तेनी प्रार्थना थकी लोक नाषायें करी नयप्रस्थान एटले नयमार्गे तेणे करी षट्स्थानकनी व्याख्या श्रीसंघने हर्षने काजें श्रीयशोविजयजीनी कृति जाणवी ॥

संतोष विषे सोरठा.

॥ हियडा कर संतोष, होणहार ते होयसी ॥ दैव न दीजें दोष, ठेहा लाग्न न ठंभियें ॥१॥ दोहा ॥ नांहि सुख संतोषबिन,कोटी करो उपाय ॥ चक्रवर्त्ति हू डुःखीव्है, देव सु अधिक दिखाय ॥२॥ मानि न तामें डुःख सुख, नांहि वस्तुमें रंच ॥ पदार्थको नहिं अंत कबुं, कर संतोष प्रपंच ॥ ३ ॥ नृप असंतोषी डुखी, सुखि विरक्त संतोष ॥ कहो सौख्य कामें रहत, सब मनहीको तोष ॥ ४ ॥ जबलों नहि संतोषहिय, तबलों डुःखी सोई ॥ जब संतोष नयो उदय, तासम सुखि नहि कोइ ॥ ५ ॥ विरक्तता में सुख रहत, तस कारण संतोष ॥ जो यति व्हे आशा करै, तौ तस डुखको दोष ॥ ६ ॥ जब दमडीकी चाह नइ, तब दमडीको होय ॥ जब दमडीकी चाह गइ,तब सम दीपत सोय ॥ ७ ॥ प्रापतिमें कबु हर्ष नहिं, शोक हानिमें नांहि ॥ सो संतोषी जानियें, लेश डुःख नहिं तांहि ॥ ८ ॥

दैव विषे सोरठा.

॥ जाता तणां जुहार, वलतातणा वधामणा ॥ दैवतणो व्यवहार, मेलिये के मिलियें नहीं ॥ १ ॥ दोहा ॥ सरवर केरे दीहडे,कंठे कंठे नीर ॥ दैव संयोगे विधि वसें, जग्यामांहि करीर ॥ २ ॥ दैवह रूठो शुं करे, नाहुं उथले कूब ॥ के वेस्या घर पाठवे, के रमडावें जूब ॥ ३ ॥ दैव न काहू तें टरत, लिख्यो करै सो सत्य ॥ विधिने दैव कियो प्रगट, तांहि न त्यागत नित्य ॥४॥ दैव कर्म वश है जगत, दोमें आदी कौन ॥ याको करौ विचार जन,सुख पावहुगे जौन ॥५॥ दैव नांहि इतही अधिक, दैव देवमें श्रेष्ट ॥ देव दैववश पुनि गिरत, नोग न पुनी अनिष्ट ॥६॥ दैव न होवै अन्यथा, कथा सुनो जगमांहि ॥ राम दैव वश वन फिरे, रावण नाश करांहि ॥७॥

प्रीति विषे दोहा.

॥ प्रीति रीति कबु औरहै, जाणे जाणणहार ॥ गुंगे गुड खाया तणो, स्वाद कहे शुं वार ॥ १ ॥ प्रीत मेह अरु मोरडी, आवत दे अति मान ॥ पुकारि के जगमें कहत, आवत मेह महान ॥ २ ॥ मेह पिठानत मोर नहि, मोर करी तस प्रीत ॥ पुर्व जन्मके कर्मथें, होत प्रीत अस रीत ॥ ३ ॥ प्रीत प्रीत सब जन कहे, जुदी प्रीतकी रीति ॥ लोह चमक जड दोउ पें, देखत चलत सुनीति ॥ ४ ॥

अथ

॥ गुर्जरभाषासहित दृष्टांतशतकस्य प्रारंभोऽयम्॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥

॥ नत्वा श्रीऋषभं सदा वृषधरं सौख्याकरं सुंदरं, देवेंद्रादिनुतं मुनींद्रम हितं पौरस्त्यतीर्थंकरम् ॥ श्रोतॄणां प्रतिबोधकं सुखकरं दृष्टांतकानामहं, कुर्वे काव्यशतं निजापरनृणां व्याख्यानसद्धेतवे ॥ १ ॥ अर्थः—ग्रंथकर्त्ता मंगलाचरणने अर्थें श्रीतीर्थंकरने नमस्कार करे छे. जे निरंतर वृष जे धर्म तेने धारण करनार, सुखना भंमार, तथा सुंदर मनोहर रूपवंत, वली दे वेंद्रादिकें जेमने नमस्कार करेलो छे, अने पुंमरीकादिक महामुनियें जेम नुं पूजन करेलुं छे, एवा जे प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव भगवान तेमने ग्रंथकर्त्ता कहे छे के, हुं नमस्कार करीने, सांभलनारने बोधनुं करनार, त था भव्यजीवने मांगलिकनुं करनार एवुं अने पोताने तथा अन्यजनोने व्याख्यान करवानां रूडा कारणमाटे दृष्टांतना सो काव्यनी अर्थात् दृष्टां तशतक नामा ग्रंथनी हुं रचना करुं छुं ॥ १ ॥

तिहां संसारसुखने मधाबिंडुनी उपमा दईने पहेलो दृष्टांत कहे छे.

॥ कश्चित्काननकुंजरस्य भयतो नष्टः कुवेरालयः, शाखासु ग्रहणं चकार फणिनं कूपे त्वधो दृष्टवान् ॥ वृक्षो वारणकंपितोऽथ मधुनो, बिंदूनितो लेढि स, लुब्धश्चामरशब्दितोऽपि न ययौ संसारसक्तो यथा ॥ २ ॥ अर्थः—कोइक पुरुष, वनमां जतां कोइक हाथीने देखी तेना भयथी नाठो. ते जेवारें हा थी तेनी नजीक आव्यो, तेवारें ते पुरुष कुवेरालय एटले कुवेरस्य आलयः कुवेरालयः अर्थात् वडनी पासेना कूवामां लटकती एवी एक वडवृक्षनी जे माल, तेने ग्रहण करतो हवो. एटले भयथी आकुल थयेलो थको कूवा मां लटकती वडवाइने पकडी अधवचाले लटकी रह्यो. तेवार पछी ते पु रुष हेठुं जुवे छे,तो कूआनेविषे चार महोटा सर्प (अजगरने) देखतो ह वो. अने ऊपर जोयुं तो, जे वडवाइने ते पोतें पकडी रहेलो छे. ते वड वाइने एक कालो उंदर अने बीजो धोलो उंदर एवा बे उंदर कापे छे. व ली तेनी उपर एक वडनी मालें महोटो मधुपूडो वलगेलो छे. एवा सम यमां हाथीयें आवीने ते वडवृक्षने कंपाव्युं. एटले धंधोल्युं. तेथी मधुपू

डाली मारवीउ उडीने ते पुरुषनें करडवा लागी. वली मधूश्राल पण फूटी पड्यो. तेमांथी रहीरहीने मधुनो बिंदू ते पुरुषना ललाट ऊपर पडवा लाग्यो. ते रेलो ऊतरतो ऊतरतो ते पुरुषना होठ ऊपर आव्यो. तेने तेणें जीनें करी चाख्यो. तेवारें मीठाश आवी, पछी ते वारंवार पडता एवा मधुना बिंदूउमां आसक्त थयेला पुरुषने विमानमां बेसी जनारा कोइ देवतायें विद्याधरें बोलाव्यो. अने कह्युं के, हे पुरुष! तुं आ विमानमां बेश, अने महारी साथें चाल, हुं तुऊने आ कष्टमांथी ढोडावुं. तोपण ते पुरुष मधुबिंदूना स्वादनी लालचें, लोभाणो थको, ते देवतानी साथें न जातो हवो. तेम जीवपण संसारमांहे मधुबिंदूसरखा अल्पसुखनी ऊपर आसक्त थयो थको, देवविमानप्राप्तिसमान धर्मनो अंगीकार करतो नथी. ए कथा इहां संक्षेपथी कही ढे. विस्तारें बीजा ग्रंथोथी कहेवी. ॥ दोहा ॥ जंबूस्वामी प्रतिबूऊवे, मकरो हठ मुऊनार ॥ नर लुब्धो मधुबिंदूए, तिम हुं न रहुं संसार ॥ १ ॥ मधुबिंदू संसारसुख, जाणी ढांम्या आज ॥ साधुपणुं विमानसम, लीजें अविचल राज ॥ २ ॥ इति कथा ॥

हवे अनेकांतवादि एवा एक श्रीजिनधर्मविना बीजा पांचे दर्शनवाला एकांत वादी ढे, ते ऊपर हाथीने जोनारा पांच आंधलानो बीजो दृष्टांत कहे ढे.

॥ पंचांधा गजदर्शनार्थमगमन् कर्णांघ्रिशुंडादिज, पुछान् वीक्ष्य गजं व दंत्यथ मिथो दृष्टो मया कीदृशः ॥ शूर्पस्तंभकदल्ययोधवलवच्चक्रुर्विवादं जडा, स्तद्वत्सर्वमतानुगा मदयुता सर्वांगवादी जिनः ॥ ३ ॥ अर्थः—कोइ एक पांच आंधला पुरुषो हता ते हाथी जोवाने अर्थें हाथीनी पासें आव्या, तेवारें एक आंधलायें हाथीना कान ऊपर हाथ फेरव्यो, बीजायें पग ऊपर हाथ फेरव्यो, त्रीजायें सूंढ ऊपर, चोथें दंतोसल ऊपर, पांचमें पुछ ऊपर एम हाथ फेरवी पाठा आवी मांहोमांहे हाथीनुं स्वरूप कहेवा लाग्या. तिहां जेना हाथमां हाथीनो कान आव्यो हतो तेणें कह्युं के, हाथी तो सूपडा सरखो ढे, जेना हाथमां हाथीनो पग आव्यो हतो तेणें कह्युं के, हाथी देरासरना स्तंभ जेवो ढे, जेना हाथमां सूंढ आवी हती, तेणें कह्युं जे हाथी केलना स्तंभ जेवो ढे, जेना हाथमां दांत आव्यो हतो, तेणें कह्युं के, हाथी मुसल जेवो ढे, अने पांचमाना हाथमां पूंठडुं आव्युं हतुं, तेणें कह्युं के, हाथी वांसडा जेवो ढे. एम ते जड मूर्ख मांहोमांहे विवाद करतां

एकें कह्युं तुं खोटो छो, तो बीजायें कह्युं तुं खोटो छो, अने हुं साचो छुं. एम परस्पर कहेवा लाग्या,तेम पांच मतवाला वादियो सर्व मदयुता एटले अहंकारें युक्त थका अकवक बोल्या करे छे माटे ते अंधसमान जाणवा, अने एक सर्वांगवादी अनेकांत पक्षनो धरनार ते तो जैनमत छे ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ षटमत है संसारमें, पंच ते अंधसमान ॥ इकइक वस्तूने ग्रहे, जिनमत सबे प्रधान ॥ १ ॥ कालो सहाव नियइ, पुव्वकयं पुरिसकारयं चेव ॥ समवाए सम्मत्तं, एगंतं होइ मिछत्तं ॥ २ ॥ ३ ॥

हवे जे जेवुं करे ते तेवुं पामे तेनी ऊपर दीवानो दृष्टांत कहे छे.

॥ श्लोकः ॥ संपृष्टा विभुनैकदा निकटगाः कृष्णं कथं कज्जलं, नो वर्त्यादिषु कालिमा किल ततः प्राहैकधीमान्नृपम् ॥ ध्वान्तं नक्षति दीपकस्तु नृपते तेनैव कृष्णाञ्जन–माहारो भुवि यादृशो भवति वा नीहारकस्तादृशः ॥ ४ ॥ अर्थः– एकदिवसने विषे कोइ राजाए पोताना सभामां बेठेला सभासदोने पूछ्युं, के चराक दीवो वले छे तेनीऊपर दीवानी सिंगे वाट मांथी जे कालुं काजल पडे छे. ते केम पडे छे? कारण के दीवा मांहे कपासनी वाट छे तेतो धोली छे. तेमां कालापणुं नथी. अने वली अग्नि छे, ते रातो, पीलो जणाय छे. अने, तेलपण रातुं पीलुं छे. एमां कालाशतो देखातुं नथी. त्यारें एमां कालुं काजल उत्पन्न थयुं, तेनुं शुं कारण? ते सांभली, एक विद्वान सभामांहे बेठो हतो, तेणें राजाने कह्युं के, हे राजन्, दीपक जे कराय छे ते अंधकारनो नाश करवा माटे कराय छे. माटें ते दीवो अंधकारनुं भक्षण करे छे. तेथी कालुं काजल उत्पन्न थाय छे. जे कारण माटे लोकमांपण प्रसिद्धि छे के, जे जेवा रंगनो आहार करे,ते तेवाज रंगनो निहार पण करे, ए एनो उत्तर छे. तेम जे जन, जेवुं कर्म करे छे, तेने तेवुं फल प्राप्त थायछे. उक्तंच ॥ वर्त्तिस्तु धवला ज्ञेया, तैलं पीतं च दृश्यते ॥ दीपो रक्तस्तथा भाति, कज्जले श्यामता कथम् ॥ १ ॥ यादृशं भुज्यते चान्नं, पच्यते जठराग्निना ॥ दीपेन तमसं भुक्तं, नीहारोऽपि च तादृशः॥ २ ॥ इति ॥ ४ ॥

हवे जे पोतानी मेले पोतानां वखाण करे, पण गुण विना जगत वखाणे नहिं. तेनीऊपर सूवर अने सिंहनो चतुर्थ दृष्टांत कहे छे.

॥ सत्रे क्रोडमृगाधिपौ च मिलितौ ब्रूते हरिं शूकरो, वादं त्वं वद रे मया सह हरे नो चेन्मया हारितम् ॥ श्रुत्वा तद्वचनं हरिर्गदितवांस्त्वं

याहि रे सूकर, लोकान्ब्रूहि मया जितो मृगपतिर्जानन्ति मे ज्ञा बलम् ॥५॥
अर्थः—एक वनने विषे सूवर तथा सिंह ए बन्ने नेला थया. त्यारे सिंहप्रत्ये सूवर कहे ले के, हे सिंह तुं घणा दिवसे मने मळ्यो, माटे हवे मारी साथे वाद कर, अने जो वाद न करे तो एम कहे के, हुं हार्यो, अने तुं जीत्यो, एटलुं कहीने पढी जा. एवुं वचन सांजली सिंहें विचार्युं, जे आ नीचनी साथें वाद करवो योग्य नथी. एम चिंतवी सूवरने कह्युं के, अरे सूवर! तुं जा ने लोकोने कहे जे के में सिंहने जीत्यो अने सिंह हार्यो; परंतु हे सूवर जे विद्वान हशे ते माहरी बुद्धिना बलने रूडी रीतें जाणे ले. कह्युं ले के,—'गच्छ शूकर नद्रं ते, वद सिंहो जितो मया ॥ पंम्डिता एव जानंति' सिंहशूकरयोर्बलम् ॥ १ ॥ ५ ॥

हवे नीचनो संग करवा ऊपर कागडानो पांचमो दृष्टांत कहे ले.

॥ नृपो वृक्षतले स्थितस्तडुपरिस्थौ हंसकाकौ तदा, विष्ठाकेन कृता नृपोपरि शरं क्रोधान्नृपो मुंचति ॥ लग्नःपक्षिपतेर्गतश्च बलिभुक् हंसोऽपतभूतले, तं दृष्ट्वाह नृपो मयोज्ज्वलतरो दृष्टोऽद्भुतो वायसः ॥ १ ॥ अर्थः—एकदिवसें कोइएक राजायें काडनी हेठे पोतानो घोडो उन्नो राख्यो, अने पोतें पण उन्नो रह्यो. एवामां तेज फाडनी ऊपर एक राजहंस तथा एक कागडो ए बन्ने पक्षि बेठां हतां तेमां कागडायें राजानां उज्ज्वल वस्त्र देखीने तेनी ऊपर विष्ठा नांखी, तेनाथी वस्त्र खराब थयां, ते जोइ राजाने रीस चडी तेवारे कवाण लइने बाण फेंक्युं, ते वखतें कागडो उडी गयो अने ते बाण हंसने वाग्युं, तेथी ते हंस नीचे राजानी आगल आवी पड्यो. तेनी सामे जोइने राजा बोल्यो के आवो उज्ज्वल कागडो में कोइ दिवस जोयो नथी. ए अपूर्व वात देखाय ले. त्यारे हंस कहे ले के, हुं कागडो नथी, हुं तो उज्ज्वल हंस लुं; पण नीचना संगथी महारुं मृत्यु थयो ले. कह्युं ले के,—'नाहं काको महाराज; हंसोऽहं विमले जले ॥ नीचसंगप्रसंगेन, मृत्युरेव न संशयः ॥ १ ॥ हंस तरंतो देखि के, तुं किम तरियो कग्ग ॥ तोरि पियारी जे करे, तले मुंडि ऊपर पग्ग ॥ १ ॥ इति पंचम दृष्टांत ॥ ६ ॥

हवे जे जेवुं करे ते तेवुं फल पामे ते उपर लहो चोरनो दृष्टांत कहे ले.

॥ कुर्मेदाढ्यगृहेऽकरोन्निशि हरः खातं च पद्माकृति, तन्मध्ये क्षपितो क्रमो धनतृषा ज्ञातस्तदा स्वाधिपैः ॥ अंतस्थैर्ग्रहणं पदोर्बहितरं मित्रैः कृतं

हस्तयोः, खातान्तै र्निशितैः प्रपीडिततनुः संघृष्यमाणो मृतः ॥ ७ ॥

अर्थः—कोइ न जेदाय एवा धनवंतना घरने विषे चोरो चोरी करवा आव्या; पण ते घरने पाटीयां जडेलां हतां, तेमां एक चोरें खातर देतां पाटीयांमांहे कमलना जेवुं आकार दीधुं. तेमां इव्यना लोजें जे चोरे खात्र दीधुं हतुं, तेज चोरें पोताना बेहु पग नांख्या. ते वखते घरधणीयो जागी गया, अने तेमां रहेला मनुष्यें चोरना बन्ने पगने पकडी लीधा. त्यारे ते चोरे बाहार रहेला चोरोने कह्युं के, मने झाल्यो बे, माटे बाहेर काहाडो. ते सांजली बहार रहेला चोरो ते चोरने हाथें झालीने खेंचवा लाग्या. ते मज मांहे रहेला पुरुषो तेने मांहेली कोरें ताणवा लाग्या. अने बाहेर रहेला बाहेर ताणवा लाग्या. एम बेहु तरफथी ताणाताण थवाथी कमलाकार खात्रना तीक्ष्ण कांगराथी ते चोर पीडित थयो. तथा घर्षण पाम्यो बतो, तत्काल मरण पाम्यो. माटे जे जन जेवुं कर्म करे, तेने तेवुं फल मले. कह्युं बे के ॥ यादृशं क्रियते कर्म, तादृशं प्राप्यते फलम् ॥ यथा प्राप्तं तु चौरेण, हस्तखातकृतेन वै ॥१॥ तेणे जहा संधिमुहे गहीए, सकम्मुणा किच्चइ पावकारी ॥ एवं पया पिच्च इहं च लोए, कम्माण कम्माण न मुक्क अबि ॥ २ ॥ इतिषष्ठी कथा ॥ ७ ॥

हवे तत्काल बुद्धि उत्पन्न थवाथी गइ वस्तु पण लब्ध थाय बे ते
ऊपर रींबनो अने मनुष्यनो आठमो दृष्टांत कहे बे

॥ कस्याप्याध्वनिकस्य सत्रमिलितो जालुस्तदा तद्ध्रुती द्वे गृह्णाति तदंबरं दितमतस्तस्याऽपि तन्नाणकम् ॥ तत्रागत्य जडः किमस्त्ययमिति प्राह स्म वक्त्रादिदंस प्राहास्य मुखात् प्रदेहि सुमते तेनाशु दत्तः करे ॥ ८ ॥

अर्थः—कोइ एक वटेमार्गुने वनने विषे मार्गे जतां एक रींब मल्यो. ते आवीने तेने वलग्यो. त्यारे ते पुरुषें रींबना बेहु कान पकड्या. तेथी ते रींबनुं कांइ जोर चाल्युं नहीं. बेहु मांहोमांहे अफलावा लाग्या. आथडने आथडते ते पुरुषनुं वस्त्र फाट्युं. तेवारे तेनी कटीयें सोनानी वासणी बांधेली हती तेमां जे सुवर्ण हतुं, ते तूटी हेठल पड्युं. तेटलामां कोइ जड पुरुष त्यां आव्यो. तेणें पूछ्युं के, आ शुं पड्युं बे? त्यारे तेने बुद्धि ऊपनी, तेथी जवाब आप्यो के, में रींबना कान झालीने अफलाव्या तेथी

एना मुखमांथी सोनैया निकल्या ते पड्या छे. तेवारे ते मूर्खे ते वात सा ची मानीने कह्युं के, हे रुडीबुद्धिवाला तुं आ रींछना कानथोडीवार मने पण अफलावा दे. त्यारें तेणे तेज वखतें ते जडने रींछना कान पकडवा आप्या, अने पोतानुं सुवर्ण वचाव्युं. कह्युं छे के, शीघ्रमुत्पद्यते बुद्धिः, साबुद्धि फलदा यथा ॥ भालुकर्णौ करे दत्वा,पांथेन रक्षितं च स्वम् ॥१॥ इति सप्तमी कथा॥ हवे सीघ्रोत्तर आपवानी बुद्धिविषे त्रण पुरुषोनो आठमो दृष्टांत कहे छे.

॥ केचिद्राजोपकण्ठं ययुस्त्रिपुरुषा भूपेन ते तत्कलाः, पृष्टा उचुरथो त्व रोत्तरकराः पश्चात्सभायां पृथक्॥ कूर्चं ते ह्यसितं कथं तव सितं सोऽवग्जरा पाण्डुरं, ऽन्यं ह्यस्मादितरं प्रधावनसितं कूर्चं न मात्रंगकात् ॥ए॥ अर्थः—कोइएक राजानीपासे चाकरी मेलववाने अर्थें त्रण पुरुषो गया तेम ने राजायें पूछ्युं के,तमे कांइ कला जाणो छो! त्यारे ते त्रणे जणें कह्युं के, हे स्वामी ! अमे कोइयें करेलां प्रश्ननो तत्काल उत्तर आपवानी कला जा णीयें छैयें. ते सांभली राजायें तेउने चाकरीमां राख्या. एक दिवस सभा मांहे परीक्षा लेवाने त्रणे जणोने राजायें जूदी जूदी रीतें प्रश्न पूछ्युं. ते मां पहेलांने पूछ्युं कें, ताहरी डाढीना वाल काला छे,अने माथाना वाल धोला छे तेनुं शुं कारण ? त्यारे तेणें शीघ्र उत्तर आप्यो के, डाढीना वा लथी माथाना वाल वीश वर्षे महोटा छे, कारण के दाढी तो वीश वर्षना माणसने थाय छे तेथी दाढीना वाल काला छे,अने माथाना वाल धोला छे. पछी वीजाने राजायें पूछ्युं के ताहरी दाढीना केश धोला छे, अने मा थाना केश काला छे तेनुं शुं कारण? त्यारें तेणें पण तरत जवाव आ प्यो के, साहेब दाढी वधारें धोवाय छे तेथी उज्वली रहे छे. पछी त्रीजाने पूछ्युं के, ताहरे दाढी तथा मूछ ए बन्ने नथी तेनुं शुं कारण ? त्यारे तेणें पण तत्काल उत्तर आप्यो के में मातानो पक्ष अंगीकार कर्यो छे,जेमाटे छोरुं होय ते पोतानी माता सरखो अथवा पितासरखो होय तेथी हुं म हारी माता सरखो रह्यो छुं.॥ए॥ कह्युं छे के न दृष्टं न श्रुतं येन, प्रश्ने पृ ष्टे तदुत्तरम् ॥ दीयते समहाप्राज्ञ, स्त्रिनिर्दत्तं नरैर्यथा ॥१॥ अष्टमो दृष्टांतः ॥

हवे भाग्यहीनने आगल आवेलो पदार्थ पण मलतो नथी, ते उपर ब्राह्मण ने ब्राह्मणीनो नवमो दृष्टांत कहे छे.

॥ काष्ठार्थं ह्यथनो च गछत इतो गौर्या तु दृष्टौ तदा, प्रादेशं च सुखी कुरु

त्समबलें नाग्यं तु नैवैतयोः ॥ यद्यूयं कुरुथाश्च मुंचति तयोरग्रे तदा कुंमलं, नूमावंधगतिं तदग्रवगतावंधाविवापश्यताम् ॥ १० ॥ अर्थः—काइ एक निर्धन स्त्रीपुरुष काष्ठ लेवाने माटे जाय बे ते समय ए बेहु जणने पार्वतीयें जोयां तेने जोई पार्वतीने करुणा आवी तेथी शिवने कहेवां लाग्यां के हे स्वामी नाथ! आ बेहु निर्धन स्त्रीपुरुषने तमो सुखी करो. त्यारें शिवजीयें कह्युं के हे अबला! ए बेहुनुं रुडुं नाग्य बेज नहीं,तो तेने आपणे शी रीतें सुखीया करी शकीयें? त्यारे पार्वतीयें कह्युं के जो आप तेने धनवान करो तो थाय. शंकरें ते वात स्वीकारीने ते बेहुनी आगल पोताना काननुं कुंमल हतुं ते रस्तामां नांख्युं. तेवारें ते नाग्यहीन स्त्रीपुरुष विचारवा लाग्यां के,आंधलां मनुष्य रस्तामां केम चालतां हशे? आपणें तेनो अनुनव करी जोइयें. एम विचारी बेहु जण आंखो मीची चाल्यां. तेथी रस्तामां पडेलुं कुंमल तेमनी नजरें न पड्युं,अने कांइक दूर जइने चकु उघाडी जोयुं. अर्थात् ते नाग्यरहित स्त्रीपुरुषने जे स्थलें कुंमल पड्युं हतुं, ते स्थलें अंध मनुष्यने चालवाना अनुनवनी बुद्धि उत्पन्न थइ. कह्युं बे के, नाग्यहीना न पश्यन्ति, नयनाग्रेऽपि मानवाः ॥ दंपतीन्यां यथा मार्गे, न दृष्टं कर्णनूपणम् ॥१॥ एम नाग्यहीन लोको नेत्र आगल पडेली चीजने पण जोता नथी. हवे पोताना स्वामीनुं चित्तेच्छित काम करनार मंत्रीनो दशमो दृष्टांत कहे बे.

॥ सत्रे राड्डरिणा कृतं च नृजलं गत्वा गतस्तत्स्थितं, दृष्ट्वा चिन्तितवान् सरो नुवि नवेत्तच्चक्तिं मंत्रिणा ॥ तेनागत्य सुकारितं यदि नृपः प्रोचे तदा मंत्रिणं, केनाऽत्रेदमतो मया स नृपते चित्तेप्सितं यत्त्वया ॥ ११ ॥

अर्थः—कोइक राजा वनमां गयो. तिहां राजानो घोडो मूतर्यो. ते मूत्रथी खाबोचीयुं नराणुं. ते थंनाइ रह्युं, पण नूमीमांहे सूकाणुं नहीं. तदनंतर राजा वनमां सेहेल करी ज्यारें पाबो तेज स्थलें आव्यो. तो त्यां नहीं सूकाएलुं एवुं मूत्रनुं खाबोचीयुं नजरे जोइने चिंतन करवा लाग्यो के, जो आ पृथ्वीनेविषे सरोवर होय तो जल सूकाय नहीं. ते राजानुं विचारेलुं कार्य तेना मंत्रियें जाणी लीधुं, अने घरे आव्या पबी केटलाएक दिवसें मंत्रियें ते ठेकाणे सरोवर बनाव्युं. वली पण केटला एक दिवस पबी राजा ते स्थानकें आव्यो. त्यां सरोवर देखीने मंत्रीने केहेवा लाग्यो, के आ सरोवर कोणें खोदाव्युं? त्यारे मंत्रियें कह्युं के, हे राजन्! ए

सरोवर में खोदाव्युं. आ वात सांभलीने राजायें मंत्रीनें कह्युं के, हे मंत्री! तें मारा मननुं इंगित जाण्युं, माटें तुं महाबुद्धिमान् बो. कह्युं बे के,-'अन्येन चिंतितं कार्यं, जानाति स विचक्षणः ॥ महामंत्री भवेडाज्ञो, यथाभूत्स सरस्करः ॥ इति दशमदृष्टांतः ॥ ११ ॥

हवे मूर्खनी भणेली गाथा सांभलीने पबरने पण क्रोध चढेबे ते ऊपर पंमितना हाटमांहेला पबरना तोलानो अगीयारमो दृष्टांत कहे बे.

॥ स्थित्वैकः कृतिहट्टके जडमतिः प्राहानृतार्थां कृतिं, हट्टस्था सम शैलकाः सुचलिताः श्रुत्वा जडस्योदितम् ॥ क्रोधात्तेऽकथयन्नरे जडमते त्वं याहि वक्राग्रतो, हस्ते कोऽपि बलं ददाति हि करिष्यामो रदोत्पाटनम् ॥ १२ ॥ अर्थः– कोइ एक पंमितना हाटमां बेसीने कोइ एक जडमति खोटी गाथा भणतो हतो. तेवारें ते पंमित हाटमां हतो नहीं. पण ते जडनी कहेली गाथा सांभलीने हाटमां पांचसेरी अधशेरी प्रमुख पबरना तोलां पडेलां हतां, तेने रीश चढी. तेवारे ते क्रोधथी कहेवा लाग्यां के हे जडमति? अमारा मुख आगलथी उठीने तुं दूर जा. अमे पंमितनां तोलां बैयें. माटें अमारा आगल खोटी गाथा भणवाथी अमने उलटी आवे बे, उबको आवे बे, एवामां जो कदाचित् ब्रह्मा अमारा हाथमां बल आपशे, तो अमें ताहरा बत्रीशे दांत पाडी नांखशुं ॥ १२ ॥ कह्युं बे के ॥ गाहा भणइं गमारो, पबरा थरहरंति हट्टमझंमि ॥ पाडेमि दंतपंक्तिं, चउक जे को हब बलं देइ ॥ १ ॥ इति एकादश दृष्टांत ॥ १२ ॥

हवे मूर्खजन जो पोतानी मूर्खाइ बाहेर पडवाथी मुंझाइने अन्यदेशें जाय. तोपण तेनुं मूर्खत्व मटतुं नथी, ते ऊपर एक पुरुषनुं बारमो दृष्टांत कहे बे.

॥ कश्चित् स्वेष्टजना वदंति जड रे त्वं गब तिष्ठाथ वा, श्रुत्वा नागरिकास्तथाहुरखिला रोपात् विदेशं गतः ॥ हत्वाकृस्ये स करं जलं पिबति तत् पूर्णोदरो मस्तकं, नार्या कंपयति प्रवीक्ष्य हि जडोसि प्राह कैर्लक्षणैः ॥१३॥

॥ अर्थः– कोइ एक मूर्ख मनुष्यने पोतानां मातापितादि सगा वहालां बोलावे त्यारे एम बोलावे के, हे जड! तुं बेस. अथवा हे जड! तुं उठ कभोरहे, अथवा हे मूर्ख परहो जा. एम नगरना लोको सांभलीनें सर्व ते जडने तेमज बोलाववा लाग्या. पण कोइ नाम लइ बोलावे नहीं. तेथी ते मूर्खने रीश चडवाथी परदेश गयो, मार्गमां कोइ एक नगरने पादर तरष्यो थयो.

त्यां रेंहेंट फरतो हतो ते देखी मोढे खोवो मांमी पाणी पीवा लाग्यो. उदर नराणुं त्यां सुधी जल पीधुं. परंतु मोढेथी हाथ खसेड्या नहीं, अने माथुं हलावा लाग्युं. ते जोइ त्यां पाणी नरनारी स्त्रीउयें कह्युं के, तुं मूर्ख देखा य छे. तेने मूर्खें पूछ्यूं, जे तमोयें मारा कया लक्षणें मनें मूर्ख जाण्यो? त्यारे स्त्रीउ बोली के, जल पीवानो खोवो आघो नहीं लेतां माथुं धूणावे छे, तेथी जाण्यो. कह्युं छे के ॥ स्वदेशे परदेशे वा, यत्र गच्छति मूर्खकः ॥ तत्रापि प्रक टं नावि, यथा मस्तककंपकः ॥ १ ॥ इति बारमो दृष्टांत ॥ १२ ॥

हवे मूर्ख शिष्य करवो नहीं. तेऊपर एक गोरजीना चेलानो तेरमो दृष्टांत.

॥ पूःस्थौ शिष्यगुरू विनेयक इतो नक्तायलब्धा वटा, द्वात्रिंशत् प्रमिताश्च चिंतयति मेऽर्द्धाः पंचकृत्वो गुरोः ॥ सोऽर्द्धानत्ति तदाध्वनीह वटकस्तस्येक्षितोऽन्याः क हे जग्धाः पूज्य मया कथं निजमुखे निक्षिप्य शेषोऽदितः ॥ १४ ॥

अर्थः— कोइएक नगरमां गोरजी अने तेनो चेलो बे रहेता हता. एक दिवसें ते शिष्य वोहोरवा गयो. त्यां कोइयें नक्तें बत्रीश वडां वोहो राव्यां. पछी रस्तामां ते शिष्य चिंतन करवा लाग्यो, के मारा गुरुनां अर्द्धी नागनां सोल वडां थाय. माटे हुं अडधां नक्षण करी जाउं. एम मा नी अर्ध खाइ गयो, वली जरा रस्तामां आघो चाल्यो, ने विचारवा ला ग्यो, के गुरुने कांइ खबर नथी. माटे गुरुनां नागनां आठ राखी आठ खाइ जाउं. एम चिंतवी तेमांथी आठ खाइ गयो. वली लगारेक आघो ज इ चार वडां राखी, चार खाधां. वली चोथी वार पण बें खाधां ने बे रा ख्यां. वली पांचमी वार पण एक खाधुं, अने एक राख्युं. पछी उपाशरें आव्यो. त्यारें गुरुयें अन्नपात्र जोइ पूछ्युं, के हे शिष्य! एकज वडुं कोणें वोहोराव्युं? ने बीजां वडां क्यां गयां? ते कहे. त्यारे शिष्य कहेवा लाग्यो के, मारा नागनो अडधो अडधो हिस्सो जाणीने एकत्रीश वडां खाधां छे, तेने गुरुयें पूछ्युं के, ते वडां केम खाधां? त्यारे तेणें मोढुं फाडी एक वडुं मोढामां मूक्युं. ने गुरुने कह्युं, के महाराज जुउ, आम खाधां. कह्युं छे के॥ मूर्खशिष्यो न कर्त्तव्यो, गुरुणा सुखमिच्छता ॥ विडंबयति सोऽत्यर्थं, यथा हि वटनक्षकः ॥१॥ माटे मूर्ख शिष्य न करवो इतित्रयोदश दृष्टांत ॥१४॥

हवे दुशमन होय, ते पण जो दयायुक्त होय, तो ते सारो;परंतु नि र्दय मित्र पण सारो नहीं. ते ऊपर चौदमो दृष्टांत कहे छे.

॥ चौरो निःस्वगृहे गतो हिमनिशि प्राह प्रियं स्वावला,त्वत्पार्श्वेम्बरखंमकं ऊटिति वा तदेहि लाल्यनेकम् ॥ नो गृह्णाति शिशुं ददाति न तदा द्वंद्वं च जातं तयोस्तच्छ्रुत्वांवरकं शिशूपरि हरः क्षिप्त्वा गतेऽन्यालये ॥१५॥ अर्थः— कोइ एक चोर निर्धनना घरमां शियालाना दिवसमां रात्रिने विषे चोरी करवा पेठो. ते वखतें घरमां स्त्री पुरुष बेहु सूतां हतां. पछी टाढथी पीडाती स्त्रीयें पोताना स्वामीने कह्युं, के तमारी पासें लुगडांनो कटको छे, ते मने आपो, अथवा छोकराने ल्यो, बालक टाहाढथी पीडाय छे. त्यारे तेणें बा लकनें पण तेड्यो नहीं, ने लुगडानो कटको पण आप्यो नहीं. पछी ते बेहु जणने लडाइ थइ. ते लडाइ जोइने चोरना मनमां दया आवी, तेथी तेणें पोतानुं वस्त्र बालक ऊपर नाख्युं. ने बीजाना घरमां चोरी करवा ग यो. कह्युं छे के॥ दयायुक्तो दरिद्रोऽपि, शत्रुर्हि सुखकारकः ॥ प्रविष्टे हि यथा गेहे, चौरेण ह्यर्पितं पटम् ॥१॥ इति चतुर्दश दृष्टांतः ॥ १५ ॥

हवे कार्य न थयानी पहेलां लडवा ऊपर स्त्रीपुरुषनो पंदरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ कोप्याह स्ववशां च लामि महिषीं त्वं साशु नाथानय, मातुर्दुग्धतरीं ददामि हि तदान्योऽन्यं विधत्तः कलिम् ॥ श्रुत्वागत्य विशारदेन हि घटा भग्ना महिष्याद ते, क्षेत्रं मे यदि भक्षित न ललने यूयं कथं युध्यथ ॥ १६ ॥

॥ अर्थः—कोइएक पुरुष पोतानी वशवर्त्ती स्त्रीने कहे छे,के हे स्त्रि,हुं भें श लावुं ? त्यारें स्त्री बोली के हे स्वामिनाथ ! जलदी लावो, वली स्त्री क हे छे. मारी भेंशना दूधनी तर हुं माहरी माताने आपीश, त्यारें स्वामी कहे छे के, ते तर हुं खाइश. एवी रीतें बेहुने क्लेश थयो. ते क्लेश सांभली ने कोइ बुद्धिमान पुरुषें आवी तेना घरमां पडेलां माटीना ठाम सर्व भां ग्यां. त्यारे स्त्रीएं पूछ्युं के, आ वासण केम भांग्यां ? त्यारे ते बोल्यो, के मारुं खेतर तारी भेंशें खाधुं. त्यारे ते स्त्रीपुरुष क्लेश पडतो मूकी कहेवा लाग्यां के हजी भेंश क्यां आणी छे ? त्यारे बुद्धिमान पुरुषें कह्युं, जे भेंश आव्या विना दूधनी तरनी लडाइ शामाटे करो छो ? ते सांभलीने ते बे हु समज्या. कह्युं छे के ॥ दोहा ॥ घरें भेंश आणी नहीं, भांग्यां भोवर सात ॥ ऊगडो तो दंपति करे, दूध तरीनी वात ॥ १ ॥ एनो तो ऊगडो

सुणी, बुद्धिवंत आव्यो दोडी ॥ ऊगडो तेणें ज्ञांजीयो, फोवर सघलां फोडी ॥
हवे कौतुकार्थी पासे विद्वानोनी विद्या निष्फल थाय छे, ते ऊपर सोलमो दृष्टांत.
॥ नूपान्ते द्रविणेछया कतिगमे दत्तं न किंचित्कदा, वीक्ष्येशो नरनाटकं बहु धनं तस्याशु सोवग्गतः ॥ गेहे तान् स्वजनान् न तत्र पठने यत्नस्तु कार्यो विदा, कर्त्तव्यं नटनाटकं च जवतां द्रव्यं नृपो दास्यति ॥ १७ ॥ अर्थः—कोइएक पंमित द्रव्यनी इछायें राजा पासें सेवा करवा आव्यो; परंतु घणा दहाडा सेवा करी तो पण राजायें कांइ द्रव्य आप्युं नहीं. एवामां एक दिवसें राजायें जवायानी जवाइ जोइने तेनुं नाटक देखी प्रसन्न थइ घणुं द्रव्य ते जवाइ करनारने आप्युं. एवुं राजानुं चरित्र जोइ पंमित नीची दृष्टि करी विचारवा लाग्यो के, आपणुं जणवुं सर्वे निष्फल थयुं. त्यारें एकाएक पोताने घेर आवी पोतानां स्वजनने तथा शिष्योने कहेवा लाग्यो के, व्याकरण तर्क काव्य छंद अलंकारादि ग्रंथोना जणवामां यत्न न करो, एथी कांइ राजा रीके नहीं ने जवाया वगेरे नाटकनो अभ्यास करो तो तमोने राजा रीजीने द्रव्य आपशे अर्थात् राजा विद्वान् नथी पण कौतुकार्थी छे कह्युं छे के ॥ विद्वांसः सावधानाः शृणुत मम वचो द्रव्यलोजार्थिनश्चे, गंतव्यं सादरेण क्षितिपतिजुवने नूपसेवां विधातुम् ॥ मीमांसान्यायतर्कागमविधिबहवो दूरतो वर्जनीयाः, शिक्षितव्यास्तु शिष्या धिगधिगधिक्कातथय्यीति प्रशब्दाः ॥ १ ॥ इति षोडश दृष्टांत ॥ १७ ॥
जालमां लख्युं मिथ्या न थाय ते ऊपर माथानी तुंबलीनो सत्तरमो दृष्टांत.
॥ केन श्रेष्ठिवहिःस्थितेन शवके दृष्टार्यकावाच्यत, लात्वासद्मनि तुंबिकां प्रतिदिनं वै पश्यति स्त्र्येकदा ॥ तं पिष्ट्वा वटिका कृता निजपतेर्मुक्तात्ति सोवक् शुना, सेष्टा या अनवद् वरांगि लिखिते दोषो न ते मे वशे ॥ १८ ॥ अर्थः—कोइएक शेठ बहार वेठेथके स्मशानमां पडेला शवनी तुंबली दीठी. तेमां लखेली गाथाने जोइ वांचवा लाग्यो, ते वांचीने पछी ते तुंबलीने सुंमलामां नांखी, पोताने घेर लावी मूकी. ते तुंबलीने दिन दिनप्रत्ये जइ जोवा लाग्यो. एकदा तेनी स्त्रीयें विचार्युं के, आ मारो स्वामी नित्य कोनी सामुं जुए छे? तो त्यारें जुवे तो त्यां शवनी तुंबली नजरे पडी. पछी ते स्त्रीने रीश चढी, तेवारे तेणे ते तुंबलीने लइ खांमी पीसी वाटीने तेमां बीजी चीजो मसालादिक नांखीने, तेनी वडी बनावी, अने पोताना स्वामीने ते

वडीनुं शाक पीरस्युं. तेने ते वडी खातां तेनो स्वाद लाग्यो तेवारें तेनो स्वामी कहे बे,केम्रा वडी बहुज सारी थइ बे. माटे शानी बनावी बे ? तेने ते स्त्री कहेवा लागी के,जे आपने वहाली वस्तु हती,अने जेनी सामुं निरंतर आप जोता हता तेनी आ वडी बे. त्यारे शेठ बोल्या, के हे वरांगना, जे लख्युं हतुं ते थयुं. एमां मारो तथा तारो दोष नथी. पडी ते स्त्रीनें सर्व वात प्रथमथी मांमीने कही. हवे ते तुंबलीमां शुं लख्युं हतुं ते कहे बे ॥ गाथा ॥ जम्मो कलिंगदेसे, पाणिग्गहणं मरुयदेसमज्ञंमि ॥ मरणं समुद्दतीरे, किं जाणे किं नविस्सइ ॥ इति सप्तदशदृष्टांत ॥ १७ ॥

हवे कवि पूबतां वार उत्तर आपे ते ऊपर अढारमो दृष्टांत कहे बे.

॥ पृष्टः केन गुरुर्हि खिद्यति मनो नेत्रं कथं रोदिति, प्रोचे तं च गुरुर्मनोनयनयोर्नो व्यंजनावग्रहः ॥ वेदाक्षप्रकरपृथग्नवति तद्यर्थं मनोनेत्रयोः, मत्स्यविकगृहे स्थितौ समसुखं लग्नाति तुल्यं तयोः ॥ १० ॥ अर्थः—कोइ श्रावकें गुरुने पूब्युं के, महाराज, जेवारें मनमां दिलगीरी पेदा थाय बे,तेवारे नेत्र केम रुदन करे बे. ते सांजली गुरु बोल्या, श्रोत्र,घ्राण,रसना अने स्पर्श ए चार इंद्रियोने पुद्गल ना स्पर्श थकी विषय जणाय, माटे ते व्यंजनावग्रह कहीयें, अने मन तथा नेत्रनो विषय पुद्गल स्पर्श्या विनाज जणाय ते अर्थावग्रह जाणवो. ते माटे मननो तथा नेत्रनो अधिको स्नेह संबंध बे तेथी ज्यारें मन दीलगीर थाय, त्यारे आंख रुवे जेम एक घरमां बेजण रहेतां होय त्यारे एकने डुखें बीजाने डुःख लागे. तथा एकने सुखे बीजाने पण सुख लागे. तेम मन तथा आंखनुं एकज घर बे. कह्युं बे के ॥ सिद्धांत शास्त्रकेष्वस्ति, नास्ति बाह्ये तथा परे ॥ सम्यक्प्रश्ने कृते शीघ्रं, प्रददात्युत्तरं कविः ॥ १ ॥ इति अढारमो दृष्टांत ॥ १० ॥

हवे अजाण्याने पोतानुं स्थानक देखाडवुं नही ते ऊपर जु अने मांकणनो उगणीसमो दृष्टांत कहे बे.

॥ सुप्तो राए निशि मत्कुणो गत इतोऽनूयूकया वारितः, प्राघूर्णोपि तवास्ति मातृनगिनी प्रोचे तया मानितः ॥ तेने [illegible] सय्याहि चालोकिता, लब्धा पट्टयदिका हि मत्कुण [illegible] २० ॥

अर्थः—एक राजा रात्रे सुतो हतो. तेने [illegible] रहेती हती. तेटलामां ए [illegible]

मांकडने कह्युं जे तुं आवीस नहीं. माह्रो स्वामी निद्रामां सूतो छे. त्यारें मांकड बोल्यो,के हुं तमारे घेर परोणो आवेल छुं. अने वली कह्युं,के तमे मारी मासी थाउ छो, माटे आव्यो छुं. त्यारे जुंयें भोलवाइने तेने आववा दीधो. माकणें आवी तुरतज राजाने करड्यो. त्यारे राजायें सय्या जोव रावी तो मांकड जतो रह्यो अने जुं हाथमां आवी तेने तरत राजाना अनु चरें मारी नांखी तेमाटे अणउलखीतो जो मीठा वचन बोले तो पण तेने पासें राखवो नहिं. पोतानी जगामां आववा देवो नहि,जो तेनो विसवास करीयें, तो ते मांकडनी पेरें बीजानी उपर नांखीने पोतें नासी जाय. कह्युं छे, के॥ श्लोक ॥ अज्ञातकुलशीलस्य, न दातव्यं प्रतिश्रया ॥ ढुंढुकस्यापि दोषेण, हता मंदविसर्प्पिणी ॥ १ ॥ ए उगणीसमो दृष्टांत ॥ २० ॥

हवे छले करी भोला लोक ठगाय छे ते उपर वीशमो दृष्टांत.

॥ गुर्विण्यां निजयोषिति क्षितिपतिर्विप्रं तदा पृच्छति, पुत्रं किं च सुता भ विष्यति हि मे पुत्रो न हीत्यंगजा ॥ संलेख्य छदने ददौ नरपते. पुत्रो भवि ष्यत्यथ, पुत्री चेद्यदि वाच्य दीर्घलघुकान् वर्णास्तु वक्ष्ये तदा ॥ २१ ॥

अर्थः—कोइएक राजाने पुत्र न हतो एकदा तेनी स्त्री गर्भवती हती, त्यारें ते राजायें कोइ एक ब्राह्मणने पूछ्युं, के हे महाराज, माहारी स्त्रीने पुत्र थशे, के पुत्री थशे ? त्यारें ब्राह्मणें छल करीने कह्युं के, हे महाराज, हुं तमोने कागलमां लखी आपीश. तेवात राजायें कबुल करी अने खुशी थयो. पछी ब्राह्मणें चिंतव्युं जे पुत्र अथवा पुत्री बेमांथी एक तो अवश्य थाशे. एम विचारीने कागलमां लख्युं, जे "पुत्र नही पुत्री" एवुं लखीनें राजाने चीठी आपी. हवे ते लखवामां ब्राह्मणें कपट कर्युं. जे पुत्र आवे तो पुत्र आव्यो. नहि पुत्री, एम वांचे अने जो पुत्री आवे, तो पुत्र, नहि. पुत्री एम वांचे. एवी युक्ति करी: कह्युं,छे के॥ ज्ञानहीना बहुमत्यी, दृश्यंते छलकारकाः॥ कृत्वा छलं यथा राज्ञो,दत्तं लेख्यं द्विजेन वै॥ ए वीशमो ॥२१॥

अदाता पासें याचना करवी निष्फल थाय ते उपर एकवीशमो दृष्टांत.

॥ द्वारस्थं गजचित्रकं ह्यलिरिहां दानस्य दृष्ट्वा गतस्तत्कंभे स्थितवान् तदा ह करिराट् चिंत्याशु तं षट्पदं ॥ अत्रालेक्षि कथं स्थितोऽसि जड रे दान प्रदा वारणा, स्ते सर्वेपि वने वसंति च गिरौ त्वं तत्र याहि द्रुतम्॥ २२ ॥

अर्थः— दरवाजाने विषे चित्रेलुं हाथीनुं चित्र जोइने कोइ एक भ्रम

र मदगंधने लेवामाटे आव्यो, अने ते हस्तीना गंमस्थलने विषे बेठो थको, गुंजारव करवा लाग्यो. ते वखत एक कवि मनमां चिंतवन करीने ते भ्रमरने कहेवा लाग्यो, के हे मूर्ख भ्रमरा, तुं इंहा केम बेठो बो? आंही तारो अर्थ सरशे नहीं. जेमाटे मदने आपे ते ए हाथी नथी. मद आपनारा सर्वे हाथीयो वनने विषे तथा पर्वतने विषे वसे बे. माटे मदगंधनी इच्छा होय, तो तुं उतावलो त्यां जा. कह्युं बे, के ॥ श्लोक ॥ रे चंचरीक मदलोलकपोलवासी, भित्तिस्थनागवदनेऽत्र कथं स्थितोऽसि ॥ ये दानदा घनघनाघनघोरशब्दा, स्ते वारणा वरतरा विपिने वसंति ॥२१॥ इति एकवीशमो दृष्टांत ॥

हवे मूर्खनी साथें पंमितें वाद न करवा अर्थयी बावीसमो दृष्टांत कहे बे.

॥ मूर्खज्ञौ पथि गच्छतः कुसुमितं ताभ्यां पलाशद्रुमं, दृष्ट्वा वक्ति हि पाटलंजडमतिर्ज्ञो मूर्ख नो पाटलः ॥ वादं तौ कुरुतो जडेन सुकविर्यष्ट्यादिभिस्ताडितो, यष्ट्यामुष्टिवशाद्विमुंच जड रे नो पाटलः पाटलः ॥ २२ ॥

अर्थः—कोइ एक समयें मूर्ख अने पंमित ए बे जण मार्गनेविषे चाल्या. तेटलामां रस्ताने मिषे एक पुष्पयुक्त खाखरानो वृक्ष जोयो. त्यारे मूर्ख मनुष्य कहेवा लाग्यो, के आ पाडलनुं जाड केवुं फल्यो फूल्यो बे. ते सांजली पंमित बोल्यो के, हे मूर्ख! ए पामल वृक्ष नथी पण पालाशवृक्ष बे. तुं शुंजाणे? तेवारें मूर्खायें कह्युं के तुं शुं जाणे. ए पामल बे. एम वाद करवा लाग्या. तेवारें मूर्खने रीश चडी तेथी लाकडी लइने पंमितने मारवा लागो. तेवारें पंमित बोल्यो, के मारीश मां. मारना भयथी पंमित कहेवा लाग्यो के हाहा ए पामलवृक्ष बे. जेम मुर्खायें कह्युं तेम कबुल कर्युं. माटे मूर्खानी साथे वाद न करवो. कह्युं, बे के, ॥ श्लोक ॥ पलाशं पुष्पितं दृष्ट्वा, मूर्खो वदति पाटलं ॥ यष्टिमुष्टिप्रसादेन, भो भो पाटलपाटलः ॥

जे स्त्री पोताना स्वामीपासे पोतानुं चलण करवानी इच्छा करे तेनी केवी दशा थाय ते उपर स्त्रीपुरुषनो त्रेवीशमो दृष्टांत कहे बे.

॥ लात्वा स्त्रीं पथिको गृहात्प्रचलितो ह्यग्रे सनीरां नदीं, दृष्ट्वा साह धवं ममांघ्रियुगले रंगोस्ति संगृह्य सः ॥ तस्याः पादयुगं हि कर्पति सरित्तीरे गतः सा मृता, न्यस्ता मूढ कृतं किमाह तनुभृन्नष्टापि रंगस्थितिः ॥२४॥

आर्थः—कोइ एक पथिकजन पोतानी स्त्रीने सासरेथी तेडीने पोताने गाम जतो हतो. चालतां थकां मार्गमां एक नदीने पूरें आवेली जोइने

स्त्रीयें पोताना स्वामीने कह्युं के, हे स्वामीनाथ आ माहरा बे पगमां मेंदी लगाडी बे ते जेम धोवाय नही अने मारा पगनो रंग न जाय तेम मुने ते डी जाउ. त्यारें ते पुरुषें स्त्रीना बे पग हाथमां लइने उंचा राख्या, अने हाथ मह्लोडुं अने नाकने पाणीमां राख्युं एवी रीतें तेने लइने जलमां चाल्यो. ते जेवारें नदीने कांठे उतर्यो तेटलामां स्त्रीना मोढामां तथा नाक कानमां जल नरवाथी स्त्री मरणशरण थइ. तेवारें जेवी रीते मुवेला ढोरने घसर डे, तेवी रीतें घसरडीने तेने बाहेर काढी, ते वखतें नदीने कांठे कोइ मनु ष्य ऊनो रहेलो हतो तेणे कह्युं के, हे मूर्ख तें आ शुं कर्युं? जे माटे आ स्त्री तो मरण पामी. तेवीरीतें तुं उंधे माथे घसडीने जलमांथी केम लाव्यो? ए कहेवो अकार्य कर्यो? त्यारे ते पुरुष बोल्यो के, में जे कर्युं बे, ते जा णीनेज कर्युं बे केम के स्त्रीतो मरण पामी तेनो जीव गयो, परंतु तेना पगना मेंदीनो रंगतो लालज रह्यो बे. कह्युं बे के, ॥दोहा॥ मूढमति मारी प्रिया, गयो नदीने तीर ॥ देखी अन्य नर भांजीयो, कां कीयो जड पीर ॥ १ ॥ तेह प्रतें मूढ बोलीयो, कीधो एह प्रकार ॥ जीव गयो पण रंग रह्यो, मु ऊ मन एह विचार ॥ २ ॥ इति त्रेवीशमो दृष्टांत ॥ २४ ॥

नाग्य हीनने सर्वत्र डुःख थाय तेनो ऊपर चोवीसमो दृष्टांत कहे बे.

॥ ग्रीष्मे बभ्रुरथो वने विवसनः प्राप्तोऽर्चिपा पीडित, श्छायां वीक्ष्य ग तोऽपि बिल्वकतले, तत्के फलं ग्राववत् ॥ तछ्रुत्वा पततीति चिंतति तदा यामि क नग्नं शिरो, डुःस्थो गछति यत्र याति तदनु छायेव शीघ्रं विपत् ॥ २५ ॥

अर्थः—कोइ एक दरीद्री अने वली माथामां टाली पडेली एवो टाली यो पुरुष उष्णकालनें विषे वस्त्ररहित सूर्यना तापथी मस्तकमां आकुल थयेलो नूख तृखायें पीडा पामतो ठतो एक बीलीना ऊाडनी नीचें ऊनो रह्यो, त्यां ते बीलीनां फल पछराना जेवां माथाऊपर पड्यां ते फल पड वाथी विचार करवा लाग्यो के, हवे हुं क्यां जाउं माथुं तपवाना डुःखथी ज्यारे हुं बीलीना वृक्ष तले गयो तो त्यां पण मस्तक ऊपर बीलीफल पड्यां, माटें नाग्यरहित जन जे ठेकाणे जाय तेनी पछवाडे ठायानी पेठे आपत्ति शीघ्रतायेंज आवे बे. कह्युं बे के, ॥ श्लोक ॥ खल्वाटो दिवसेश्वर स्य किरणैः संतापितो मस्तके, वांछन् देशमनातपं विधिवशात् बिल्वस्य मूलं

गतः ॥ तस्योच्चैः पतता फलेन महता भग्नं सशब्दं शिरः, प्रायो गच्छति यत्र भाग्यरहितस्तत्रापदां राशयः ॥ १ ॥ इतिचोवीशमो दृष्टांत ॥ २५ ॥

भाग्यमां न होय तो उद्योगथी पण लाभ थतो नथी ते ऊ
पर उंदरनो अने सर्पनो पचीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥क्षिप्तः केन करंमकेऽपि भुजगः क्षुत्पीडितोऽनाशको,रात्रौ खादिमकांक्षया शु विवरं कृत्वोंदरुस्तन्मुखे ॥ भाग्यादेव तदा स्वयं निपतितस्तन्मांसतृप्तोऽभवत्, यातस्तेन पथा नृणां स्थिरतरं भोगीव भाग्यं भवेत् ॥ २६ ॥ अर्थः— कोइएक गारुडीयें एक सर्प्प पकडीने कंरंडीआने विषे नांख्यो. त्यां भूख अने तरशें पीडा पामतो, ते साप निराश थइ बेगे हतो, तेटलामां एक उंदरे जाण्युं जे आ करंडीयामां खावानो पदार्थ छे, पक्वान्न भर्या देखाय छे. एम चिंतवि ते कंरंडीयाने करडी छिद्र पाडी, रात्रिनें विषे ते उंदर तत्काल अंदर पेगे. ते समयें ते सर्पना भाग्यें करीनेज ते उंदर पोतानी मेलें सापना मुखमां पड्यो. ते उंदरना मांसेंकरी साप तृप्त थयो. अने तेज उंदरना करेला छीद्रना मार्गें करी साप बाहेर नीकली गयो. माटे सर्पनी पेठे जे मनुष्योनुं प्रारब्ध स्थिर होय छे, तेने दुःखमां नाखवा छतां पण सुख थायछे. तेथी भाग्यस्थिरता मानीने धैर्य राखवुं.कह्युं छे के, श्लोक ॥ चिंता न कार्या पुरूषै, र्निगडे पतितैरपि ॥ यद्भाले लिखितं धात्रा, भवेद्भो जीव नापरम् ॥ १ ॥ इति पच्चीशमो दृष्टांत ॥ २६ ॥

हवे समजण विना स्वेच्छित उत्तर आपवो नहिं ते ऊपर छवीसमो दृष्टांत.

॥ नत्वा पृच्छति कार्षिको निजगुरुं वर्षा न वा वर्षति क्षेत्रे ते निशि वक्ति सोपि न परे ज्ञात्वा सशिष्यो घटान् कूपान्सिंचति कं पराहि मनुजाः श्रुत्वेति वार्तां गुरोस्ते पृछंति तथा ब्रवीषि वहसि ह्याद्दुर्वीनेयास्तदा ॥ २७ ॥ अर्थः—कोइएक करषणी पोताना गोरने नमस्कार करी पूछे छे के हे माहाराज ! वरषाद वरसशे के नहिं वरसे जे माटे माहारा वावेला धान्य सर्व सूकाइ जायछे त्यारे गोरें कह्युं के, आजें रात्रियें ताहारा खेतरमां वरषाद वरसशे पण बीजाना खेतरनुं हुं जाणुं नहिं. पछी ते गुरु रात्रियें शिष्य ने साथे लइ करषणीना खेत्रमां जइ कुवामांथी पाणीना घडा भरी भरीने आखी रात्र पर्यंत खेतरमां पाणी सींच्युं.तेथी सवारमां खेतरनो धणी पोताना खेतरने देखी खुशी थयो.ए वात बीजा मनुष्योयें सांभली तेवारें तेप

ए तें गुरु पासें आव्या अने तेमज पूर्वेली रीतें गुरुनें पूछवा लाग्या तेवा रें गुरुयें पण तेमज पूर्वनी पेठें तेमने कह्युं. ते सांभली शिष्यें जाण्युं जे रखेंने पूर्वली रात्रिनी पेठें आ रात्रियें पण गुरु आपणने घडा वहेवरावे एम जाणी गुरुने कहेवा लाग्या; के हे गुरु! जे कहेशो ते वहेशो. अमा रे कांइ नहि. कह्युं छे के, (श्लोक) कार्यार्थि नोहि वह्वो,गुरूं पृच्छंति स्वा र्थगाः ॥ ज्ञानहीनैर्न दातव्य, मुत्तरं कोविदैर्यथा ॥१॥दोहा॥ एकवार कहणे वह्या, हवे ते न वहसी ॥ गुरुप्रतें शिष्यज बोलीया,जे कहसी ते वहसी ॥ हवे जे संपत्तिवान् छतां कोइने उपकार करतो नथी. तेनुं द्रव्य गयुं जाणवुं.

ते विषे भोजराजा अनें माघ कवीनो सत्तावीसमो द्दष्टांत कहे छे.

॥ भोजो वक्ति कृती मृदंगकरवस्यार्थं वदाद्याह्नि सः, ज्ञातं नान्यजनः क रिष्यसि यदीभारोहणं वच्मि तम् ॥ कृत्वेशांतगताः किमस्त्ययमतोऽर्थं वक्ष्यति त्वावदत्त्वं गृह्या उपदेशमीश तव भो नो दीयते तद् गतम् ॥२७॥ अर्थः—एक दिवस भोजराजानी पासें नृत्य थतुं हतुं. ते वखते मृदंगनो शब्द सांभली राजा माघ पंडितने कहे छे, के मृदंग बोले छे तेनो शुं अर्थ? ते कहो. त्यारे पंडिते कह्युं जे महाराज आठ दिवसमां हुं एनो उत्तर कहीश. पछी पंडितें शास्त्र जोयां. पण तेमांथी ते अर्थ जाण्यो नहीं. तेवारें दिलगीर थ यो, एवामां एक ब्राह्मण माघ पंडितने घेर आव्यो. तेणे पंडितने दिलगी र थयेलो देखीने पूछ्युं के चिंतातुर केम देखाउ छो. तेने माघें कह्युं के महा राज मृदंगना शब्दनो अर्थ शुं? त्यारे ते पंडितने कहे छे के जो मुझने हाथी ऊपर बेसारी राजा पासें लइ जाउ, तो हुं एनो अर्थ राजाने कहुं. पछी ते पंडितने हाथी ऊपर बेसारीने राजापासें लेइ गयो. तेने हाथीयें बेठो देखी ने राजायें पूछ्युं, के आ शुं छे? त्यारें माघ पंडिते कह्युं जे आ पुरुष तमने मृदंगना शब्दनो अर्थ कहेशे. राजायें ते कबुल कर्युं. पछी पंडितें कह्युं के,हे राजन्! आ मृदंग शब्द धम धम एवे शब्दें करी तमने उपदेश आपे छे. के जे कोइ राज्यसमृद्धि पामी कोइने न आपे, तो तेनी समृद्धि गइ एम स मजवुं. जुवो हुं पण फाटल उपानहनुं दान देवाथी गजारूढ थयो छुं. ते वि षे श्लोकः— उपानहो मया दत्ते, जीर्णे कर्णविवर्जिते॥ तत्पुण्येन गजारूढ, स्तजतं यन्न दीयते ॥ १ ॥ ए सत्तावीसमो द्दष्टांत ॥ २७ ॥

४३

हवे कपटी पासें कपट पण करवो ते उपर अहावीशमो दृष्टांत.

॥ पर्यद्यन्यकविः करोत्यभिनवं,भोजस्य काव्यं तदा, श्रुत्वाद्बुश्च पुरातनं कविजना नूपोऽपि किं तेऽपठन् ॥ राज्ञा ते हि तिरस्कृताः प्रतिदिनं वादोऽन्न वश्चैकदा, कृत्वा वेधयुतं स्थिताः सितमुखा लक्षं च लात्वा गतः ॥२८॥ अर्थः- एकदा भोजराजानी सभामां कोइएक नवो पंमित आव्यो, ते कवि भोजराजानां वर्णननुं नवुं काव्य करीने नित्य आशीर्वाद दीये छे. पण तेना करेला काव्योने द्वेषथी भोजराजाना सभामां बेसनारा कालिदास वगेरे बीजा पंमितो नित्य नित्य प्रत्यें खंमन करी नांखे. अने राजाने कहे के, हे महाराज! आ जे काव्य करे छे, ते प्राचीन छे. ए काव्य तो अमने पण आवडे छे. त्यारें राजा कहे के ए काव्य तमे बोलो. तेवारें ते कालिदास वगेरे पंमितो एवा हता के कोइ पण श्लोक एक वखत सांभले तो तेने मुखस्थ थइ जाय. तेथी ते पंमितना करेला श्लोक पोते भणी आपे. त्यारें राजा ते नवीन कविनो तिरस्कार करी दूर करे. एम नित्यवाद थयां करे तेवारें ते नवीन पंमितें तिरस्कार पामवाथी एक दिवस वेधयुक्त काव्य कर्युं, ते काव्य कालिदास वगेरे पंमितोने भणतां न आव्युं, तेथी तेमने निस्तेज करी राजा पासेथी लक्ष द्रव्य लीधुं. ते काव्य लखे छे. ॥ भोजत्वं राजराजः क्षितिपतितिलको धार्मिकः सत्यवादी,पित्रा ते या गृहीता नवनवतियुता हेमकोटयोमदीयाः॥ त्वं ता देहि त्वदीयैः सकलबुधजनैर्ज्ञायते सत्यमेतत्, नो जानंति त्वदीयाः सकलबुधजना देहि लक्षं तथापि ॥ १ ॥ अर्थः-हे भोजराजा! तुं पृथ्वीपतिनेविषे तिलकसमान, धर्मिष्ठ, सत्यवादी, अने भोज कुलने शोभावनार एवो छो. परंतु तारें बापें मारी जे नवाणुं करोड सोना महोर लीधी छे, ते तुं आप. ते वात तारा पंमित जनो सत्य जाणे छे. जो तारा पंमितजनो ए वात न जाणता होय, तो पण एक लक्ष द्रव्य आप. अर्थात् शुं कह्युं जे आ मारो प्राचीन श्लोक होय, तो मने नवाणुं करोड सोना महोर आप, ने आधुनिक होय, तो लक्ष द्रव्य आप. ॥२८॥ ए अहावीशमो दृष्टांत॥

हवे आ जनमथी रहेलुं रण बीजा जनममां पण आप्याविना छूटको थतो नथी ते उपर एक वैश्य अने बलदनो उंगणत्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

श्लोक ॥ भोजार्णं हि विधाय पारभविकं तैल्यालये च स्थितो, वृत्तांतं प्रतिकर्ण्य स ह्यनकुद्दोर्दृष्ट्वा प्रभातेऽखिलं॥ गत्वा भोजगृहं समर्प्य सकलं भंमा

रिकानां धनं, तान्प्रोचे तद्दणं क्रमोऽन्यत्नविकं दातुं न गेहे गतः ॥ ३० ॥
अर्थः—कोइएक वाणीयायें एवुं विचार्युं जे आ न्नवमां लीधेलुं दीधेलुं हो य ते पाछुं परन्नवमां लेवातुं देवातुं नथी. एवुं मानी तेणे न्नोजराजानी पासे जइने कह्युं के हुं आवते जनमें तमोने लक्ष रुपैया व्याजसहित आ पीश. जो कहो तो खत करी आपुं. एम कही खत लखी आपीने राजा ना न्नंमारमांथी लक्ष इव्य लइने घांचीने घेर जइ रात्रियें सूतो. तेवामां अर्धरात्रियें घांचीना बन्ने बलदो परस्पर वातो करवा लाग्या. तेमां प्रथम एक बलद बोल्यो के, मारे तो पूर्व जन्मना देणामांथी घांचीने मात्र एक ज त्रांबियो हवे देवो रह्यो छे. ते हुं चार फेरा दइ मरीने छूटीश, अने परन्नवें सुखी थइश. त्यारे बीजो बोल्यो के, तुजने धन्य छे. मारे तो घांचीनुं पूर्व जन्मनुं एक लक्ष इव्य हजी आपवुं रह्युं छे. अने हुं पूर्वजन्मना न्नोजराजा पासें एक लाख रुपैया मागुं छुं माटे आ सूतेलो वाणियो जो सवारमां न्नोजराजानी पासे जइनें कहे के, तमारा पट्टहस्ती साथें आ घांचीना ब लदने लडावो. अने जो बलद जीते, तो घांचीने लक्ष रुपैया तमारे आप वा एम करे तो हुं न्नोजराजाना पट्टहस्ती साथें लडीने तेने जीती घांचीना ल क्ष रुपैयाना रुणथकी छुटुं. अने महारुं राजानी ऊपर लेणुं छे. ते आवी जा य, तो मरीने सुख पामुं. आ वात ते वाणीयायें सांन्नली. पछी सवारना पहोरमां उठी एक त्रांबीयाना रुणवाला बलदें जेम वात कही हती ते सर्व मलती दी ठी. तेवारें विचार करे छे के, आवता जन्ममां देणुं देवुं पडे छे. ए वात नकी छे एम सत्यमानीने पोतें न्नोजराजानी पासें जइने रात्रिनेविषे बनेलुं वृत्तांत सर्वे कह्युं. वली कह्युं के, महाराथी पण परन्नवें रुणुं देवाय नहीं. माटे त मारुं धन पाछुं लेउं. हुं मजुरी करी पेट न्नरीश. एम समजावी लीधेलुं ध न पाछुं न्नंमारीने आपी दीधुं. अने राजायें पण पट्टहस्ती साथें बलदने लडावी घांचीना रुणथी छोडाव्यो कह्युं छे के ॥ दोहा ॥ इह न्नव देणुं दो हिलुं, परन्नव वली विशेष ॥ दृष्टांत सांन्नली बलदनो, त्यजीयें रुणो अ शेष ॥ १ ॥ गाथा ॥ दालिद्दंदेहि रुणं, अचिरामरणं वणोवि संपन्ने ॥ सव्व स्स दाह मग्गी, दिंति कसाया न्नवमणंतं ॥ २ ॥ ३० ॥

हवे कुलटा स्त्रीने उपकार करियें तो पण ते पोताना स्वामीनी थाय नहीं ते ऊपर एक स्त्री पुरुषनो त्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ प्रीत्या तेपि सहत्वयाद्य निधने धढ्यामि संकेतकृत्, तत्सर्वं रचितं सुरैर्यदि तदाऽर्धायुश्च दत्तं स्त्रियै ॥ मुक्ता सापितमन्यपत्तनगता तस्मिन् पुरेऽसौ गतः, तद्भार्या मिलिता तदा च कुलटा स्वार्थं विनानर्थकृत् ॥ ३१ ॥

अर्थः—कोइएक पुरुषे प्रेमें करीने पोतानी स्त्री साथें मांहोमांहे वात करतां संकेत कस्यो, के जो ताहारुं मरण मारी पहेलां थशे तो हुं तारी पठवाडे सत्तो थइश. अने स्त्रीयें कह्युं के जो तमो पेहेलां मरशो, तो हुं तमारी पाठल सती थइश. ए प्रमाणे निश्चय कस्यो. ते सर्व वृत्तांत कोइक देवतायें श्रवण कस्युं. तेथी ते देवतायें ते स्त्रीने मृतकरूप करी नाखी, त्यारे ते पुरुष सत्तो थवाने काष्ठनी चयमां वेगो, अने अग्नि लगाड्यो. पण देवतायें मेघ अंधारी वरपाद करीनें अग्नि ठलवी नांख्यो. तेवारें ते पुरुष बहार आवी वेगो. पठी देवतायें ते पुरुषनुं अर्ध आयुष्य तेनी स्त्रीने आप्युं. त्यारें ते स्त्री त्यांथी पोताना स्वामीने ठोडी समुद्रपार बीजा नगरमां गइ. अने ते पुरुष पण फरतो फरतो तेज नगरमां जइ तेने मल्यो. तेवारे ते स्त्री पोताना धणीने जोइने लाजी. कारण के पुरुषने ठोडी ने ज्ञागी गइ हती. तेथी त्यां स्त्रीचरित्र करी पोतानुं लुगडुं फाडी बूम पाडी ने कह्युं, जे आ पुरुषे मारी लाज लीधी. ते सांज्ञली त्यांना राजायें ते पुरुषने पकडीने सुली ऊपर चडाव्यो. एम कुलटास्त्रीयें स्वारथ विना अनर्थ कस्यो. कह्युं, ठे के ॥ दोहो ॥ उपकार करियें अधिक तर, अयोग न माने एह ॥ अरधुं दीधुं आउखुं, तेहनी न थइ तेह ॥ १ ॥ इति त्रीशमो दृष्टांत ॥ ३१ ॥

ज्ञाग्यमां लख्युं होय तेज मले ठे. ते ऊपर दरिद्रीनो एकत्रीशमो दृष्टांत.

॥ दारिद्र्यश्चपलान् सदात्ति ज्ञगिनी सोचिंतयन्मेऽस्तिहो, मिष्टान्नेछिकया स्वसुर्गृहगतो भ्रातुश्च हर्षान्विता ॥ भक्त्यर्थं पतिता गृहेपिः चपला स्थाल्यां तदा मुंचति, दत्वा स ह्यलके करं वदति तां रात्रौ गता मेऽग्रतः ॥ ३२ ॥

अर्थः—कोइएक दरिद्री प्रति दिवस चोला खातो हतो. एकदा चोला खातां उज्ञग्यो चोला ज्ञावे नहिं तेवारे विचारवा लाग्यो के हुं दुःखी छुं पठी मिष्टान्ननी इछायें पोतानी बेननें घेर घणे दिवसें परोणो थइने गयो. तिहां ज्ञाइने जोइने बेन हर्षित थइ, अने ज्ञावें करी घरमां चोला हता ते पोताना ज्ञाइने जमाडवा माटे तेणे राध्यां. अने जमवाना वखत ज्ञाइनी थालीमां पीरस्या. ते जोइने तेना ज्ञाइयें दिलगीर थइ कपालें हाथ दइ बेनने

कह्युं के रात्रिने विषेज आ चोला माह्री पहेल्लांज तमारे घेर आवेला ज णाय छे ॥ दोहा ॥ में लीधो छे प्रह्समो, चोजे लीधी रात ॥ एह्थी जा गो आवियो, बेन थोडेरा घाल ॥ १ ॥ देस तजी परदेस जमे, धरे घणी मन आस ॥ सरज्यो ते नर पामीयें, ज्युं चवले लीधी रात ॥ २ ॥ ३१॥

ह्वे जे पाप करीने पण वली पश्चाताप करे तो ते सुखी थाय,नही तो दुःखी थाय, तेऊपर राजाने मेहेलें जनार बे ग्रामीणनो बत्राशमो दृष्टांत कहेछे.

॥ हर्म्यारोहणवारितं नृपतिना भृत्यः कथं कार्यतां, वामं गच्छति मुच्य तामिह गतौ ग्राम्यौ तदा क्रोशितौ ॥ वक्त्येकः किमु मारितोऽपरनरो नीत्या शु मां रक्षतां, गत्वाग्रेर्यदि गम्यतां त्वरगते मुक्तः सुखी सोऽन्नवत् ॥ ३२ ॥

अर्थः—एक राजायें वाडीमां मोहोल कराव्यो. अने पोताना चाकरोने कह्युं जे, आ मोहोलमां कोइने पेसवा देशो नहीं. तेवारें दरवाने पूछ्युं के, कदापि कोइ भूलथी प्रवेश करे, तो तेने केम करवुं ? तेने राजायें कह्युं के तेने पण मारी नांखजो. पण मूकशो नहीं.ते सांजली पोलीयायें फरी थी अरज करी के, हे महाराज ए घणो आकरो दंम छे. तेने राजायें कह्युं के, ते प्रवेश करनारो जो पाछे पगे उतरे तो तेने छोडी मुकजो. एकदा प्र स्तावे कोइ वे ग्रामीण पुरुषो भूलथी ऊपर चडी गया. त्यारें ते वेहु जण ने राजाना मनुष्योयें पकड्या. तेमां एक पुरुष वहु बोल्यो, तेथी तेने मा र्यो. अने बीजो पुरुष बीकथी कहेवा लाग्यो के मारुं रक्षण करो. त्यारे राजसुजटें कह्युं जे तुं पाछे पगे उतरीश तो वचीश ते पुरुषें तेमज कर्युं. त्यारें तेने मुक्यो तेथी ते जइ पोताना कुटुंबने मल्यो, अने सुखीयो थयो. कह्युं छे के, श्लोक ॥ पापं कृत्वा पुनः पश्चात् , यो निन्दति नरोत्तमः ॥ स सुखी जायते लोके, यथैको हर्म्यपश्यकः ॥ १ ॥ इति बत्रीशमो दृष्टांत ॥

विचार्या विना मुर्ख जनने वचन आपवुं नहीं ते विषे तेत्रीशमो दृष्टांत.

॥ भूपालीरसुते सदाभिरमतोरोदित्यभोरांगजा, वक्तयोरोदिपि किं भवद्दि रद्दतः सत्यं धवेको हि नौ ॥ याम्यागच्छति विट्सन्नं निशि सखे मार्गे मिलित्वा गतः, श्रुत्वार्यीचलहेतुकां वरमतो ज्ञात्वा गता स्वालये ॥ ३४ ॥ अर्थः— एक राजानी दीकरी बीजी आहिरनी दीकरी ए बन्ने साहेली हती. ते सा थें मली रमत करे. एकदा आहिरनी बेटी रोवा लागी तेने राजानी पुत्रीयें पूछ्युं जे तुं केम रडे छे ? त्यारे ते कहेवा लागी के तुं राजाने त्यां परणी

ने जाइश तिहां तहाराथी बाहेर फराशे नहीं तेवारे मारें ताहरो मेलाप थशे नहीं. तेथी मुजने ताहरो विरह थशे ते दुखथी हुं रडुं बुं. त्यारें राज कन्या कहेवा लागी के, जे ताहरो स्वामी तेहज मारो स्वामी हुं करीश बी जाने परणुं नहीं. एवो बोल दीधो. हवे एकदा ते आहिरकन्या कोइ नीच वि टल पुरुषनी साथें निकली जवा लागी ते वखतें राजकन्याने कह्युं जे तुं आनी साथें चालीश ? त्यारें तेणें पण पूर्वें बोल आपवाथी हा पाडी; पढी त्रणें जण मली रात्रियें ऊठी चाल्यां आगल जतां एक रेंट फेरवनार पुरुषें आंबाना दृष्टांत वाली एक गाथा कही ते सांजली राजकुमारी मनमां सम जीने पाछी वली. ते गाथा कहे छे ॥ दोहा ॥ कालुं वांकुं मुह करी, रत्तडा थयो अशास ॥ ते फल दीधे कवण गुण, जो फल दिये पलाश ॥१॥ सु रतरु जाणी सेविउं, रे निगुणा पलाश ॥ जब तें मुह कालो कीयो, तब में छोडी आश ॥ १ ॥ जइ फुल्ला कणियारया, चूयग अइ मासयम्मि धुठंमि॥ तुह न खमं फुल्लेवं, जइ पच्चंता करम्मि मृमराइ ॥ ए तेत्रीशमो दृष्टांत ॥

नीच जन ऊंचनी समानता करे तो दुःखी थाय तेनो चोत्रीसमो दृष्टांत.

॥ कारण्येऽग्निभयाद्ध्रदे पतति वै सिंहादिजन्तुव्रज, शांते वह्निभये हरि र्वदति तं पुच्छं गृहाणाशु मे ॥ ते गृण्हंति तदा हृताः स्थलचरास्तद्धा रितं फेरुणा, पश्चात्तेन कृतं तथापि न हृताः पुच्छं तदा त्रोटितम् ॥ ३५ ॥

अर्थः—कोइएक अटवीने विषे अग्निनो भय उपनो ते भयथी वनमां र हेनार सिंहादिक जंतुउ एक ऊंमा जलना धरामां पड्या. पढी ज्यारें अग्निनो भय निवृत्ति पाम्यो त्यारें सिंहें ते जंतुसमुदायने कह्युं के, मारुं पूछडुं पकडो, हुं सर्वेने बहार काढुं. ते सांजली बधायें तेनुं पूछडुं पकड्युं अने सिंहें फाल मारी ते सर्वेने बाहेर काढ्यां ते आम्नाय एक शीया लीए धारी राखी तदनंतर वली पण केटलेएक दिवसे दावानलना भयथी सर्वे जंतुउ तेहिज जलनां धरामां आवी पड्या पण ते वखत सिंह आव्यो नहीं त्यारे शियाले कह्युं मारे पुछडे वलगो हुं सौने बहार काढुं पढी सिंह नी पेठें शियाले बल करी सौने काढवा मांड्यां तेथी ते शियालीयानुं पूछ डुं तुटी गयुं अने सर्व जीव पाछा पाणीमांहे पड्या माटे नीच पुरुष ऊंच नी समानता करवा जाय तो दुःखी थाय कह्युं छे के श्लोक ॥ आत्मवीर्यं

न जानाति, दृष्ट्वा दृष्ट्वा करोति यः ॥ स दुःखी स्याद्यथाफेरु, स्युत्थ्यत्पुच्छो ह्यधोऽपतत् ॥ ॥ १ ॥ ३५ ॥

हवे मोहोटानी छाया पण फल दायक छे तो महोटानी संगती फलदायक होय तेमां तो शुं ज कहेवुं! ते ऊपर एक न्नरवाडनो पांत्रीशमो दृष्टांत.

॥ च्युत्वाधो न्यपतन्फलानि स ततो दृष्ट्वा तदाचितयद्, गोपो मुर्ध्नि हि खेगमस्य पतिता छाया वरा बुद्धिदा ॥ श्लोकस्तस्य कृतश्च पादरहितः छाया गता नो पदं, तादृक् तेनहि पूरितं निजधिया मक्केति कुंम्कालिकं ॥ ३६ ॥

अर्थः—एक कूवामां जांबुवृक्षनां फल टूटी पडतां हतां. ते कोइ गोवालीये दीठां, तेवारें गोवालीयें चितव्युं, जे आ फल खावा लायक छे. एम विचारे छे, एटलामां तिहां गोवालना माथा ऊपर सरस्वतीना विमाननी छाया पडी तेवारें ते गोवालने बुद्धि उपजी तेथी तेणे एक श्लोकनां त्रण पद जोड्यां. एटलामां विमाननी छाया चालीगइ, अने चोथुं पद तो थयुं नहीं. तेवारे तेहज गोवालिये पोतानी बुद्धिथी तेहवुंज चोथुं पद रच्युं. ते पद कहे छे डबक अने कुंडालुं. हवे जे श्लोक तेणे रच्यो ते कहे छे ॥ जंबूफलानि पक्कानि, पतंति विमले जले ॥ पतितान्ये वहश्यंते, मबक अने कुंम्कालुं ॥ १ ॥ छायैव फलदा पुंसां, महतां तु विशेषतः ॥ विमानछायया वाण्या, गोपो हि पटुतां गतः ॥ १ ॥ ३६ ॥

सद्विद्याथी सहु चमत्कार पामे छे ते ऊपर छत्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ कोप्यागत्य विशारदो वदति मे विद्यां नृपं पश्य नो, स्त्री मुक्त्वैं शगृहे गतो हि गगने मृत्वापतत् तत्समम् ॥ सा दग्धा पुनरागतो मम वशे त्वं देहि वार्त्तापि सः, कूटं नोवद चानयामि हि वरं लात्वा गतो विस्मितः ॥ ३७ ॥ अर्थः—कोइ एक पुरुष पोतानी स्त्रीने लइने कोइ राजाना दरबारमां आव्यो, अने राजाने कह्युं के माहारी विद्या जुवो. तेने राजायें कह्युं के नले देखाडो. त्यारें ते पोतानी स्त्रीने अंतःपुरमां मूकीने गयो अने कह्युं के आकाशमां इंद्रनी अने दैत्यनी मांहोमांहे लडाइ थाय छे. माटे त्यां हुं जाउं छुं एम कहीने गयो पछी आकाश विषे जइ मरण पामीने तेना हाथ पग शरीर प्रमुख नीचे पड्यां ते जोइने ते पुरुषनी स्त्री पण पोतानो स्वामी पड्यो हतो तेनी सार्थे चयमां सती थइ ने वली गइ के तरतज ते पुरुष पाछो राजानी पासें आव्यो अने कह्युं के माहरी स्त्री आ

पो तेवारें राजायें तेने पाछल बनेली वात सर्व कही, पण तेणे न मानी अने बोल्यो के हे राजन्! तुं जुतुं म बोल महारी स्त्री ताहरा घरमांज छे. तेने राजायें कह्युं जो घरमां होय तो लइ आव. तेवारें ते घरमां जइ स्त्रीने लइ आव्यो. ते जोइ राजा तथा सन्नाना लोक सर्व विस्मय पाम्या. एम विद्यानो चमत्कार देखाड्यो पछी राजायें पण घणुंक इव्य आप्युं. कह्युं छे के॥ विप्रेण दर्शितां विद्यां, विक्रमः सदसितदा ॥ निरीक्ष्य सुनटाः सर्वे, तदा तस्मै धनं ददौ ॥ १ ॥ इति बत्रीशमो दृष्टांत ॥ ३१ ॥

कपटथीज जारस्त्री पराजव पामे तेनो साडत्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ श्लोक ॥ नो पुष्णाति पतिं तमाह कुलटा मेंऽधं कुरु त्वं सुर, श्रुत्वे तोहविपात तं हि हविपा पीनस्तदंधोऽनवत् ॥ पश्चात्तोपितुमारने वदति स पश्यामि नो निर्नया, नुंक्तेऽन्यैःसह नोगमस्ति बलवन् युग्मं गृहीत्वा हतम् ॥ ३० ॥ अर्थः—कोइएक विटल जार स्त्री पोताना धणीनुं पोषण करे नहीं. पोतें कुलटा छे, तेथी करी तेने पोताना नरतार उपर राग नथी. बीजा पुरुप साथे राग नाव राखे छे. एकदा ते जारस्त्रीयें एक यक्षनी पूजा करवा मांमी. अने प्रतिदिन पूजा करीने एवुं कहेवा लागी के, हे यक्ष! मारा स्वामिने आंधलो कर. एम नित्य कहे एम करतां एक दिवस तेना नरतारें ते वात सांनली, तेवारें बल करीने पोतें यक्षनी प्रतिमानी पछवाडे जइ छुपाइने बेसी रह्यो. अने ते जार स्त्रीयें आवीने ज्यारे यक्षनें कह्युं के, हे यक्ष, तुं मारा स्वामीने आंधलो कर. ते वखतें पाछल बेठेलो पुरुप बोल्यो के, हे स्त्री! ताहारा धणीने तुं मिष्टान्न खवरावे तो आंधलो थाय. ते सांनली ते स्त्रीयें पोताना स्वामीने घणो घृत खांम अने चूरमो प्रमुख मिष्टान्न खवरावचा मांम्युं. तेवारे तेनो नरतार कपटथी आंधलानी माफक कहे के, हे स्त्री,हुं कांइ चीज देखी सकतो नथी. तेवारे ते स्त्री निर्नय थइ थकी ते विटल पुरुपनी साथें नोगनोगववा लागी. लगार मात्र ते स्त्रीने शंका रही नहीं. एकदा जेवारें तेनो नरतार खाइ पीइने सारी पेठे बलवान थयो, तेवारें ते जार स्त्री तथा जार पुरुप बे जणने पकडीने माखा. काग कूख्या कह्युं, छे के श्लोक ॥ कथं हससि नो हंस, नाहं दर्डुरवाहनः ॥ कालक्षेपो हि कर्त्तव्यो, घृतांधो ब्राह्मणो यथा ॥१॥३०॥

गुरुयें शिष्यनी परीक्षा करी पोताना पदें स्थापवो तेनो आडत्रीशमो दृष्टांत.

॥ शिष्यान् वक्ति गुरुस्तदाम्रफलमिष्टाम्यानय त्वं पृथक्, पारीक्षाय निवेदितः प्रथमकोवग् वृद्धता ते गुरो ॥ अन्यो गच्छति शद्धितश्च लघुना गत्वा विधिं पृच्छति, त्रैविध्यं ज्ञ विनीतकं हि गुरुणा ज्ञात्वा स्वदत्तं पदम् ॥ ३९ ॥

अर्थः—एक गुरु पोताने पदें स्थापन करवा सारु शिष्योनी परीक्षा करवाने अर्थें प्रथम मोटा शिष्य प्रत्यें बोल्या के, तुं महारे माटे आंबाना फल लावी आप त्यारे ते वडो शिष्य बोल्यो के हे गुरु! तमारी अक्कल क्यां गइ देखाय छे जेमाटे तमोने वृद्धपणामां आम्र खावानुं मन थयुं छे? पछी बीजा शिष्यने कह्युं के तुं आम्रफल लाव्य त्यारे ते शिष्य आंबा लेवा माटे चाल्यो ते जोइने तेने गुरुयें पाछो तेडी लीधो पछी त्रीजा न्हाना शिष्यने लेइ आववा कह्युं तेवारें ते शिष्य वंदना करीने गुरुने पूछवा लाग्यो के हे स्वामी आंबा त्रण प्रकारना छे. एवुं तेनुं बोलवुं सांभलीने गुरुयें जाण्युं जे आ शिष्य विनीत ज्ञानवंत क्रियावंत छे माटे आपणा पदने योग्य छे. एम चिंतवी ते शिष्यने पोतानुं पद दीधुं. कह्युं छे के श्लोक ॥ परीक्षा सर्वसाधूनां, शिष्याणां च विशेषतः॥ कर्त्तव्या गणिना नित्यं, त्रयाणां हि कृता यथा १

गुणहीन स्त्रीयो घरने हलकुं पाडे तेनो ओगणचालीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥ लोलासात्यवशाश्चतुर्मुखसमाः श्रुत्वा नृपस्तद्गृहे, गत्वा पश्यति ताः पतिर्वदति नो मौनं विधेयं तदा ॥ तज्ज्येष्ठे नृप वर्णिता सुवटिका तिस्रो गिरोचुः स्वसः, हम्यां क्रोशति तूर्यका हि हसितः प्रोचे न किं कां पयः॥ ४० ॥

॥ अर्थः—कोइएक प्रधानने चार स्त्रीउ हती ते चारे स्त्रीयो बोबडीयो हती ए वात राजायें सांभली अने विचार कर्यो के आपणा प्रधाननी चारे स्त्रीयो बोबडी छे ए वात खरी छे के खोटी छे माटे तेनी तपास करुं. एम निरधारीने प्रधानने घेर जोवा गयो त्यारे मंत्रियें पोतानी चारे स्त्रीउने वारी राख्युं के तमे बोलशो मां मौनपणुं करजो ए वात प्रधाननी स्त्रीउयें कबूल राखी पछी राजाने जमाडवा वडीनुं शाक कर्युं हतुं. ते ज्यारें राजा जमवा बेठो तेवारे स्त्रीउने हसावीने राजायें कह्युं के वडी बहुज सारी थइ छे एवां वखाण सांभलीने एक स्त्री बोल्याविना रही शकी नहीं. तेथी ते तरत बोली के "ए ववियां तो में तवियां" त्यांतो बीजी बोली के "एववियां तो तें तवीयां जो मांइआइयां तेलाइ पइआं" त्यारे त्रीजी बोली के "आ

द्दियांमींगडइश्रां" आवुं सांजली राजा हस्यो त्यारें प्रधानें आंख करडी करीने चोथी स्त्रीनी सामुं जोयुं. त्यारे ते बोली के "मइमाए बोयां नहीं, चायां नहीं, मोयां शुं काढीयावो" कह्युं डे के श्लोक ॥ गुणहीनाः सुरूपा श्च, नवंति गेहनंमनाः ॥ स्त्रियोपि गृहवासिनां, वटिका पाविका यथा ॥१॥

नइकजीव होय ते सर्वत्र नइपणुं पामे ते ऊपर चालीसमो दृष्टांत.

॥ यज्ञे नव्यिकरीं निरीक्ष्य करिकेश्यन्नं तदा याचते, तस्मै ते न ददुः स्फुद्दिषधरं दृष्ट्वा हतं तैर्नरैः ॥ हास्यांते हि तथा वदंत्वविषकैषातोपि नो मार्यतां, ज्ञात्वा स्वावगुणं लली व्रतवरं प्रोक्ता नु तेनार्यिका ॥ ४१ ॥

अर्थः—कोइ एक यज्ञनेविषे घणाएक ब्राह्मणो जमवा बेग त्यां हरिकेशी नामा चंमाल आव्यो तेणे अन्न माग्युं. परंतु ब्राह्मणोयें आप्युं नहीं अने उलटा रीश करवा लाग्या, क्रोधायमान थया एटलामां एक सर्प्प निकल्यो तेने देखीने ब्राह्मणे मार्यो ते हरिकेशी चांमाले जोयो. तेटलामां एक गोह नीकली. तेने जोइने हरिकेशी मारवा दोड्यो त्यां ब्राह्मणो बोल्या के, एना मुखमां विष नथी माटे मारशो नहीं तेवारें हरिकेशीयें पोतानो वांक जाण्यो. जातिस्मरण ज्ञान ऊपन्युं तेथी चारित्र व्रत प्रत्यें लेतो हवो अने एक गाथा कहीने तेणें उपदेश दीधो ते गाथा ॥ नद्देण होइ सवं, नद्दं पावेइ सवउ नद्दं ॥ हणिउ कन्हो सप्पो, नेरंमो तह्न मुंच दीवो ॥१॥

केटलाएक प्राणी कोइ पदार्थने जोइ वैराग्य पामे ते विषे एकतालीशमो दृष्टांत.

॥ दृष्ट्वेशोप्यतिसुंदरं च वृषनं सोटाव्यते चैकदा, मार्गे सत्करकंमुराद् निजकान् कस्यायमुक्तो तदा ॥ प्रोचुस्ते तव नो कमिष्टवृषनं श्रुत्वेति दीनोऽपि सन्, वैराग्यं हि विधाय राज्यमखिलं त्यक्त्वा मुनीशोऽनवत् ॥४२॥

अर्थः—करकंमु राजायें अति सुंदर वृषन पोताने त्यां जोइने तेनुं संरक्षण कराव्युं. घणा दिवस वीत्यापठी एक दिवस ते बलने मार्गमां आरडतो जोइने मनुष्यने कहेवा लाग्यो के, आ कोनो बलद डे ? आनी कोइ संनाल पण लेतुं नथी त्यारे मनुष्य बोल्या के हे राजन्! आपने जे अत्यंत प्रिय हतो ते बलद आ डे, माटे आप पोतें संनाल न ल्यो तो बीजुं कोण ले ? आ वात सांजली राजानां मनमां वैराग्य उत्पन्न थयो, तेथी पोतानी राज्यादिक समृद्धि ठोडी दीक्षा लीधी. रुपीश्वर थयो जाणुं के आ बलदनी अवस्था ते म्हारी अवस्था जाणवी आ संसारमां सुख डे ते अस्थिर डे.

माटे मोह न राखवो ॥ सेयंसुजायं सुविन्नत्त सिंगं, जो पालई वसहं घुठ मज्झे ॥ रिद्धिं अरिद्धिं समुपेईयाणं कलिंगरायाविसमिरक धम्मं ॥ ४२ ॥

एकला रहेवाथीज सुख छे ते विषे नमिराजानो बेंतालीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नाभ्यंगान्नुदति ज्वरोऽपि ललना धृष्यंति ताश्चन्दनं, शब्दं नो वलया वले सहति स त्यक्त्वा समं रक्षितं ॥ पृष्टस्तेन कथं रवो नवति नो ताः प्रोचुरे कैककं, चिंतत्यावहुतो सुखं मम तदैकाक्यस्ति जातो मुनि : ॥ ४३ ॥

अर्थः—नमिराजाना अंगने विषे दाह ज्वर उत्पन्न थयो त्यारें सर्व स्त्रीयो चंदन घसी घसी चोपडे पण साता पामे नहीं. वली ते चंदन घसतां थ कां कंकण चूडीना खलखलाट थाय ते सोहाय नहीं, तेवारें ते स्त्रीयोयें मांगलिकार्थे एक एक चूडी राखी बाकी सर्व काढी नांखी तेथी शब्द थातो बंध पड्यो. ते जोइ राजायें पूछ्युं के शब्द केम थातो नथी? स्त्रीयोयें कह्युं के मांगलिककार्ये एक एक चूडी राखी तेथी शब्द थातो बंध थयो. आ वात सांनली नमिराजायें विचार्युं के एकाकी रहेवे जेवुं सुख छे तेवुं झाझा मनुष्योथी सुख नथी. माटे जो आ ज्वर मटे तो माहरे दीक्षा ग्रहण करी एकलुं विचरवुं एम धर्मध्यान ध्यावतां ज्वर शांत थयो के तुरत ते रुषीश्वर एकाकी विचरी मोक्षने पाम्यो. कह्युं छे के गाथा ॥ वलयाण सद्दं सुणति राया, पच्छा असद्दं तह जाणईया ॥ रिद्धिं अरिद्धिं समुपेइयाण,विदेहराया विसमिरकधम्मं ॥ १ ॥ दोहा ॥ चंदन घसतां चूडीनो,श्रवण शब्द न सुहाय ॥ एक रखावी चिंतव्युं, बहु मलियां दुःख थाय ॥ १ ॥ राज रुद्धि सव परिहरि, लीधो संयम नार ॥ पारिखुं तव इंद्रे कर्युं, न चल्यो नमि लगार ॥

बीजानी देखा देखीयें पोतानुं गमाववा उपर त्रेतालीसमो दृष्टांत.

॥ छिंदन्निःस्वनरस्तरुं यदि वने देवेन तद्वारितो,ऽन्नार्थी मार्गयतीह देहु डदजान् दत्तं वरं गच्छ नो ॥ गेहे दंतिजना विलोक्य धनिना पृष्टः कुतस्तान यो, प्रोचे तत्र गतः सिताग्रहधृतं तस्यास्तु मुक्तः स तं ॥४४॥ अर्थः—कोइ एक दारीद्री दुर्बल पुरुष वनमां लाकडांनी नारी लेवा गयो तिहां जइ एक सारुं वृक्ष देखी तेने छेदवा लागो. तेने ते वृक्षनो कोइ अधिष्टायिक देव त्यां अदृष्ट रहेलो हतो तेणे कह्युं के आ झाडने कापीश नहीं, त्यारे ते दारिद्री पुरुषे कह्युं के हुं भूख्यो छुं माटे मने खावानुं आप. देवें कह्युं के तुं माग जे जोइयें ते हुं आपुं. तेणे अडदनांढोकलां माग्यां त्यारें देवें

ढोकलांनुं वरदान आप्युं पछी ते कठीआरे घेर आवीने ढोकलां खावा मांम्या तेनुं सर्व कुटंब नित्य ढोकलां खाय ते जोइने तेना पडोसी व्यवहारियायें, पूछ्युं के तुं प्रतिदिवस अडदनां ढोकलां क्यांथी लावी खाय छे तेवारे ते गरीब पुरुष बोल्यो के वनमां काष्ट कापतां माहरी उपर देवता प्रसन्न थयो तेणे वरदान आप्युं छे तेथी नित्य प्रत्यें ढोकलां खाइयें छेयें ते सांभली ते पडोसी पण तिहां गयो कुहाडो लइ हाथ उंचो कीधो के तरत तेने देवतायें थंभी राख्यो ते कोइ रीते छुटी शके नहीं पछी जेवारें घरनुं घृत पडोसीने आपवा कबुल कर्युं तेवारें देवतायें ते व्यवहारियो मूक्यो ते पुरुष पाछो घेर आव्यो. अने घरनुं घी पण खावाथी चुको स्त्रीये पूछ्युं तेवारे तेना धणीये कह्युं के घरना घृतमां साकर घालीने खा. ॥ दोहा ॥ ढोकल खातां देखीने, होंस हुइ मनमांय ॥ लेइ कुहाडो वन गयो, सुर थंभी तसकाय ॥ १ ॥ वनिता सुरसु वीनवे, धणीतें कचपच कीय ॥ ढोकल तो पाम्यां नहीं, घरना चूका घीय ॥ २ ॥ इति त्रेतालीसमो दृष्टांत ॥

जे सुधर्मी होय ते खोटी वस्तु आगल न करे ते विषे चुम्मालीशमो दृष्टांत.

॥ दृष्ट्वानीकममात्यमाह नृपतिः कस्यास्तिशौर्यं बले, ज्ञात्वेभस्य तदा मृगाद्विपपदे त्वारोपिताः स्वामिना ॥ बध्वा कृत्रिमका सटा बलमुखैः संस्थापितस्तशुन, स्तत्रागात् भपतीति पृष्ठचरणाभ्यां सोपि नष्टोऽधमः ॥४५॥ अर्थः— कोइ एक राजाना देसमां तेनो डुशमन राजा कटक लइने देश भांजवा आव्यो तेने जोइने राजायें मंत्रीने पुछ्युं के हे मंत्री सैन्यमां वधारे बल कोनुं होय ? त्यारे मत्रीयें कह्युं के सैन्यमां हस्तीनुं बल वधारे होय. राजा कहे एक सिंह कारिमो करवुं एवुं विचारीने सिंहने स्थानके एक कूतराने थाप्यो पछी तेने कारिमो केसरा टोप बांधीने सैन्यने मुखें कर्यो अने पाछलथी राजा कटक लइ चाल्यो ते जे वारे वयरी राजाना कटकनी साहामो आव्यो तिहां ते वयरिना कटकमां आगले मुखमां गजघटा दीठी ते जोइ कूतरो भसीने पाछले पगे नासवा लाग्यो पछी जेम जेम सैन्य सामुं आवे तेम तेम पाछे पगे कूतरो चालतो जाय अने भसतो जाय छे माटे सुधर्मी पुरुष खोटी वस्तुने आगल नकरे कह्युं छे के श्लोक ॥ आवध्द कृत्रिमछटाविकटांशुभक्ति, रारोप्यते मृगपतेः पदवीं यदि स्यात् ॥ मत्तेभकुंभतटपाटनलंपटस्य, नादं करिष्यति कथं हरिणाधिपस्य ॥ १ ॥ ४५ ॥

बांफी गधेडीनी हरियालीना अर्थनो पीस्तालीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृपः प्राह ददामि यो मम सुताप्रश्नोत्तरं दास्यति, राज्यार्धं तनयां च तस्य यदी नो शूलिं च दत्तावुभौ ॥ दृष्टैकेन कृता प्रहेलिकवरा मेर्थं प्रदत्तं प्रिये, गत्वा वंडखरी विवाह्य नृपजां राज्यं च लात्वा गतः ॥४६॥ अर्थः— कोइ एक राजा सर्वेने एवुं कहे के मारी दीकरी जे प्रश्न करे ते प्रश्नोनो जे उत्तर आपे तेनें मारुं अर्धुं राज्य आपुं अने वली मारी दीकरी पण परणावुं अने वादकरतां जो उत्तर न आपे तो तेनें शूलीयें चडावुं. एवी प्रतिज्ञा करी अने ते प्रतिज्ञाथी कोइ बे पुरुषने तो शूलीयें पण चडाव्या. एवामां कोइ एक रजपूत पोतानी स्त्रीने आणु करवा जाय छे तेणे ते बे पुरुषने शूलीयें चडाव्या जोइने एक हरियाली जोडी पोतें कुंवरीनी आगल गयो जइने ते हरियाली कही अने विचारीनें कुंवरीने कहेवा लाग्यो के हे कुंवरी! ताहरी हरियालीनो अर्थ तो बांफी गधेडी. पण माहरी हरियालीनो अर्थ तुं कहे तेवारें राजायें जाण्यो जे महारो अर्थ तो एणे कह्यो एम समजीने राजायें तेने कन्या तथा अडधुं राज्य आप्युं ते पुरुष राजने तथा बे स्त्रीउने लइ चाल्यो. हवे राजपुत्रियें पूछेली हरियाली कहे छे ॥ हुतो तेवारे खाजे नहीं, न हुतो तेवारें खाजे ॥ ए हरियालीनो अर्थ कहे, तेहने राजपुत्री छाजे ॥ १ ॥ करी करम तो एक तेम वीजी, करी करमतो छे तेम त्रीजी ॥ राणी कंकण शीतल थाशे, कइक रंक ऊपर कागडा वासे ॥ २ ॥ आंखमांही पांख वीआइ, शुली दीधुं पाणी ॥ ताहरी हरिआलीनो अरथ वांडी गधेहडी, माहरो अरथ कहे राणी ॥ ३ ॥

हवे बुद्धिथी शशलायें सिंहने मार्यो एवो छेतालीशमो दृष्टांत कहे छे

॥ जीवान् हंति हरिस्तदा वनचराः प्रोचुः किमर्थं हरे, प्रत्येकोप्यपरे वरं हि शशको वक्त्रे विलंब्यागतः ॥ रुष्टो वक्ति सुरे वने तव रिपुर्न्ना दर्शये हन्मि तं, कूपे स्वं प्रतिबिंबमीक्ष्य पतितस्तेनाशु बुध्या हतः ॥ ४७ ॥

अर्थः—एक वनमां एक सिंह हतो ते घणा जीवोने मारे छे ते जोइ बधा वनचर भेला थइ सिंहने कहेवा लाग्या के हे वनचर! तुं जो नित्य जीवहिंसा करे नहीं तो अमें तुजने प्रत्येक दिवसें एक जीव आपशुं त्यारे सिंहे हा पाडी पछी बधाये वारो काढयो ने जेनो वारो आवे ते नित्य तेनी पाशे जाय एम करतां एकदा कोइ शशलानो वारो आव्यो. ते शशलो घ

णो असूरो विलंबें गयो. त्यारे क्रोधायमान थइ सिंहे शशलाने कह्युं के तुं केम वेहेलो आव्यो नहीं? त्यारे शशलें कह्युं के हे वनराज! ताहरो शत्रु बीजो सिंह वनमां आव्यो छे. तेणे मने आववा दीधो नही तेथी हुं रोकायो, तेने सिंहे कह्युं जे मारो दुश्मन बताव्य. तेवारें सिंहने पोतानी साथें लइ वनमां एक जल भरेल कूवो देखाड्युं के जो तारो शत्रु आमां बेगे छे, पछी सिंहे कूवामां जोयुं त्यां प्रतिबिंब रूप बीजो सिंह जोवामां आव्यो, तेने जोइ सिंह कूवामां पड्यो ने मरण पाम्यो. एम बुद्धियें करी शशलायें सिंहने माख्यो कह्युं छे के, श्लोक ॥ बुद्धिर्यस्य बलं तस्य, निर्बुद्धेश्च कुतो बलं ॥ वने सिंहो मदोन्मत्तो, शशकेन निपातितः ॥ १ ॥

हवे कविनी चतुराइनो सुडतालीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ व्युष्टे याति कविः करेण पतिना कूर्च्यो यदा कर्ष्यते, केशोपि स्वकरे विलोक्य कथितो निर्भाग्य जाह्येककं ॥ सोवर्किं हि करे ददासि तव मे भाग्यं तदा ज्ञायते, तुष्टः सन्कलयन् ददाति कवये कृत्वेशकाव्यं गतः ॥ ४७ ॥

अर्थः—एक दिवस प्रभातनेविषे एक पंमित राजानी सभामां याचना माटे आव्यो. राजाने एवी प्रतिज्ञा हती के कोइ याचक आवे तेवारे पोतानो जमणो हाथ दाढी उपर फेरवे अने जेटला केश हाथमां आवे तेटली शोनामोहोर तेहने आपे. आ पंमितनी वखत राजानें दाढीनो एकज केश हाथमां आव्यो त्यारे राजायें कवीने कह्युं के हे निर्भागीना शेखर तुं एक सोनैयो ले. पंमितें कह्युं के श्यामाटे? तेवारें राजायें कह्युं के म्हारा हाथमां एकज वाल आव्यो माटे एक शोनामोहोर ले जो घणा केश आवत तो घणा शोनैया आपत. ते सांभली कवियें कह्युं के तमारी दाढी मारा हाथमां आपो तो मारुं भाग्य जणाय आ प्रमाणे प्रसंगोपात अवसरनुं वचन सांभली तेनें पंमित जाणीने राजा खुशी थयो पछी संकल्प करवा ब्राह्मणे हाथमां जल लीधुं ते जलमां जोतां जोतां राजाना वर्णननां सो काव्य कर्यां. अने राजा पासेथी घणुं द्रव्य लइ गयो ते काव्यमांथी बे त्रण श्लोक उदाहरण माटे इहां लखीयें छेयें ॥ मालिनी वृत्तम् ॥ निवसतु तव गेहे निश्चला सिंधुपुत्री, प्रविशतु भुजदंमे चंमका वैरिहंत्री॥ तव वदनसरोजे भारती भातु नित्ये, न चलतु तव चित्तात् पादपद्मं मुरारेः ॥ १ ॥ अनुष्टुपवृत्तम् ॥ त्वदीया दंष्ट्रिका राजन्, मदीये च करे भवेत् ॥ त

दा ज्ञाग्यमज्ञाग्यं वा, ज्ञायते स्फुटमेव च ॥ २ ॥ यो गंगामत्तरत्तथैव यमुनां यो नर्मदां शर्मदां, का वार्त्ता, सरिदंबुलंघनविधेर्यश्चार्णवांत्तीर्णवान् ॥ सो ज न्माकं चरमाश्रितोऽपिसहसा दारिद् नामा सखस्त्वदानांबुसरित्य वाह्लह री मग्नश्च संज्ञाव्यते ॥ ३ ॥ इति सडतालीशमो दृष्टांत ॥ ४७ ॥

हवे असंतोषी ऊपर अडतालीशमो दृष्टांत कहे छे

॥ इंगे कुत्र जटी स्थितः प्रतिगृहस्यात्त्याशु निक्षां दिने, पृष्टस्यत्र शुन्नं जना मम गृहादायाति नो वा तदा ॥ सोऽवक्रुष्टजना वदंति सकलाः किं मे गृहान्नागतं, तेषां तैश्च महोदरंज्ञरिरिषि ज्ञात्वेति निष्कासितः ॥ ४ए ॥

अर्थः—कोइ एक नगरने विषे एक सन्यासी मढीमां रहे छे. ते प्रतिदिन घर घरथी निक्षा मागी लावीने खायछे एकदा सर्वजणे मली तेने पूछ्युं के म हाराज कोइने त्यांथी निक्षा आवे छे के नथी आवती ? सहुलोक तमारी खबर लीये छे के नथी लेता ? त्यारें माहाराजें कह्युं के लोक डुष्ट थया छे. निक्षा कोण आपे ? त्यारे ते सर्वलोकमांथी एकेक पूछवा लाग्यो के मा हाराज अमारे त्यांथी निक्षा नथी आवती ? त्यारे सन्यासी बोल्या के हा बाबु तेरें घरकी निक्षा तो आती है. तेमज बीजायें पूछ्युं त्यारें तेने पण एमज कह्युं एम जेणे जेणे पूछ्युं ते सर्वेने एमज कह्युं त्यारें लोकोयें जाण्युं के आ निर्गुणो पेटन्नरो देखाय छे. खातां पीतां पण कोइनुं सारूं बोलतो नथी माटे ए असंतोषी छे. तेथी एने बाहेर काढवो जोइयें एम चिंतवी ते ने गाम बाहेर काढ्यो. कह्युं छे के ॥ श्लोक ॥ डुःखिताःसंति संसारे,जीवाः संतोषवर्जिताः ॥ संतोपरहितो मर्त्यो, इंगान्निष्कासितो जटी॥ ४ए ॥

हवे ज्ञाववंदननी ऊपर साम्बकुमारनो उगणपचासमो दृष्टांत.

॥ कृष्णो वक्ति सुतौ ददामि जवमादौ ये जिनं वंदते, तत् श्रुत्वा सुतपा लकौ जिनतटे गत्वाजयं शंबकः ॥ अद्यादाश्वमिमं प्रदेहि मम नो पृष्ट्रे जिने नेमिना, द्रव्यात् ज्ञावफलं मतं तु हरिणा शंबस्य दत्तोऽश्वकः ॥ ५०॥

अर्थः—एक दिवस श्रीकृष्ण पोताना पालक तथा सांब नामना पुत्रने कहे छे के, जे श्रीनेमिनाथने प्रथम जइने वांदे तेने पाट घोडो आपुं, ते सांजली पालक नामना पुत्रें रात्रि लइने तरत जइ श्रीनेमिनाथ जगवान ने वांद्या अने सांबकुमारे तो पोताना घेर सुतां थकांज ज्ञाव वंदना करी. पछी पालकें श्रीकृष्णने आवी कह्युं के मने अश्व आपो तेने श्रीकृष्णें कह्युं

के हुं नेमिनाथने पूछीने आपीश त्यारकेडें तेणे नेमिनाथ जगवान्ने जइने पूछ्युं के महाराज प्रथम कोणे आपने वांद्या ? जगवानें कह्युं के इव्य वंदन पूछेछो के जाववंदन पूछोछो ? त्यारे श्रीकृष्णे कह्युं के जेमां लाज होय ते पूछुं छुं त्यारे श्रीनेमिनाथे कह्युं के जाववंदन उत्तम छे माटे जावथकी प्रथम मुने सांवकुमरें वंदन कर्युं छे. ए वात सांजली श्रीकृष्णे सांवने पटाश्व आप्यो, कह्युं छे के श्लोक ॥ जाव एव मनुष्याणां, कारणं सुखदुःखयोः ॥ दृष्ट्वा नेमिं च कृष्णेन, कृतं यद्वत्स्वपुत्रयोः ॥१॥ इति दृष्टांत ॥५०॥

हवे लोकोना बोलवानुं प्रमाण नथी ते उपर पचासमो दृष्टांत कहे छे.

॥ अश्वस्थं जनकं सुतं विचरतं प्रोचु र्विशोऽधोव्रजा, श्वारूढं कुरु पुत्रकं कृतमतो दृष्ट्वाच पुत्रं तथा ॥ आरूढौपथि गछतौ जडधियौ तार्क्ष्यं हि किंमार्यतां, पद्भ्यांकायमितस्तदास्यजयतो मध्ये हि किं वास्यतां ॥५१॥ अर्थः-कोइ एक पिता पुत्र बेहुजण अश्व लइने जाय छे, रस्तामां बाप घोडा उपर बेठो, अने पुत्र आगल चाले छे त्यारे सामा मलनार लोकोयें कह्युं के आ पोते घरडो थइने घोडे चड्यो जाय छे अने बालक चालतो जाय छे त्यारे पितायें बालकने कह्युं के तुं घोडे बेस. पछी ते बालकने घोडे बेठेलो जोइने सामा मलनार लोको कहेवा लाग्या के पुत्र घोडे बेठो छे ने घरडो बाप चालतो जाय छे ते सांजली बेहु जण घोडा उपर बेठा त्यारें लोकोयें कह्युं के आ बाप दीकरो बे जण घोडा उपर चढी बेठा छे ने बिचारा घोडाने मारे छे. ते सांजली घोडाथी नीचें उतरी बेहु जणे पगें चालवा मांड्युं त्यारे लोकोयें कह्युं के तमे मोटा मूर्खा देखाउ छो. जे माटे शाथे घोडो थयो छे अने पोते पाला कां चाल्यां जाउ छो घोडो फोकट चाल्यो आवे छे ते शुं तमने दुःख देशे ? आ उपरथी जणाय छे के लोक ते लोक छे जेम गमे तेम बोले ए लोकोनो स्वजावज छे जगतनो बोलवानो नियम नथी कह्युं छे के श्लोक ॥ सर्वथा स्वहितमाचरणीयं, किं करोति हि नरो बहुजल्पः ॥ विद्यते च नहि कश्चिडपायः, सर्वलोक परितोषकरोयः ॥१॥

हवे असत्य बोलवाथी नरकें जवाय ते उपर एकावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ तान् संपाद्य परीक्षणं गणिवरः कृत्वा त्रयाणां मृतो, वादं पर्वतनारदौ च वदतो राज्ञः सजायां गतौ ॥ ज्ञात्वा सत्यदृढंवसुं नरपतिं मात्राग्रहात्वक्ति तौ, मिष्टं वाक्यमतो गतः स नरके मृत्वा नृपः सप्तमे ॥५२॥ अर्थः-

खीर कदंबक नामना उपाध्याय एक पोतानो पुत्र पर्वत; बीजो नारद अ
ने त्रीजो वसुराजा ए त्रण शिष्योने नणावीने पोते मरण पाम्या पछी वसु
राजा पोताना बापनुं राज्य पाम्यो अने नारद विद्याधर थयो तथा पर्वत
पोताना बापनी गादीयें बेठो. एकदा पर्वत अने नारदने अज शब्दनो वाद
थयो, ते बे जण पोतानो वाद मटाडवा पोतानी साथें नणनारो वसु रा
जा हतो तेनी सनामां गया ने कह्युं के, अज शब्दनो शुं अर्थ? त्यारे पोता
ना उपाध्यायना पुत्रनी माताना आग्रहथी वसुराजा मिश्रवचन बोल्यो के
अज शब्दना बे अर्थ छे, तेमां एक तो त्रण वर्षनी जुनी शालने पण अ
ज कहे छे अने बीजो अर्थ बोकडो पण थाय छे. आवुं मिश्र वचन बोल
वाथी ते राजाने देवताउयें सिंहासनथी ऊंधो पाड्यो ते मरीने सातमी न
रकें गयो. कह्युं छे के ॥ परोपरोधादिति निंदितं वचो, ब्रुवन्नरो गछति नारकीं
पुरीं ॥ अनिंदवृत्तोपि गुणी नरेश्वरो, वसुर्यथाऽगादति लोकविश्रुतः ॥ १ ॥

पंमितनां डुर्लक्षण पण ढंकाय छे तेनो बावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ जातो माघगृहे सुतो हि हरने पित्रा सुतः पाठितो, नोजश्रीसदने गतो
निशिहरो गृह्णन् धनं जागृतः ॥ शय्याऽधो नृपतेः स्थितश्च स तथा काव्यं
नृपोऽवक्तदा, ज्ञात्वा गर्वयुतं हि तेन पदतुर्येणेश्वरो बोधितः ॥५२॥ अर्थः—
माघपंमितने घेर चोर नक्षत्रमां पुत्रनो जन्म थयो, पछी ते पुत्रने पितायें
निदान शास्त्र एटले चोरी कीधे महापाप छे एवा निदान शास्त्र नणाव्यां
तो पण ते पुत्रनो चोर नक्षत्रमां जन्म होवाथी ते पंमित पुत्र नोजराजाने
घेर जइ धनना नंमारमां पेठो, ने धन लेवा लाग्यो, तेमां एक लीये अने
एक मूके तेटलामां नंमारनो रक्षक जाग्यो तेने जोइने राजाना ढोलीया नी
चें पंमित पुत्र रक्षकना नयथी संताणो, सवारनो वखत थवाथी राजा जा
ग्यो अने बंदीजन विरुदावली बोलवा लाग्या त्यारें राजायें एक काव्य क
रवा मांमयुं तेनां त्रण पद कर्यां ते त्रण पद सांनलीने पंमित पुत्रें जाण्युं
जे राजा अहंकारें चड्यो छे तेथी ते चोथुं पद बोल्यो, ते पद सांनली रा
जा प्रतिबोध पाम्यो. हवे जे काव्य पंमित पुत्रें कह्युं ते लखे छे ॥ चेतो
हराः युवतयः स्वजनोऽनुकूलः, सद्बांधवाः प्रणयगर्नगिरश्च नृत्याः ॥ वल्गंति
दंतिनिवहास्तरलास्तुरंगाः, सम्मीलने नयनयोर्नहि किंचिदस्ति ॥ १ ॥

हवे स्त्रीवशपड्यो शुं शुं न करे? ते ऊपर त्रेपनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ प्राज्ञेशप्रमदे मिथोऽपि वदतोवश्योस्ति मे वल्लनो, नान्यं दर्शयति श्व लेन च पति शंसा म्रिये चेत्कथं ॥ जीवेऽश्वीयपिरोहणं यदि तथेशोक्तं च कुर्या कृतं, तद्दृष्ट्वा परया पतेः समकचा मुंमापितास्तेतदा ॥५४॥ अर्थः—नोजरा जानी स्त्री अने कालिदास पंमितनी स्त्री ए बेहुनें मांहो मांहे बेनपणुं छे. एक दिवस ते बेहु जणीउ परस्पर कहेवा लागी के मारो धणी मारे वश छे, त्यारें पंमितनी स्त्रीयें कह्युं के तारो पति केवी रीते तहारे वश छे? ते मु जने देखाड. राणीयें कह्युं जे जेम तुं कहे तेम देखाडुं तेवारें पंमितनी स्त्री बोली जे ताहरो स्वामी अश्व थाय ने तुं तेनी ऊपर चडे तो तुजने धणी वश करवामां कुशल मानुं, तेवारें राणी मिश करी नांगा त्रुटा खाटला उ पर पडी अने कहेती हवी के कालजुं अवटाय छे मरुं छुं. एवामां राजा तेनी पासें आव्यो अने पूछ्युं के हे राणी! आम केम सूती छो? तेवारें रा णी कहे छे के वात कहेवा जेवी नथी, पण राजायें हठ लीधो जे तेवात म ने कहे त्यारें राणीयें कह्युं जे तमो घोडानी पेठें वांसाउपर पलाण बांधो तेनी ऊपर हुं स्वार थाउं अने तमने सात चाबुक मारुं तो हुं साजी थाउं, राजायें ते सर्व कीधुं राणी स्वार थइ पुंठ ऊपर सात चाबका मार्या ते सर्व चरित्र पंमितनी स्त्रीयें दीठुं, पछी राणीयें कह्युं के ताहरा धणीनी मुछ दाढी अने माथुं मुंमावीने सनामां मोकल तो तुजने खरी मानुं त्यारे ते स्त्रीयें पण पंमितने तेमज करी सनामां राजा पासें मोकल्यो ते राणीयें दीठो पछी राजायें पुछ्युं जे कये तीरथे मुंमन कराव्युं? त्यारे कालीदास पंमितें तेनो उत्तर आप्यो ते श्लोक ॥ कालिदास कविश्रेष्ठ, कुत्र पर्वणि मुंमनं ॥ अनश्वा यत्र नेष्यंति, तत्र पर्वणि मुंमनम् ॥ १ ॥ किं करोति नरः प्राज्ञो, स्त्रीवाचा प्रे रितो नरः ॥ अश्वरूपी नवेद्राजा, मंत्री मस्तकमुंमितः ॥ २ ॥

जेनुं वचन गयुं ते मुआ सरखो जाणवो ते ऊपर चोपनमो दृष्टांत.

॥ दृष्ट्वाकाकमसिं हि मार्गीति नृपो बाणं छलेनानितं, पुंखित्वा सुवलेन मुंचति यदा काकस्य लग्नं दृढं ॥ प्राप्तोऽधो बलिछक् तदाह नृपतिं नाहं मृत स्त्वं मृतो, वाक्यं ते नरनूषणं गतमतो धिग् जीवितं तस्य तु ॥ ५५ ॥

अर्थः—कोइ एक राजा वृक्षनीचे बेठो हतो, तेवामां एक कागडो वृक्ष ऊपर बेसीनें बोलवा लाग्यो त्यारें राजायें पोताना चाकरने कह्युं के खङ्ग

लाव काकने हुं मारुं एम कही गनी रीते समस्यायें एक बांण धनुपमां संयोजित करी राख्यो ते वात कागडायें सांन्नली अने विचार कस्यो के ए राजा खड्ग लइने मने मारवा काड ऊपर चढशे तेवामां हुं उडी जाइस एम विसवासें रह्यो तेवामां राजायें तेनी ऊपर जोरथी बाण फेंक्युं, ते कागडाने सूधो लाग्यो तेथी तरफडतो थको तरत नीचें पड्यो अने मरण थवानी तैयारीमां आव्यो तिहां मरतां मरतां कहेवा लाग्यो के हे राजा हुं मरतो नथी पण तुं मरे ठे कारणके मनुष्यनो नूपण रूप जे वचन ते वचनथी तुं चूकोठो माटे जे पुरुप पोतानुं वचन गमावीने जीवतो रह्यो तेना जीवितव्यने धिक्कार ठे जेनुं वाक्य गयुं तेनो जीव रह्युं तो पण मुवा सरखोज जाणवो कह्युं ठे के श्लोक ॥ असारः सर्वसंसारो; वाचा सारस्तु देहिनां ॥ वाचा चंचलिता यस्य, सुकृतं तेन हारितम् ॥ १ ॥ मग्गियं खग्ग फलयं, काउदेसेण संधिउ बाणो ॥ सुंदमूउ ण काउ, मूआ ते वयण चूकाउ ॥ २ ॥ ए चोपन्नमो दृष्टांत ॥ ५५ ॥

हवे पांमवोनी तृपानो पचावनमो दृष्टांत कहे ठे.

॥ सत्रे पांडुसुताः सरोपि तृषिता दृष्ट्वाब्धिसंख्यागताः, तत्राहार्पय मे सरः पिव मरिष्यस्युत्तरं नो जलं ॥ पीत्वाढुश्च पृथक् तदर्थमवदन्निश्चेष्टितास्तेऽन्नवन्, दत्वार्थं हि युधिष्ठिरः प्रतिसुरं जीवापयत्याशु तान् ॥५६॥ अर्थः— वनमांहे पांचें पांमवोने तृपा लागी तिहां पाणी जोतां घणुंज वेगलुं एक सरोवर जलें पूरित दीठुं. तेवारें पांच न्नाइउमांथी एक न्नाइ पाणी पीवा तथा बीजा न्नाइउ सारु पाणी लेवा माटे गयो. ते तिहां सरने विपे जइ पाणी पीवा लाग्यो. तेवारें ते सरोवरनो अधिष्ठायक एक देवता बोल्यो के, जो म्हारा प्रश्ननो उत्तर आपे तो पाणी पी. तेने न्नाइयें कह्युं के एकवार मने पाणी पीवा दे, पठी हुं तुजने उत्तर आपीश. तेवारें देवता बोल्यो जो उत्तर नहीं आपीश तो मरण पामीश. पाणी पीधा पठी उतर देवाणो नहीं. तेवारे तेने देवतायें मृतक करी नाख्यो हवे तेने पाछुं आवतां घणो वखत लाग्यो तेवारें बीजो न्नाइ आव्यो. एम एकेक केडे चार न्नाइउ आव्या ते चारेने पूर्वनी पेरें मृतक करी नांख्या. तेवारें राजा युधिष्ठिरें जाण्युं के, जे जाय ठे ते पाठा आवता नथी. माटे ए शी वजा ने? तेथी युधिष्ठिर पोतें त्यां आव्यो त्यां जूवे तो चारे न्नाइने मृतप्राय दीठा. अने पोतें जल पी

वा वेगो तेने देवतायें प्रश्ननो अर्थ पूछ्यो अने कह्युं के एनो अर्थ कहे तो ताहरा चार नाइ पण जीवता थाय अने तुं पण पाणी पीये. ते सांनली राजा युधिष्ठिरें कह्युं के बोल तहारे शुं पुछवुं छे? तेवारें देवतायें प्रश्न कर्यो तेनो अर्थ धर्मराजायें कह्यो. तेना श्लोक कहे छे॥ को मोदते किमाश्चर्यं, का वार्त्ता कः पथः स्मृतः ॥ एतन्मे ब्रूहि राजेंद्र, मृता जीवंति पांमवाः ॥ १ ॥ हवे चारे प्रश्ननो उत्तर कहे छे ॥ पंचमेऽहनि षष्ठे वा, शाकं पचति स्वगृहे ॥ अनृणी चाप्रवासी च,स वारिचर मोदते ॥ २ ॥ अहन्यहनि नूतानि, गच्छंत्येव यमालये ॥ शेषा हि स्थातुमिच्छंति, किमाश्चर्यमतः परं ॥ ३ ॥ अस्मिन्महामोहमहाकटाहे, सूर्याग्निना रात्रिदिनेंधनेन ॥ मासादिदर्वीपरिघट्टनेन, नूतानि कालः पचतीति वार्त्ता ॥ ४ ॥ तर्कप्रनष्टश्रुतयोपि निन्ना, नासामृषिर्यस्य वचः प्रमाणम्॥ धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां, महाजनो येन गतः स पंथाः॥५॥ देवतायें खुशी थइ चारे नाइने जीवता कर्या.

हवे स्त्री चरित्र उपर उप्पनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ विप्रस्त्री च वहिर्विनेमि दिवसे काकात्तदा प्रेषति, सार्द्धं छात्रकमेकदा निशि गृहात्सा निर्गता पृष्ठगः ॥ मार्गे पश्यति नर्मदोत्तरगतां दत्वा हरस्याझकां, सुप्तागत्य गृहे तथा ह्यवगतं सोऽवक्चरित्रं तव ॥ ५७ ॥ अर्थः— कोइएक ब्राह्मणनी पासें घणाएक विद्यार्थीउ नणता हता, परंतु ते विप्रनी स्त्री दिवसने विषे जेवारें बाहेर जातीहती तेवारे पोताना धणीनें नित्य कहेती हती के, हुं बार जाउंवुं त्यारे रस्तामां कालाकाला पक्षीउ एटले कागडा नामना पक्षीथी बीहुं बुं, माटे ज्यारे हुं बाहेर जाउं त्यारे महारीसाथे तमारा एकेक छात्रने (विद्यार्थी)ने मोकलो; तेवात खरीमानीने ब्राह्मण तेमज करवा लाग्यो. एक दिवस एक माह्यो छात्र हतो तेणे जाएयुं के आ स्त्री, स्त्री चरित्र करे छे. दिवसें ज्यारे कागडाथी नय पामे छे त्यारे रात्रें केम करती हशे ? एमविचारी कांइक मिस करी त्यां गुरुने घेरज छानो छुपी रह्यो. तेटलामां ते स्त्री रात्रें घरमांहेथी एकली बाहेर नीकली ते नर्मदानदीना सामाकांठा परगइ त्यांविट्पुरुष साथे डुष्टाचरण करी पाठी जलतरीने आ कांठे आवी तेनी पठवाडे विट्पुरुष पण तरतो चाल्यो आवे छे, तेटलामां जलमांथी कोइक मगरे ते जार पुरुषनो

त्यारे ते स्त्रीयें कह्युं के ते मगरमत्स्यनी आंखो

ी देशे, तेणे तेम करवाथी तरत ते मगरमत्स्यना मुखथकी छूटो पड्यो.
ने बेहु जण पाछा आवी सुइ रह्यां. आ सर्व वृत्तांत ते छात्रें छानीरीते
स्त्रीनी पछवाडे जइने जोयुं अने जाण्युं जे एणे खरेखरुं स्त्री चरित्र क
युं. पछी वळते दिवसें वळी ते स्त्रीयें कह्युं के माहरी सार्थे छात्र मोकलो
वखतें जे छात्र गइ रात्रियें ते स्त्रीनुं चरित्र जोयुं हतुं. ते सर्व वृत्तांत गुरु
समक्ष कही आप्युं त्यारें, स्त्रीयें जाण्युं जे आ विद्यार्थी खरो बुद्धिमान छे
अने ब्राह्मणे ते स्त्रीनो त्याग कर्यो, ए स्त्रीचरित्रने कोइकज जाणे. कह्युं
छे के श्लोक ॥ दिवा बिभेति काकेभ्यो, रात्रौ तरति नर्मदां ॥ कुतीर्थान्य
पि जानाति, जलजंतवक्रिरोधनं ॥ १ ॥ ५७ ॥ इति छप्पनमो दृष्टांत ॥

हवे जेवी संगत तेवागुण ते उपर सत्तावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ इष्ट्वैकं नृपतिं वने निगदिताः कीरेण भिल्लास्तदा, संकर्ण्याशु गतोग्रके
हि मुनयोऽन्येनापि भात्यर्हकं ॥ तेऽप्यागत्य वदंति तिष्ठ नृपते वाक्यांतराद्वि
स्मितः सोऽवग् संगगुणा हि तस्य पितरावेकौ समस्तस्तथा ॥५८॥ अर्थः—
एक दिवस कोइएक राजा वनमां गयो. तेवामां एक भिल्लोनी पल्ली आवी
त्यां एक पोपट हतो, ते पण चोरकर्ममां कुशळ हतो तेथी ते राजाने जो
इ पोपट बोल्यो, के दोडो दोडो आ राजा आव्यो छे. तेने लूंटो ते सांभ
ळी घोडो दोडावी राजा पलायमान थइ गयो. त्यांथी दूर जतां एक ता
पसनुं आश्रम आव्युं. त्यां पण एक पोपट बांध्यो हतो, ते बोल्यो के आ
पणे त्यां महोटो राजा अतिथि आव्यो छे, तेनो सत्कार करो. ए वात सां
भळी राजा खुशी थयो, ने उभो रह्यो. तेवामां ते सर्व तापसोयें आवी
राजानुं आतिथ्य कर्युं. राजायें कह्युं के एक पोपट भिल्लनी पल्लीमां हतो
तेणे कह्युं के लूंटो लूंटो! अने आ पोपट केवां मनोहर वाक्य बोले छे?
आवात सांभळी पोपट कहे छे के हे राजन्! ते संगतीना गुण छे अमारा
बेहुना माता पिता एकज छे पण तेने चोरनी संगती छे. अने मारे रुषी
उनी संगति छे. माटे संगतिना गुण एवाज होय छे. कह्युं, छे के श्लोक ॥
माताप्येका पिताप्येको, मम तस्य च पक्षिणः ॥ अहं मुनिभिरानीतः, स
च नीतो गवाशनैः ॥ १ ॥ गवाशनानां स गिरः शृणोतिः, अहं च राजन्
मुनिपुंगवानां ॥ प्रत्यक्षमेतत् भवतापि दृष्टं, संसर्गजा दोषगुणा भवंति ॥२॥

वा वेगो तेने देवतायें प्रश्ननो अर्थ पूछ्यो अने कह्युं के एनो अर्थ कहे तो ताहरा चार भाइ पण जीवता थाय अने तुं पण पाणी पीये. ते सांभली राजा युधिष्ठिरें कह्युं के बोल तहारे शुं पुछवुं छे? तेवारें देवतायें प्रश्न कर्यो तेनो अर्थ धर्मराजायें कह्यो. तेना श्लोक कहे छे॥ को मोदते किमाश्चर्यं, का वार्त्ता कः पथः स्मृतः ॥ एतन्मे ब्रूहि राजेंद्र, मृता जीवंति पांडवाः ॥ १ ॥ हवे चारे प्रश्ननो उत्तर कहे छे ॥ पंचमेऽहनि षष्ठे वा, शाकं पचति स्वगृहे ॥ अनृणी चाप्रवासी च,स वारिचर मोदते ॥ २ ॥ अहन्यहनि भूतानि, गछंत्येव यमालये ॥ शेषा हि स्थातुमिछंति, किमाश्चर्यमतः परं ॥ ३ ॥ अस्मिन्महामोहमहाकटाहे, सूर्याग्निना रात्रिदिनेंधनेन ॥ मासादिदर्वीपरिघट्टनेन, भूतानि कालः पचतीति वार्त्ता ॥ ४ ॥ तर्कप्रनष्टश्रुतयोपि भिन्ना, नासामृषिर्यस्य वचः प्रमाणम् ॥ धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां, महाजनो येन गतः स पंथाः ॥५॥ देवतायें खुशी थइ चारे भाइने जीवता कर्या.

हवे स्त्री चरित्र ऊपर छप्पनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ विप्रस्त्री च बहिर्विनेमि दिवसे काकात्तदा प्रेषति, सार्द्धं छात्रकमेकदा निशि गृहात्सा निर्गता एछगः ॥ मार्गे पश्यति नर्मदोत्तरगतां दत्वा हरस्या शुकां, सुप्तागत्य गृहे तथा ह्यवगतं सोऽवक्चरित्रं तव ॥ ५७ ॥ अर्थः- कोइएक ब्राह्मणनी पासें घणाएक विद्यार्थीउ भणता हता, परंतु ते विप्रनी स्त्री दिवसने विषे जेवारें बाहेर जातीहती तेवारे पोताना धणीनें नित्य कहेती हती के, हुं बार जाउंछुं त्यारे रस्तामां कालाकाला पक्षीउ एटले कागडा नामना पक्षीथी बीहुं छुं, माटे ज्यारे हुं बाहेर जाउं त्यारे महारीसाथे तमारा एकेक छात्रने (विद्यार्थी)ने मोकलो; तेवात खरीमानीने ब्राह्मण तेमज करवा लाग्यो. एक दिवस एक माह्यो छात्र हतो तेणे जाएयुं के आ स्त्री, स्त्री चरित्र करे छे. दिवसें ज्यारे कागडाथी भय पामे छे त्यारे रात्रें केम करती हशे ? एमविचारी कांइक मिस करी त्यां गुरुने घेरज छानो छुपी रह्यो. तेटलामां ते स्त्री रात्रें घरमांहेथी एकली बाहेर नीकली ते नर्मदानदीना सामाकांठा परगइ त्यांविट्पुरुष साथे दुष्टाचरण करी पाछी जलतरीने आ कांठे आवी तेनी पछवाडे विट्पुरुष पण तरतो चाल्यो आवे छे, तेटलामां जलमांथी कोइक मगरे ते जार पुरुषनो पग पकड्यो. त्यारे ते स्त्रीयें कह्युं के ते मगरमत्स्यनी आंखो पर पाटु मारतो तरत छो

डी देशे, तेणे तेम करवाथी तरत ते मगरमत्स्यना मुखथकी छूटो पड्यो. अने बेहु जण पाछा आवी सुइ रह्यां. आ सर्व वृतांत ते छात्रें छानीरीते ते स्त्रीनी पछवाडे जइने जोयुं अने जाण्युं जे एणे खरेखरुं स्त्री चरित्र कर्युं. पछी बळते दिवसें वळी ते स्त्रीयें कह्युं के माहरी साथें छात्र मोकलो ते वखतें जे छात्रें गइ रात्रियें ते स्त्रीनुं चरित्र जोयुं हतुं. ते सर्व वृत्तांत गुरु समक्ष कही आप्युं त्यारें, स्त्रीयें जाण्युं जे आ विद्यार्थी खरो बुद्धिमान छे अने ब्राह्मणे ते स्त्रीनो त्याग कर्यो, ए स्त्रीचरित्रने कोइकज जाणे. कह्युं छे के श्लोक ॥ दिवा बिभेति काकेभ्यो, रात्रौ तरति नर्मदां ॥ कुतीर्थान्यपि जानाति, जलजंत्वक्षिरोधनं ॥ १ ॥ ५६ ॥ इति छप्पनमो दृष्टांत ॥

हवे जेवी संगत तेवागुण ते ऊपर सत्तावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ दृष्ट्वैकं नृपतिं वने निगदिताः कीरेण भिल्लास्तदा, संकर्ण्याशु गतोऽग्रके हि मुनयोऽन्येनापि ज्ञात्वर्हकं ॥ तेऽभ्यागत्य वदंति तिष्ठ नृपते वाक्यांतराद्विस्मितः सोऽवग् संगगुणा हि तस्य पितरावेकौ समस्तस्तथा ॥५७॥ अर्थः– एक दिवस कोइएक राजा वनमां गयो. तेवामां एक भिल्लोनी पल्ली आवी त्यां एक पोपट हतो, ते पण चोरकर्ममां कुशळ हतो तेथी ते राजाने जोइ पोपट बोल्यो, के दोडो दोडो आ राजा आव्यो छे. तेने लूंटो ते सांभळी घोडो दोडावी राजा पलायमान थइ गयो. त्यांथी दूर जतां एक तापसनुं आश्रम आव्युं. त्यां पण एक पोपट बांध्यो हतो, ते बोल्यो के आपणे त्यां म्होटो राजा अतिथि आव्यो छे, तेनो सत्कार करो. ए वात सांभळी राजा खुशी थयो, ने ऊभो रह्यो. तेवामां ते सर्व तापसोयें आवी राजानुं आतिथ्य कर्युं. राजायें कह्युं के एक पोपट भिल्लनी पल्लीमां हतो तेणे कह्युं के लूंटो लूंटो? अने आ पोपट केवां मनोहर वाक्य बोले छे? आवात सांभळी पोपट कहे छे के हे राजन! ते संगतीना गुण छे अमारा बेहुना माता पिता एकज छे पण तेने चोरनी संगती छे. अने मारे ऋषीओनी संगत्ति छे. माटे संगतिना गुण एवाज होय छे. कह्युं, छे के श्लोक ॥ माताप्येका पिताप्येको, मम तस्य च पक्षिणः ॥ अहं मुनिभिरानीतः, स च नीतो गवाशनैः ॥ १ ॥ गवाशनानां स गिरः शृणोति, अहं च राजन् मुनिपुंगवानां ॥ प्रत्यक्षमेतत् भवतापि दृष्टं, संसर्गजा दोषगुणा भवंति ॥२॥

हवे नणवानो उद्यम करवा ऊपर अठावनमो दृष्टांत कहे बे.

॥ नृपो यत्र हि गर्दन्नो जवमुनिं दृष्ट्वाह तं धीसख, शत्रुस्तेस्ति तदा व धाय निशिगः श्रुत्वार्यकां तन्मुखात् ॥ बुद्धोंतःकरणे विचारयति राड् मे दीर्घष्टष्ठोऽनृतो,, ज्ञानी साधुरयं न ही मम रिपुर्ज्ञात्वा गतः स्वालये ॥५८॥

अर्थः—कोइ एक नगरमां गर्दन्नसेन नामा राजा राज्य करतो हतो. तेना पितायें दीक्षा लीधी बे. ते साधु विनयवंत अप्रमादी हतो. पण कांइ नण्यो नहीं मात्र मार्गमां चालतां गोवालीयादिकनी मुखथी त्रण गाथा धारी राखी बे. हवे एक दिवसें ते साधु पोताना पुत्रने वंदाववा माटे त्यां आवी कुंनारने घेर उतस्रो बे. त्यारें ते राजानो दीर्घष्टष्टनामा प्रधान बे ते प्रधानें राजानी दीकरीनें स्वरूपवान जाणी ने पोताना घरमां नोंयरामां संताडी राखी हती. ते जेवारें साधु आव्या तेवारें प्रधान मनमां बीहीनो ने जाएयुं के राजा ए साधुने वांदवा जशे. अने ते ज्ञानी हशे तो माहारी वात प्रगट करी देशे माटे कोइक युक्ति करी राजानुं मन फेरवी मुनिने मरावी नांखुं एम विचारी ते प्रधान राजाने कहेवा लाग्यो के तारा पितानुं मनधर्मथी चल्युं बे अने राज्य पाबुं लेवा इछा राखे बे. आ वात सांनली राजा कोपायमान थयो अने रात्रें ते रुषीश्वरने मारवा माटे कुंनारने त्यां गयो त्यारें रुषीश्वर तो वेग वेग मार्गमां सांनलेली त्रण गाथा नणे बे. ते गाथानो परमार्थ जाणी ने राजा प्रतिबोध पाम्यो ने जाएयुं जे महारो पितातो ज्ञानी बे मारा मननी वात साचे साची कहे बे. माटे ए प्रधान निश्चय खोटो बे. अने आ गाथा प्रमाणे माहारी पुत्री पण एणेज संताडेली बे. तेथीज बुद्धि केलवीने मने माहारा पिता साधुनी पासे जवानो एणे निषेध कस्रो बे, परंतु ए साधु कांइ महारा वैरी नथी. अने महारुं राज्य लेवाने पण इछता नथी. एवुं चिंतवी पोताने घेर आव्यो अने बीजे दिवसें प्रधाननुं घर शोध्युं तेमांथी पोतानी पुत्री निकली आवी. तेवारे प्रधानने काढी मुक्यो, दुःखी कीधो, हवे जे गाथा नणतां अर्थ सस्रो ते गाथा त्रण नीचें लखीयें बेयें ॥ उहावसीपोहावसी, ममं चेव निरखसि ॥ जाणिउं सि अनिप्पाउं, जवं नरकई गदहा ॥ १ ॥ उगयातो गया चेव, जोइज्जंति न दीसई ॥ अमे न दीठा तुमें नदीठ, अगोडे बूटा अणुलिआ ॥ २ ॥ सुकमाल कोमल मदलया, तमे राति हिंमण सीलणया ॥ अम्म

पसाउ नहि नयं, दीह् पिहाउतुम्ह् नयं ॥ ३ ॥ सिक्खिअवं मनुस्सेणं,अपि जारिस तारिसं ॥ कीस मूढसिलोगेण, जीवियं परिरक्खियं ॥ ४ ॥

हवे कुबुद्धिया मत्स्यनो उंगणसाठमो दृष्टांत कहे छे.

॥ तीरे चाम्रफलं सदा वनचरो मीनाय दत्ते तदा, लात्वा स स्वगृहे स्त्रियै वदति सा तज्ञक्तकं ह्यानय ॥ कृत्वारोहणमेत्य तं जलनिधौ मेत्यंगना ते हृदं, वक्ति मूढ नगे मया किमु कृतं बुद्ध्यागतो जीवति ॥ ६० ॥ अर्थः— समुद्रने कांठे एक आम्र वृक्ष छे. ते वृक्ष ऊपर एक वांदरो आवी ते आंबानां फल खाय छे. एकदा ते वांदराने एक मछनी साथे मित्रता हती, तेथी तेने पण आंबाना छोतरां आपे, तथा फल पण आपे एम करतां एक दहाडे ते माछलो केरीनां छोतरां तथा फल पोतानी स्त्री वास्ते लइ गयो. ते स्त्रीनें जइ आप्यां. ते खावाथी तेने मीठां लाग्यां त्यारें माछलीयें कह्युं जे ए फल जे खातो हशे तेनुं कालजुं पण अत्यंत मीठुं हशे, माटे हे स्वामी, तेने तुं आहीं तेडी आव तो हुं तेनुं कालजुं खाउं, के जेथी म्हारो मनोरथ पूर्ण थाय. ते सांभली माछलो वांदरा पासें आवीने कहेवा लाग्यो, जे हे मित्र, मारे स्थानकें आव्य अनें समुद्रनो विनोद तथा उंमापणाने जो म्हारी स्त्रीपण ताहारा दर्शननो अभिलाप धरे छे. मित्रपण तेनेज कहियें, के जे परस्पर एक बीजाने घेर आवे ने जाय अने एक बीजानें खवरावे पीवरावे, एक बीजाने आपे लीए. इत्यादि वचन सांभली वांदरे हा पाम्री तेवारें वांदराने पोतानी पुंठे बेसारी माछलो समुद्रमां चाल्यो. मार्गेमां ते माछलो वांदरा प्रत्यें बोल्यो, जे हे मित्र, तुं कहे तो हुं साचुं बोलुं, वांदरे कह्युं. सुखेथी बोल तेवारे माछले कह्युं जे म्हारी स्त्री ताहरुं कालजुं खाशे. आ वात सांभली वांदरो हस्यो, अने बुद्धि करी बोल्यो के हे भाइ, एमां सी म्होटी वात छे पण तुं मूर्ख देखाय छे. जे माटे तें पहेलां मने त्यांज केम न कह्युं हुं तो कालजुं आंबे बांधी आव्यो छुं ! माटे तुं कहेतो लइ आवुं, त्यारे मछे कह्युं के जा लइ आव पछी वांदरो त्यांथी फलंग मारी समुद्र कांठे आवी आंबा ऊपर चडी बेठो. अने जीवतो रह्यो कह्युं छे के ॥दोहा॥ मित्तफुडाफुडि बोलीए, न जंपीह् अलीएण ॥ मुफ मछीला तो जीवशे, खाधे तुज्क हीएण ॥ १ ॥ रे जलनर मुजलकणा, एको काज न कीध ॥ घट भिंतर जे कालजुं, सो

हवे भणवानो उद्यम करवा उपर अगावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृपो यत्र हि गर्द्दभो जवमुनिं हष्ट्वाह तं धीसख, शत्रुस्तेस्ति तदा व धाय निशिगः श्रुत्वार्यकां तन्मुखात् ॥ बुद्धोंतःकरणे विचारयति राड् मे दीर्घदृष्टोऽनृतो,, ज्ञानी साधुरयं न ह्री मम रिपुर्ज्ञात्वा गतः स्वालये ॥५ए॥

अर्थः—कोइ एक नगरमां गर्द्दभसेन नामा राजा राज्य करतो हतो. ते ना पितायें दीक्षा लीधी छे. ते साधु विनयवंत अप्रमादी हतो. पण कांइ भण्यो नहीं मात्र मार्गमां चालतां गोवालीयादिकनी मुखथी त्रण गाथा धारी राखी छे. हवे एक दिवसें ते साधु पोताना पुत्रने वंदाववा माटे आवी कुंभारने घेर उतस्यो छे. त्यारें ते राजानो दीर्घदृष्टनामा प्रधान छे प्रधानें राजानी दीकरीनें स्वरूपवान जाणी ने पोताना घरमां भ° राम ताडी राखी हती. ते जेवारें साधु आव्या तेवारें प्रधान मनमां बीही जाण्युं के राजा ए साधुने वांदवा जशे. अने ते ज्ञानी हशे तो म वात प्रगट करी देशे माटे कोइक युक्ति करी राजानुं मन फेरवी मु रावी नांखुं एम विचारी ते प्रधान राजाने कहेवा लाग्यो के तारा मनधर्मथी चल्युं छे अने राज्य पाछुं लेवा इछा राखे छे. आ वात राजा कोपायमान थयो अने रात्रें ते ऋषीश्वरने मारवा माटे कुं गयो त्यारें ऋषीश्वर तो वेग वेग मार्गमां सांभलेली त्रण ते गाथानो परमार्थ जाणी ने राजा प्रतिवोध पाम्यो ने ज पितातो ज्ञानी छे मारा मननी वात साचे साची कहे छे. निश्चय खोटो छे. अने आ गाथा प्रमाणे माहारी पुत्री पण ली छे. तेथीज बुद्धि केलवीने मने माहारा पिता साधुन एणे निषेध कस्यो छे, परंतु ए साधु कांइ महारा वैरी राज्य लेवाने पण इछता नथी. एवुं चिंतवी पोताने घेर जे दिवसें प्रधाननुं घर शोध्युं तेमांथी पोतानी पुत्री रे प्रधानने काढी मुक्यो, दुःखी कीधो, हवे जे गाथा गाथा त्रण नीचें लखीयें छैयें ॥ उंहावसीपोंहावसी, जाणिउं सि अभिप्पाउं, जवं भरकई गद्दहा ॥ १ ॥ जोइक्कंति न दीसई ॥ अमे न दीठा तुमें नदीठ, ॥ २ ॥ सुकमाल कोमल महलया, तमे राति हिंमण

ली वालो जमाइ बीजा जमाइनुं उत्तम भोजन जोइने कहेवा लाग्यो जे, हे सासु ! तमें पीरसतां भुल्यां छो. किंवा महारा कर्मने योगें खीर सेव प्रमुखनी थुली थइ गइ. त्यारें सासु बोली के हुं नथी भूली, अने खीर सेवनी थुली पण थइ नथी. में मोढुं जोइ ने टीलुं कर्युं छे ते माटे थुली यें पेट भरी जगो. ॥ दोहा ॥ एक ने पिरसी सेव सुंहाली, एक ने पिरसी थूली ॥ के मुज दाहाडा वांकडा, के पिरसण हारी भूली ॥ १ ॥ नां तु ज दीहा वंकडा, ना पिरसण हारी भूली ॥ मों देखीने टीलुं काढ्युं, मारि गलगल थूली ॥ २ ॥ ए एकसठमो दृष्टांत ॥ ६१ ॥

कोइपण नियम लेवो ते लाभ करे तेनो बासठमो दृष्टांत.

॥ टाल्यां वीक्ष्य ततोन्नि सद्गुरुमुखा द्देतगृहीतं व्रतं चक्री त्वेकदिने ग तः स मृतिकाखन्यां वणिक्पृष्ठगः ॥ द्रव्यं तत्र हि निर्गतं यदि वणिक् दृष्टेत्यवग् दूरत, स्त्वं मायाहि अवेहि मेपि सकलं लात्वालये तज्ञतः ॥ ६२ ॥

॥ अर्थः—कोइएक नगरमां गुरु आव्या. त्यारें घणां लोकें पच्चखाण लीधां तेमां एक वाणीयें एवुं नियम लीधुं, जे हुं आ गामना रहेवासी कुंभारना माथानी टालि जोइ, पच्चखाण पारुं. पछी ते नित्य कुंभारनी टाली जोइ पच्चखाण पारे एम करतां एक दिवस कुंभार माटी लेवा सारुं धूलनी खाणे गयो हतो पाछल वाणीयो कुंभारने घेर आव्यो तेने घेरथी समाचार मल्या के कुंभार धूलनी खाणे गयो छे तेवारें वाणीयो पण त्यां खाणे गयो ते समय त्यां कुंभारने माटी खोदतां सोनैयानो चरु मल्यो ए अवसरें वाणीयें पण कुंभारनी टाल दीठी. त्यारे वाणीयो कहेवा लाग्यो के " दीठीरे दीठी " एम बोलतो पाछो वल्यो ते सांभली कुंभारें जाण्युं, जे द्रव्यनी कडा ए वाणीयायें दीठी. तेथी कुंभार उभो थइने वाणीयाने साद करवा लाग्यो. के " मला रे मला " एम कहेतो वाणीयानी केडें दोड्यो. अने कहेवा लाग्यो जे, अर्धनाणुं मारुं ने अर्धनाणुं तारुं ए वात जाणी वाणीयो पाछो वली अर्धनाणुं लइ घेर आव्यो. माटे कोइ पण नियम लेवो ते लाभकारक छे कह्युं छे, के ॥ योपि सोपि ध्रुवं ग्राह्यो, नियमः पुण्यकांक्षिणा ॥ स्वल्पोप्यनल्पलाभाय, यथा खल्वाटपश्यकः ॥ १ ॥

हवे अनंतानुबंधी क्रोध उपर त्रेसठमो दृष्टांत कहे छे.

॥ लब्ध्वा सर्पपशाकमाशु गुरुणा जग्धं तदा कोपतः, शिष्यश्चिंतति पा

तथापि दशनानास्ये गुरोश्चैकदा ॥ कृत्वा तेऽनशनं दिवं शवमुखादंतांश्च सो पातयन्,मृत्वा क्रोधवशेन चापि नरकं प्राप्तो विनीतो जडः ॥ ६४ ॥ अर्थः—कोइएक नगरमां गुरुने शिष्य बेहु विहार करतां आव्या. एक दिवस शिष्य नगरमां वहोरवा गयो, त्यां सरशवनी नाजी वहोरी आव्यो. ते गुरुयें एकलायें खाधी, पण शिष्यने दीधी नहीं. तेथी ते शिष्य कोपायमान थइ विचारवा लाग्यो के, एणे मुजने शाक न आप्युं. माटे आ गुरुना दांत निश्चें पाडुं. पण ते गुरु जीवतां तो दांत कोइरीतें पाडी शकाय नहीं, तेवारे रात दिवस एज चिंतवन करतो हतो. एक दिवस गुरु अनशन व्रत करीने परलोकें पहोंच्या. वलता ते शिष्यें पछरवती गुरुना शबना दांत पाड्या. ते डुर्नव्य क्रोधना आवेशथी मरीने नरकें गयो. अविनीत जिन शासननो उड्डापक थयो ए अनंतानुबंधी क्रोध जाणवो माटे क्रोधपरिहरवो कह्युं छे,के॥ यो नवेद् जगति गवर्जितो, दीर्घरोपसहितश्च मानवान् ॥ सोत्रडुःखमधिकं लनेद्यथा, दंतपातमुनिनात्पमत्रवै ॥ इति त्रेशठमोदृ०

हवे धनने मान मले ते उपर चोशठमो दृष्टांत कहे छे.

॥ निःस्वं सोदरकं निरीक्ष्य नगिनी त्राता न मे सूपकृत्, श्रुत्वा सद्यगतं धनं जनपदे लात्वा गतस्तद्गृहे ॥ स्थाल्यां मुंचति खादिमं वदति स स्वानूपणान्यत्थ नो किं त्रांतो वदसीति येपु सुकृतस्तेपामहं पूर्वगः ॥ ६५ ॥

अर्थः—कोइएक निर्धन मनुष्य आशया धरिने पोतानी बहेनने त्यां गयो तेने जोइ ने बेन लाजी ने सहुने कहेवा लागी के, आ महारो नाइ नथी, पण आ महारा पितानें घेर चूलो फुंकनार रसोयो छे आवा बहेनना वचन सांनली ते उतावलो धन कमाववा माटे परदेशें गयो. त्यां जइ घणुंक धन कमाणो वली ते धन लइ फरीने पोतानी बहेनने घेर आव्यो. तेवारें बहेनें पण धनवान नाइ जाणीने आगता स्वागता करी, नोजन वखत थालमां सरस पकवान प्रमुख पीरश्यां त्यारें नाइने पूर्वलो दिवस सांनरी आव्यो. तेथी पोतें जे आंगली प्रमुखमां घरेणां पहेर्यां हतां ते सर्व थालीमांहे मूक्यां. अने बेहेन सांनले तेम कहेवा लाग्यो के, हे आनूषणो, तमो आ सर्व पदारथ जमो. त्यारें बहिने कह्युं के नाइ एवुं कहो छो ? कांइ गांमा तो नथी थया ? त्यारे नाइ कहे छे के हे बेन हुं गांमो थयो नथी पण जेनें ते पीरश्युं छे तेने हुं जमवानुं कहुं छुं लोने पहेलां हुं

निर्धनपणामां ताहारे घेर आव्यो हतो त्यारें मनें तें बापानो रसोयो कह्यो हतो माटे ए धननें मान छे. मने नथी. दोहरो ॥ गरथें आदर दीजीयें, हक्कारीजें दाम ॥ पेहेले फेरे आपीउं, चुल्ला फूंकण नाम ॥ १ ॥

हवे जेहवुं नाम होय तेवा गुण न होय तेनो पांशठमो दृष्टांत.

॥ नाम्ना ठिंठणपालकोऽस्ति धनवान् तस्यांगना चिंतति, नो तिष्ठामि गृहेऽस्य यामि धनपालस्य स्वगेहाल्लता ॥ दृष्ट्वाऽध्वन्यमरं मृतं च धनपं ह्यन्या लये निश्चितं, लक्ष्मीं काष्ठकविक्रयां गृहगता ज्ञात्वा शुभं ठिंठणम् ॥ ६६ ॥

अर्थः—कोइएक नगरमां एक धनवान वसे छे. तेनुं नाम ठिंठणपाल हतुं. तेथी तेनी स्त्री ज्यारे बाहार जाय त्यारे सहु तेने ठिंठणपालनी स्त्री कहिने बोलावे. तेथी ते स्त्रीयें जाण्युं जे महारे हवे ठिंठणपाल ना घरमां रहेवुं नहीं कोइ पण धनपाल के जगपाल एवा उत्तम नाम धारकने त्यां जइ ने स्त्री थइ रहेवुं. एमधारी घरथी बाहेर निकली आगल जतां मार्ग मां कोइएक अमरपाल नामें माणस हतो, तेने मरी गयेलो दीठो. वली आगल चाली, तेवारें कोइ धनपाल नामा पुरुषने भीख मागतो दीठो. वली जरा आगल चाली त्यां लक्ष्मी नामनी स्त्रीने काष्ठ वेचती अने छाणा वीणती नजरें जोइ ते सर्व जोइने विचार्युं, जे कांइ नामनुं कारण नथी. माटें मारो ठींठणपाल छे,तेज भलो छे. दोहरो ॥ अमर मरंतो में सुण्यो, भीखंतो धनपाल ॥ लछी वेचंती लाकडां, भलो मारो ठिंठणपाल ॥ १ ॥

हवे गुणग्राहक उपर कृष्णवासुदेवनो छाशठमो दृष्टांत.

॥ इंद्रः पर्षदि वाक्यमाह भूभवे कृष्णो गुणग्राहको, भूत्वा श्वानमृतं सुरो निपतितो मार्गे तमालोक्य सः ॥ दंतश्रेणिशुभां शुनोपि सकलं त्यक्त्वाशु भं दोषकं, भूत्वा भूत्प्रकटं हरिर्दिवि यदा धन्योऽस्ति नत्वा गतः ॥ ६७ ॥

॥ अर्थः—एक दिवस पोतानी सभाने विषे शक्रेंद्र एवुं वचन बोल्यो के, वर्त्तमान समये मनुष्य लोकने विषे एक कृष्ण वासुदेव जेवो गुणग्राहक छे, तेवो बीजो कोइज नथी. आ वात सांभली एक देवता श्रीकृष्णने च लाववाने काजे, मरेल कूतरांनु रूप विकूर्वि नगरमां मार्गनेविषे आवी प ड्यो. तेमांथी दुर्गंध चालवा मांडी. तेने जोइने कृष्णवासुदेवें ते कूतराना दुर्गंध प्रमुख अवगुण सर्वे पडता मूकीने कह्युं के, आ मृतक श्वाननी दं तपंक्ति केवी मनोहर छे? एम मृतक श्वानमां जे गुण हतो ते लीधो. अने

डुर्गंधादिक अवगुणो सर्वे पडता मूक्या. बीजा सर्व लोकोयें कह्युं के, आ डुर्गंध वासे बे. आवुं गुणग्रहीपणुं श्रीकृष्णनुं जोइ देवता पोतानुं मूल रूप धारण करी, प्रगट थइ, श्रीकृष्णने पगे लागी, प्रशंसा करी वरदान आपीने,पोताने स्थानकें गयो. माटे उत्तम पुरुषें सहु कोइनो गुण लेवो,पण कोइनो अवगुण न लेवो. कह्युं बे,के ॥ श्लोक ॥ संसारे सुखिनो जीवा,भवंति गुणग्राहकाः ॥ उत्तमास्ते च विज्ञेया, दंतपश्यककृष्णवत् ॥ १ ॥ अमलत्वे रसज्ञाया,मिश्रयोः क्षीरनीरयोः ॥ विविच्य पिबति क्षीरं,नीरं हंसोपि मुंचति ॥ २ ॥ असंख्याः परदोषज्ञाः,गुणज्ञाश्चापि केचन ॥ स्वयमेव स्वदोषज्ञा, विद्यंते यदि पंचषाः ॥ ३ ॥ खीरमिव जहाहंसाः, जे घुंटंति गुरुगुण समिद्धा ॥ दोसेवि वज्जयंतो, तं जाण सुजाणयं पुरिसं ॥ ४ ॥ ६७ ॥

हवे दृढ समकेतनी उपर सडसठमो दृष्टांत कहे बे.

॥ सम्यक्त्वं यदि वर्णितं च हरिणा श्रीश्रेणिकस्यामरो, भूत्वा साधुनिभस्तदा जलचरान् गृह्णाति आगत्य सः ॥ दृष्ट्वा वक्ति किमाकरोषि हि मुने त्वं सद्दयाहेतवे, डुर्भव्यस्त्वमसीति नो जिनमते कृत्वा स्वरूपं स्तुतः ॥ ६८ ॥

अर्थः—एक दिवस इंद्रनी सभामांहे समकेतनी वात चाली त्यारें शक्रेंद्रें श्रेणिक राजानुं समकेत वखाण्युं. अने कह्युं के, ए राजा दृढ समकेतनो धणी बे. ते सांभली एक मिथ्यादृष्टी देवतायें राजानी परीक्षा करवा माटे, साधुसरिखुं रूप करी उंघो, मुहपत्ति, दांमो, कांबली लइ हाथमां जोली घालीनें एक तलावमां पेगे. त्यां जइ माबलांउनें ग्रहण करवा मंड्यो, तेने राजायें कह्युं के,हे साधु ! आ विपरीत कर्म केम करो बो? मुनिवेषने विटंबना शुं करो बो? त्यारें कपटी साधु बोल्यो के,हेराजा ! तुं साधु धर्ममां समजे नहीं. हुं आ माबलां काढी तेने वेचीने कांबली लइश. तेथी वर्षाकालें जीवदया पलशे. जे माटे पाणीना एक बिंदूमां असंख्याता जीव भगवंते कह्या बे, ते उगरशे. आ वात सांभली राजा बोल्यो के, तु डुर्भव्य अनंत संसारी देखाय बे. जे माटे साधुना वेषमांहे आवुं कर्म करे बे ? जैन शाशनमांहे ए वात कही नथी. जैन शास्त्रथी उलटुं बे, एम राजायें तेने कह्युं. पण बीजा साधु उपर द्वेष न कस्यो तेवारें ते देवतायें ज्ञानेंकरी जाण्युं. जे आवुं महारुं विपरीत आचरण देखतां पण राजाने बीजा साधुनी उपर अभाव न थयो. तेवारें देवता पोतानुं रूप प्र

कट करी श्रेणिक राजानी स्तुति करी स्वस्थानकें गयो. कह्युं बे के, श्लोक ॥ क्रियाहीनं कुसाधुं च, दृष्ट्वा चित्तं न चाल्यते ॥ तत्सम्यक्त्वं दृढं ज्ञेयं, धर्मे श्रेणिकनूपवत् ॥ १ ॥ इति सडसठमो दृष्टांतः ॥ ६७ ॥

हवे जीवदया उपर अडशठमो दृष्टांत कहेबे.

॥ नूपः पर्षदि वर्णितो हि हरिणा देहीति देवो गतो, ऽवक् श्रुत्वा नृबलिं न चेत्पुरजनान् हन्मीति मंत्रोऽन्नवत् ॥ सोपायं च तदा जनैर्नृशिशुके लात्वा वधस्थो हसन्, तत्स्थाने नृपतिः स्थितो यदि सुरस्तुष्टो नृपं श्लाघते ॥ ६८ ॥

अर्थः—एकराजा दयावंत हतो, तेने शक्रेंइनी सनामांहे इंइें वखाण्यो. ते जोइ एक देवता तेमनुं पारखुं करवा माटे ते राजाने कहेवा लाग्यो जे, हे राजा! एक पुरुषनो बलि आपो. अने जो नहीं आपो तो, सर्व नगरवासी लोकोनें हुं मारीश. त्यारें राजा कहे बे. जे बलिनी वात कांइ मुजथी थाय नहीं, ए वात बनेज नहीं. त्यारे तें देवतायें नगरनी उपर नगर प्रमाणे एक मोटी शिला विकुर्वी, अने कहेवा लाग्यो जे, हमणां आ शिलायें करी तारुं आ सर्व नगर चकचूर करीश. पबी जेवारें 'शिला पडी पडी' एम बूमो पाडवी सरु थइ,तेवारें नगरजनो एकठा थइने राजाने कहेवा लाग्यां जे हे राजन्! एक पुरुष वास्ते घणानी हत्या लागशे. तेने राजायें कह्युं के, ए वात कांइ मुजने कहेशो नहीं,जे सरज्युं हशे ते थाशे. एवो कोण बे जे खुशी थइ मरवा वांबे? के जेनुं बली ए देवने आपीयें? तेवारें सर्व नगरजनोयें विचार कर्युं जे एक सोनानुं पुतलुं कोटिरूपैयानुं बनावी,तथा कोटी सोनैयानी रकम कोइ निर्धनने आपीयें,अने ते पोतानो पुत्र खुशी थइने आपणने आपे,तो देवताने बली आपी उपकार करियें. ए वात सर्वेकोइयें कबूल कीधी. पबी ते पुतलुं लइने कोइ निर्धन पुरुषें खुशीथी पोतानो पुत्र आप्यो, तेने राजानी पाशें लाव्या, अने बलि देवाने स्थानकें ते बालकनें बेसाड्यो. राजाने देखी बालक हसतो हसतो कहेवा लाग्यो जे माहरे आज मोटो उत्सव बे. मरवुं एकदिवस सहु कोइने बे, परंतु मारा एक जीवने माटे आखुं शहेर उगरे बे. आ वात सांनली राजा पोतें ते बालकने स्थानकें बेठो. त्यारें देवता तुष्टमान थयो अने राजानी स्तुती करी कहेवा लाग्यो के, हे दयावंत! तुजने जेवो इंइें सनामां वखाण्यो तेवो तुं यथायोग्य बो. एम कही देवता पोताने स्थानकें गयो. कह्युं बे के,

॥ दोहो ॥ सोनुं शरीर समुं देइने, उपर शोनइआ कोडि ॥ आणी बाल बेसारीयो, बलि देवाने गोडि ॥ १ ॥ स्वामी सामुं देखी हस्यो, बालक हृदय उल्लास ॥ देखी दयापति मनधरी, आवी बेग बालक पास ॥ २ ॥ बालक मुकी मुऊने भखो, जो होय बलीनुं काज ॥ देव संतोपें इम कहे, करो तुमे अविचल राज ॥ ३ ॥ ६ए ॥ इति अडशठमो दृष्टांत ॥

जीवदया उपर मेघरथराजानो उंगणोतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ वज्री पर्षदि वक्ति मेघरथको नूपः कृपातत्परो,नूत्वा नूविहगौ तदापि नृपतेरुत्संगके साध्वसात् ॥ रक्षाऽक्षोऽपतदीश रक्ष शरणे तं तद्भयं मा कुरु,श्ये नायात्मपलं ददौ यदि सुरो नत्वाशु नाकं ययौ ॥ ७० ॥ अर्थः—एक दिवस इशानेंइनी सन्नामां इंडें प्रशंसा करी के, मेघरथराजा दयावंत अने कोइथी चलायमान करी शकाय नहीं एवो छे. आ वात सांनली कोइक देवतायें पारेवानुं रूप तथा सिचाणानुं रूप विकूर्व्युं. तिहां आगल पारेवुं अने पछवाडे सिचाणो चाल्यो. तेमांथी प्रथम पारेवुं आवीने मेघरथराजाना उत्संगमां पड्युं,अने धूजतुं धूजतुं कहेवा लाग्युं के, हे राजन् ! मारी पाछल मने मारवा माटे सिचाणो आवे छे, तेनाथी मारुं रक्षण करो. आ वात सांनली राजायें ते पारेवानें पोतानी पासे राख्युं. तेवामां सिचाणो आव्यो. ते राजाने कहेवा लाग्यो के, हे राजन् ! तुं ते पारेवानें छोड, मने अत्यंत क्षुधा लागी छे. जो तेने न आपो तो तमारुं मांस पारेवा जेटलुं तोलीने मने आपो. त्यारें राजायें तेने पोतानुं मांस कापी कापी आपवा मांड्युं, परंतु देव मायाथी ते मांस पारेवानां बराबर थयुं नहीं. त्यारें राजा पोतेंज आखो त्राजवामां बेठो. अने सिचाणाने कह्युं के, महारुं नक्षण कर. ते जोइ देवता प्रसन्न थयो, अने कह्युं जे,हे राजा ! तारुं सत्य घणुं प्रशंसनीय छे. एम कही नमस्कार करीने गयो. कह्युं छे के ॥ दयावंत देव सांनली, कर्यां पंखी बे रूप ॥ एक राजा खोले पड्यो, एक दीये तस धूप ॥ १ ॥ मेघरथ सुरछुं कहे, मूक पारेवुं एह ॥ हठ लाग्यो मूके नहीं, राजा दीयो तस देह ॥ २ ॥ अतुल पुण्य उपराजीयो, पाम्या पदयुग जोड ॥ दयाप्रनावें देवता, सेव करे बहु कोड ॥ ३ ॥ ७० ॥

हवे हिंसानिषेधोपदेशनो शित्तेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ श्रुत्वाजावचनं हि नोजनृपतिर्यज्ञे कविं पृछति, प्रोचुस्ते किममी नु तं

वदति नो विज्ञप्तिकामीश सः ॥ कीदृक्षां यदि काव्यमेव कविना प्रोक्तं प्रनु ऽस्तदा, मुक्त्वा सर्वपशून् कृतो हि नियमो यज्ञस्य धर्मे रतः ॥७१॥ अर्थः— नोजराजायें यज्ञनेविषे बकरां होमवा आणाव्यां. ते बकरां बूम पाडवा लाग्यां, त्यारें नोजराजायें धनपाल पंमितने पूछ्युं, जे बकरां शामाटे बो ले छे? पंमितें कह्युं के, हे राजन्! ए अरज करे छे के, सर्वलोक मलीने सांनलो. तेने राजायें कह्युं के,शी विनंती करे छे? ते तमे जाणता हो तो कहो. तेवारे पंमितें एक काव्य कह्युं. जे हे महाराज! जो यज्ञमां होम्या थी पशुउ स्वर्गमां जाय छे, तो पण अमारे स्वर्गमां जवानो खप नथी. अ ने होमवाथी जीव स्वर्गे जता होय,तो अमने शामाटे स्वर्गमां मोकलो छो? तमारा मातापितादिकने यज्ञमां होमी स्वर्गमां केम नथी मोकलता? का रण के सारो पदार्थ पोताना अति वाहाला निकट सगांने अपाय. माटे ते ने मोकलवा योग्य छे. अमो तमारा माता पितादिक नथी. आ प्रमाणे बकरां कहे छे, तेनुं काव्य धनपाल पंमितें कह्युं. ते लखे छे ॥ नाहं स्वर्गफ लोपनोगतृषितो नान्यर्थिनस्त्वं मया, संतुष्टस्तृणनक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव ॥ स्वर्गं यांति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो,यज्ञं किं न क रोषि मातृ जनकैः पुत्रैस्तथा बांधवैः ॥१॥ ए वात सांनली राजा प्रतिबोध पाम्यो. पंमितनी वात खरी जाणीने बोकडा सर्व मुक्या. अने यज्ञ करवानो पच्चरकाण कर्यो, हिंसा न करवानो नियम लीधो, अने धर्मनेविषे दृढ थयो ॥

जिहां संप होय त्यां लक्ष्मीनो वास रहे तेनो एकोत्तेरमो दृष्टांत.

॥ सुतेन्यः कमलाह यामि सदनात्त्वं याचयेन्मां तदा,याचिष्ये हि वरं प्रनातसमये पृष्ठं कुटुंबं च किं ॥ याचे वक्ति पृथग्धनं लघुवधूः स्नेहं कुटुंबे ऽर्पय, तद्वाक्यं कथितंहि तेन यदि सा नोयामि ते यंत्रिता ॥ ७२ ॥ अर्थः—कोइएक धनवान् शाहुकार रात्रे सुतो छे, तेवामां लक्ष्मीयें आवीने शाहुकारने कह्युं के, हुं हवे तारा घरमांथी जाइश. माटे तारे वरदान जे जोइयें ते माग. ते हुं देती जाउं, त्यारें ते बोल्यो जे आजें तो हुं मागीश नहीं, पण सवारमां माहारा कुटंबीने पूछीने मागीश. तेवारें लक्ष्मी बोली जे नलुं. पछी प्रनाते शेठे सहु कुटुंबीयोने पूछवा मांम्युं, त्यारें कोइयें जु दा जुदा धन लेवा कह्युं. कोइयें कांइ बीजुं वरदान मागवा कह्युं. एम कर तां नानेरा छोकरानी वहुनें पूछ्युं त्यारे तेणें कह्युं के, हे ससराजी, आ

पण कुटुंबमां स्नेह सुसंप रहे ते मागो ने ते वात ससराना चित्तमां पण बरोबर उतरी. पछी बीजे दिवसें रात्रें लक्ष्मी आवी अने शेठने कह्युं के, वर माग्य. तेवारें शेठें कह्युं के, म्हारा कुटुंबमां सुसंप रहे ते वर आप. त्यारे लक्ष्मीयें कह्युं के, हवे माराथी जवाय नहीं, कारण के तमोयें संप माग्यो, तो ज्यां संप छे, त्यां मारे रहेवुंज जोइयें. माटे ज्यां संप त्यां लक्ष्मी रहे छे. कह्युं छे, के ॥ दोहो ॥ शेठें कुटुंब संप मागीयो, लक्ष्मी कहे कर जोड ॥ जाऊं तो जाइ शकुं नहीं, राखी मारी मरोड ॥१॥ श्लोक ॥ गुरवो यत्र पूज्यंते, यत्र वित्तं नयार्जितं ॥ अदंतकलहो यत्र, तत्र शक्र वसाम्यहं॥२॥

दुष्टनुं नाम लेवाथी पण विघ्न थाय ते ऊपर बहोतेरमो दृष्टांत.

॥ कश्चित्पृछति किंगरं वद हयः कस्येति यस्यास्म्यहं, कस्य त्वं तदहं तथापि च तवेशाख्या न किं कथ्यते ॥ सोऽवक्च क्षुधितोस्मि खादिममिदं लाहीश गोत्रं द्रुतं, प्रोक्तं तेन तदा हयेन निहतस्तन्नामतस्तत्फलम् ॥ ७२ ॥

अर्थः—कोइएक पुरुषें सारो घोडो जोयो, त्यारे तेणें ते घोडाना चाकरने पूछ्युं के, भाइ आ घोडो कोनो छे? गणीयें कह्युं के, जेनो हुं चाकर छुं, तेनो आ घोडो छे. त्यारें फरी गणीयाने पूछ्युं के तुं केहनो चाकर छे? तेणें कह्युं के, जेनो आ घोडो छे तेनो हुं चाकर छुं. वली ते पुरुषें कह्युं के तुं अवलुं बोलतां तादृश स्वामीनुं नाम केम नथी लेतो? त्यारें तेणें कह्युं के हजी दातण कर्युं नथी, तथा जम्यो पण नथी, भूख्यो छुं माटे प्रभातें तेनुं नाम लेवा योग्य नथी. ते सांभली पुरुष बोल्यो, जे तुं जुठुं बोले छे. जो तुं तारा स्वामीनुं नाम लीये, तो तरत तुऊने आ सुखडीयें भरेली तबक आपुं. तेवारे तेणें सुखडीनी लालचें पोताना स्वामीनुं नाम लीधुं. एटले तेज समये घोडो भडक्यो, अने मुखऊपरें पाटु मारी, तेथी सुखडी दसे दिशायें परजा परजा थइ गइ, तबक पण क्यांय जइ पडी. एम केटलाएक अधर्मीनां नाम लेवाथी आप्रकारें विघ्न थायछे. माटे एवा पुरुषनुं नाम खावानी अगाऊ न लेवुं. कह्युं छे के, श्लोक ॥ पापिष्ठनाम न ग्राह्यं प्रत्यूपेऽपि कदाचन ॥ यडुक्तं हि तदा तस्य, हतो घोटकलत्तया ॥ ७२ ॥

हवे परजीवनुं मांस सोंघुं ते ऊपर तहोंतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृपः पृछति मांसमौल्यमनुगान्, प्रोचुश्च तेऽल्पं सुतोऽनल्पं वक्त्यभयो निवारयति भो तं दर्शयामि प्रभो ॥ गत्वा सर्वगृहे नृपाय हृदिजं तदेहि ना

सं पलं, ग्राह्यं लाहि धनं न तेन तदितो लात्वार्पितं नृपतेः ॥ ७४ ॥
अर्थः—एक दिवस श्रेणिकराजा पोताना उमरावो प्रमुखने कहेवा ला
ग्यो हमणा कयी वस्तु सोंघी छे, अने सारी छे? तेवारे उमराव प्रमुखें क
ह्युं के,हे महाराज मांस घणुं सोंघुं छे. ते वखत श्रेणिक राजानो पुत्र अ
नयकुमार बोल्यो के माहाराज, मांस मोंघुं छे. तेने राजायें कह्युं के, तुं राज
बालक सोंघा मह्रोंघामां शुं समजे? ते वखत अनयकुमारे कह्युं के, ए वातनो
निश्चय हुं आपनें थोडा दिवसमां करी देखाडीश. पछी राजाने अनयकुमारें
कह्युं के, तमारे जूठी रीतें घरमां मंदवाड जणावी पांच दिवस सनामां
आववुं नहीं. तेथी ते वात राजायें कबूल करी ने सनामां न आव्या. त्यारे
गाममां खबर पडी के श्रेणिकराजा मांदा छे,एवी प्रसिद्धि थइ. ते वखत अ
नयकुमारें युक्ति करीने सर्व उमरावो अने दरबारी मनुष्यो पासें तेमने घेर रा
त्रियें जइने कह्युं के हे उमरावो, वैदें कह्युं छे, के उमरावोना कालजानुं मांस
राजा खाय तो राजाने करार थाशे. माटे तमे सहु मली पल पल प्रमाण
पोतपोतानुं कालजुं काढी आपो. त्यारें कोइयें मांस आप्युं नही. अने
सहुयें कह्युं के, अमारे पासे जेटलुं जोइयें तेटलुं धन लीयो, पण का
लजुं तो अपाय नहीं. पछी सहु पासेंथी धन लइ राजाने बताव्युं,ने राजा
सनामां आव्यो. ते वखतें अनयकुमारें कह्युं के,हे महाराज जुउ बधायें
धन घणुं आप्युं, पण मांस कोयें न आप्युं माटे मांस केवुं मोंघुंछे. पार
का जीवोनुं मांस सोंघु छे. तेपण जोरावरी लेतां तो मोंघुंज छे. ते सांन
ली उमराव सर्व चुपकी करी रह्या आ वात राजायें खरी जाणी कह्युं छे के,स्व
मांसं दुर्लनं लोके,लक्षेणापिन लन्यते॥अल्पमूल्येन लन्येत,पलं परशरीरजम्॥

हवे अनव्यजीव श्रीतीर्थंकरना उपदेशथी पण नेदाय
नहीं ते उपर चम्मोतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ मेघं वक्ति च नारदस्तव रिपुर्मुजारव्यशैलो चुवि, श्रुत्वा कुप्यति सो
णुकस्त्वमसि तं रे याहि मुजागतः ॥ कोऽप्येयं मम वर्षति प्रबलकं नेत्तुं न मां
शक्यते,वक्के हास्यमतो दृषद्यदि यथा नव्यो जिनैर्नापितः ॥७५॥ अर्थः—
एक दिवस नारद मुनि मेघनी पासें आवी कहेवा लाग्यो के, मृत्युलोकने
विषे तारो शत्रु मगसेलीयो पापण छे. ते घणो अहंकार करे छे,अने कहे
छे के, मुजने कोइ नेदी न शके. ते वात सांनलीने मेघ पण गर्वें चढी क

हेवा लाग्यो के, तेने हुं हमणाज पलाली नाखुं. एम कही मगसेलीया उ पर कोपायमान थयो. पछी वली ते नारद मगसेलीया पाषाणनी पासें आवीने कहेवा लाग्यो के, हे बापडा तुं आंहीथी दूर जतो रहे,केमके, हा ल ताहारी ऊपर मेघ कोपायमान थयो छे, माटे तुऊने गाली नाखशे. त्यारे मगसेलीयो कहे छे के, महारी आगल बापडो मेघ कोण गणत्रीमां छे. हुं महाप्रबल छुं माटे मुऊने गाली नाखवाने कोण समर्थ छे ? एम कहे छे. तेवामां पुष्करावर्त्त मेघ तुरत वरषाद वरसाववा लाग्यो ते सात दिवस वरस्यो. परंतु ते पाषाण जरा पण नेदाणो नहीं. नेदवाने बदले उलटो धोवाइने ऊपरनी धूलि सर्व निकली गइ, तेथी साफ थइ गयो. तेवारे ते सहु मेघनी हांसी करवा लाग्या. एम जे अन्नव्यजीव छे ते तीर्थंकरने उप देशे पण समजे नहीं. एवो नाव श्रीजिनेंद्रें कह्यो छे. कह्युं छे के, मुजशैलो मुजमानः,पुष्करावर्त्तको घनः॥ जंबुद्वीपप्रमाणोऽसौ,नारदः कलिकृत्तयोः॥७५

हवे आर्यदेशें जन्मीने जे धर्म नथी करतो तेनो पंचोतेरमो दृष्टांत.

॥ केन श्रेष्ठिजडेन हाटकमयी स्थाली गृहे कारिता, धृत्वा रूपकपीठ के प्रतिदिनं तस्यां रजो मुच्यते ॥ तद्वच्चार्यकदेशवंशनृवपुर्धर्मं च लब्ध्वा जडा, मानुष्या यदि नाचरंति सुखदं मोक्षस्य कामे रताः॥७६॥ अर्थः— कोइ एक जड शेठ हतो, तेणें सोनानी थाली करावी, तथा वली एक रूपानो बाजोठ घडाव्यो ते बाजोठनी ऊपर नित्य सोनानी थाली मूकी ने तेमां खोबो नरी धुड नांखे. ए दृष्टांते आ आर्य देशमां अवतार ल इ मनुष्य जन्म पामीने, जे मोक्षसुख देवावालो एवो श्री जैनधर्म आरा धन करतो नथी, ते तेहवोज मूर्ख जाणवो. जे माटे मनुष्यजन्म ते सो नानी थाली सरखो छे. ते पामीने जेणें धर्म न कर्यो, तेणे सोनानी था लीमां रज नाख्यानी परें अवतार गुमाव्यो, अलेखे कीधो, जे कामनोग ना आशक्त जीवो छे,ते धर्म करी शकता नथी. कह्युं छे के, दोहा ॥ सुव र्ण स्थाली मनुष्य नव, पाप धूली कण जोय ॥ न कर्यो ते नर जाणजो, मूर्ख शेठ सम होय ॥ १ ॥ ७६ ॥ इति पंचोतेरमो दृष्टांत ॥

हवे मुर्ख वैद्य ऊपरे छोंतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ मृत्वा रोगहरो गतो यदि दिवि ज्ञात्वा स्वपुत्रं जडं, दत्ता तेन सुधा तदा जनकृते गछंति रोगाः समाः ॥ पीयूषैर्विंशदं कृतं निजवपूराज्ञी गदैः

पीडिता, राजा वक्ति निरामयं कुरु भिषग्नो चेत्स निष्कासितः ॥ ७७ ॥

अर्थः—कोइ एक वैद्य शुभध्यानथी मरण पामीने व्यंतर देवता थयो. तेनी पाछल तेहनो पुत्र मुरख हतो. तेनें पुत्रना स्नेहें करी ते देवतायें अमृतनो कुंभ आप्यो. ते अमृतनुं अंजन कखाथी सकल रोग नाश पामे. माटे ते पुत्र अमृतथी जगतमां सर्वत्र अत्यंत प्रसिद्ध थयो, अने घणुं द्रव्य मेलव्युं. एक दिवस ते अमृतनो घडो दासीपासें मंगावीने पोतेंज पोताना शरीरने निर्मल कर्युं. एटले अमृतें करी स्नान कीधुं. तदनंतर तें गामना राजानी राणीने कांइक रोग उत्पन्न थवाथी राजायें ते वैद्य पुत्रनें पूछयुं, के तमारी पाशे निरोगी थवाय तेवुं उषध छे ते आपो, अने मारी राणीने निरोगी करो. त्यारें ते वैद्यपुत्रें अमृत ढोली नाखेलुं होवाथी निरोगी करवाने ना कही. त्यारें राजाए कोपायमान थइ तेने गाम बहार काढी मूक्यो. दोहा ॥ अमृतघडो ते नरवपु, नाखे अकारज काम ॥ आलें जन्म तिणें हारीउं, मूर्खवैद्यसम जाण ॥ १ ॥ स्वर्णस्थाले क्षिपति स रजः पादशौचं विधत्ते, पीयूषेण प्रवरकरिणं वाहयत्येधभारं, चिंतारत्नं विकिरति कराद्वायसोड्डायनार्थं, यो दुःप्राप्यं गमयति मुधा मर्त्यजन्म प्रमत्तः॥१॥ कथायुगलउपरें ए काव्य जाणवुं ॥ इति छहोतेरमो दृष्टांत ७७

हवे मुर्ख शिष्यनो सत्तोतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ शिष्यान्वक्ति विलंबिताः कुह गुरुः प्रोचुश्च वीक्ष्यामहे, तन्नाटयं हि नटस्य नो जिनमते नापेक्षणीयं कदा ॥ सत्यं तेऽपि तथेति सद्गुरुतटं प्राप्तास्तदा कालके, नव्या सोपि कृतं न्यपेधि तमतो नाग्रे त्वया दृश्यताम् ॥७८॥

अर्थः—एकदिवस गुरु पोताना शिष्यने कहे छे तुं एटली वार क्यां रोकायो हतो? असुरो केम आव्यो शिष्ये कह्युं जे रस्तामां नाटकीया रमता हता ते जोवा माटे उभो रह्यो हतो त्यारें गुरुयें कह्युं जे आपणा जैनशाशनमां वादी भवाइआना नाटक प्रमुख जोवा निषेध्या छे. त्यारें शिष्यें ते वात कबुल करी गुरु समीपे आलोच्युं. अने नाटक न जोवानुं गर्हा करी पडिवज्युं वली केटला एक दिवस गयानंतर पाछो वोहोरवा गयो. त्यां वार लागी त्यारें गुरुयें पूछयुं के केम आज पण विलंब थयो? त्यारें शिष्य बोल्यो के हे गुरुजी? आज नाटकिणी नो नाटक जोवा उभो रह्यो हतो. त्यारें गुरु कहे के तें मारी पाशें नाटकीया न जोवानुं पडिवज्यो हतो

ने वली केम जोवा रोकायो, त्यारे शिष्य बोल्यो के माहाराज ! में तो ना टकीया जोवा पडिवज्या हता परंतु नाटकणी जोवी पडिवजी नथी. त्यारें गुरुयें कह्युं के नाटकीया न जोवा पडिवज्या तो तेमां नाटकीपण आवीगइ. कह्युं छे के श्लोक ॥ सुखी वरा निःकपटा, ये साधवो भवंति ते ॥ आलोचयंति गुर्वंते, यथा नाटकपश्यकः ॥ १ ॥ ७७ ॥ इतिदृष्टांत ॥

हवे मूर्ख पुत्रनो अष्टोत्तरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ दातव्यं पितरौ न वत्स कथितः प्रत्युत्तरं नो कदा, गेहाद्वौ विगतौ तदा जडमतिर्द्वारे जटित्वा स्थितः ॥ तावागत्य सुतं ब्रवीति बहुशो नोद्घाट पो द्घाटति गेहे ह्युत्तरतोः कृतं त इह किं सोऽवग् गुवान्यां मतम् ॥७ए॥ अर्थः– कोइएक माता पितायें पोताना अविनीत पुत्रने शीखामण आपीजे हे पुत्र कोइ दिवस माता पिता शामुं बोलवुं नहीं, अने पाछो उत्तर पण देवो नहीं. ते पुत्रें कबुल कर्युं परंतु ते पुत्र जडमति हतो. तेणें ते वचन मनमां राख्युं. पछी एक दिवस माता पिता कांइक कामनें माटे बाहेर गया, त्यारें पछवाडेथी ते जडमति वालो पुत्र घरनां कमाड बंध करी मांहे बेसी रह्यो. ते जेवारें मातापिता पाछा घेर आव्या त्यारे पुत्रने कह्युं के हे पुत्र ! कमाड उघाड ? कमाड उघाड ? एम घणा शाद कर्या परंतु ते मूढमती वालो पुत्र बोल्यो पण नइ अने कमाड पण उघाड्युं नहीं. त्यारें मातापिता छापरेथी चडी. नलीयां उतारी घरमां आवीने जुए तो त्यां मूर्ख पुत्र हसतो हतो. त्यारें मातापितायें कह्युं के हे मूर्ख ? जाणतो हतो तो पण कां घर उघाड्युं नही ? त्यारें पुत्रें कह्युं के तमेज मने शीखामण आपी छे, जे मा बाप सामुं बोलवुं नहीं. माटे हुं बोल्यो नहीं. ए अविनीत पुत्रनी कथा जाणवी. कह्युं छे के, श्लोक ॥ जडोपि वक्रगश्चैव, यो भवेद् भुवि मानवः ॥ स श्लाघ्यते नैव लोके, यथाभूत् श्रेष्ठिनंदनः ॥ १ ॥ ७ए ॥

हवे पुण्य कर्यानुं फल अवश्य थाय ते उपर उंगण्याएंसीमो दृष्टांत कहे छे.

॥ श्वाशुर्ये पथि गछता सुमुनये कृत्वाऽष्टमं पारणं, दत्वा स्वेष्टगृहे गतो हि गृहपो मेने वृषं देह्यवक् ॥ लाहि त्वं प्रचुरं न गेहचलितो लात्वोपला नैर्झरान्, रत्नान्याशु कृतानि वीक्ष्य गृहिणी पित्रा तु रम्यं कृतम् ॥ ८० ॥

अर्थः–कोइएक निर्धन जमाइ पोताना ससराने घेर याचना करवा माटे पोताना गामथी निकलीने पोताना सासराने गामे जाय छे, तेने मार्गे

चालता एक अाठमनो पारणाती मुनिश्वर मल्यो, ते मुनिनें तेणें पारणुं कराव्युं. पछी ससराना घेर तरफ चालवा मांड्यो, एवामां तेना ससरानी कुलदेवीयें जइ ससराने कह्युं के, तहारो जमाइ डुःखीयको तहारी पासेंथी द्रव्य मागवा आवे छे. परंतु एणे मार्गमां जे धर्म कर्युं छे, ते धर्म जो तु जने आपे तो तुं ताहरा जमाइनें धन आपजे. एवामां ते जमाइ पण ससराने घेर आव्यो. तेवारें ससरायें कह्युं के, मार्गमां तमे जे पुण्य कर्युं छे ते अमोने आपो, अने धन लीयो. पण जमाइयें ते धर्मनुं पुण्य आप्युं नही अने एमज पाछो वल्यो. मार्गमां नदी आवी. तेमांथी रूडा रूडा तेजदार कांकरा वीणी लइ तेनो कोथलो नरी मस्तकें चढावीने पोताना गाम तरफ आवे छे, ते वखत मुनिना अधिष्टित देवें ते सर्व कांकराना रत्न करी नाख्या. पछी जेवारें घेर आव्यो तेवारें स्त्रीयें ते कोथलो उखेली जोयो, तोमांहे रत्न दीठां. तेवारें कहेवा लागी जे माहारा बापें घणुंज रूडुं कर्युं देखाय छे. जेमाटे आटलां रत्नो आपणने आपी दीधां छे. तेवारें ते जमाइयें जाण्युं जे मार्गें धर्म कर्युं साधुने आहार दीधो तेना पुण्योदयथी आ फल प्राप्त थयुं जणाय छे. पछी ते सर्व वात पोतानी स्त्रीने कही. माटे धर्म कर्यो होय तो ते कोइ कालें पण फल आप्याविना रहेज नही. कह्युं छे के ॥ धर्मथकी धन संपजे, धर्में शिवसुख थाय ॥ कांकर रत्न जज्या कीयां, देवें धर्मपसाय ॥ १ ॥ धम्मेण कुलप्पसूई, धम्मेण दिव्वरूवसंपत्ती ॥ धम्मेण धणसमिद्धि, धम्मेण सुविछडा कित्ति ॥ २ ॥ ८० ॥

हवे जे न करवा योग्य होय ते नज थाय तेनो एंशीमो दृष्टांत.

॥ श्रेष्ठयंघ्रौ यदि कंटकं हि निशितं नग्नं तदा सेवकान्, गृह्णीताह्व पतिश्च चर्म बहुलं ह्येकः किमर्थं तदा ॥ नूम्याछादनहेतवे परपदत्राणाय तं नाऽधुना, नूतं नैव नविष्यतीति किमु नो ते पादरक्षां कुरु ॥८१॥ अर्थः— कोइ एक मूर्ख शेठना पगमां तीखो कांटो नांग्यो, तेनुं डुःख थयुं. त्यारें शेठें पोताना सेवकोने कह्युं के, गामगामथी जेटलां चामडां वेचातां मलतां होय तेटला लावो. सोंघां होय के मोंघां होय. तेनी परवा नहीं पण चामडां लइ आवो, ढील म करो. ते वात एक बुद्धिमान माणसें सांनली अने शेठने कह्युं के हे शेठ ! एटलां बधां चामडां लइने शुं करशो ? ए नीच व्यापार छे. ते कोण करे ? तेने शेठे कह्युं के मारा पगमां कांटो नांगो

ले माटे उपकार निमित्तें सघली धरती चामडाथी मढावी काढीयें एटले कोइना पगे कांटो नांगे नही. माटें चामडां लीउ. आ वात सांनली ते बुद्धिमान माणसें कह्युं के एम कोइ दिवस बन्युं नथी, तेम बने पण नही, अने बनशे पण नही. माटे आपना आवा गांमा विचार मूकी द्यो. अने बधा जननी वात पडती मुकीने आप चामडे करी आपना पगनुं रक्षण करो एज योग्य ले. ते वात शेठनें गले क़तरी ने तेमज कर्युं. कह्युं ले के, श्लोक ॥ चरणे कंटकाभ्रग्ने, श्रेष्ठिना चिंतितं तदा ॥ जंतुत्राणाय सच्चर्मै, रूर्वीमाछादयाम्यहम् ॥ १ ॥ दोहा ॥ अणहुंती कीजें नहीं, कीजें होय सुजाण ॥ सेवकें साहेबनें कह्यो, तब समज्यो ते जाण ॥ १ ॥ ७१ ॥

हवे नव्यने तरत उपदेश लागे तेनो एक्याशीमो दृष्टांत कहे ले.

॥ राज्यं धर्मरुचेर्ददौ न च ललौ गछामि पित्रा समं, नूत्वा तापसकौ गतौ यदि वनेऽमावास्यकायामवक् ॥ छेत्तव्यं नहि पत्रकादिकमृषिं दृष्ट्वा सुधर्मेछको,रक्ष्यं त्वेकदिनं च सोऽनिशमहं श्रुत्वा प्रबुद्धस्तदा ॥७२॥ अर्थः— जितशत्रु नामा राजायें पोताना धर्मरुची नामना पुत्रनें राज्य आपवा मांम्ड्युं, परंतु तेणें राज्य लीधुं नहीं. अने कह्युं जे हे पिता, हुं पण तमारी साथें आवीश, अने तापस थइस. पली ते पिता अने पुत्र बेहुजण मुनि थया. वननेविषे रहे ले. एकदा अमावास्या आवी. त्यारें मोहोटा मुनियें कह्युं के, आज अमावास्या ले. माटे वनमां जई फूल पत्र चुंटशो नही एटले अनाकुटी करजो. ते वात धर्मरुची सांनले ले, अने वनमां न्नमण करें ले. त्यां वनमां नमतां नमतां धर्मरुचीयें एक साधुनें दीठा. साधुने जोइने नला धर्मनो वांलक एवो धर्मरुची कहे ले, जे महाराज ! आजें अमावास्यानो दिवस ले, माटे तमो पुष्प फल पत्र चुंटशो नहीं हो ? एवुं सांनली साधु बोल्यो जे हे धर्मरुचि ! अमारे सदा अनाकुटी ले. अमो कोइ वारें पण पुष्पादिकने चूंटता नथी. ए उपदेश सांनली धर्मरुचि अत्यंत प्रतिबोध पाम्यो. कह्युं ले के, श्लोक ॥ गुरूपदेशतो धर्मं, केचिज्जानंति मानवाः ॥ धर्मरुचेरिवान्येच, जातिस्मरणज्ञानतः ॥ १ ॥ ७२ ॥

मनना परिणाम ऊपर प्रसन्नचंद्र राजानो ब्यासीमो दृष्टांत कहेले.

॥ नत्वा प्रश्नकृषिर्गमिष्यति नृपो वीरं कुहा पृछति, सोवक्त ह्यधुनैव सप्तमछुवि हेतोः कुतो हृड्णात् ॥ पश्चादाशु पुनर्दिवाद्यचरमे देवाः क यांत्युत्सवे,

लब्धं तेन सुकेवलं जिनवचः श्रुत्वैति शं श्रेणिकः ॥७३॥ अर्थः—एकदा श्रेणिक राजा श्री माहावीर प्रभुनें पूछे छे के हे माहाराज ? हमणां प्रसन्नचंद्र राजा दीक्षा लेइ वनमां काउसग्ग ध्यानमां सुर्य सामी दृष्टी राखी ने एक पगें उभा छे, माटे जो हमणां आउखो बांधेतो क्यां जाय ? भगवाने कह्युं जे प्रथम नरकें जाय पछी बीजी त्रीजी चोथी पांचमी छठी अने यावत सातमी नरकें जाय. एम क्रमे क्रमे पूछतां कह्युं त्यारें श्रेणिकराजा फरी पूछेछे के हे माहाराज, एहवा तपस्वी ज्यारें नरकें जाय त्यारें धर्माचरण कोण करशे ? ए वात सांभली श्री वीरभगवान कहेछे के ताहारा सुमुख अने दुर्मुख नामना जे दूत तेना मुखनां वचन सांभलीने, मननुं संग्राम करे छे तेथी नरकें जाय. वली पाछुं पूछ्युं के हे माहाराज! हमणां आयु बांधे तो ते क्यां जाय तेने भगवानें कह्युं के प्रथम देवलोकें जाय. एम बीजे, त्रीजे, यावत पांचमा अनुत्तरविमान पर्यंत कह्युं. एवामां भगवानना समवसरणथी देवता जवा लाग्या. तेवारे श्रेणीकें पुछ्युं के देवता किहां जायछे ? तेने भगवानें कह्युं के प्रसन्नचंद राजऋषीने केवलज्ञान उपन्यु छे. तेनो उत्सव करवाने अर्थें जायछे त्यारे राजाये मनमां चिंतव्युं जे भगवंतनां वचन तो अन्यथा थाय नहीं फरतापण नहोय, निरधार वचन होय पण पहेलो तो नरकमां जवा कह्यो. अने पछी देवलोकमां जवा कह्यो वली हमणां केवलज्ञान उपनुं ते संदेह टालवा भगवानने पूछ्युं तेवारे भगवान कहेछे के प्रथम जे में कह्युं के नरकमां जशे ते ताहरा दुर्मुख अने सुमुख दूतनां वचन सांभली मनोयुद्ध करतो हतो तेणेकरी नरकनो जनार थात पण ते मननो संग्राम करते थके हथिआर सर्व नांखी रह्यो त्यारे विचार्युं के जे अवसरें जे आव्युं तेज हथियार माटे हवे मारा माथानो टोप छे तेज नांखुं. एम धारी माथे हाथ घाल्यो तेवारे माथोतो मुंडित केश लुंचित छे माथे टोप तो देखाणुं नही. तेवारे विचार्युं जे अरे आछुं में तो दीक्षा लीधी छे अने आ संग्राम ते वलीशो मांड्यो छे. एम चिंतवी मनःसंग्रामथी उसरवा मांड्युं. त्यारे देवलोकें जाय एवा परिणाम थया एम करतां अनित्य भावनायें चढ्यो जे आ कोना पुत्र, कोना गाम, कोना गाम, केना कोट, कोहोनुं राज्य, एमां माहारुं कांइ नथी हुं ए सर्व वोसरावुंछुं अने वीर भगवान पासें जइने ए कर्म लाग्युं ते आलोचुं एम भावना

यें मनना पर्याय पलटाणा के तुरत केवलज्ञान उपनुं. ए वात सांजली श्रेणिकराजा प्रसन्न थया कह्युं ले के ॥ सप्तमायुर्दलं कृत्वा, प्रश्नचंद्रनृपो यथा ॥ संछिद्य मनसा सद्यः, केवलं लब्धितो वरं ॥ १ ॥ मन एव मनुष्याणां, कारणं बंधमोक्षयोः ॥ यथा आलिंगिता कांता, तथा नालिंगिता सुता ॥ सप्तमे नरके याति, जीवस्तंडुलमत्स्यवत् ॥ २ ॥ इति ब्याशीमो दृष्टांत ॥ ८२ ॥

हवे जे मुर्ख होये ते पोताना अवगुण न देखे तेनो त्र्यासीमो दृष्टांत.

॥ लिप्त्वोर्वीं रविमर्चयत्यविरतं स्वे गोमयेनाबला, विड्युक्तेन किलैकदा ह कुरुते नत्वार्चनं वा रवेः ॥ नासाग्रे करयुग्ममेत्य दिवसे दुर्गंधमायाति सा, हायं गूथमयः खगोदय इतोऽभूत्स्वागुणोऽज्ञायि नो ॥ ८४ ॥ अर्थः—कोइ एक स्त्री नित्य प्रतें गायनां छाणें करी घर लीपीने पछी नित्य सूर्य देवने पूजे सामा हाथ जोडीने दंमवत प्रणाम करे. एम प्रति दिवस करतां एक दिवसें उतावलें पाछली रात्रें छाणने बदले हाथमां विष्ठा आवी तेणें करी घर लीपी सूर्यने दंमवत करतां हाथ जोडतां हाथ नासिका पासें आव्या; तेमांथी दुर्गंध आवी, त्यारे कहेवा लागी के हा इतिखेदे आज जे सूर्य उदय पाम्यो ले, ते विष्ठामय उग्यो ले, एवी गाल दीधी. वली कहेवा लागी के, दहाडे दहाडे सेवा करतां पण पापीनो जण्यो साहामो दुर्गंध गंधवा लाग्यो एवी रीतें खोटो सूर्यने दोष आप्यो. परंतु पोतानो प्रत्यक्ष दोष हतो तेनो विचार न कस्यो. तेम जे मूर्ख होय तेपण पारका अवगुण देखे, पण पोतानी भूल कांइ देखे नहीं! कह्युं ले के श्लोक ॥ कर्मणां दीयते दोषो, न दोषो दीयते शिवे ॥ यथैकया पुरा दत्तः, सूर्यस्य सूर्यभक्तया ॥ १ ॥

हवे नरसा साथे निरसुं थावुं नहीं तेना उपर चोयाशीमो दृष्टांत.

॥ कृत्वोत्सर्गमलं शिलोपरि मुनिस्तस्थौ हि निर्णेजको, वक्त्यागत्य विमुंचतां पटशुचिं कुर्वे ततो भाषणम् ॥ दूरे तेन कृतस्तदार्षिरजकौ लग्नौ गले भेदको, निर्ग्रंथस्य च तस्य नो यदि तयोर्मो रक्ष जाने न तं ॥ ८५ ॥ अर्थः— एक नदि कांठे शिला उपर कोइ एक मुनि काउसग्ग ध्यानें उभो रह्यो हतो, तेवामां एक राजानो धोबी आव्यो, तेणे ते साधु ने कह्युं के आ शिलाथी उठ, माहारे आंही वस्त्र धोवां ले. तो पण ते मुनि कांइ बोल्यो नहीं. त्यारें ते धोबियें रीशथी ते मुनिने धक्को मारी नीचें नांखी दीधो तेथी ते मुनिने पण रीस चडी, अने बेहुजण मांहोमांहे बाथोबाथें आव्या.

तेमां धोबियें मुनिने माख्यो, अने नीचो पाडी तेनी गाती ऊपर चडी बे
ठो. त्यारें ते मुनियें शासन देवतानुं स्मरण कर्खुं,के हे देव! तुं मारी रक्षा
करः त्यारें देवें आवी कह्युं के, आमां हुं कोनी रक्षा करुं? जेमाटे बेहुमां
साधु ते कोण, अने धोबि ते कोण छे, ते कांइ जणातुं नथी. कह्युं छे के
श्लोक ॥ कुत्र गतोसि जो देव, वदेद्देवस्तदा मुनिं ॥ मुनिरजकयोर्ज्ञेदो, ज्ञाय
ते न मयाधुना ॥ १ ॥ कोयती रजको वा कः, संतोषःपोषवांछकः, ॥ कः
पूज्यो वाह्यपूज्योस्ती, त्येवं ज्ञेदो न दृश्यते ॥ २ ॥ ८५ ॥

हवे चार वस्तु छे ने नथी ते ऊपर पंच्चाशीमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृपोमात्यमवोचदानय पुरात्त्वंत्वब्धिसंख्यानि किं, मस्त्यस्त्यादिमम
स्ति नास्त्यवरकं नास्त्यस्ति नास्तीतरः ॥ नास्ति श्रेष्ठिपणांगने मुनिवरो व्याधो
नृपं दर्शिताः, तान्वीक्ष्याह किमत्र चापरज्नवे ऽष्टव्यमेतत्खलु ॥ ८६ ॥

अर्थः—एक राजा प्रधानने कहे छे जे, नगरमांथी चार वस्तु लाव. त्यारें
प्रधानें कह्युं जे ते वस्तुनां नाम मुजने कहो. ते वखतें राजायें समस्या
कही, ते जेम के प्रथम एक वस्तु तो छे ने छे, बीजी वस्तु छे ने नथी,
त्रीजी वस्तु नथी ने छे, अने चोथी वस्तु नथी ने नथी, ए चार वस्तु ल
इ आव्य. तेवारें प्रधानें एक शेठ, बीजी वेश्या, त्रीजो साधु, अने चोथो
वाघरी, ए चारेने तेडी राजा प्रत्यें चारे वस्तु देखाडी, ते वस्तु जोइने रा
जायें प्रधानने पूछ्युं के, ए शुं आण्युं. त्यारे प्रधान कहे छे के, आपें कहे
ली चारे वस्तु आणी छे. तेमां आपना चारे प्रश्ननी अनुक्रमें चारे वस्तु
जाणवी. जेम के प्रथम शेठने छे ने छे, बीजी वेश्याने छे ने नथी, त्रीजा
साधुने नथी ने छे, चोथा वाघरीने नथी ने नथी, एम इहज्नव परज्नवनुं
कह्युं. तेवारें राजा समज्यो जे ए प्रधान बुद्धिवंत छे॥ शेठ हमणां पण
सुखी छे, अने दान आपे छे, माटे परज्नवें पण सुख पामशे. तथा वेश्या
ने हमणां छे परंतु परज्नवें नथी. त्रीजा साधु नें हमणां नथी, ने परज्नवें
पामशे. अने वाघरीनें हमणां पण नथी, ने परज्नवें पण मलशे नहीं. क
ह्युं छे के, श्लोक ॥ सेवकस्य परीक्षायै, राज्ञा कथितमानवः ॥ समस्यया
स्य चत्वारि. शीघ्रं वस्तूनि मे पुरात् ॥ १ ॥ दोहा॥ सेवकसुबुद्धि समजीने,
आणी वस्तु ज चार ॥ इह ज्नव पर ज्नव कारणें, सुखऽःख तणो विचार॥ २ ॥

हवे सांजलतां कटुक पण हितकारक थाय एवा वचननो ७०शत्मो दृष्टांत.

॥ वीरांते परिवारयुक्तनृपतिं दृष्ट्वा सुरो जल्पति, वीर त्वं मर नृप जीव यदि वा जीवाजय त्वं जव ॥ मा त्वं कालिक जीव रे नरपतिः श्रुत्वा सकोपस्त दा, वीरोऽहं ह्यमृतेप्यधो दिवि तृषे पापे त्वधो यात्यतः ॥ ७७ ॥ अर्थः– श्रीमाहावीरस्वामीने वांदीने तेमनी पासें परिवार सहित बेठेला श्रेणिक राजा वगेरेने जोइने, एक समकित दृष्टि देवता बोल्यो के हे वीर! तुं मर पछी राजाने कह्युं के हे राजा! तुं चिरंजीव, पछी अजयकुमार नें कह्युं के तुं जीव जावेतो मर, वली पासें बेठेला कालिकसूरिया कसाइ ने कह्युं के तुं मरीश मा, अने जीवीश मा. आ वात सांजली श्रेणिक क्रोधायमान थयो, अने कहेवा लाग्यो के अरे, ए कोण मिथ्यात्वी देवता छे? तेने जग वानें कह्युं के ए समकितदृष्टी देव छे त्यारें राजा कहे छे के तमने मर एवुं वचन केम कहे छे? त्यारें जगवान कहे छे जे, हे राजा! मुजने कह्युं जे तुं मर, तेनो अजीप्राय ए छे जे तमो मरशो तो मोक्ष जाशो. वली तुजनें कह्युं जे चिरंजीव तेनो अजि प्राय एछे जे, तुं मरीश तो नरकें जाइश, मा टे जीवतो रहे. तेटलुंज सुख. वली अजयकुमारनें कह्युं जे तुं मर जावेतो जीव तेनो अजिप्राय ए छे जे मरशे तो देवलोकें जाशें अने जीवशे तो धर्माचरण करशे. अने कालिकसुरिय नें कह्युं के तुं मरीशमां, अने जीवी श मां, तेनो अजिप्राय ए छे जे जो जीवशे तो नित्य पांचशें पांचशें पामा मारशे, अने जो मरशे तो नरकमां जाशे एम समजवुं माटे एणे जे क ह्युं छे ते सर्व खरुं कह्युं छे ए सहुनुं हित वांछक छे. कह्युं छे के, श्लोक ॥ श्रीमद्वीरजिनादीनां, चतुर्णां सदसि मतः ॥ देवेनानिष्टमिष्टं वा, शब्दं श्रु त्वा स कोपवान् ॥ १ ॥ नृपस्तदा जिनोक्तस्तं, सत्योक्तं सत्यवाग्यसौ ॥ शुजेछकः सुवक्ताच, मदादीनां विशेषतः ॥ २ ॥ इति दृष्टांत ॥ ७७ ॥

हवे स्त्री चरित्र ऊपर राजा जर्तृहरीनो सत्याशीमो दृष्टांत कहे छे.

॥ जर्त्रीशस्य विशा स्त्रियेऽमरफलं नृत्यस्य दत्तं तव, वेश्यायास्तु पतेश्च ते न हि फलं ज्ञात्वापि दृष्टा वशा ॥ तत्कारव्याहि तया यथास्ति कथितं श्रुत्वा ह चेद् धिग् जवं, त्यक्त्वा राज्यपदं गतो हि विपिने जर्ता ह्यजूत्तापसः ॥७७॥ अर्थः–जर्तृहरी नामा राजानें कोइ एक ब्राह्मणे अमरफल आप्युं हतुं, ते फल राजायें पोतानी प्राणवल्लजा पिंगला नामनी राणीनें आप्युं. ते राणी

वली अश्वपालक साथें व्यभिचार करती हती, माटे ते तेनें प्राणप्रिय हो वाथी ते फल तेने आप्युं. अने अश्वपालें वली बीजी पोतानी राखेली वे श्या हती, तेने आप्युं, अने ते वेश्यायें उत्तमफल मानीने वली पाछुं न तेंहरी राजाने आप्युं. ते जोइनें राजा विस्मय पाम्यो, अने वेश्याने धम की दइने पूछ्युं के आ फल तुं क्यांथी लावी? तेवारें वेश्यायें खरेखरुं अ श्वपालनुं नाम कही दीधुं पछी अश्वपालनें राजायें पूछवाथी तेणे कह्युं के मने खबर नथी. पण ज्यारें तेनें मारवानी तैयारी करी त्यारे धूजतो धू जतो कहेवा लाग्यो के, तमारी राणि पिंगलायें आ फल मने खावाने आ प्युं हतुं पण ते फल में मारी राखेली नायकानें आप्युं छे. अने नायकायें तमने आप्युं. आवी वात सांभलीनें राजा विचारवा लाग्यो के संसार स्वार्थ नो छे, एम मानी वैराग्य थवाथी जोग ग्रहण करी, राज्य छांमी, क्षमा आदरी आत्मसाधन करवा वनमां तापस थइने घणी तपस्या करवा ला ग्यो. कह्युं छे के, श्लोक ॥ यां चिंतयामि सततं मयि सा विरक्ता, साप्य न्यमिछति जनं स जनोन्यसक्तः ॥ अस्मत्कृते च परितुष्यति काचिदन्या, धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च ॥ १ ॥ ७७ ॥

धर्माचरण थोडुं थइ शके तो ते पण करवुं तेनो अठ्याशीमो दृष्टांत.

॥ मिष्टान्नं परमंदिरे जडमतिर्भुक्त्वा गतः स्वालये, आगत्यालयजं वशा शु वद किं सोऽवक्तदन्नं मुखे ॥ नाद्मयन्याहनि खादिमादि रुचिरं भुक्तं तु यस्मि न्मया, नर्त्तेर्जीवसि सा तदा हठवशात्सोस्तं गतस्तद्भृपे ॥ ७९ ॥ अर्थः— कोइ एक मूर्ख कोइ पारके घेर खाजा, लाडु, जलेबी, प्रमुख मिष्टान्न ज मी आव्यो. पछी बीजे दिवसें पोताने घेर जमवानी वेला थइ, त्यारें ते नी स्त्रीयें आवीने कह्युं के हे स्वामी! रसोइ तैयार थइ माटे जमवा उठो. त्यारे तेणे कह्युं के मिष्टान्न होय तो जमवा उठुं. स्त्रीयें कह्यु के ए तो को इक दिवसें पारकें घेर मिष्टान्न जमवानुं मले परंतु आपणे घेर तो सामा न्य अन्नपान मले, तो पण तेणे कह्युं के मने तो मिष्टान्न मलशे तोज ज ..श. जे मुखें खाजा, लाडु, घेवर खाधां ते मुखें लुखुं अन्न न खाउं. प छी तेने सर्व कुटुंबनां लोकोयें कह्युं के तमो घेर जमीने जीवता रहेशो, तो वली कोइक दिवस मिष्टान्न पण पाछुं मलशे. पण जीवता न रहेशो तो मिष्टान्न पण क्यांथी खाशो. एम घणोए समजाव्युं परंतु डुराग्रही मूर्खें ते

वात स्वीकारी नहीं, अने जम्यो पण नही, हवथी उपवास करी छेवटें मरण पाम्यो. माटे धर्म जे कांइ थाय ते करवुं. पण एम आग्रह राखवो नही जे आटलुंज धर्माचरण थइ शके तो करवुं कह्युं छे के, श्लोक ॥ येनाननेन मिष्टान्नं, भक्षितं मयि कावले ॥ तस्मिंस्तु वदने भोज्यं, कथमग्निरसोज्झितं ॥ १ ॥ एवं सोपि भव्यमुक्तः, कदाग्रहग्रसितो नरः ॥ अंते संवरसंजातो, दुःखभाजनभाजकः ॥ २ ॥ इति आठ्यासीमो दृष्टांत ॥ ८८ ॥

हवे हंस काक अने बगलां सरिखा साधुनो नेव्याशीमो दृष्टांत.

॥ गोचर्यां क गृहे गतेन मुनिना नान्नं गृहीतं ततो न्येनानिं दित आदिमोऽपरमुनिः पप्रछ किं वो वृषं ॥ गेहेशा सरला त्रिधा वदति तां हंसैकहग्बकवत्, हंसाभः प्रथमो परो द्विकसमो, बाले बकाभोऽप्यहम् ॥८०॥ अर्थः— कोइ एक साधु गोचरीयें कोइकने घेर वोहोरवा गयो, त्यां ते ग्रहस्थनी स्त्रीयें वोहोराववा मांम्युं, त्यारे ते साधुयें असुजतानी शंका आणी वहोर्युं नही, एमज चाल्यो गयो. पछी बीजो साधु वोहोरवा आव्यो तेणे कांइ विचार न करतां ते अन्न लीधुं तेने वोहोरावनारी स्त्रीयें कह्युं जे पेहेलो साधु आव्यो हतो तेणे तो वोहोर्युं नही, त्यारें ते बोल्यो जे ते साधु ठग हशे, एम करी तेनी निंदा कीधी. पछी वली त्रीजो साधु वोहोरवा आव्यो. तेने पण ते स्त्रीयें अन्न वोहोरावीने पछी पूछ्युं जे हे साधु, तमारो शो धर्म छे? जे कारण माटे पहेलो साधु आव्यो तेणें तो वोहोर्युं नहीं एमज चाल्यो गयो. अने बीजो आव्यो हतो, तेणे वाहोर्युं, अने आगलासाधुनी निंदा करी. तेनुं कारण शुं? ते कहो. त्यारे ते त्रीजो साधु कहेतो हवो के हे बाइ? सरल स्वभावनी धणियाणी, श्रीजिनशासनमां त्रण प्रकारना साधु छे. तेमां एकतो हंससरिखा, बीजा काकसरिखा, अने त्रीजा बगलां सरिखा, तेमां प्रथम जे आव्यो ते साधु हंससरिखो जाणवो. बीजो साधु आव्यो ते काक सरिखो जाणवो, अने हे बाइ? त्रीजो हुं आव्यो ते पोतानुं पेट भरनारो बगला सरिखो छुं. श्लोक ॥ चक्रांगकाकबकरूपधरा विचित्राः, संत्यत्र शासनबले मुनयो बलेन ॥ अंतर्बहिर्विशदभावयुता मलीना, ह्यंतर्बहिर्नविशदोनसितोममादृक् ॥ १ ॥८०॥

जे मनुष्य भवपामी धर्ममां आलस करे ते पश्चात्ताप पामे तेनो नेवुंमो दृष्टांत.

॥ निःस्वः स्वित्सदसीश्वरस्य हि गतो राज्ञा तुतस्मै वरो, दत्तो लाहि ग्रहा

यदीच्छसि धनं गेहे गतोऽवक् स्त्रियं ॥ तं साप्यानय खादयामि पुरतो भुक्त्वा प्रसुप्तस्तदो, झाप्याप्रेष्यत नाट्यमैक्षत तु नो तन्नाशमस्ते रवौ ॥ ए१ ॥

अर्थः—कोइ एक पुरुष जन्मदरिद्री हतो ते एक दिवस राजानी सभामां मागवा गयो, तेने राजायें पूछ्युं के तुं कोण छे? तेणे कह्युं जे हुं जन्म दरिद्री छुं. त्यारें राजायें तेने वर आप्युं जे आज सांजे सूर्य अस्त पामे, त्यां सुधीमां मारा नंमारमांथी जेटलुं धन तहाराथी लइ शकाय तेटलुं धन तुं लइ जा. एवां राजानां वचन सांभली ते मूर्ख दरीद्री पोतानी स्त्रीनें पूछवा माटे पाछो घेर आव्यो, अने स्त्रीनी आगल राजायें कहेली वात कही. त्यारें स्त्री बोलीजे तमें ते धन तरत लावो. त्यारें दरिद्री बोल्यो जे पेहेलां जमीने पछी जाइश. त्यारें स्त्रीयें तरत रसोइ तैयार करीनें तेने जमाड्यो. जमी लीधा पछी कह्युं के मारुं पेट भराणुं छे तेथी एक निद्रा करीने पछी जाइश, एम कही सुतो घणीवार थइ जाग्यो नही. त्यारें तेनी स्त्रीयें जगाडीने मोकल्यो. पण रस्तामां जतां कोइक नाटक थतुं हतुं ते जोवा उनो रह्यो. तेने जोतां जोतां सूर्य अस्त पाम्यो, तेथी धन पाम्यो नहीं आखो जमवारो सोच करतो दरिद्रीनो दरिद्रीज रह्यो. तेम जे पुरुष डुर्लन एवी मनुष्य जन्मनी योगवाइ पामीने धर्म आचरतो नथी, ते मूढने ते नाग्यहीन पुरुषनी पेरें नवांते पश्चाताप थाय छे. कह्युं छे के ॥ नृजन्म डुर्लनं प्राप्य, ये धर्मं नाचरंत्यथ ॥ ते नाग्यहीनवत् मूढा, शोचयंति नवांतके ॥ १ ॥ राज्ञोक्तं मूढ लाहित्वं, श्रीगृहात्स्वं तवेच्छया ॥ नादपत्प्रमादतो मूढः, धर्मोऽप्येवं सदा विधिः ॥ २ ॥ राजा जिनेश्वरो ह्यत्र, नृनवः कमलागृहम् ॥ इव्यं दानादिकं ज्ञेयं, मार्त्तंमश्चायुरेव च ॥ ३ ॥ विषयादिषु ये सक्ता, स्तथैव कौतुकादिषु ॥ ते हारयंति सर्वस्वं, मानवा मानमोहिताः ॥ ४ ॥ ए१ ॥

हवे नव्यजीवें कोइपण नियम लेवो ते विषे एकाणुंमो दृष्टांत.

॥ क्रोधः स्याद्यदि सप्तपृष्ठकपदं देयं गृहीतं व्रतं, गेहे नूरिदिनात्समागलवरः शय्यां स्वपुत्रस्त्रियौ ॥ सुप्तौ वीक्ष्य वधाय पृष्ठचलितः पुत्रस्तदा वोधितः, मातर्वक्ति हि सोपि हंति वचनं श्रुत्वा प्रशांतोऽनवत् ॥ ए२ ॥ अर्थः—वंकचूलें गुरुने मुखें एवुं व्रत लीधुं के जेवारें कोइनी उपर क्रोध उपजे, तेवारे छ सात पगलां पाछा नरीने पछी साहामां माणसने प्रहार करवो. एवुं नियम लइने परदेश गयो पछी घणे दिवसें घेर आव्यो. ते वखत पो

तानी स्त्री अने पुत्र ए बेहु एक शय्यामां सुतां हतां तेने जोइ क्रोध चड्यो तेवारे खड्ग काढीने मारवा चाल्यो. तेटलामां पच्चरकाण लीधेलुं सांजखुं. पढी तुरत सात मगलां पाढो वळ्यो तेटलामां ढोकरो मा मा एम कहेतो जाग्यो अने कहेवा लाग्यो, के हे माताजी, मुजने कोइ एक पुरुष मारवा आव्यो ढे. ते सांजली वंकचूलने क्रोध उपशांत थइ गयो, अने कहेवा लाग्यो, जे अरें में स्त्री अनें पुत्रने मार्यां हत तो केटलुं पाप लागत? अने पश्चात्ताप करवुं पडत परंतु में लीधेलुं पच्चरकाण आडुं आव्युं, तो क्रोध फल न लाग्युं, अने कोइनो घात पण थयो नहीं. ते माटे भव्य जीवें कां इपण नियम अवश्य लेवो. कह्युं ढे के ॥ येन यश्चापि हि स्तोकः, कालस्य नियमः कृतः ॥ तस्यापि निष्फलो न स्यात्, सप्तपृष्ठकचोरवत् ॥१॥ए२॥ ढकायनी हिंसा न ढंमाय तो एक त्रसकायनी ढांमवी तेनो बाणुमो दृष्टांत.

॥ नृपो वक्ति जनान् न याति पुरुषस्तं हन्मि योप्युत्सवे, श्रेष्ठेः षट् न गताः सुता हि पितरौ हंत्याशु तान्नो तदा ॥ मुंचालाहि धनं तमाहतुरमूं स्त्वं नाथ पंचाब्धिकं, त्रिद्व्येकं हि सुतं विमुंचति तथा धर्मानुयोगे मुनिः ॥ ए३ ॥ अर्थः—कोइ एक राजा नगरलोकनें कहे ढे के हुं उत्सव मांरुं ढुं. माटे गामना लोकमांहेलो जे कोइ ते उत्सव जोवा नहीं आवशे, तेने हुं मारीश. एवुं सांजली सर्व लोक उत्सव जोवाने गया, पण एक शेठना ढ पुत्र गया नहीं, ते वात राजायें जाणी. तेवारें ढए पुत्रने बांधी मगाव्या. वलतां तेना मात पिता आव्यां अने तेणे राजाने आजीजी करी पुत्रोने ढोडाववानुं कह्युं, पण राजायें मान्युं नही. तेवारें धन आपवानुं आमंत्रण कह्युं, तोपण राजायें मान्युं नहीं. त्यारें पांच पुत्रोनें मूकवानुं कह्युं, ते पण राजायें न मान्युं. तेवारें चारने मूकवानुं कह्युं. पढी त्रणने, पढी बेने एम विनंती करतां ढेवट एक पुत्रने ढोडवानुं कह्युं. त्यारें एक पुत्र राजायें जीवतो मूक्यो. तेम साधु पण धर्मनो उपदेश करी कहे के ढकाय जीव मारवानुं बहुज पाप ढे, माटे ढ काय जीवनी रक्षा करवी. तेम ढतां जो ढ काय जीव उगरी शके नहीं, तो ढेवट एक त्रस जीव तो अवश्य उगारवाज जोइयें. कह्युं ढे के, श्लोक ॥ संयतिः पितृसदृक्षः, षट्जीवाः पुत्रसन्निभाः ॥ श्राद्धाः नृपतयो ज्ञेयाः, कुटुंबं मुत्सवान्निधमः ॥ १ ॥ घ्नंति षट्कायजीवान्, कुटुंबाश्च श्रद्धालवः॥ एषां साधो सदो ब्रेद्यो, रदैकं रक्षमाघ्नतः॥२॥

शुभमां सहु सहाय करे पण अशुभमां न करे तेनुं उपाणुमो दृष्टांत.

॥ मुष्टग्रामंत्रति भिक्षुमीट्ट यदि कणं नो जाति किं मानवं, तं मे देहि तदाह चेन्न्यसचिवेशाग्रे गृहेशोदितं ॥ प्रोचुस्ते म्रियतां परान्हि कथितं व्याजेन नाशं गतो, दंडं तेस्ति तदार्पिता स्वमहिला कार्यं न मे वाक्यतः ॥९४॥

अर्थः—कोइ एक शेठने घेर एक भीखारी भीख मागवा आव्यो. शेठें तेने मुठी भरी अन्न देवा मांड्युं. आमंत्र्यो पण तेणे लीधुं नहीं. तेवारें शेठें तेने कह्युं के शुं तुं घरना माणसोने लइ जवाने विचारतो होय तो कहे? भीखारी बोल्यो के जो हवें पड्यो तो हुं मनुष्य पण लइ जावं, एम कही शेठना घेर आगल सुतो. तेवारें गामना अधिकारी जे शेठ, कोटवाल, मेता, प्रधान, व्यवहारिया तथा राजा प्रमुख सर्वेनी आगल जइने शेठें कह्युं के, ए भीखारी घरनां माणस मागे छे, नहीं तो घर आगल मरवाने तैयार थयो छे. तेने सघलायें कह्युं के मरे तो मरवा द्यो. एम ते शेठें सर्वेना मनना भाव लइ लीधा. फरी क्षणेकनें आंतरें सर्वेनी आगल जइ छल करीने कह्युं के, एतो मरण पाम्यो. ते सांभली सर्वे कोइ बोल्यो के तहारे माथे मनुष्य मार्यानुं खून बेठुं माटे दंड आपतां पण उगरशो नहीं. ते शेठ पाछो घेर आवी पोतानी स्त्री ते भीखारीने देवा लाग्यो. तेणे कह्युं के माहरे स्त्रीनो खप नथी. महारें तो ए मा बेहेन समान छे. एम सहु शुभना सहायक छे. पण अशुभनो कोइ सहायक नथी॥ शुभे कार्ये हि सर्वस्य, सर्वे संति सहायकाः ॥ अशुभे न युतः कश्चित्, धनदश्रेष्ठिनो यथा ॥ १ ॥

हवे अवसरें प्रश्न पूछवो ते ऊपर चोराणुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ स्वर्गौरत्ति वनं तदा वनपतिः पुच्छं गृहीत्वा गतो, ऽन्येद्युः स स्वगृहे च प्रोचुरिह तं क्वात्त्याद् भो मोदकान्॥ स्वर्यामो हि समं त्वया वरमतस्तत्पृष्ठल ग्रायसु, स्तन्मानं किमुदर्शितं पथि करौ विस्तार्य सर्वेऽपतन् ॥ ९५ ॥

अर्थः—एक वाडीमांहे स्वर्गथी धेनु आवी, नित्यप्रत्यें चरी जाय, पण वाडीना धणीनें खबर पडे नही. एक दिवस वाडीनो रक्षक वाडीमां रह्यो हतो, तेवामां स्वर्गथी गाय आवीने चरवा मांडी. ते ज्यारे चरीने पाछी स्वर्गे जवा लागी, त्यारें ते रक्षक गायने पुछडे वलगी तेनी साथें स्वर्गे पों होच्यो. वली बीजी रात्रीयें ज्यारें ते गाय पाछी आवी त्यारें तेनी साथें ते पाछो उतरी आव्यो. अने घेर गयो. तेने सहु कुटंबे पूछ्युं, जे तुं क्यां गयो

हतो ? तेणे कह्युं के हुं स्वर्गे गयो हतो तेने सर्वे पूछ्युं के त्यां तुं शुं खातो हतो तेणें कह्युं के हुं महोटा मोदक खातो हतो अने सुखी हतो. तेने कुटंबी सर्वे कहेवा लाग्यां जे अमोने पण तिहां लइजा. पछी बीजे दिवसें सर्वे कुटंबीउ आवी वाडीमां बेठां. पछी गाय आवी अने चरवा मांमी. ते ज्यारें चरी रही त्यारे ते गायने पुंछडे पहेलो पोते वलग्यो. तेना पगे बीजो वलगो, वली बीजाना पगें त्रीजो वलगो, एम सर्वे जण वलग्या अने गाय आकाशें चाली, तेनी पछवाडे सहु खेंचाता चाल्या. ते जेवारें अर्द्ध मार्गें आव्या. तेवारें जेणे सर्वथी उपरें गायनुं पुछडुं झाल्युं छे, तेने एकजणें पूछ्युं के तमें स्वर्गमां लाडु खाधा ते केवडा महोटा हता? ते वारें ते लाडुनो प्रमाण देखाडवा माटे पोताना हाथ पोहोला करतांज सर्वेजण नीचे धरतीयें पडी मरण सरण थइ गयां. माटें वगर समयें प्रश्न पूछवुं नहीं. कह्युं छे के, श्लोक ॥ विचार्य वेला वक्तव्यः, संदेहो न यथा तथा ॥ दृष्टांतोऽत्र स्वर्गधेनुः, पुछलग्नो जटिव्रजः ॥ १ ॥ सर्वेऽपि लोभिनो यत्र, मंदबुद्धिं गुरुं श्रिताः ॥ तत्र तैर्नानुगैर्नाव्यं, तां श्रुत्वा मोदकां कथां ॥ २ ॥ ८५ ॥

हवे धननो गर्व न करवा ऊपर पंचाशुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ कश्चिच्चाढ्यनरो दरिद्रपुरुषं हास्यं च मार्गेऽकरोत्, दत्वा तालपुटं निरीक्ष्य निकटे धीरस्तदा वक्ति तं॥ किं रे द्रव्यमदं करोषि हि गुरोर्वाक्यं श्रुतं नोत्वया, पश्य त्वं जलयंत्रके जलघटी तद्भवे स्याद्धनम् ॥८६॥ अर्थः— कोइएक धनवान् पुरुष हतो. ते कोइ दरिद्री पुरुषने मार्गमां जोइ मनमां अहंकार आणी ताली दइ हसवा लाग्यो. ते वखत कोइक पंमित पुरुष तेनी पासेथी चाल्यो जतो हतो, तेणें ते धनवानने कह्युं के तुं मूर्ख देखाय छे. जे माटें द्रव्य नो अहंकार करे छे. पण तें सुगुरुनां वचन सांभल्यां देखातां नथी. तेम कोइ भला माणसनी तें संगत करेली होय एम पण देखातुं नथी. जोके भाइ अरहट्टनी घडी अरहट्ट फरवाथी पाणीयें भराय छे अने वली खाली थाय छे तेम धन पण अस्थिर छे, ते निरंतर रहेनार नथी. माटें ताहारे अहंकार करवो नहीं. कह्युं छे के, श्लोक ॥ आपद्गतान् हससि किं द्रविणांध मूढ, लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमत्र चित्रम्॥ किं तन्न पश्यसि घटीजलयंत्रचक्रे,रिक्ता भरंति भरिताः पुनरेव रिक्ताः॥ १॥

हवे सर्व शास्त्र सांभळवानुं सार परोपकार छे ते उपर एक पंमित अने राजानो मळी छन्नुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृत्वा कोपि कविस्तदा वृषशतेष्वीशांतिके पंचसु, संप्राप्तो यदि पृच्छतीति किमिदं तं प्राह सत्पुस्तकम् ॥ श्रोतव्यं नवता क्रमो न सकलं श्रोतुं हयारोहणं, कृत्वा यामि नृपं हि वृत्तशकले यत्कोटिशास्त्रैमेतम् ॥ ए७ ॥

अर्थः—कोइ एक पंमित पाचशें पोठ पुस्तकनी भरी साथें लइ एक राजानी पासें आव्यो. ते वखत ते राजा घोडाने पेगडे पग दइ स्वार थइ बाहार जवा तैयार थयो. त्यारें ते पंमित आवी आशीर्वाद दइ उनो रह्यो. तेनें राजायें पूछ्युं जे आ पांचशें पोठीमां शुं भर्युं छे? पंमितें कह्युं के, एमां पुस्तको भर्यां छे. ते तमने संभळाववा माटे लाव्यो छुं. माटे हे राजन्! तमे सांभळो. राजा बोल्यो जे एटला घणां शास्त्र सांभळवानी मारी शक्ति नथी. त्यारें पंमितें कह्युं जे सर्व शास्त्र नही सांभळो तो एनो चोथो भाग सांभळो. राजायें कह्युं जे हमणां तो हुं असवार थइ बाहेर जाउं छुं, माटे ताहरे जे कहेवुं होय ते आटलाज वखतमां कही दे. पंमितें कह्युं के, पांचशें पोठी पुस्तकोमां जे परमार्थ छे ते वे पदमां हुं तमने कहीश, ते तमे ध्यान दइ सांभळो. श्लोक ॥ श्लोकार्द्धे च प्रवक्ष्यामि, यदुक्तं ग्रंथकोटिभिः ॥ परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम् ॥ १ ॥ एटले परोपकार करवो ते पुण्य छे. अने परने पीडा उपजाववी ते पाप छे. ए कोटिग्रंथोनो सार छे. एवुं पंमितें कह्युं ते सांभळी राजा खुशी थयो. इति छन्नुंमो दृष्टांत समाप्त ॥ए७॥

हवे सामायिकमां समभाव राखवा उपर सताणुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ युद्धं पांमुसुतैर्विधाय दमदंतः सार्द्धमत्रव्रतं, तस्थौ तद्विपिने समीक्ष्य मुनिपं तत्रागताः पांमवाः ॥ पश्चात्कौरवकास्तमश्मनिकरैर्हत्वा गतास्तद्वपु, स्तद्भावः सदृशोऽनवत्तदुपरीत्येवं तु सामायिके ॥ ए८ ॥ अर्थः—पांमुराजाना पुत्र पांच पांमवोनी साथें दमदंत राजायें युद्ध कर्युं, तेमां पांमवो हार्या, नाशी ने कोटमां पेठा. केटलाएक दिवस पछी दमदंत राजायें वैराग्य पामी दीक्षा लीधी. एकदा दमदंतमुनि पांमुराजाना नगरना उपवनमां जइ काउस्सग्गें रह्या. ते वनने विषे पांमवो क्रीडा करवा आव्या, तिहां मुनिने जोइने तेना गुणग्राम कर्या. पाछलथी सो भाइ कौरवो आव्या, तेणें मुनिने देखी क्रोध करीनें सर्व जणें पछरा मार्या, तेथी मुनिनुं शरीर

आखुं दटाइ गयुं, तो पण ते समतावंत मुनिनो भाव पांमवो अने कौरवो बेहुनी ऊपर सरखो रह्यो. ए दृष्टांतें सामायिकने विषे पण सम परिणाम राखवा. कह्युं छे के, श्लोक ॥ भक्तेषु पांमुपुत्रेषु, धार्तराष्ट्रेषु हंतृषु ॥ समो भावो भवेद्यस्य, राजर्षिः समुदाहृतः ॥ १ ॥ ए७ ॥ इति सामायिकमां समता राखवा आश्चर्यी सत्ताणुमो दृष्टांत समाप्त ॥

हवे विद्या भणवा उपर अठाणुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ स्नानार्थं जलमाहरन्निजसुतं दृष्ट्वावदत्तं प्रसूः, मूढस्त्वं कथमाह शास्त्रसकलं ज्ञात्वागतः सा पुनः ॥ नाधीतं यदि दृष्टिवादमखिलं श्रुत्वा क तत्तोशलौ, गत्वा पाठय तं मुनिं मम समो नूत्वाभवज्ञो वरम् ॥ एए ॥

अर्थः—कोइ एक ब्राह्मण भणीने घेर आव्यो, तेवारें स्नानने अर्थें पाणी मगाव्युं. तेणें एक घडो भरेलो आण्यो ते जोइ पंमितें कह्युं के मारुं स्नान एम न थाय. घडा भरी भरीनें माहरे मस्तके नांखो तो स्नान थाय. त्यारें तेनी मातायें कह्युं के तुं मूढ रह्यो देखाय छे,भण्यो जणातो नथी. तेवारें पुत्र कहेवा लाग्यो के, हुं सघलां शास्त्रो भणी गणी विचारी चर्ची धारीने आव्यो छुं. तो हुं मूर्ख केम छुं? त्यारें मा बोली के, तुं ज्यांसुधी दृष्टिवाद नथी भण्यो, त्यां सुधी कांइ भण्यो कहेवाय नहीं. ते सांभलीनें ते विचारवा लाग्यो जे ए ग्रंथ कोण भणावशे ? मातायें कह्युं जे तुं, तोसली आचार्य पासे जा ते भणावशे त्यारें तेणे तेमनी पासें जइने कह्युं,जे मनें दृष्टिवाद भणावो ? गुरुयें कह्युं जे तुं अमजेवो थाय तो तने भणावीयें. त्यारे ते साधु सरखो थइने भण्यो अने भणीने श्रेष्ठ पंमित थयो, पछी समजीने फरीनें दीक्षा लीधी. अर्थ सरखो. कह्युं छे के ॥ किं ताए पढियाए, पयकोडीए पराजभूयाए ॥ जं इत्तियं न नायं, परस्स पीडा न कायव्वा ॥ १ ॥ ॥ एए ॥ ए विद्या भणवा ऊपर अठाणुमो दृष्टांत समाप्त ॥

हवे सर्व दानमां महोटुं अभयदान छे ते ऊपर एक राजानी चार राणीयोनो नवाणुंमो दृष्टांत कहे छे.

॥ स्त्रीणामिष्टवरं कदा नृपतिना तुष्टेन दत्तं च तं, प्रोचुस्ता हि वरं हरं न वधतां ज्येष्ठैकधस्रोऽर्पितः ॥ तस्य स्वे महिमा तया कृत इतो द्वाभ्यां च तद्वत्परे, स भ्रातश्चरमा तदा कलिरभूत्स्तेनेन ता वारिताः ॥ १०० ॥ अर्थः—एक दिवसें कोइ एक राजा पोतानी चार राणीयो ऊपर तुष्टमान थयो,